वर्ष-06, अंक-04
Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अक्टूबर-दिसम्बर, 2011

सर्वाधिक विशेषांक प्रकाशित करने वाली बिहार की एक मात्र पत्रिका

परती पलार

(सम्पूर्ण साहित्यिक शोधपरक त्रैमासिक)

ग़ज़ल विशेषांक

सहयोग राशि : 50/-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पिंगल और अरुज़

■ महावीर प्रसाद 'मूकेश'

पिंगल और अरुज़ की, महिमा अपरम्पार;
कविता छन्दोबद्ध ही, रस की करे फुहार।

पिंगल और अरुज़ हैं, रुचिकर सरल सुबोध;
बनती ग़ौरो-फ़िक्र से, कविता बिन अवरोध।

पिंगल और अरुज़ में, कितना क्या है फ़र्क़;
यह जाने बिन व्यर्थ है, छान्दस तर्क-वितर्क।

ग़ज़ल रुबाई नज़्म या, कविता दोहा गीत;
अक्षर-मात्राश्रित सभी, यह दृढ़ विकसित रीत।

निश्चित हर्फ़ी सिल्सिला, निश्चित बहर बनाय;
वर्णिक या मात्रिक रहे, तो वह छन्द कहाय।

है मुतहर्रिक लघु सदृश, साकिन हर्फ़ हलन्त;
पिंगल और अरुज़ को, समझे सो गुणवन्त।

बहर-छन्द अर्कान-गण, जब हैं मान्य-प्रमाण;
कतर-ब्योंत क्यों क्षम्य हो, ये सुकाव्य के प्राण।

काट-छाँट-विधि छन्द में, नहिं पिंगल-अधिमान;
हर्फ़ी घट-बढ़ बहर में, नहिं अरुज़ की शान।

भिन्न-भिन्न परिमाप के, भिन्न-भिन्न अर्कान;
शुद्ध प्रयोजित जो करे, शायर वही महान।

बहर क़ाफ़िया लाज़िमी, लिखें अगर अशआर;
इरादतन मौज़ूँ करें, वर्ना सब बेकार।

रुक्न-बहर की इस्तिलाह, यही दिखाती राह;
नावाक़िफ़ फ़नकार को, बस शोहरत की चाह।

फ़ेलुन फ़इलुन रुक्न दो, समझें नहीं समान;
हमहर्फ़ी अर्कान के, अलग-अलग औज़ान।

नाहमहर्फ़ी रुक्न जो, जानें उनका मर्म;
प्रति-प्रस्थापन मत करें, समझें रचना-धर्म।

फ़ऊल फ़इलुन, फ़ाइलुन, फ़ाइलान फ़इलान;
एक दूसरे की जगह, रुक्न सभी समान।

रचिए जब हिंदी ग़ज़ल, हो हिंदी आकार;
रखिए हिंदी व्याकरण, बस उसका आधार।

देवनागरी में लिखन, उच्चारण अनुसार;
अतः वर्तनी मान्य ही, सदा करें व्यवहार।

'शायर' नहिं 'शाइर' लिखें, है आलिम की राय;
भिन्न-भिन्न भाषिक चलन, भिन्न रूप दर्शाय।

यमुना जमुना एक है, औसर अवसर एक;
शाइर शायर एक सम, भेद न समझो नेक।

विविध इतर भाषासृजित, शब्द अनेकानेक;
हिंदी साँचे में ढले, ले नवरूप हरेक।

भाषा वाचिक या लिखित, अथवा हो संगीत;
रूप सभी के भिन्न हैं, फ़्यूज़न है विपरीत।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अग्निशेखर और क्षमा कौल द्वारा यह पुस्तक सप्रेम भेंट

परती पलार

(एक संपूर्ण शोधपरक साहित्यिक त्रैमासिक)

र्ष-06 अंक-04 ग़ज़ल विशेषांक अक्टूबर-दिसंबर 2011

मुख्य संरक्षक
कमल कुमार साबू
संरक्षक
ामकुमार झा, इन्द्रकान्त चौधरी, मो. मुस्लिम, ाशि कु. वर्मा, विनोद कु. राय (पूर्व विधायक)
संस्थापक सम्पादक
राज राघव
प्रधान सम्पादक
नमिता सिंह
सम्पादन सहयोग
ॉ. उदित कुमार वर्मा, फुलेन्द्र कुमार मल्लिक, वश्वनाथ प्र. श्रीवास्तव, डॉ. शंकर कुमार
सलाहकार सम्पादक
डॉ. वरुण कुमार तिवारी
राजेन्द्र परदेशी, बसंत कु. राय
विधि सलाहकार
कृष्ण मोहन सिंह, नीरज सिंह
आवरण सज्जा
अजय चौहान
कार्यालय प्रतिनिधि
अररिया–चौधरी भगवंत 'सहयोगी'
रामशरण मंडल
फारबिसगंज–विनोद कुमार तिवारी

सम्पदकीय कार्यालय
परती पलार
आश्रम रोड, वार्ड नं. 10
अररिया-854311 (विहार)
दूरभाष-(06453)222610
मो. : 09431653112
द्रक, प्रकाशक, प्रबंधक एवं सर्वाधिकार जनात्मक, साहित्यिक, सामाजिक एवं ंस्कृतिक वाग्वैचित्र्य मंच, अररिया (बिहार)

पाठकों के पत्र

कुछ आपकी भी.../3

सम्पादकीय

कुछ अपनी भी.../नमिता सिंह/17

दोहे

पिंगल और अरुज़.../**महावीर प्रसाद 'मूकेश'**/2

आलेख

1. समान मात्रिक रुक्नों में भिन्नता/**महावीर प्रसाद 'मूकेश'**/19
2. ग़ज़ल का यथार्थ और हिन्दी ग़ज़ल /**डॉ. वरुण कुमार तिवारी**/22
3. ग़ज़ल का अनुशासन और हिन्दी ग़ज़ल/**डॉ. ब्रह्मजीत गौतम**/26
4. हिन्दी ग़ज़ल की विकास यात्रा/**हरीलाल 'मिलन'**/29
5. हिन्दी कविता की सम्वादहीनता और ग़ज़ल की जिम्मेदारियां/**अनिरुद्ध सिन्हा**/34
6. नई ग़ज़ल-लिपि और लहजे का प्रश्न/ **डॉ. महेन्द्र अग्रवाल**/39
7. आज की हिन्दी ग़ज़ल-विधा सवाल उद्धरणयीता का/**डॉ. मधुर नज़्मी**/42
8. हिन्दी ग़ज़ल का अस्तित्व संघर्ष/ **डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम'**/45

उर्दू-हिन्दी शाइरों की ग़ज़लें

• वली दकनी/50 • मीर/50 • मिर्जा गालिब/51 • पं. बृजनारायण चकबस्त/52 • दुष्यंत कुमार/53 • फिराक़ गोरखपुरी/54 • मज़रूह सुल्तानपुरी/54 • इब्ने इशां/55 • कैफ़ी आजमी/55 • बशीर बद्र/56 • अदम गोंडवी/56 • निदा फाज़ली/57 • शादाँ सिरौंजी/57 • शहरयार/58 • डॉ. कुँअर बेचैन/59 • भगवान दास ऐजाज़/60 • गुलज़ार/60 • प्रो. भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज़'/61 • राजेन्द्र नाथ रहबर/62 • प्रो. भगवानदास जैन/63 • चन्द्रसेन विराट/64 • विज्ञानव्रत/65 • जहीर कुरैशी/66 • इब्राहीम 'अश्क'/67 • अंसार कम्बरी/68 • देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'/69 • डॉ. राजकुमार निजात/69 • डॉ. हरिराज सिंह 'नूर'/70 • संजीवन मयंक/71 • श्याम झँवर 'श्याम'/71 • राजेन्द्र चाँद/72 • ब्रह्मजीत गौतम/73 • प्रो. शशिकान्त पशीने 'शाकिर'/74 • ख़याल खन्ना/75 • शिवनाथ 'बिस्मिल'/76 • मदन मोहन उपेन्द्र/77 • रामप्रकाश गोयल 'सोज'/78 • आचार्य भगवत दुबे/79 • 'खन्ना मुज़फ्फरपुरी/80 • नरहरि अमरोहवी/81 • हरेराम समीप/82 • डॉ. मधुर नज़्मी/83 • डॉ. महेन्द्र अग्रवाल/84 • जुबैरूल हसन 'गाफिल'/85 • दीपक कुमार/85 • मुकुट सक्सेना/86 • माधव कौशिक/87 • लक्ष्मी शंकर याजपेयी/88 • हरीलाल मिलन/89 • डॉ. गणेश गायकवाड़/90 • अनिरुद्ध सिन्हा/91 • नरेश शांडिल्य/92 • नूर मुहम्मद 'नूर'/93 • विनय मिश्र/94 • अशोक 'अंजुम'/95 • फसाहत अनवर/96 • डॉ. कपिल कुमार/97

आलेख

1. ग़ज़ल की लोकप्रियता के आयाम/ **डॉ. रामबहादुर चौधरी 'चंदन'**/98
2. समकालीन हिन्दी ग़ज़ल और सामाजिक सरोकार/**प्रेम कुमारी कटियार**/100
3. अपने परिवेश के प्रति सचेत है आज की ग़ज़ल/**अशोक अंजुम**/103
4. गीत-ग़ज़ल में अन्तर/**श्याम सखा 'श्याम'**/106

G.M. College of Education, Bantalab, Jammu
Acc No. 4689
Dated 9.12.2023

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5. हिन्दी में ग़ज़ल/**विपिन जैन**/108
6. उर्दू ग़ज़ल का स्वरूप : उद्भव एवं विकास/**आफ़ताब अहमद 'रवी'**/110
7. हिन्दी ग़ज़ल के बदलते परिदृश्य और बिहार/**सिद्धेश्वर काश्यप**/115
8. समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में स्त्री विमर्श/**प्रो. वशिष्ठ अनूप**/117
9. कोमल संवेदनाओं का नाम है ग़ज़ल/**ओम रायजादा**/120

ग़ज़लें देश-विदेश से

• जाएरा 'अदीब' (पाकिस्तान)/123 • कौसर समरीन (पाकिस्तान)/123 • अब्बास दाना/123 • अमजद इस्लाम अमजद/124 • शमा चौधरी/124 • शाहीदा तस्नीम/124 • नुसरत नसीम/124 • इम्यिाज अली 'गौहर' (ग्लासगो, स्कॉटलैंड)/124 • अहमद अली बरकी आजमी/125 • चाँदनी अदीम (पाकिस्तान)/125 • परवीन शाकिर (पाकिस्तान)/125 • फ़ैज अहमद फ़ैज/125 • डॉ. गौतम सचदेव (यू.के.)/126

ग़ज़लें

• राजकुमारी शर्मा 'राज'/127 • डॉ. नलिनी विभा 'नाज़ली'/128 • डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी/129 • शोभा कुक्कल/130 • कुसुम 'खुशबू'/131 • शिबली 'सना'/132 • शैलजा नरहरि/132 • ममता किरण/133 • उमाश्री/133 • डॉ. मृदुला झा/134 • डॉ.लीला मोदी/135 • डॉ. मीना नकवी/136 • अनु जसरोटिया/137 • मीनाक्षी 'जिजीविषा/138 • पं. गिरिमोहन गुरु/139 • डॉ. रामबहादुर चौधरी 'चंदन'/140 • भोला पंडित 'प्रणयी'/140 • मधुर गंजमुरादाबादी/141 • डॉ. अमरेन्द्र/142 • हबीब 'अजमली' /143 • शम्मी शम्स वारसी/144 • शाम सुन्दर नन्दा 'नूर'/145 • खुर्शीद नवाब/146 • कमल किशोर 'भावुक'/147 • शमीम 'इटावी'/148 • धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल'/149 • नज़र द्विवेदी/150 • डॉ. नईम 'साहिल'/151 • अखिलेश तिवारी/152 • शरीफ़ कुरेशी/153 • साहिल/154 • कुंवर 'कुसुमेश'/155 • बृजभूषण चतुर्वेदी 'ब्रजेश'/156 • आफ़ताब अहमद ख़ान 'रवी'/157 • डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम'/158 • दीपक 'दानिश'/159 • डॉ. श्याम सखा 'श्याम'/160 • विपिन बिहारी 'सुमन'/161 • रज़ी अहमद 'तन्हा'/162 • अमरकान्त निगम/162 • सिद्धेश्वर काश्यप/163 • पुरु मालव/164 • पारस नाथ बुलचंदानी/165 • दिनेश तपन/166 • उदय कुमार 'सुमन'/167 • राजीव राय/168 • वशिष्ठ अनूप/169

आलेख

1. मीर की ग़ज़लें.../**आफ़ताब अहमद खान 'रवि'**/170
2. हमारे वतन की शान : फ़ानी बदायूंनी/**डॉ. रामबहादुर 'व्यथित'**/174
3. इकबाल : जीवन के रंग-काव्य की तरंग /**डॉ. शिवनन्दन कपूर**/177

ग़ज़लें

• देवेन्द्र पाठक 'महरूम'/181 • नरेश महाजन 'निरगुन'/181 • ओम रायजादा/182 • कुंदन सिंह सजल/183 • भगवती प्रसाद द्विवेदी/184 • डॉ. अशोक गोयल 'अशोक' /185 • हितेश कुमार शर्मा/185 • महावीर उत्तरांचली/186 • शिवशरण बंधु/187 • मेहमूद 'हमसर' अब्बासी/188 • हारुन रशीद 'गाफ़िल'/189 • एहसान कासमी /190 • अशोक आलोक/191 • मिथिलेश 'गहमरी'/192 • कैलाश झा 'किंकर'/193 • अक्षय गोजा/194 • किशन स्वरूप/195 • अंजनी कुमार 'सुमन'/196 • विपिन जैन/197 • केशव शरण/198 • डॉ. मोहन तिवारी 'आनन्द'/199 • फरमान अली 'फरमान'/200 • सेवाराम गुप्ता 'प्रत्यूष'/201 • शिवशंकर मिश्र/202 • रमेश 'प्रसून'/203 • मो. कैसर आलम सिद्दिकी/204 • नज़्म सुभाष/205 • पारसनाथ/205 • अशोक सिंह/206 • विकास/207 • पुरुषोत्तम 'यकीन'/208 • अरविन्द अवस्थी/208 • महेन्द्र कुमार 'नीलम'/209 • राज राघव/210 • दरवेश भारती/211

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

हिन्दी ग़ज़ल के विलक्षण ध्वजवाहक : अशोक 'अंजुम'/**डॉ. रोहिताश्व अस्थाना**/212

पुस्तक समीक्षा

1. आपस में अगर अपनी मुहब्बत बनी रहे/**डॉ. वरुण कुमार तिवारी**/216
2. जिन्दगी के आगोश में मचलती ग़ज़लें/**डॉ. वरुण कुमार तिवारी**/219
3. सबकी जिन्दगी से रू-ब-रू कराती ग़ज़लें/**प्रेम कुमारी कटियार**/221
4. वक़्त के मंज़र : विपन्नता का बीज-गणितीय यथार्थ/ **राधेलाल विजयावने**/224
5. 'कैलाश झा किंकर' के ग़ज़ल संग्रह 'देखकर हैरान हैं सब' पर एक नजर/**डॉ. शब्बीर हसन**/226
6. 'बदल गये दस्तूर' सामयिक सरोकारों का दस्तावेज़ी ग़ज़ल संग्रह/**डॉ. अनिल गहलौत**/228
7. ग़ज़ल-संग्रहों की भीड़ से इतर ग़ज़ल संग्रह 'ये आँसू'/**सतीश गुप्ता**/229
8. कोई आवाज़ देता है/**डॉ. वरुण कुमार तिवारी**/231
9. जीवन प्रतिबद्धता से जुड़ी सार्थक ग़ज़लें/**डॉ. वरुण कुमार तिवारी**/234
10. आज के दौर की दास्तान है—'घुटन'/**डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज'**/237
11. समकालीन ग़ज़लकारों पर अहम किताब—'समकालीन हिन्दी ग़ज़ल परम्परा और विकास'/**अनन्त विजय**/240

गतिविधियाँ/समाचार/242

कुछ पठनीय लघु पत्र-पत्रिकाएँ/248

प्रकाशित रचनाओं के रचनाकारों की राय से संपादक एवं प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं किन्तु किसी बिन्दु पर प्राप्त प्रतिक्रिया प्रकाशित की जा सकती है।

किसी भी विवाद का न्यायक्षेत्र अररिया (बिहार) होगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पाठकों के पत्र

कुछ आपकी भी....

समाज का यथार्थ चित्रण

'परती पलार' का अक्टूबर-दिसंबर, 2010 का अंक प्राप्त हुआ। अन्य अंकों की भाँति ही यह अंक भी आकर्षक लगा। पत्रिका उत्तरोत्तर नई ऊँचाई छू रही है। संपादकीय से लेकर पुस्तक समीक्षा तक सभी कुछ लुभावना है।

पत्रिका में छपी लघु कथाएँ अपनी गहरी संवेदनाओं के कारण समाज का यथार्थ चित्रण कर रही हैं, जिसके कारण पाठक पर अपनी छाप छोड़ रही हैं। सभी कहानियाँ और आलेख भी अच्छे लगें।

मोहन द्विवेदी, हितेश कुमार शर्मा, अखिलेश निगम 'अखिल' एवं पपीहा श्रीवास्तव के गीत समाज का चित्रण कर रहे हैं। पत्रिका दिनोंदिन इसी प्रकार फलती-फूलती रहे। यही मेरी शुभ-कामना है।

—**रामनरेश पाल,** 21/385, इंदिरा नगर,
लखनऊ-226016

कहानियाँ अच्छी लगीं

परती पलार का जनवरी-मार्च, 2011 अंक प्राप्त हुआ। याद करने के लिए धन्यवाद, आभारी हूँ।

यह अंक हास्य-व्यंग्य की कहानियों/लेखों से समृद्ध और पठनीय ही नहीं, संग्रहणीय भी है। कुछ कहानियों को काफी दिनों बाद पढ़ा और अच्छी लगीं। 'अकबरी लोटा', 'पत्रकार जी, नमस्कार', 'चप्पलों के बहाने', हरिशंकर परसाई की 'भोलाराम का जीव' आदि कहानियाँ ऐसी हैं, इन्हें जितनी बार पढ़ा जाए कुछ-न-कुछ और मिलता है। आप भी बधाई के पात्र हैं, इन कहानियों को अपने पाठकों के सामने लाने के लिए। अच्छा कर रहे हैं आप लोग, *परती पलार* के माध्यम से। साधुवाद। मेरी शुभकामनाएँ।

—**मोहन द्विवेदी,** डी-108, महेन्द्रा एन्कलेव,
(शास्त्री नगर) गाजियाबाद-201002

हिन्दी साहित्य की सही सेवा

'परती पलार' (जनवरी-मार्च, 2011) पढ़ा। अच्छा लगा। साहित्यिक शोध को जारी रखें। हिंदी साहित्य की सही सेवा हो रही है। शुभकामनाएँ।

—**डॉ. नरेन्द्र नाथ लाहा,** 27 ललितपुर कॉलोनी,
डॉ. पी.एन. लाहा मार्ग, ग्वालियर (म.प्र.)

गुदगुदी का शिकार हुआ

लंबे अंतराल के बाद *'परती पलार'* का जनवरी-मार्च, 2011 हास्य व्यंग्य विशेषांक प्राप्त हुआ। पढ़ते पढ़ते गुदगुदियों का जहाँ एक ओर शिकार होना पड़ा वहीं दूसरी ओर अधिकांश रचनाओं ने समकालीन स्थितियों और समस्याओं पर सोचने को मजबूर कर दिया। अधिकांश रचनाकार परिचित हैं, अतः उनसे मुखातिब होकर बहुत अच्छा लगा। डॉ. परमेश्वर गोयल मेरे बिहार प्रवास में गढ़हरा (बरौनी) मेरे रेलवे आवास पर आ चुके हैं और उनकी कई कविताओं को कैसेट में बंद कर चुका हूँ। मेरा पूरा परिवार उनसे परिचित है।

डॉ. वरुण तिवारी की रचनाधर्मिता और आलोचना-शक्ति से भी परिचय मिलता रहा है। गत वर्ष नवंबर-दिसंबर में दिल्ली प्रवास में दो-तीन बार हम मिले थे।

'परती पलार' की साहित्यिक भूमिका अब किसी परिचय की मुहताज नहीं है। इसके विशेषांक पठनीय एवं संग्रहणीय होते हैं। सुसंपादन हेतु बधाई।

लालसा लाल तरंग, एलवल, आजमगढ़ (उ.प्र.)

अनूठा विशेषांक

अंक-01, वर्ष 2011 *परती पलार* पत्रिका मिली। मेरे आलेख को स्थान देने के लिए धन्यवाद। यह विशेषांक अपने आप में अनूठा है। जिसमें डॉ. वरुण कुमार तिवारी, डॉ. राम बहादुर 'व्यक्ति', डॉ. परमेश्वर गोयल, डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी, प्रो. हारुण रसीद 'अश्क', बरसाने लाल चतुर्वेदी, लतीफ घोंघी,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हरिशंकर परसाई, रमाशंकर श्रीवास्तव, फणीश्वरनाथ रेणु, श्रीलाल शुक्ल, बालेन्दुशेखर तिवारी, के.पी. सक्सेना, सतीश चतुर्वेदी, हितेश कु. शर्मा, राज राघव, त्रिलोक सिंह ठकुरेला, सुशांत सुप्रिय, आकांक्षा यादव, सत्यनारायण सत्य, अशोक अंजुम, डॉ. नरेन्द्र नाथ लाहा, गोपाल चतुर्वेदी, संतोष खरे, जैसे अनेक साहित्यिक महारथियों के आलेख हों, उसका क्या कहना? पत्रिका भविष्य में भी इसी तरह के आलेख से ओतप्रोत रहे इसी शुभकामना के साथ। आप स्वस्थ्य एवं सानन्द रहें ताकि पाठकों को पत्रिका नियमित रूप से पढ़ने को मिलती रहे।

–देवेन्द्र प्र. साह, कुलसचिव, विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ, गाँधीनगर, ईशीपुर, भागलपुर

ज्ञान की ऊर्जा से ओत-प्रोत

'परती पलार' का अप्रैल-जून, 2011 अंक अति आकर्षक आवरण पृष्ठ के साथ विशिष्ट लगा। संपादकीय में नमिता जी ने जिन विषयों को उठाया है वह आज निःसंदेह समाज और देश की उन्नति की राह के सबसे बड़े काँटे हैं। अंधविश्वास और रुढ़िग्रस्तता को दूर किया जाना बहुत जरूरी है।

इस अंक के आलेख महत्त्वपूर्ण हैं। हिंदी भाषा और साहित्य को लेकर अनिरुद्ध सिंह सेंगर, बसंत कुमार राय ने जहाँ पाठकों को ज्ञान की ऊर्जा से ओत-प्रोत किया है, वहीं राजेन्द्र परदेसी, डॉ. वरुण कुमार तिवारी ने अज्ञेय के साहित्य से परिचित करवाया है।

इस अंक की कहानियों में 'मातमपुरसी', 'मन का बोझ', 'खुश रहो बहू', 'धर्मसत्ता' आदि जहाँ कथ्य शिल्प की पूर्णता लिए है वहीं कृष्णशंकर की 'कचरा बीनने वाली लड़की–भागू' में जिस परिदृश्य का वर्णन किया गया है वह कचरा बीनने का ही है, फिर 'भागू' से पूर्व कचरा बीनने वाली लड़की लगाने का कोई औचित्य नहीं बनता। शीर्षक का आवश्यकता से अधिक लंबा खींचना या विशेषण का प्रयोग करना कथावस्तु के अंतर्मन के पट को पूर्व में खोल देता है। मेरे विचार से लेखक को इस बात पर ध्यान देना चाहिए। कथा अच्छी है यह भी कहने से परहेज नहीं करूँगा। इस अंक को पूरन सिंह, ठाकुर शंकर कुमार, काली चरण प्रेमी, अशफाक कादरी, डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम' आदि ने भी अपनी लघुकथाओं से मजबूत किया है। संपादक संस्थापक को अंक के लिए धन्यवाद।

–डॉ. भनुज प्रभात, फारबिसगंज

विशेषांकों की सूची दें

परती पलार का होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक मिला। आभार। आप अच्छा काम कर रहे हैं। क्षेत्रीयता के गर्व को विस्तार देकर जिस जातीय बोध को पल्लवित कर रहे हैं, उसकी सराहना करता हूँ। यह अंक अच्छा लगा। बधाई।

इस अंक की अनेक रचनाएँ देख गया। हालाँकि इस अंक में रचनादृष्टि (संपादन दृष्टि भी!) पर रचनाशीलता हावी है, फिर भी आपके संपादन श्रम की प्रशंसा करता हूँ। *परती पलार* के कितने विशेषांक आए हैं, इसकी सूची जरूर दें। शोधार्थियों की सुविधा के लिए अब तक के प्रकाशित अंकों की शोधदृष्टि भी दें। लेखों के प्रकाशन में उनका संश्लेषण भी हो तो पाठकों को सुविधा होगी।

इस अंक के रचनाकारों को मेरी बधाई एवं आपके संपादन कर्म को नमस्कार।

–डॉ. शिवनारायण

305, अमन अपार्टमेंट, भूतनाथ रोड, पटना-26

पर्याप्त पठनीय सामग्री

परती पलार का होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक मिला। हास्य-व्यंग्य पर इसमें पर्याप्त पठनीय सामग्री है। 'बीसवीं सदी की चर्चित व्यंग्य रचनाएँ' से जो व्यंग्यालेख लिए गए हैं वे ख्यातिप्राप्त व्यंग्य लेखकों की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं। बरसाने लाल चतुर्वेदी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, के.पी. सक्सेना, श्रीलाल शुक्ल, हरीश नवल, संतोष खरे और गोपाल चतुर्वेदी अपने समय के श्रेष्ठ व्यंग्य लेखक थे। इनकी स्तरीय व्यंग्य रचनाओं को एक स्थल पर पढ़ने का सुख अवर्णनीय है। परसाई जी का 'भोलाराम का जीव' कालजयी मार्मिक व्यंग्य है। अमरकथा शिल्पी रेणु का 'अक्ल और भैंस' यथार्थवादी व्यंग्यबोध से लैस है। डॉ. देवेन्द्र इन्द्रेश और सरोजनी प्रीतम ने भी जमकर लिखा है। राज राघव जी का हास्य-व्यंग्य सभी नामधारियों की सोच का साधारणीकरण है। सभी लघुकथाएँ समय सापेक्ष हैं। वे संवेदना से लबालब भरी हैं। डॉ. ब्रह्मजीत गौतम की 'हम नेताजी कहलाते हैं' सफल व्यंग्य कविता है। प्रभांशु कुमार की कविता प्रभावी और मार्मिक है। होली विशेषांक के नाम को सार्थक बनाती है। विमलेश चतुर्वेदी 'विमल' की 'बगरयो बसंत है' कविता बहुत मनमोहक और वासंती है। डॉ. शिवनंदन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कपूर का 'चना बे-चना है', ललित निबंध के गुणों और भावों से भरा है। मंजुल जी का 'होली' शीर्षक ललित निबंध भी ठीक-ठाक है पर 'दाढ़ी-पुराण' में भदेसपन है। विशेष आलेख में कुछ भी विशेष नहीं सब सामान्य है। हिंदी के श्रेष्ठ समीक्षक डॉ. वरुण कुमार तिवारी ने हिंदी व्यंग्य रिधा का संक्षिप्त मगर वैदुष्यपूर्ण इतिहास उपस्थित किया है। विशेषांक का सबसे महत्त्वपूर्ण शोध लेख है यह। मगर हिंदी में पहला व्यंग्य महाकाव्य डॉ. रामप्रसाद मिश्र का 'नेता चरित' है। डॉ. मिश्र ने 'मौर्ख्य शास्त्र' और 'इडिऑटिक्स' (अंग्रेजी में) ग्रंथ भी लिखा है। 'कॉफी हाउस' उनका व्यंग्य नाटक है। शोधालेख में उसका भी उल्लेख होना चाहिए था। डॉ. वरुण कुमार तिवारी ने 'सूअरवाड़ा', 'गांव गोहर से' और 'ब्रह्मफांस' की स्तरीय, वस्तुपरक और मार्मिक समीक्षाएँ लिखी हैं। डॉ. प्रेमकुमार ने 'अभिनव बालमन' की समीक्षा ईमानदारीपूर्वक की है। हास्य-व्यंग्य विधा विशेषांक का संपादकीय लौह लेखनी और तेजाबी स्याही से लिखा गया है। बेबाक, यथार्थवादी, निर्भय चिंतन। वर्तमान भारतीय जीवन का यह संपादकीय खुला दर्पण है, जिसमें घोटालों, नारी की दशा-दिशा, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, दलाली, कालाधन, नेताओं के वेतन-भत्ते, जातिवाद, परिवारवाद, भाषावाद, राज्यवाद, संप्रदायवाद, उग्रवाद, नक्सलवाद और आतंकवाद पर खुलकर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। संपादकीय विचारोत्तेजक और प्रेरक है, व्यंग्य की धार से लैश भी। एक ओर साहित्यिक समाचारों के स्तंभ समाप्ति की घोषणा है दूसरी ओर पत्रिकांत में कई साहित्यिक समाचार भी प्रकाशित हुए हैं।

परती पलार का 'होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक' अपने गेटअप, सामग्री-संकलन, छपाई-सफाई और विविधभावी रचनाओं के कारण हिंदी की शिखरस्थ पत्रिकाओं की अग्रिम पंक्ति में आ गया है। ऐसी जबर्दस्त, कालजयी और महत्त्वपूर्ण पत्रिका को हर कॉलेज और विद्यालय-पुस्तकालय में खरीदा जाना चाहिए। बड़े-बड़े सरकारी और गैर सरकारी संस्थानों में भी इतनी अच्छी पत्रिका नहीं निकल रही है। आपका यह सारस्वत साहित्यिक अश्वमेध यज्ञ सर्वतोभावेन श्लाघ्य और स्तुत्य है। आपने हिंदी पत्रकारिता का नया आकाश गढ़ा है। अररिया ने संपूर्ण हिंदी क्षेत्र का ध्यान अपनी ओर खींचा है। आपके साहस, समर्पण और हिंदी सेवा को सादर नमन।

–**डॉ. मुचकुन्द शर्मा,** पूर्व यूनिवर्सिटी प्रोफेसर,
ई-4/26, पो.-रिफाइनरी टाउनशिप,
जिला-बेगूसराय-851117 (विहार)

दंग रह गया

नमन। होली-अंक हेतु आभार। अरऽऽऽर! यह क्या? ग़म का दम निकल गया–हम सहम कर, भरम में पड़े, देखते रहे-ओऽहो? अररिया से 'होली अंक' आया है। होली तो हो ली। पर रंग है। आवरण ही वासन्ती है–नए रंग में, अमंग-उमंग के साथ दंग कर रहा। एक से बढ़कर एक रंग लेखकों के संग मिल, निस्संग भाव से, बेभाव छोड़े।

अभिनंदन! अभिवादन! बिहार के साहित्य-संस्कार में विहार कराने वाला कोई तो है, पुनः बधाई।

–**शिवनन्दन कपूर,** विट्ठल नगर
खण्डवा (म.प्र.)

निरंतर मजबूती की ओर

परती पलार का अक्टूबर-दिसंबर, 2010 अंक मिला। आभारी हूँ। संतोष हुआ कि पत्रिका, कस्बाई सीमाओं और संघर्षों के बावजूद, निरंतर मजबूत हो रही है।

राम अधीर का लेख थोड़ा और समय माँगता था। कुशेश्वर और जसवंत सिंह विरदी की कहानियाँ अच्छी हैं। गीतों के मुकावले ग़ज़लों की प्रस्तुति कहीं बेहतर रही।

–**शिवशंकर मिश्र,** 327/बी, कडरू,
राँची-834002।

रोचक और सशक्त रचनाएँ

परती पलार का जनवरी-मार्च, 2011 अंक प्राप्त हुआ।

यूँ तो *परती पलार* के सभी अंक विशेष होते हैं, पर समीक्ष्य 'होली अंक' परमविशिष्ट है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाए, कम है। अंक में सब कुछ अच्छा है। 'हास्य-व्यंग्य अंक' के रूप में प्रस्तुत अंक एक मील का पत्थर सिद्ध होगा। 'बीसवीं सदी की चर्चित व्यंग्य रचनाएँ' का आपने पूरा फायदा उठाया है। इसके मृत एवं अमृत रचनाकारों की रोचक एवं सशक्त चुनिंदा रचनाओं को अंक में स्थान देकर आपने अंक को अति सोद्देश्य, सशक्त फलतः सफल अंक बनाने का सफल प्रयास किया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंक में समाविष्ट ललित निबन्धों का लालित्य बड़ा मनहर लगा। चना में निहित ताक़त के बारे में पहले ही काफी पढ़-सुन चुका हूँ, लेकिन 'चना-बे-चना' रचना में भी साक्षात् चना से कम ताक़त नहीं भरी हुई है। 'व्यंग्यों का संकलन बहुत श्रेष्ठ है। ये आत्मा तक को प्रभावित एवं प्रसन्न करने वाले हैं। इंद्रियों और मन की बात छोड़िए। इतने अधिक व्यंग्य और इतने श्रेष्ठ कि अच्छे-अच्छे और श्रेष्ठ समीक्षक भी सर्वश्रेष्ठ के चयन में चकित-चकित हो जाएँ। अलबत्ता 'एक प्रयोग ऐसा भी' कुछ प्राइवेट-सा हो गया है। 'महिला दिवस और फ्रेंच टोस्ट' तथा 'काश हम मूर्ख होते' में व्यंग्य ही है, हास अति हास। स्तंभ 'कुछ अपनी भी' में बहुत कुछ है तथा सामयिक, मौजूँ और मौज शैली में है, जबकि डॉ. वरुण कुमार तिवारी के आलेख को पढ़कर लगा कि उनकी रुचि के वह निश्चित व्यंग्यकार हैं। शायद उन्हीं को उन्होंने आज तक पढ़ा भी है, अन्यों को नहीं। अंक में यह भी एक सुखद संयोग है कि इसमें 'अजी नाम में क्या रखा है?' तथा 'अजी नाम में क्या नहीं रखा है?' नामक दो परस्पर विरोधी नाम व भाव के कटाक्ष हैं और दोनों ही सफल आलेख हैं। अलबत्ता पद्य पक्ष अपेक्षाकृत अशक्त है, जबकि 'काला अक्षर' और 'पहचान' नामक लघुकथाएँ व्यक्तिगत-सी होकर भी अच्छी हैं।

–ओमप्रकाश मंजुल
पीलीभीत (उ.प्र.)

होली-हास्य विशेषांक

परती पलार का जनवरी-मार्च, 2011 का अंक मिल गया है। होली-हास्य विशेषांक है। विषय पर केंद्रित पर्याप्त से अधिक पठनीय सामग्री है। पढ़ने में समय लगेगा। अभी पद्यांश पढ़कर पत्र दे रहा हूँ। आवरण पृष्ठों पर अच्छी रचनाएँ हैं। एक वृहद संग्रहणीय विशेषांक दिया है आपने।

–चन्द्रसेन विराट, 121 वैकुंठधाम कॉलोनी
आनंद बाज़ार के पीछे, इन्दौर-452018 (म.प्र.)

अनूठा और निराला

परती पलार बदस्तूर मिल रही है। ताजा अंक होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक बहुत ही अनूठा और निराला बन पड़ा है। यह अंक यादगार, शानदार और जानदार है, जो सहेजकर रखने लायक है। आगामी अंक ग़ज़ल पर है यह जानकर बेहद खुशी हुई। उम्मीद है कि ग़ज़ल विधा में यह एक नया संगेमील होगा। मेरी तरफ से पेशगी मुबारकबाद कुबूल करें।

–इब्राहीम 'अश्क', अंधेरी (पूर्व), मुंबई-53

विशेषांक स्तरीय होते हैं

परती पलार का जनवरी-मार्च अंक मिला। समृद्ध अंक है। हास्य-व्यंग्य पर भरपूर सामग्री है। आपके विशेषांक स्तरीय होते हैं। इसी कड़ी में आगामी ग़ज़ल अंक का भी भरपूर स्वागत होगा।

–डॉ. ब्रह्मजीत गौतम 'गौतम कुटी', बी-85, मिनाल
रेसीडेन्सी, जे.के. रोड, भोपाल-462023

माटी की महक

परती पलार के दो अंक जन.-मार्च और अप्रैल-जून, 2011 के मिले हैं। धन्यवाद। इन अंकों में मेरी कोई रचना भले ही प्रकाशित नहीं हो पाई लेकिन जो रचनाएँ प्रकाशित हैं वे सर्वथा पठनीय हैं। आलेख ज्ञानवर्द्धक हैं तो कहानियाँ सामाजिक, जिनमें माटी की महक से लेकर नगरों की चहक तक दृश्यमान है, काव्य रचनाएँ भावपूर्ण हैं। आनंदित करती हैं। संस्मरण सुखदायी लगा तथा पुस्तक समीक्षाएँ प्रेरणादायी लगीं। बधाई।

–डॉ. सुरेश प्रकाश शुक्ल
संपादक, 'प्राची प्रतिभा' (मासिक पत्रिका), 554/93,
पवनपुरी लेन 9-आलमबाग, लखनऊ-5

शुभकामना संदेश

'परती पलार' का वर्ष छः अंक दो हुआ प्राप्त।
रचनाओं में विविधता पा संतुष्टि व्याप्त॥
ग़ज़ल-लघुकथा-कहानी है मानसिक खुराक।
आलेखों में विचार मंथन मुखर हुआ बेबाक॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संपादक की लेखनी रोमांचित उद्‌गार।
पाठकों के पत्र में उमड़ रहा है प्यार॥
सफल-सार्थक-प्रकाशन, साधुवाद लें आप।
शुभकामना 'पथिक' करे कभी न हो संताप॥

–डॉ. गौरीशंकर श्रीवास्तव 'पथिक'
जवाहर नगर, सतना (म.प्र.)

शब्दों का नया घर है पत्रिका

परती पलार का (जनवरी-मार्च 2011) अंक प्राप्त हुआ। प्रसन्नता हुई। आपकी पत्रिका श्रेष्ठ है–यह पढ़ने के पहले देखकर ही अनुभव हो जाता है। इस अंक में आपकी संपादकीय दृष्टि, विचार और प्रकाशन-कौशल का सम्मिलित वैभव देखने को मिलता है। आपने रचनाओं के चयन पर भी बिहार की अन्य पत्रिकाओं की अपेक्षा अधिक ध्यान दिया है। सहज ही यह पत्रिका राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में शामिल होने योग्य है। इसका रूप-शिल्प तथा इसके शब्द-शब्द पर किया गया आपका श्रम अलग से दीखता है। लगता है, आपने पत्रिका नहीं, शब्दों का एक नया-सा घर बनाया है। सचमुच आपकी क्षमता की प्रशंसा कोई भी कर सकता हैं मेरी अजस्र शुभकामनाएँ।

–डॉ. शांति सुमन

रचनाएँ संग्रहणीय और उपयोगी

परती पलार के जनवरी-मार्च, 2011 के अंक में आनंद तिवारी लिखित मेरी पुस्तक 'दुनिया नहीं अँधेरी होगी' की समीक्षा प्रकाशन के लिए हार्दिक आभार। परसाई जी से लतीफ घोंघी तक चयनित रचनाएँ इस अंक को पठनीय एवं संग्रहणीय बनाती हैं। अन्य रचनाएँ भी रुचिकर हैं। संपादकीय भी सटीक और काफी व्यंग्यपरक है। डॉ. वरुण कुमार तिवारी का व्यंग्यपरक आलेख उपयोगी है। इस पत्रिका के साथ अर्थपूर्ण भागीदारी आवश्यक है।

–देवेन्द्र कुमार पाठक, कटनी (म.प्र.)

संपादकीय में किसी को नहीं छोड़ा

परती पलार जनवरी-मार्च 2011 अंक प्राप्त हुआ। संपूर्ण अंक होली विशेषांक होने के कारण हास्य-व्यंग्य से आपूरित है। सभी रचनाएँ हास्य-सरोवर में गोते लगवाती हैं, गुदगुदाती हैं। संपादकीय में–'कुछ अपनी भी'...में आपने किसी को नहीं छोड़ा है, सही-सही रंग में रंग कर कालिख में डुबोया है, रचनाएँ सभी अलबेली है मिश्री में छिपी नमक की ढ़ेली है।

नाम भले ही परती-पलार हो, प्रत्येक पृष्ठ-सृजन से भरा है। जनवरी-मार्च अंक जनवरी की अपेक्षा अप्रैल में मिला है। हास्य का फूल जरा विलंब से खिला है। सृजनात्मक दीर्घायु होने की शुभकामनाओं के साथ।

डॉ. सन्तोष गौड़ 'राष्ट्रप्रेमी', स्नातकोत्तर शिक्षक, जवाहर नवोदय विद्यालय, खुंगा-कोठी, जींद-126102 (हरियाणा)

गागर में सागर

परती पलार का अप्रैल-जून अंक प्राप्त हुआ। चूंकि मैं भी बिहार का ही हूँ और बिहार से ही प्रकाशित एक विशेष पत्रिका का हस्तगत होना, मेरे लिए प्रसन्नता की बात होना ही चाहिए था। आपकी सूझबूझ और परिश्रम का मैं कायल हो गया। आपने **गागर** में सागर भरने का जो प्रयास किया, उसकी सराहना करनी पड़ेगी। संपादन-संकलन, साज-सज्जा, सभी दृष्टि से मुझे पत्रिका चकित कर गई। प्रकाशित रचनाओं में डॉ. रामनिवास का आलेख संत रविदास के बारे में अच्छी जानकारी दे गया। डॉ. तारादत्त निर्विरोध की कहानी, श्री अमरनाथ मेहरोत्रा की कविता, महेन्द्र अग्रवाल, डॉ. मधुर नज़्मी, विज्ञानव्रत की ग़ज़लें, रामकिशोर कपूर के क़ताआत अच्छे लगे। सबको बधाई।

अंत में मेरी शुभकामनाएँ। आप यशस्वी हों, ऐसा आशीर्वाद भी, क्योंकि अस्सी की आयु पार कर रहा हूँ?

खन्ना मुज़फ़्फ़रपुरी, 1/डी-1, ब्लू आर्च, कॉन्वेट एवेन्यू, चार बंगला, अँधेरी, प. मुंबई-53,

खाप पंचायत : सही शल्य चिकित्सा का प्रयास

परती पलार का अप्रैल-जून 2011 का ताजा अंक हस्त गत हुआ, आभार। पत्रिका बेहद सुंदर, मनोहारी, एवं दिनों दिन-प्रगति पथ पर अग्रसर होती हुई प्रतीत होती है। साफ-सुथरी छपाई, साज-सज्जा एवं नमनाभिराम आवरण तथा उच्च स्तर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की साहित्यिक रचनाओं को पढ़कर हृदय मुग्ध हो जाता है। आपके संपादकीय का तो कहना ही क्या? बेहद सटीक। युग और समय की विकट होती परिस्थितियों की ओर न केवल ध्यान ही आकर्षित करता है अपितु उनका सही निदान करने की सलाह भी देता है।

गोत्र विवाद पर हरियाणा में खाप पंचायतों के निर्णयों पर-सही शल्य चिकित्सा का प्रयास स्तुत्य है।

"खाप पंचायतों का ये जोर जुल्म शायद बहुत लंबे समय से चला आ रहा है...न्यायालयों के निर्णय भी टूट-टूट कर काग़ज़ के टुकड़ों की तरह हवा में बिखरते रहे हैं। जब गलत कामों के कड़े विरोध के सामूहिक स्वर मुखर न हो तो अत्याचार और अनाचार भी बढ़ेंगे ही।

आनर किलिंग के नाम पर खाप पंचायतों के निर्णय बेहद हृदय विदारक होते हैं। कानून भी जब पंगु हो जाए—स्थिति और भी विकट हो जाती है।

आपका यह कथन नितांत सत्य का उद्घोषक है। तभी समाज सुधार होगा और जब समाज सुधरेगा तो देश की भी निर्वाध उन्नति सुनिश्चित होगी।

ऐसी उत्तम साहित्यिक पत्रिका के प्रकाशन व संपादन पर मेरी हृदय से शुभकामनाएं। अनंत साधुवाद।

उदय करण 'सुमन', (प्रधान संपादक),
सुमन सेवा सदन, रायसिंह नगर-335051,
जिला-श्रीगंगानगर

सामाजिक सुरक्षा का प्रश्न

त्रैमासिक *परती पलार* अप्रैल-जून 2011 अंक मिला है। आभारी हूँ। कुछ आलेख पढ़े, अच्छे लगे। डॉ. प्रभा दीक्षित का 'रोजगार से जुड़ा सामाजिक सुरक्षा का प्रश्न' परत दर परत खोलना कुछ सोचने को मजबूर करता है कि कैसा है यहाँ प्रजातांत्रिक सामाजिक ढांचा और किन हाथों में है देश की बागडोर?

'प्रयोगवाद के पुरोधा अज्ञेय' और डॉ. वरुण कुमार तिवारी का आलेख 'कवि और काव्यगत संवेदनाएं' जितना पढ़िए उतना कम। प्रो. नीलम वर्मा 'नमन' का गीत और अन्य रचनाओं ने भी प्रभावित किया। ग़ज़लों के कुछ शे'र अच्छे लगे। नलिनी कांत और राधा के हाइकू पर भी नज़र टिकी। कुल मिला कर *परती पलार* की हर अदा पसंद आई। आप स्वस्थ सानंद हों।

भगवान दास ऐज़ाज, दिल्ली

समाज में जागरूकता जरूरी

परती पलार अप्रैल-जून, 2011 अंक-02 प्राप्त हुआ। संपादकीय 'कुछ अपनी भी' में वंश-गोत्र, कुरीतियों, अंध-विश्वास और रूढ़िवादिता के विरुद्ध संक्षिप्त किंतु सागर से भी विस्तृत आपकी अभिव्यक्ति काबिले-तारीफ है। सच, कानूनों का आज कोई मतलब नहीं रह गया है। इसके लिए समाज में जागरूकता की महती आवश्यकता है। अंक में सभी सामग्री पठनीय, मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक है। लघुकथा—श्यामसुंदर सुमन की 'ईमानदारी', शबनम शर्मा की 'कसौटी', 'माँ या गीता'—पूरन सिंह, अंकुश्री की 'पक्की नौकरी' एवं संतोष सुपेकर की 'कुदृष्टि', कहानी—डॉ. नीरज वर्मा 'नीर' की 'मातमपुरसी', 'खुश रहो बहू'—प्रभात दुबे एवं डॉ. गौरी शंकर 'पथिक' का 'बदला', आलेख—'संत रविदास का प्रामाणिक जीवन-वृत्त'—डॉ. रामनिवास एवं डॉ. प्रभा दीक्षित का 'रोजगार से जुड़ा सामाजिक सुरक्षा का प्रश्न', डॉ. मधुर नज़्मी, आफ़ताब अहमद खान 'रवि', अशोक आलोक एवं रमेशचन्द्र श्रीवास्तव की ग़ज़लें तथा 'निराला का रोगन जूस और बाबा नागार्जुन'—डॉ. अनुज प्रभात का संस्मरण विशेष आकर्षण है। आपका संपादन कौशल स्तुत्य एवं प्रशंसनीय है। एक साफ़-सुथरी एवं श्रेष्ठ प्रस्तुति के लिए बधाई स्वीकारें।

शेष शुभ! ईश्वर से आपकी कुशलता एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना के साथ—

—अंसार कंबरी, ज़फर मंज़िल', 11/116, ग्वालटोली,
कानपुर-208001,

निर्भीक संपादकीय

परती पलार का नवीनतम अंक (अप्रैल-जून, 2011) अपनी नई सज-धज के साथ मिला। बड़े दिनों के बाद आपकी कृपा दृष्टि हुई। एतदर्थ अनुगृहीत हूँ। अंक वैविध्यपूर्ण विपुल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्कृष्ट साहित्यिक सामग्री से समृद्ध है। आपका संपादकीय गौरतलब है। करनाल जिले की खाप पंचायत द्वारा गोत्र विषयक विवाद के तहत एक नवविवाहित दंपति (मनोज-बबली) की निर्मम हत्या निस्संदेह एक भीषण वर्बरता है। आपने संपूर्ण संपादकीय द्वारा निर्भीकता के साथ समाज और न्याय-व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न लगाया है।

'हिंदी-विश्व पटल पर' (श्री अनिल सिंह सेंगर) तथा 'अज्ञेय : कवि और काव्यगत संवेदनाएँ' (डॉ. वरुण कुमार तिवारी) के आलेख विशेष ध्यानाकर्षक व ज्ञानवर्द्धक हैं। प्रायः सभी ग़ज़लें प्रतिष्ठित रचनाकारों द्वारा रचित हैं, अतः उनकी उत्कृष्टता निर्विवाद है। संकलित गीत-कविताएँ भी संवेद्य हैं। कहानियाँ समकालीन बोध से अनुप्राणित, लघुकथाएँ चुटीली तथा समीक्षाएँ सर्वग्राही व सर्वथा संतुलित हैं। आपकी विलक्षण संपादकीय प्रतिभा सर्वथा श्लाघ्य एवं अंकस्थ सभी रचनाकार अभिनंदनीय हैं।

पुनश्च, विशेषांक प्रकाशन के क्षेत्र में ख्यातिलब्ध *परती पलार* का अक्टूबर-दिसंबर, 2011 का अंक ग़ज़ल विशेषांक के रूप में प्रकाशित करने के लिए आप कृत संकल्प हैं। यह जानकर प्रसन्नता हुई। विशेषांक के सफल प्रकाशन के लिए हार्दिक मंगलकामनाएँ स्वीकार करें।

–प्रो. भगवान दास जैन, बी-105, मंगलतीर्थ पार्क, कैनाल के पास, जशोदानगर रोड, मणीनगर (पूर्व) अहमदाबाद-382445,

शोधार्थियों के लिए मील का पत्थर

परती पलार जनवरी-मार्च, 2011 अंक मिला। आभार। विशेषांक की परंपरा में यह अंक भी प्रभावी लगा। व्यंग्यात्मक गीत, ग़ज़ल, दोहे, कटाक्ष, क्षणिकाओं के अतिरिक्त व्यंग्य आलेख भी संजोकर विशेषांक को शोधपरक बनाने में आपके संपादकीय प्रयास ने चार चांद लगा दिए हैं। सर्वश्री लतीफ घोंघी, हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ल, रेणु, गोपाल चतुर्वेदी, सरोजनी प्रीतम, सूर्यबाला, के.पी. सक्सेना बालेन्दु शेखर आदि के प्रसिद्ध व्यंग्य बीसवीं सदी के संकलन से उद्‌भूत अंक को काफी गरिमामयी बना रहे हैं।

निश्चय ही यह अंक शोधार्थियों के लिए मील का पत्थर सिद्ध होगा। ऐसे महत्त्वपूर्ण अंक के प्रकाशन/संपादन हेतु शतशः बधाई स्वीकारें, बंधुत्व बनाये रहें।

उपेन्द्र मदन मोहन, संपादक : 'सम्यक' ए-10, शांतिनगर, मथुरा (उ.प्र.)

कई मसलों को बड़ी गंभीरता से उभारा

जनवरी-मार्च का अंक अवश्य थोड़ा विलम्ब से मिला किंतु अप्रैल-जून का अंक उतना ही शीघ्र। हास्य-व्यंग्य विशेषांक अपने आप में बहुत महत्त्वपूर्ण अंक बन गया है। नमिता जी ने संपादकीय में नारियों की स्थिति, राजनेताओं की कुटिल नीति, 'वादों' की बढ़ती अहमियत, बिकाऊ आदमी, मिलावटी सामानों की बिक्री आदि मसलों को बड़ी गंभीरता से उभारा है। समझ नहीं आता कि इन हालातों का जिम्मेदार कौन है और कौन इससे मुक्ति दिलाएगा? क्या हम पढ़-लिखकर ही अपनी जिम्मेदारियों की इतिश्री समझते रहेंगे? आखिर कब तक...

अप्रैल-जून अंक में अनिरुद्ध सिंह ने हिंदी को विश्व-पटल पर बड़े प्रमाण के साथ चित्रित किया है। वसंत कु. राय और डॉ. वरुण कुमार तिवारी के लेख महत्त्वपूर्ण हैं। राजेन्द्र परदेसी ने अज्ञेय पर अच्छी सामग्री दी है। संत रविदास पर भी प्रामाणिक लेख पठनीय है। कहानियाँ समय के साथ प्रवाहशील हैं। लघुकथाओं में मार्मिक संदेश भरे पड़े हैं। पत्रिका छपाई के साथ सामग्री से भी बेहतर बन रही है। हाँ, यह प्रासंगिक नहीं लगता कि हिंदी दिवस पर लेख अप्रैल में आएँ। समय का ध्यान रखना चाहिए, ऐसा मेरा सुझाव है।

–अरविन्द अवस्थी, श्रीधर पाण्डेय सदन, बेलसरिया का पुरा, मिर्जापुर (उ.प्र.)

गनीमत है, हम पूर्ण 'सेंस' में हैं

परती पलार का 'हास्य-व्यंग्य' विशेषांक (जनवरी-मार्च 2011) प्राप्त हो गया। धन्यवाद। संपादकीय की बेबाक टिप्पणी ने मुझे काफी प्रभावित किया है। वाह! आपने खूब लिखा है–''आप मानें या न मानें, लेकिन सच तो यह है कि हमारा देश भारत महान है। इसकी बराबरी दुनिया का कोई नहीं कर सकता। परलोक भी नहीं।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं सोचता हूँ कि इसके पीछे हमारी जिजीविषा, जिंदादिली का राज है। नहीं तो हम देश में व्याप्त अनाचार, भ्रष्टाचार, आर्थिक अपराध, सरकारी धन की लूट, प्राकृतिक संसाधनों की लूट, आदिवासी-दलितों के साथ अन्याय शोषण और शिखर चढ़ती महँगाई को देख कब न पागल बन गए होते। लेकिन, गनीमत है कि हम पूर्ण 'सेंस' में हैं।

अपना देश घोटालों, मिलावटों, नक्कालों का देश तो है ही, हम जातिवाद, परिवारवाद, वर्गवाद आदि गुणों से भी आवेष्ठित हैं। संपादकीय को पढ़ते वक्त सहसा मुझे स्मरण हो आया एक प्रसिद्ध अमेरीकी व्यंग्य लेखक मार्क ट्रवेन का यह कथन–

''यह हिंदुस्तान है। सपने और रोमांस की जगह। कमाल की अमीरी, गजब की गरीबी; भव्यता और गंदगी का पूर्ण घालमेल, राजमहल और झोपड़ियों; सूखा और हरियाली; घटियापन और बड़प्पन; कोबरा और जंगल का देश; हजारों भाषाएँ, हजारों धर्म। करोड़ों देवी-देवता, दुनिया का सर्वथा अकेला देश। बाहरी सौ देश मिलकर भी एक हिंदुस्तान नहीं बन सकते। नहीं बन सकते।''

तब, जब एक विदेशी लेखक यहाँ पधार कर हमारे गुणों को परख गए हैं तो उन गुणों को कायम तो रखना ही है। रखना भी चाहिए भैय्ये! खैर, सामयिक तथ्यों से परिपूर्ण संपादकीय के लिए आपको पुनः साधुवाद।

ध्रुव तांती, ग्रा.+पो.- मैनाग्राम, सहरसा (बिहार)

अच्छी बखिया उधेड़ी है

वर्ष : 6 का *परती पलार* का प्रथम अंक देखने का सुअवसर मिला। यह हास्य-व्यंग्य विशेषांक है पर ऐसा लगता है जैसे इस अंक के द्वारा होली जैसे पावन पर्व का अभिनंदन किया गया है। विदुषी संपादिका महोदया ने भी अपने व्यंग्यात्मक लहजे में ही भारत जैसे 'महान' देश में पलने और पोषित होने वाले रिश्वतखोरी, नारी शोषण एवं उत्पीड़न तथा पुलिस अत्याचार को प्रश्रय देने वाले लोगों की अच्छी बखिया उधेड़ी है। सभी बुराइयों का सूक्ष्म अवलोकन किया गया है। आरंभ में ही प्रख्यात आलोचक डॉ. वरुण कुमार तिवारी का व्यंग्य से संबंधित आलेख प्रमादित करने वाला है। व्यंग्य विधा को हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा मानते हुए उन्होंने उसका आलोचनात्मक इतिहास भी प्रस्तुत कर दिया है। कबीर को उन्होंने एक प्रकार से व्यंग्य का जनक ही माना है जिन्होंने अपनी सधुक्कड़ी भाषा में ही व्यंग्य की अभिव्यक्ति दी है जो सपाट एवं सटीक है तथा किसी भी प्रकार की चाटुकारिता एवं पक्षपात आदि से सर्वथा मुक्त है। आधुनिक युग में भी भला व्यंग्य के पितामह जनबोधी कवि नागार्जुन को कौन भूल सकता है? उन्होंने 'इमर्जेंसी' काल में धारदार व्यंग्यात्मक उद्घोष किया था, ''जनकवि हूँ मैं/क्या चाटूं थूक तुम्हारी?'' पर डॉ. तिवारी ने अपने आलेख में बीसवीं सदी के उर्दू और हिंदी के नामी व्यंग्यकार कृशन चंदर के नाम का उल्लेख नहीं किया है जिन्होंने अपनी कृतियों 'जामुन का पेड़' तथा 'एक गधे की आत्मकथा' में 'धारदार व्यंग्य का प्रयोग किया है'। 'जामुन के पेड़' की शीर्षक कथा में सेक्रेटेरियट की कछुए की चाल-सी चलने वाली कार्यप्रणाली पर तीखा आघात किया है जहाँ एक जामुन के पेड़ के पतन से दबे हुए एक आदमी को जब मुक्त करने की चेष्टा की जाती है तो विभागों के आपसी संघर्ष के कारण उसका निधन हो चुका होता है। पेड़ को हटाने में कौन विभाग पहल करेगा इसका निर्णय जब हुआ तब तक उस बेचारे दबे हुए आदमी का प्राणांत हो चुका था। 'एक गधे की आत्मकथा' में भी व्यंग्य का उत्कर्ष दर्शनीय है। इस अंक में डॉ. रामबहादुर व्यथित का होली विषयक आलेख शालीन, सरस एवं तथ्यपरक है। उन्होंने होली को 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' के रूप में प्रेम एवं कल्याणपरक त्योहार माना है। डॉ. शिवनन्दन कपूर का ललित निबंध लालित्य एवं सौष्ठव से भरपूर है। चना जैसे अनाज की पूर्ण गाथा गाई हुई है। चना को उन्होंने एकता का सम्यक प्रतीक मानते हुए इसके गुणों पर भव्य प्रकाश डाला है। हास्य-व्यंग्य के नामी शिरोमणियों का धारदार कथात्मक आलेख की प्रस्तुति ने अंक को संग्रहणीय बना दिया है। मुझे लतीफ घोंघी के व्यंग्य को भी पढ़ने का अवसर मिला है। इसे मेरी उपलब्धि ही मानी जानी चाहिए। रेणु जी का व्यंग्यात्मक आलेख तो कहीं भीतर तक मुझे छू गया। 'मैला आँचल' का आंचलिक कथाकार इतना अच्छा व्यंग्य भी लिख सकता है, इससे तो मैं अब तक अपरिचित ही रहा था। ओम वर्मा के 'आदमी के दूध' में एक अनूठे हास्य-व्यंग्य के रसास्वादन का मौका मिला है। लघुकथा के संवर्ग में कृष्णा अग्निहोत्री, आकांक्षा यादव, त्रिलोक सिंह ठकुरेला की लघुकथाएँ अच्छी लगीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविताओं का भी अच्छा चयन एवं सजावट है। डॉ. रामबहादुर व्यथित, विमलेश चतुर्वेदी 'विमल', राजकुमार कुंभज एवं डॉ. ब्रह्मजीत गौतम की रचनाएँ मन को मोहने वाली हैं।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि हास्य-व्यंग्य के इस विशेषांक में हास्य के साथ ही व्यंग्य का भी अनोखा संगम है। वैसे भी मेरा मानना है कि हास्य और व्यंग्य जुड़वाँ भाई की तरह ही हैं जिन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। दोनों के ही शिल्प और कथ्य में साम्य ही रहता आया है। इस सुंदर अंक के लिए संपादक को ढेरों बधाइयाँ। आपने मेरी रचना भी प्रकाशित की है, आभार व्यक्त करता हूँ।

अमरनाथ मेहरोत्रा

रज्जु साह लेन, रमना, मुजफ्फरपुर-842002 (बिहार)

उत्कृष्ट सामग्री से परिपूर्ण

आपकी सम्मानित पत्रिका का जनवरी-मार्च, 2011 होली विशेषांक प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

हमेशा की तरह प्रेरक संपादकीय, श्रेष्ठ रचनाओं तथा स्तंभों सहित हास्य-व्यंग्य की उत्कृष्ट सामग्री से परिपूर्ण यह अंक आकर्षक सज्जा के कारण भी काफी हृदयग्राही बन गया है।

मधुर गंजमुरादाबादी, हितैषी स्मारक सेवा समिति, गंजमुरादाबाद, उन्नाव (उ.प्र.)-209869,

नए लेखकों की अच्छी रचनाएँ

परती पलार मिलता रहता है। धन्यवाद। नवीनतम अंक, जनवरी-मार्च, 2011 का जो हास्य-व्यंग्य विशेषांक मिला है, वह सामान्य अंकों से हट कर वस्तुतः एक दस्तावेजी अंक है और संग्रहणीय है। इस अंक में पुराने-नए वरिष्ठ लेखकों की वे भी रचनाएँ हैं, जो बहुत पहले छपी थीं। इन सबका एक जगह संकलन वस्तुतः इसे संग्रहणीय अंक बनाता है।

अनेक भर्ती की रचनाएँ भी इसमें आ गई हैं। कुछ नए लेखकों की अच्छी रचनाएँ हैं तथापि अनेक कमजोर रचनाएँ भी हैं। होना तो यह चाहिए था कि इस अंक को मात्र नए-पुराने वरिष्ठ लेखकों की ही रचनाओं का संकलन बनाना तथापि कुछेक अच्छे नवीन लेखकों को भी जगह मिलनी चाहिए थी।

सर्वश्री अन्नपूर्णानंद, रेणु, श्रीलाल शुक्ल, रवीन्द्रनाथ त्यागी, परसाई, हरीश नवल, लतीक घोंघी, सूर्यबाला, सरोजिनी प्रीतम, के.पी. सक्सेना आदि के साथ आप यदि कुछेक उर्दू के हास्य व्यंग्यकारों को भी रखतीं जैसे अजीम बेग, चुगताई, शौकत थानवी, पतरस आदि तो यह अंक एक मानक अंक बन जाता।

वैसे, हिंदी हास्य-व्यंग्य के पुरोधा जी.पी. श्रीवास्तव की रचना यहाँ न होने से थोड़ा अधूरापन रह गया है।

तथापि, इस अंक के लिए धन्यवाद। मैंने भी बहुत व्यंग्य लिखे हैं जो पाठकों ने बहुत पसंद किए हैं, इस अंक की तैयारी का पता रहता तो अपनी भी रचना भेज देता।

–**चन्द्रमोहन प्रधान,** आमगोला, मुजफ्फरपुर-2

...तो व्यंग्यकार क्या करेगा?

परती पलार के अंक मिलते रहे हैं। अभी-अभी जनवरी-मार्च, 2011 का अंक मिला है। आपने अपने संपादकीय में देश की चारित्रिक गिरावट को खूब व्याख्यायित किया है। बड़ा अच्छा लगा इसे पढ़कर।

यह अंक होली के अवसर पर हास्य-व्यंग्य विशेषांक है और आपने इसमें दस्तावेज़ी व्यंग्य रचनाएँ संकलित कर एक साथ काफी सामग्री दी है। बधाई कि आपने यह सब किया लेकिन मूर्धन्य व्यंग्यकार डॉ. श्यामसुंदर घोष की कोई व्यंग्य रचना आप नहीं दे पाईं, यह मन छोटा करने की बात हुई।

एक बात मेरी समझ में नहीं आती है। हास्य-व्यंग्य रचनाओं के रचनाकार साहित्य के बहाने जनसाधारण की विसंगतियों-विद्रूपताओं को इंगित करते हैं ताकि जनसाधारण उनसे सीख ले और अपने दुराचरण को सदाचरण में बदले लेकिन यह हो नहीं रहा है। जनसाधारण इन व्यंग्यों से तिलमिलाता नहीं बल्कि खिलखिलाता है। वह स्वयं में सुधार कर व्यंग्यकारों के अस्त्रों-शस्त्रों को नकारने की क्षमता रखता है पर वह करता नहीं। सोचिए, व्यंग्य के शिकार व्यक्ति यदि स्वयं को सुधार लें तो व्यंग्यकार करेगा क्या? उसका आकाश छोटा नहीं हो जाएगा? तब शायद हास्य-व्यंग्य विशेषांक निकालने से ही निजात मिले।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

खैर! 'हम नहीं सुधरेंगे', हमारा नारा है। तब व्यंग्यकार भला चुप क्यों बैठें। वह तो अपने तूणीर से व्यंग्य वाण निकाल-निकाल कर छोड़ता ही रहेगा न।

इन दस्तावेज़ी व्यंग्यालेखों के अतिरिक्त व्यंग्य-कविता, व्यंग्य-कहानी, व्यंग्य-लघुकथा सभी सार्थक हैं और भरती के नहीं हैं। हाँ गीत-कविता में छंद का निर्वाह नहीं हुआ है, पर छपा है तो इसे संपादकीय विचलन कहा जाएगा।

आवरण-2 पर डॉ. व्यथित की गीत रचना 'भोर की किरणें उतारे आरती' के प्रत्येक चरण में 19-19 मात्राएँ अपेक्षित हैं, पर दूसरे चरण की प्रथम दो पंक्तियों में 21, 18 मात्राएँ, तीसरे चरण की प्रथम दो पंक्तियों में 16, 17 एवं चौथे चरण की चौथी पंक्ति में 18 मात्राएँ हैं, जिन्हें मात्रा दोष कहा जाएगा।

–रमेश नीलकमल, संपादक-'शब्द कारखाना'
अक्षर विहार, अवन्तिका मार्ग, जमलापुर-811214 (बिहार)

रचनाएँ पसंद आईं

परती पलार का नया (जनवरी-मार्च, 2011) अंक मिला। आभारी हूँ। पत्रिका की योजनाओं में विकास अंक पलटते ही दृष्टिगत होता है। विस्तार भी उतना ही सुखद है। रचनाएँ भी कई बहुत पसंद आईं। इनके अतिरिक्त समीक्षाएँ और साहित्यिक सूचनाएँ-समाचार भी अंक के आकर्षण को बढ़ाते हैं। होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक की इस समृद्ध प्रस्तुति पर मेरी हार्दिक बधाई, साधुवाद।

–शिवशंकर मिश्र, संपादक-'सार्थक'
327/बी, कडरू, राँची-834002

'राम-कथा' की आयु लें

आपका इनायतनाम : 'परती पलार' का सब्ज़ दामन थामकर, नसीब हुआ। आत्मिक आभार। 'परती पलार' मुझे पहली बार मिली है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से पत्रिका के विषय में सदाशयी जानकारी थी इसी आधार पर प्रकाशनार्थ अपनी ग़ज़लें भेजी थीं। पत्रिका अपने अंतः कलेवर और बाह्य कलेवर में पूरे तौर पर साहित्यिक मनोरमा से समन्वित है। इस यक़ीन से पुरयक़ीन हूँ कि 'परती पलार' का ग़ज़ल विशेषांक भी अन्य अंकों की भाँति ऐतिहासिक समृद्धता की मनोरम सृजनाकृति सावित होगा। ईश्वर समूचे पत्रिका-परिवार को 'राम-कथा' की आयु दे!

–डॉ. मधुर नज्मी, 'काव्यमुखी साहित्य-अकादमी'
गोहना मुहम्मदाबाद, ज़िला–मऊ-276403 (उ.प्र.)

संग्रहणीय विशेषांक

परती पलार का हास्य-व्यंग्य विशेषांक सामने है। हास्य-व्यंग्य के हरिशंकर परसाई, रवीन्द्रनाथ त्यागी, श्रीलाल शुक्ल, हरीश नवल, के.पी. सक्सेना, लतीफ घोंघी, बरसाने लाल चतुर्वेदी, गोपाल चतुर्वेदी जैसे धुरंधर जिस अंक में हों–वह कैसे न संग्रहणीय बने। वाकई बहुत अच्छा व संग्रहणीय विशेषांक बन गया है ये। अनंत बधाइयाँ।

–अशोक 'अंजुम', संपादक,
615, ट्रक गेट, कासिमपुर, अलीगढ़-202127 (उ.प्र.)

धन्यवाद-आशीर्वाद (हायकु में)

(1) है सुहावन/'परती पलार' का/सु आवरण।

(2) है अंतरंग/रचनाओं से भरा/रंग-विरंग।

(3) हैं संपादक/विदुषी भली-चंगी/शुभ चाहक।

(4) अच्छा खुराक/मिलता पाठक को/पावन-पाक।

(5) यह पत्रिका है/हिंदी त्रैमासिक/शुभ दायिका

(6) है धन्यवाद/बहन नमिता को/है आशीर्वाद

–डॉ. नरेश पाण्डेय चकोर
संपादक-'अंग माधुरी' बोरिंग रोड (पश्चिम)
59 गाँधी नगर, पटना 800001

यह अजीब मुल्क है

होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक जनवरी-मार्च, 2011 प्राप्त हुआ। आभार। आभारी इस बात के लिए भी कि आपने मेरी एक लघु कथा 'ईमानदारी' को भी समुचित स्थान प्रदान किया है।

सर्वप्रथम संपादकीय पढ़ी, बेबाक लेखनी का अनुपम उदाहरण है। जो सच है, उसे लेख किया गया है। सहसा एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पुरानी स्वयं की कविता याद आ गई जिसे लिखना आवश्यक समझता हूँ–

यह अजीब मुल्क है,
रिश्वत सुविधा शुल्क है,
काम होगा मरजी से
जल्दी है तो शुल्क है॥
यह अजीब मुल्क है...
यह नदियों का मुल्क है,
पानी भी भरपूर है,
बोतल में बिकता है,
दस रुपया शुल्क है॥
यह अजीब.....
यह शिक्षकों का मुल्क है,
पाठशालाएँ भी खूब हैं,
बच्चे पढ़ने जाते नहीं,
शिक्षा निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह गरीब मुल्क है,
आवादी भी खूब है,
परिवार नियोजन मानते नहीं,
नसबंदी निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह आपका मुल्क है,
कर कुछ सकते नहीं,
कह कुछ भी सकते हैं,
बोलना निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह अजीब मुल्क है,
निर्वलों पर हर शुल्क है,
गर हो महावली,
हर सुविधा निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह शादियों का मुल्क है,
दान दहेज भी खूब है,
शादी की गुंजाइश नहीं,
कोर्ट मैरिज निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह पर्यटन मुल्क है,
रेलें भी खूब हैं,
बिना टिकिट पकड़े गए
रोटी, कपड़ा, मकान, निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह अजीब मुल्क है,
हर जरूरत पर शुल्क है,
ढूँढ़ कर देते हैं लोग,
सलाह निःशुल्क है॥
यह अजीब...
यह आवाम का मुल्क है,
रहवर चुनने का हक है,
वोट देने जाते नहीं,
मतदान निःशुल्क है॥
यह अजीब...

सारे संसार में शायद ही ऐसा मुल्क होगा जिसकी राष्ट्रभाषा की इतनी दुर्दशा हो जितनी हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिंदी की है। मैंने बहुधा कई लोगों से यह कहते सुना है कि हमारे बच्चों को हिंदी नहीं आती, यह कहते हुए वे अपने आपको गौरवान्वित-सा महसूस करते हैं। हम अपनी राष्ट्रभाषा की हत्या कर चुके हैं, इसे स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है क्योंकि हम जान गए हैं कि हमें नौकरी राष्ट्रभाषा हिंदी से नहीं, विदेशी भाषा अंग्रेजी को पढ़ने से ही प्राप्त होगी।

यदि कोई अच्छी गुणवत्ता वाली पत्रिका 'अररिया' से प्रकाशित हो रही है तो यह अररिया का ही नहीं, बिहार का भी नाम पूरे देश में रोशन कर रही है। जब हिंदी भाषा की पत्र-पत्रिका वंद हो रही हो, उस समय जलती मशाल की तरह *परती पलार* प्रकाशित हो रही है जिससे कहीं न कहीं यह मन में आशा का संचार होता ही है कि हिंदी का भविष्य अच्छा है। *परती पलार* के इस अंक में कालजयी लेखकों की अविस्मरणीय व्यंग्य रचनाओ का समावेश कर पत्रिका के सौंदर्य में बखूबी बढ़ोत्तरी की गयी है। इसके लिए *परती पलार* के सभी सहयोगी बधाई के पात्र हैं।

इस अंक में एक भूल हुई है जिसकी ओर में ध्यान दिलाना चाहूँगा–परती पलार के पृष्ठ चार पर सातवां पत्र जो प्रकाशित किया गया है वह लिपिकीय त्रुटि, टंकण भूल हो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सकती है क्योंकि उक्त पत्र मैंने दिनांक 6.7.2010 को आपको प्रेषित किया था किंतु पत्र लेखक के नाम के स्थान पर श्री अजीत श्रीवास्तव एडवोकेट, टीकमगढ़ का नाम प्रकाशित किया गया है। स्वाभाविक है इतनी बड़ी पत्रिका के प्रकाशन में यदि कोई छोटी भूल हो जाती है तो मैं इसे भूल नहीं कहता। फिर भी ऐसी त्रुटि भविष्य में न हो इसका विशेष ध्यान रखे जाने का अनुरोध है।

वास्तव में *परती पलार* में सारी रचनाएँ श्रेष्ठ हैं। पढ़ कर काफी अच्छा लगा।

–प्रभात दुबे, III पुष्पांजली हाई स्कूल के सामने, शक्ति नगर जबलपुर (म.प्र.)-482001

परती पलार की नवीनतम प्रति मिली। हार्दिक आभारी हूँ कि आपने मुझे विस्मृत नहीं किया है। पुनः धन्यवाद।

पत्रिका दिनोंदिन बेहतर रूपाकार ग्रहण करती प्रतीत होती है। रचनाओं का चयन एवं संयोजन भी प्रभावी और परिपक्व हुआ है। यह सचमुच बिहार वासियों और साहित्यकारों तथा पाठकों के लिए गर्व की बात है कि एक छोटे से जिले से इतनी चित्ताकर्षक और ज्ञानवर्द्धक पत्रिका नियमित प्रकाशित हो रही है, जिसने विशेषांकों की परंपरा में एक नई मिसाल स्थापित की है। इसके लिए आप और आपके सहयोगी तहे दिल से बधाई के पात्र हैं।

आपका एक अंक ग़ज़ल विधा पर केंद्रित होगा। यह जानकर बेहद प्रसन्नता हुई। प्रस्तावित अंक की सफलता की हार्दिक कामनाओं सहित।

–डॉ. तारिक असलम तस्नीम, लेखनी प्रकाशन, प्लॉट-6, सेक्टर-2, हारून नगर कॉलोनी, फुलवारी शरीफ, पटना-801505

'दाढ़ी पुराण' अच्छा लगा

परती पलार का होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक मिला अच्छा लगा। आभारी हूँ। पत्रिका में ग़ज़ल, दोहे, कहानी आलेख सभी कुछ समाहित है। रोचक तरीके से।

चूँकि व्यंग्य विशेषांक है इसलिए व्यंग्य पर काफी कुछ है। आजकल व्यंग्य काफी महत्त्वपूर्ण स्थान पा रहा है साहित्य में। वैसे व्यंग्य साहित्य में प्राचीन काल से ही प्रचलित है। बस! समझने और प्रचारित होने का प्रश्न है। पत्रिका में आलेख 'दाढ़ी पुराण' काफी अच्छा लगा। 'चना बे चना' भी अनुपम है। हास्य-व्यंग्य 'आदमी का दूध' भी रोचक है।

पत्रिका का सर्वोत्तम पक्ष संपादकीय लगा, जिसमें आज की समस्त विसंगतियों का रोचकपूर्ण वर्णन है। सरकार से लेकर आमजन तक, ऑफिसर से लेकर साधारण कर्मचारी तक सब अपनी रोटी सेंक रहे हैं, उल्लू सीधा कर रहे हैं।

भ्रष्टाचार, बेईमानी, मिलावट, आज इस तरह आम है–लगता ही नहीं कहीं कुछ गलत है। इस देश में गरीब हैं कहाँ? अगर हैं तो दिख किसे रहे हैं? सब मॉल में, बड़े-बड़े शोरुम को देखकर ही गौरवान्वित हैं।

कुल मिलाकर रोज एक किस्सा नज़र आता है–समय की गर्त में चला जाता है। मानो 'समरथ को नहिं दोष गोसाईं' सार्थक कर रहा है। अनुपम विशेषांक के लिए साधुवाद।

–रितेन्द्र अग्रवाल, 11/500 मालवीय नगर, जयपुर-302017

दस्तावेज़ी हैसियत

परती पलार का होली विशेषांक प्राप्त हुआ जो अपने आप में एक दस्तावेज़ की हैसियत रखता है। अभी पढ़ रहा हूँ। मेरे प्रति आपकी गायबाना मोहब्बत का बेहद शुक्रिया।

–हबीब अजमली
सुलतानपुर (उ.प्र.)

'परती पलार' का जनवरी-मार्च, 2011 अंक पढ़कर मन प्रफुल्लित हो उठा।

सरोजनी प्रीतम की 'मान सम्मान' हास्य व्यंग्य तथा कृष्ण कुमार यादव की 'सात जन्मों तक इनकमिंग फ्री' हास्य-व्यंग्य रचनाएँ बहुत अच्छी लगी। लघुकथाओं में त्रिलोक सिंह व आकांक्षा यादव तथा आनंद दीवान की रचनाएँ प्रशंसनीय है। बधाई। विशेषांक संग्रहणीय बन पड़ा है।

कुछ अपनी भी...संपादकीय विद्वतापूर्ण, विचारोत्तेजक एवं प्रभावशाली है। इतनी सुंदर एवं उच्चस्तरीय पत्रिका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकाशित करने के लिए बधाई स्वीकारें।

सपांदक–'शब्द सामयिकी' त्रैमासिक,
पो.बा.नं. 60, 10 पी 23, आर. सी. व्यास कॉलोनी,
भीलवाड़ा-311001 (राज.)

सभी का मान बढ़ाया

परती पलार जनवरी-मार्च, 2011 होली विशेषांक मुझे मिला, आभार! लंबे अंतराल के बाद प्रिय पत्रिका 'परती पलार' पाकर ऊर्जा से भर गया। पत्रिका का स्तर, आपका संपादन, विशेषकर आपका संपादकीय 'कुछ अपनी भी... सदा की भाँति होली विशेषांक को एक संग्रहणीय पत्रिका बना देता है। व्यंग्य के महापुरोधा हरीशंकर परसाई और रवीन्द्रनाथ त्यागी इस पत्रिका की थाती हैं। एक-एक रचनाकार के नाम का उल्लेख कर आपने सभी का मान बढ़ाया है, यह आपकी सहृदयता दर्शाता है।

सभी रचनाकारों की रचनाएँ श्रेष्ठ हैं। ग्वालियर के डॉ. लाहा और बैतूल के रामचरण यादव, डॉ. मोहन आनंद, डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी, प्रभात दुबे, भावना वर्मा, ध्रुव तांती–इन सभी को ख्यातिलब्ध रचनाकारों के साथ एक ही मंच पर प्रस्तुत करना इस अंक की विशेषता है।

ईश्वर से प्रार्थना है कि पत्रिका अजर-अमर होकर यूं ही सोपान चढ़ते हुए साहित्याकाश का शिखर छूने में सफल हो।

शुभकामनाओं के साथ

–मनोहर शर्मा 'माया',
जवलपुर (म.प्र.)

वैचारिक ऊर्जा है संपादकीय

'परती पलार' का होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक तथा अप्रैल-जून, 2011 अंक मिला। *परती पलार* अपने नाम के अर्थानुरूप साहित्यिक रचनाओं के लिए 'तैयार भूमि' का कार्य कर रही है। बिहार के समस्त अंचलों ने हिंदी साहित्य को अनेक साहित्यकार दिए हैं। साहित्यिक लौ बिहार की धरती पर हमेशा दीप्त रही है। रेणु का 'मैला आँचल' साहित्यिक रूप से समृद्ध रहा है। *परती पलार* प्रतिष्ठित नामों के मोह से अलग साहित्य सृजन को जगह देने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा है।

होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक संग्रहणीय है। अप्रैल-जून, 2011 में कहानियाँ, लघुकथाएँ व ग़ज़लें, आलेख सभी पसंद आए। पत्रिका का संपादकीय हमेशा की तरह, सामयिक, प्रखर, यथार्थ दृष्टि व सच्चाई पूर्ण है। किसी भी पत्रिका का संपादकीय वैचारिक ऊर्जा देने का कार्य करता है। खाप पंचायतों के गोत्र संबंधी निर्णयों में जो अमानवीयता व क्रूरता सामने आ रही है उसमें पिछड़ापन तो है ही, हमारी सामाजिक, राजनीतिक संगठनों की कमजोरी भी है जिन्होंने इन रुढ़ियों को बनाए रखने में मदद की। कानून का डर भी अपना काम करेगा पर निदान के लिए जागरुकता भी जरूरी है। वोट बैंक राजनीति को अब लोग समझने लगे हैं। बिहार इसका एक उदाहरण है।

पत्रिका निरंतर प्रकाशित ही रही है। शुभकामनाएँ।

–विपिन, जैन
कवि नगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

परती पलार का अप्रैल-जून, 2011 अंक मिला। हमारे लेखन का आपने सदुपयोग किया है। धन्यवाद एवं आभार। अधिकांश लघुकथाओं का अनुशीलन करना अच्छा लगा। लघुकथाएँ लेखकों की सृजनात्मकता का परिचय देती हैं। डॉ. विभा वाजपेयी की रचना शोधात्मक एवं आलोचनात्मक बन पड़ी है। "सूर को पाकर ब्रज संस्कृति और ब्रज-संस्कृति को पाकर सूर धन्य हो गए (पृष्ठ 19)।" यह मत डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम' का है। लेखिका को आलोचक का नामोल्लेख भी करना चाहिए था। कुछ लोगों की यह मान्यता है कि सूर को सामाजिक जीवन से कोई सरोकार ही नहीं था। डॉ. विभा वाजपेयी की रचना इस मान्यता का खंडन करती है। दक्षिण भारतीय विद्वान् लेखक डॉक्टर पांडुरंग ढगे-कृत 'सूरसागर का समाज : एक विश्लेषण' नाम्नी शोधात्मक-आलोचनात्मक 'कृति' भी उन लोगों की मान्यता की खंडना करती है कि सूर को सामाजिक जीवन से कोई सरोकार नहीं था। श्री चन्द्रेश्वर कर्ण (शीर्षक–'सूर-काव्य में लोकतत्त्व', 'संस्कृति' पत्रिका, अक्टूबर-दिसंबर, 1987 अंक, पृष्ठ 22-23, सं. डॉ. भगत सिंह) का मत है कि–"सूर-काव्य ग्रामीण संस्कृति की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है। ...सूर लोक-जीवन तथा ग्रामीण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संवेदना के कवि हैं।'' राजेन्द्र परदेसी-कृत 'प्रयोगवाद के पुरोधा : 'अज्ञेय' ' नाम्नी रचना में 'साँप' नामक कविता (पृष्ठ 21) में पाठ-भेद लक्षित होता है। शुद्ध पाठ निम्नस्थ है–

''सांप!
तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना भी
तुम्हें नहीं आया
एक बात पूछूँ (उत्तर दोगे?)
तब कैसे सीखा डसना!
विष कहाँ पाया?''

'अज्ञेय : कवि और काव्यगत संवेदनाएँ' नाम्नी रचना अज्ञेय के जीवन, शिक्षा एवं कवित्व का परिचय पाठक-समुदाय को दे रही है। इस रचना में 'साँप' शीर्षक रचना का पाठ अशुद्ध है। शुद्ध पाठ ऊपर दे दिया गया है।

'संदेश' शीर्षक रचना के प्रारंभ में ही लेखक ने उपनिषद्कार का जो मत दिया है, वह अशुद्ध है। शुद्ध पाठ निम्नस्थ है :

''सर्वे भवन्तु सुखिनः,
सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,
मा कश्चिद्, दुःख् भाग् भवेत्॥

सद्भावनाओं के साथ,

–डॉ. महेशचन्द्र शर्मा, 'अभिवादन'
128-ए, श्याम पार्क (मेन), साहिबाबाद,
(गाजियाबाद)-201005 (उ.प्र.)

समय प्रकाशन से प्रकाशित श्रेष्ठ कहानियाँ शृंखला

प्रेमचंद की श्रेष्ठ कहानियाँ/ प्रेमचन्द	सजिल्द	200/-
	अजिल्द	60/-
रवीन्द्रनाथ टैगोर की श्रेष्ठ कहानियाँ / रवीन्द्रनाथ टैगोर	सजिल्द	200/-
	अजिल्द	60/-
जयशंकर प्रसाद की श्रेष्ठ कहानियाँ/ जयशंकर प्रसाद	सजिल्द	200/-
	अजिल्द	60/-
श्रेष्ठ कहानियाँ/ सूर्यकान्त नागर	सजिल्द	250/-
	अजिल्द	85/-
श्रेष्ठ कहानियाँ/ सदाशिव कौतुक	सजिल्द	250/-
	अजिल्द	150/-
श्रेष्ठ कहानियाँ/ फणीश्वर नाथ रेणु	सजिल्द	250/-
	अजिल्द	125/-
श्रेष्ठ कहानियाँ/ शरद पगारे	सजिल्द	250/-
	अजिल्द	125/
तीसरी कसम और अन्य कहानियाँ/ फणीश्वर नाथ रेणु	सजिल्द	350/-
	अजिल्द	175/
श्रेष्ठ बाल कहानियाँ/ जयप्रकाश भारती	सजिल्द	250/-

समय प्रकाशन
आई-1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-02
फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 011-23270889
ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संपादकीय

कुछ अपनी भी....

बहुत दिनों से हमारे मन में 'परती पलार' का एक ग़ज़ल विशेषांक भी प्रकाशित करने की आकांक्षा घर किए बैठी थी। पूर्व में हमने अपने पाठकों के समक्ष 'कमलेश्वर स्मृति कथा विशेषांक', 'हास्य-व्यंग्य विशेषांक' 'लघुकथा विशेषांक', 'नारी विमर्श विशेषांक', रेणु स्मृति विशेषांक', 'द्विजदेनी स्मृति विशेषांक', 'प्रेमचन्द स्मृति कथा विशेषांक', 'होली हास्य-व्यंग्य विशेषांक', 'काव्य विशेषांक' आदि प्रस्तुत किए हैं और इन विशेषांकों के लिए हमें पाठकों की ढेर सारी प्रशंसाएँ भी मिली हैं। कतिपय अन्य विशेषांक यथा—प्रेम काव्य विशेषांक, सृजन प्रतिभा विशेषांक, कोशी माटी विशेषांक, नारी कथाकार विशेषांक, बिहार विशेषांक, ग़ज़ल विशेषांक आदि का प्रकाशन भी हमारी योजनाओं में शामिल रहा है। लेकिन ग़ज़ल विशेषांक के प्रकाशन की योजना अनायास ही प्राथमिकता में आ गई। इसके भी कारण हैं। हमारी राय है कि साहित्य की काव्य विधाओं में ग़ज़ल लेखन अपेक्षाकृत अधिक कठिन तो अवश्य है किंतु ग़ज़ल उतनी ही कर्णप्रिय और हृदयग्राही भी होती है। इसमें चम्पा की चमक है, जूही का जमाल है, बेला की सुबास है और चमेली की चश्म के साथ-साथ गुलाब की गमक और रूमानियत भी। इसलिए व्यक्तिगत रूप से ग़ज़ल मुझे भी बहुत प्रिय है। लेकिन मैं भयभीत भी थी और ग़ज़ल विशेषांक के प्रकाशन की हिम्मत ही नहीं जुटा पा रही थी। सच कहूँ तो ग़ज़ल के गणित का तो 'ग' भी मैं नहीं जानती और यही मेरे भय का कारण भी था। फिर ग़ज़लों के बिना ग़ज़ल विशेषांक बनता भी कैसे? हम तो उन गिने-चुने ग़ज़लकारों को ही जानते थे जो जब तब 'परती पलार' में छपते रहे हैं। विशेषांक के लिए ग़ज़ल पर कुछ अच्छे आलेख भी चाहिए थे। ये कैसे उपलब्ध होते? इन समस्याओं को लेकर हमने संस्थापक संपादक-राघव जी से बातें कीं। वे हर मुश्किल को आसान बना देने का फन जानते हैं। उन्होंने कहा—''आप लोग चिंता न करें। यदि आप लोगों ने 'परती पलार' का ग़ज़ल विशेषांक निकालने के बारे में सोच ही लिया है तो अब इसे हर हाल में निकलना ही चाहिए। लेकिन यह विशेषांक कुछ खास भी होना चाहिए। इसलिए विशेषांक के लिए सामग्रियाँ जुटाने का जिम्मा मैं अपने सिर लेता हूँ।''

राघव जी ने इस संबंध में अपने सलाहकार संपादक सुप्रसिद्ध समीक्षक डॉ. वरुण कुमार तिवारी जी से बातें कीं। वे भी हमारी इस योजना पर बड़े प्रसन्न हुए और प्रस्तावित ग़ज़ल विशेषांक को विशिष्ट बनाने के लिए हमें पूरा सहयोग देने का वचन भी दिया। हमें बल मिला। उन्होंने देश के कुछ नामवर शाइरों से इस संबन्ध में बातें भी कीं पर नतीजा हमारे लिए बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं था। उन कुछ नामवरों की ओर से आदरणीय तिवारी जी को ही परिश्रम करना पड़ा। हमें अपनी योजना के विफल होने का भी भय सताने लगा। लेकिन राघव जी रंचमात्र भी विचलित नहीं थे।

इसी समय खगड़िया (बिहार) में आदरणीय कैलाश किंकर झा जी के संपादन में प्रकाशित साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'कोशिकी' का ग़ज़ल विशेषांक हमें मिला तो हमारे अरमानों को भी पंख लग गए। इसके तुरंत बाद ही त्रैमासिक 'सरस्वती सुमन' का वह विशेषांक भी हमारे हाथों में पहुँच गया जो वास्तव में बेहतरीन ग़ज़लों का एक बहुत ही खूबसूरत गुलदस्ता था (जनवरी-मार्च, 2011 अंक)। फिर तो हमारे पंखों को उड़ान के लिए मानो आसमान मिल गया। यहाँ मैं यह भी बता देना चाहती हूँ कि 'सरस्वती सुमन' पत्रिका देहरादून से प्रकाशित होती है जिसके संपादक हैं परम आदरणीय डॉ. आनंद सुमन सिंह जी। इसके अतिरिक्त सुप्रतिष्ठित ग़ज़लकार डॉ. महेन्द्र अग्रवाल के संपादन में शिवपुरी (म.प्र.) से निकल रही दस्तावेज़ी पत्रिका 'नई ग़ज़ल' और डॉ. दरवेश भारती के संपादन में नई दिल्ली से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'ग़ज़ल के बहाने' के अलावा जोधपुर (राज.) से अनिल अनवर जी के संपादन में निकल रही त्रैमासिक 'मरू गुलशन' और डॉ. अशोक अंजुम के संपादन में अलीगढ़ (उ.प्र.) से प्रकाशित त्रैमासिकी 'अभिनव प्रयास' जैसी पत्रिकाएँ हमारी पांखों को भरपूर ताक़त दे रही थीं। इन सभी पत्रिकाओं में पाठकों को कुछ बहुत अच्छी ग़ज़लें पढ़ने को मिल जाती हैं। ऐन वक़्त पर ये पत्रिकाएँ हमारे बड़े काम आईं।

राघव जी ने लगभग डेढ़ सौ शाइर-शाइराओं की एक सूची तैयार की और उन सभी को 'परती पलार' के नवीनतम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अंक के साथ प्रस्तावित विशेषांक के लिए अपनी ग़ज़लें भेजने के लिए एक अनुरोध-पत्र भी भेजा। इन शाइर-शाइराओं में कुछ तो बड़े नामवर हैं, कुछ की अपनी अलग पहचान बन चुकी है और कुछ अच्छी ग़ज़लें लिख-परोस कर ग़ज़ल के क्षेत्र में अपनी पहचान पुख़्ता करने के रास्ते पर दूर तक जा पहुँचे हैं। लेकिन एक सत्य तो यह भी है कि अधिकांश कलमकार छोटी पत्रिकाओं के पन्ने पलटना भी गँवारा नहीं करते। जब वे पन्ने ही नहीं पलटेंगे तो भला पत्र कहाँ से और कब देखेंगे-पढ़ेंगे। यह संदेह भी था राघव जी को। इसलिए उन्होंने उन सभी शाइर-शाइराओं से चलन्तभाष पर सीधे भी बातें की। सीधी बात ने बात बना दी। इस समय तक अनिरुद्ध सिन्हा जी, मधुर नज़्मी जी, तारिक असलम 'तस्नीम' और अशोक अंजुम जी जैसे बड़े दिल वाले शाइरों ने 'परती पलार' के ग़ज़ल विशेषांक के प्रकाशन की हमारी योजना की सफलता को सुनिश्चित करना अपना अभियान बना लिया था और स्वयं अभिरुचि लेकर देश के श्रेष्ठ ग़ज़लकारों को 'परती पलार' के लिए ग़ज़लें और आलेख भेजने हेतु प्रेरित करने लगे थे।

राघव जी ने भी बहुत मेहनत की। मेहनत तो कैलाश झा 'किंकर' ने भी की है। राघव जी के साथ-साथ उपरोक्त सभी सुहृद् कलमकारों के प्रयासों का परिणाम यह हुआ कि जब रचनाएँ आनी शुरू हुई तो मानो ग़ज़लों की तो बरसात ही हो गई। दर्जनाधिक अच्छे आलेख भी आ गए। लगभग 125 शाइर-शाइराओं के ग़ज़ल हमें मिले। अब हमारे सामने समस्या यह आ खड़ी हुई कि इन तीन-साढ़े तीन सौ ग़ज़लों में ज़्यादा बेहतरीन ग़ज़लों को चुना कैसे जाए? यह एक ऐसा काम है जिसे कोई बहुत काबिल और सुलझा हुआ शाइर ही कर सकता है। कई दिनों तक हमने खूब मग़ज़मारी की पर नतीजा कुछ नहीं निकला। फिर एक दिन राघव जी ने फाईल समेटा, अपनी बाँहों में दबाया और उसे लेकर पहुँच गए 'अजनबी शहर' के मशहूर शाइर और अपने बड़े भाई जनाब जुबैरूल हसन 'ग़ाफ़िल' साहेब के पास। वे राघव जी को बड़ा स्नेह देते हैं। अब जब छोटा भाई किसी मदद के लिए अपने बड़े भाई के पास पहुँच जाए तो बड़े भाई के लिए उसे इनकार करना बड़ा मुश्किल होता है। ग़ाफ़िल साहेब को यूँ भी किसी को 'ना' कहने में मुश्किल ही होती है। उन्होंने इस ज़्यादा मुश्किल काम की जिम्मेदारी हँसते हुए स्वीकार कर ली और सिर्फ 5-6 दिनों में ही हमारी मुश्किलों को बहुत आसान बना दिया। उस समय तक हमारे पास ग़ज़लें आ ही रही थीं क्योंकि कुछ लोगों की नींद देर से टूटती है और वह भी तब टूटती है जब उन्हें झिंझोरा जाता है और कुछ ऐसे सोने वाले भी होते हैं जो कई बार झिंझोरने पर भी बस 'हूँ...हाँ...' ही करते हैं परंतु जागने की जहमत उठाना पसंद नहीं करते। कुछ यदि जग भी गए तो डाक विभाग जबरन उन्हें सोने वालों में शुमार कर देता है। धत् तेरे की...मैं भी यह कौन सा किस्सा ले बैठी। हाँ तो मैं कहना चाह रही थी कि अब तक हमारी सभी समस्याएँ दूर हो चुकी थीं। हमारे पास सामग्रियाँ भी भरपूर थीं, एक से बढ़कर एक। अब इसे मुद्रण के लिए भेजना था और यह प्रेस में भेज भी दी गई।

हम जैसा चाहते थे, ठीक वैसा ही 'परती पलार' का ग़ज़ल विशेषांक छपकर आ भी गया। हम समझते हैं कि यह अगर बीस नहीं तो उन्नीस भी शायद नहीं है। लेकिन यह तो मेरी समझ है। अब मैं इसे आपको सौंप रही हूँ क्योंकि यह निर्णय भी वास्तव में आपको ही तो करना है कि 'परती पलार' का यह ग़ज़ल विशेषांक कैसा है? इस विशेषांक में अंतर्विष्ट लेखों से ग़ज़ल लिखने-पढ़ने वालों को सही दिशा-निर्देश मिल पाएगा या नहीं? इन लेखों में हिंदी एवं उर्दू ग़ज़लों का सफ़र रोचक और ज्ञानवर्द्धक है या नहीं? ये लेख शोध छात्रों के लिए कितने उपयोगी हो सकते हैं? इस विशेषांक की ग़ज़लों को उम्दा कहा जा सकता है अथवा नहीं? गुणवत्ता की कसौटी पर यह विशेषांक कितना खरा उतरता है? आपका निर्णय चाहे जैसा भी हो किंतु आप अपने निर्णय से हमें जरूर अवगत कराएँ। आपका निर्णय ही हमें आगे की राह भी दिखाएगा। कुछ रचनाएँ कमजोर भी हो सकती हैं जिन्हें मजबूरी का नाम शुक्रिया समझ हमें क्षमा करेंगे। लेकिन मैं यह स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि इस ग़ज़ल विशेषांक के प्रकाशन के बारे में मैंने तो सिर्फ सोचा भर था। बाकी सारा कुछ तो डॉ. वरुण कुमार तिवारी, अनिरुद्ध सिन्हा, डॉ. मधुर नज़्मी, जुबैरूल हसन 'ग़ाफ़िल', राज राघव, डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम', अशोक अंजुम,...और जफरूल हसन का किया धरा है। बचा-खुचा (आवरण सज्जा) काम चन्द्र भूषण जी ने पूरा किया है। इसलिए यदि इस विशेषांक की सामग्रियों में दम-खम हो, आपको ये सामग्रियाँ अच्छी लगें, प्रभावित करें और प्रसन्न होकर आप प्रशंसा के शब्द-पुष्पों का उपहार देना चाहें तो कृपया उन सुहृद् सज्जन साहित्य-साधकों को ही दें। अलबत्ता यह विशेषांक यदि आपको पसंद न आए, इसका स्वाद कसैला लगे, इसकी सामग्रियों में स्तरीयता का अभाव खटके और भिन्नाकर आप गालियाँ देना चाहें तो वे आप शौक से मुझे दे दें। प्रधान संपादक होने के नाते इतना हक़ तो मेरा बनता ही है।

अशेष शुभकामनाओं के साथ।

—नमिता सिंह
प्रधान संपादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

समान मात्रिक रुक्नों में भिन्नत्व

❑ महावीर प्रसाद मूकेश

संसार में लुप्त हो चुकी, लुप्त हो रही तथा प्रचलित सभी भाषाओं की संख्या हजारों में है। आदि काल से ही प्रत्येक भाषा, बोली आदि में अलौकिक आनंद अनुभव करते हुए विविध पद्यात्मक रचनाएँ कही-सुनी-लिखी जाती रही हैं। ज्ञात से अज्ञात और सरल से कठिन की ओर निरंतर अग्रसर होते रहना ही मानव का स्वाभाविक गुण है। जिस किसी भाषा में जैसा भी सुभीता हुआ, अनेक पद्य रचे गए, चाहे वे सामान्य स्तर के हों अथवा संस्कृति के विकासानुसार अभिजात साहित्य हो। प्रत्येक स्थिति में यह अकाट्य सत्य तो है ही, कि संपूर्ण प्रक्रिया में 'गत्यात्मकता' का आश्रय निःसंदेह विद्यमान रहा है।

जिस प्रकार कारखाने में तैयार सुंदर उत्पाद का कच्चा रूप प्रारंभ में रफ़ और खुरदरा होता है, वैसे ही कविता, ग़ज़ल आदि सभी विधाएँ काल-क्रम से परिमार्जित-विकसित होती हुई आज उत्तम काव्य का आकार ले चुकी हैं। दूसरी बात यह भी है, किसी भी भाषा की उद्‌भूति सर्वप्रथम वाचिक होती है और तदनंतर उसका लिखित रूप। इसी भाँति ही प्रत्येक पद्य विधा का उद्‌गम भी पहले मौखिक हुआ है और उसका लिखित हमवार बनाव-सिंगार कहीं बाद में। इस सिद्धांत से ग़ज़ल विधा कैसे अछूती रह सकती है? वाचिकता का प्रभाव तो गज़ल में इस प्रकार घनीभूत हो चुका है कि उससे छुटकारा पाना आज भी ग़ज़लकारों के लिए असंभव लगता है। इसी तथ्य के दर्शन शत प्रतिशत उर्दू शाइरी में अब भी भली भाँति किए जा सकते हैं।

छंदोमय उर्दू शाइरी के लिए बहूरें बनी हुई हैं जिन पर शे'र को तोला और जाँचा जाता है कि शेर का वज़्न ठीक है या नहीं। ये बहरें जिन टुकड़ों से बनती हैं उनको अर्कान और हर हिस्से को रुक्न कहते हैं। इन रूक्नों और बहूरों की संख्या में भी समयानुसार धीरे-धीरे बढ़ोतरी होती रही है। अब आपत्ति यह है कि जब रुक्नों और बहूरों के आकार निशिचित हो चुके, तो व्यक्तिगत वाचिकता (उच्चारण) के वशीभूत होकर एक रुक्न में निर्धारित हर्फ़ों से ज़्यादा हर्फ़ ठूँसने का क्या

परिचय

नाम–महावीर प्रसाद 'मूकेश'

जन्म–18 दिसंबर 1933, सिरसा (हरियाणा)

शिक्षा–बी.ए., एम. म्यूज़, (वाद्य प्रवीण, गायन भास्कर, वाद्य भास्कर), कथक विशारद, हिंदी प्रभाकर, सामान्य उर्दू ज्ञान।

रुचियाँ–पिंगल व इल्मे अरूज़ का अध्ययन, छान्दस समीक्षण, शास्त्रीय संगीत (गायन, वादन), साहित्य सृजन

लेखन–1950 से कविता-निबन्ध आदि, 1954 से मौलिक धुनों का स्वरांकन, 1960 से पुस्तक रचना कार्य

उपलब्धियाँ–1957 से संगीत पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ लेख आदि प्रकाशित। ग़ज़ल छंद चेतना (शोधग्रन्थ), गांधर्व विवेचन (शोध निबन्ध), बच्चन गीत संगीत (बच्चन जी के गीत संगीतबद्ध), संगीत सूक्ति सुमन, भाव संगीत संगम, भजन संगीत सुधा, सरल संगीत मंजूषा, काव्य संगीत संत स्वरागर, हिंद छात्र गान, युवा संगीत, सजल मधु (काव्य संग्रह), आओ ग़ज़ल कहें (सरल ग़ज़ल गाइड) आदि पच्चीस पुस्तकों का प्रणयन-प्रकाशन।

संपर्क–संगीत विद्यार्थी भवन, 229/1, बी, ब्लॉक **सिरसा**, 125055 (हरियाणा)

दूरभाष–01666-242714, 094671-62147

तुक? ऐसी दुर्बलता जब संस्कृत-हिंदी काव्य में नहीं पाई जाती, तो उर्दू शाइरी में संभव क्यों नहीं है? सुख़नवर इसका महत्त्व क्यों नहीं समझते?

संस्कृत-हिंदी छंदः शास्त्रों में लघु-गुरु वर्णों पर आधारित केवल आठ 'गण' बताए गए हैं और तदनुसार ही संपूर्ण वर्णिक छंदोबद्ध साहित्य रचा गया है। इल्मे अरूज़ में गणों का अर्कान (रुक्न का बहुवचन) कहा जाता है, पर उनकी संख्या लगभग पचास है। गण त्र्यक्षरी होते हैं, रुक्न न्यूनाधिक अक्षरों के। गण और रुक्न लगभग समानार्थक हैं। छंदः शास्त्र के अनुसार गणों में लघु-गुरु अक्षरों के रूप-निर्धारण विषयक जो नियम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं, उनमें केवल एक नियम और जोड़ दिया जाएं, तो सभी रुक्न वर्णिक गणों की कोटि में आ जाएँगे। वह नियम इस प्रकार है–लघु तो लघु है ही, पर यदि दो निकटवर्ती लघु वर्ण जिनका स्वतंत्र उच्चारण जरूरी न हो और उनमें दूसरे लघु (विशेषकर अकारांत) का उच्चारण हल् वर्ण के रूप में संभव हो, तो दोनों लघु मिलकर एक गुरु के समान माने जा सकते हैं, जैसे–शुक (शुक्=S), शिथिल (शि+थिल्=IS), मनहर (मन्+हर्=SS) आदि। यह नियम हिंदी के वर्णच्छंदों में लागू नहीं किया जा सकता। गणों में लघु-गुरु अक्षरों के क्रम निर्धारित हैं और रुक्नों में मुतहर्रिक-साकिन हर्फ़ों का सिलसिला देखा जाता है।

जब पिंगल-वर्णित गणों के आधार पर शुद्ध रचनाएँ लिखी गई हैं तो अर्कान के सर्वांगसम भी विशुद्ध शाइरी की जा सकती है, बशर्ते कि शाइर हज़्रात ऐसा करने की हिम्मत करें। स्पष्टीकरण के लिए यहाँ केवल एक रुक्न का उदाहरण लेकर उर्दू शाइरी में पाए जाने वाले व्याकरणिक दोष को प्रदर्शित किया जा रहा है।

बह्रे मुतदारिक के एक मुज़ाहफ़ (परिवर्तित) रूप के मुताबिक 'फइलुन' (1,1S) नामक रुक्न शे'र के एक मिसरे में चार बार प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरणार्थ इसी बह्र का एक शे'र 'फने शाइरी' से उद्धृत है–'मिरा दुश्मन अगर्चःजमानः रहा, तिरा यूँ ही मैं दोस्त यगानः रहा।' और तक़्तीअ करते समय शे'र के लफ़्ज़ों को इस प्रकार ढाल कर दिखाया गया है–

1,1 S फ़इलुन	1,1 S फ़इलुन	1,1 S फ़इलुन	1,1 S फ़इलुन
मि, र, दुश्	म, न, गर	च, ज़, मा	न, र, हा
ति, र, यू	ह, म, दो	स, य, गा	न, र, हा

देखा आपने, शब्दों की किस प्रकार दुर्गति की गई है! इसी संदर्भ में तुलनात्मक दृष्टि से पिंगल का एक छंद भी देखिए। 'फ़इलुन' रुक्न की समकक्ष ही अथवा मिलता-जुलता वर्णिक छन्द का एक गण है–'सगण' (1,1 S) चार फ़इलुन रुक्नो की भाँति ही एक चरण में चार सगणों के क्रम से बनने वाला बारह अक्षरों का एक छंद है–'तोटक', जिसके कुछ उदाहरण प्रमाण-स्वरूप यहाँ प्रस्तुत हैं–

(1) 11S 11S 11S 11S

मतभेद भयानक पाप रहा
बिन नेह न मेल-मिलाप रहा... नाथूराम शंकर

(2) सखि, नील नभस्सर में उतरा
यह हंस अहा, तरता-तरता... मैथिलीशरण गुप्त

(3) जय राम सदा सुखधाम हरे
रघुनायक सायक चाप धरे... छंदः प्रभाकर

(4) घन से जल-बिंदु सुधा बरसे
मिल शोभित रेखा विभा सरसे... महावीर प्रसाद मूकेश

उपरोक्त चारों पद्यांशों में चार-चार सगणों के अक्षर-समूहों को चार-चार फ़इलुन रुक्नों की भाँति, वल्कि उससे भी कठिनतर रूप में इतनी कुशलता से संजोया गया है कि कहीं एक स्थल पर भी शब्दों में किसी प्रकार की छांदस शिथिलता नहीं आई है। अतः उर्दू बह्रों को बरतने वाले केवल हिंदी ग़ज़लकारों को ही नहीं, सभी शाइरीन को इस ओर ध्यान देना अनिवार्य है कि हर रुक्न की अपनी-अपनी एक क़ीमत होती है और सभी रुक्नों की क़ीमतें एक दूसरे से भिन्न होती हैं। इसीलिए रुक्नों की निर्धारित क़ीमतों के अनुरूप ही शाइरी में शब्दों का संयोजन किया जाना चाहिए। जब सभी रुक्न अपने-अपने ओहदों पर सही काम करेंगे, तभी शे'र का पहला मिसरा देखते ही एक झलक में बह्र का नज़र आना संभव होगा।

यहाँ केवल दो से सात मात्राओं तक मूल्य के मुख्य रुक्नों को मात्रिक मान के क्रमानुसार उर्दू-हिंदी शब्दों के उदाहरण सहित वर्गीकृत किया गया है। इस सन्दर्भ में यह भी ज्ञातव्य है कि किसी भी एक रुक्न के लिए एक पूर्ण शब्द ही प्रयोग किया जाना आवश्यक नहीं। तक़्तीअ करते समय बह्र में निर्धारित रुक्नों के हिसाब से शब्दों को आगे-पीछे काटा भी जा सकता है, जैसे–

मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन फ़ऊलुन

रुबाई, गीत, दोहे, छंद 'रौशन'
हमारे दर्द के ये आंकड़े हैं –स्वामी श्यामानन्द सरस्वती

(1) द्विमात्रिक अर्कान

रुक्न	क़ीमत	उदाहरण
फ़ा	S	भी, तू, के, है, मैं, दो, रौ
फ़ अ	||	फन, तिल, गुल, ऋण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फ़िइ, फ़इ |,| रवि, अणु, गिरि, गुरु, ऋतु

(2) त्रिमात्रिक अर्कान

फ़अल |,|| सफर, सितम, रसिक, चतुर, शुतुर

फ़ऊ |ऽ खुदा, ग़मी, लहू, दिली, जुनूँ, वधू, गुणी

फ़ाअ ऽ| आँख, दीद, धूप, नेक, शोर, दीप

फ़ैलु, फ़ाइ ऽ,| है कि, शांति, ज्योति, साधु, रीति, केतु

(3) चतुर्मात्रिक अर्कान

फ़ैलुन / फ़अलुन ऽ||/ऽऽ ख़ारिज, भीतर, धूमिल, केसर, गेसू, ज़र्रा, मौसम

||, ऽ मतलब, शबनाम, धरती, ख़ुशबू, वरदा, जुगनू

फ़िइलुन |,|ऽ ब-खुशी, ब-अदब, कविता, निशिचर, अनुजा

फ़ाइलु ऽ|,| हे प्रभु, नरहरि, संस्कृति, शांतनु, उन्नति

फ़ऊल |ऽ|, चराग़, कसूर, निशान, मुनीर, प्रचार, सतीश

फ़ऊलु |ऽ,|, विभूति, विपत्ति, कृपालु, हिमांशु

(4) पंचमात्रिक अर्कान

फ़ाइलुन ऽ|ऽ आशिक़ी, कद्रदाँ, दर-ब-दर, बेख़बर, द्रौपदी

फ़इलतुन |,|,|ऽ रवि-किरण, शशि-वदन, प्रभु-कृपा

फ़इलान / फ़िइहलात |,|ऽ| ब-खिलाफ, छविकार, हनुमान, रघुवंश

फ़इलानु / फ़इलातु |,|,ऽ| हरिभानु, मरुभूमि

फ़ऊलुन |ऽऽ मुसाफ़िर, हक़ीकत, ज़रूरी, चरागाँ

मफ़ाइलु |ऽ|,ऽ दयानिधि, प्रजापति, जगद्गुरु

मफ्ऊल / फ़ैलान ऽऽ| तासीर, मीनार, बेजुर्म, तक़्दीर, ख़ुर्शीद, मजबूर

मफ्ऊलु / फ़ैलानु ऽऽ,| दीर्घायु, वाल्मीकि, समबाहु, इत्यादि

(5) षड्मात्रिक अर्कान

फ़इलातुन |,|,ऽऽ चतुराई, उजियारा, गिरिधारी, न बहेगा, ब-तकल्लुफ़

फ़ाइलान ऽ|ऽ| ख़ानदान, लाइलाज, बातमीज़, बदनसीब

फ़ाइलानु / फ़ाइलातु ऽ|ऽ,| मातृभूमि, कामधेनु, स्वच्छकीर्त्ति

मफ़ाइलुन |ऽ|ऽ मुक़ाबला, मुलाज़मत, नुमाइशी, हराभरा

मफ़ाईल / फ़ऊलात / फ़ऊलान |ऽऽ| ग़ज़लकार, सज़ायाब, गुलूबंद, सृजनहार

मफ़ाईलु / मफ़ाऊलु |ऽऽ,| दया-भक्ति, महासिंधु, सुधा-विंदु

मफ़ऊलुन / फ़ालातुन / फ़अलातुन ऽऽऽ नूरानी, तनूहाई, बदनीयत, कद्दावर, जन गण मन

मुफ़्तइलुन / मुस्तइलुन / फ़ाइअतुन / फ़ाइलतुन ऽ,|,|,ऽ ख़ाकनशीं, ग़ैर-अहम, भोजपुरी, जन्म-मरण

मुस्तफ़्इलु ऽऽ,|,| सेनापति, जीवनतरु, भजमन हरि, पावन रुचि

(6) सप्तमात्रिक अर्कान

फ़ाइलातुन ऽ|ऽऽ ख़ूबसूरत, साफगोई, मुस्कुराहट

फ़इलातान |,|ऽऽ| नदिया पार, हरि यश गान, कि यहाँ आज

मफाईलुन |ऽऽऽ अदाकारी, मुलाकाती, क़वाइददाँ, धनुर्विद्या

मुफ़ाइलतुन |ऽ|,ऽ| वहे सरिता, कभी न जुदा

मुफ़ाइलान |ऽ|ऽ| सदाबहार, नमकहराम, कृपानिधान

मुतुफ़ाइलुन |,|,ऽ|ऽ अभिसारिका, अनुगामिनी, ऋषिपंचमी

मफ़ऊलान ऽऽऽ| हिंदुस्तान, आतिशबाज़, दानिशमंद

मफ़ऊलातु ऽऽऽ,| वीणापाणि, ब्रह्मा विष्णु, धनबल बाहु

मुफ़्तइलान ऽ|,|ऽ| संत कबीर, राष्ट्र-विधान, मंद समीर

मुस्तफ़्इलुन ऽऽ|ऽ दीवानगी, रौशनजवीं, बाजीगरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

ग़ज़ल का यथार्थ और हिंदी ग़ज़ल

❑ डॉ. वरुण कुमार तिवारी

ग़ज़ल उर्दू-फारसी शाइरी की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं महत्त्वपूर्ण विधा है। अपनी खूबसूरती, ताक़त और अंदाजेबयाँ की बदौलत ग़ज़ल आज भी न केवल जिंदा है, वरन नई-नई ऊँचाइयाँ हासिल कर रही है। उर्दू में मीर, ज़ौक़, सौदा, दर्द, ग़ालिब, वली मोहम्मद वली, बहादुर शाह जफर, दाग़ देहलवी, मोमिन इकबाल, हाली, नासिख़, 'चकबस्त', 'फिराक़', त्रिलोकचन्द महरूम, जोश, जाफ़री, अहमद नदीम कासमी, आनंद नारायण मुल्ला, मजाज लखनवी, जा निसार अख्तर, साहिर लुधियानवी, अख्तर शीरानी, कैफी आज़मी, ज़िगर मुरादाबादी, निदा फाज़ली, बशीर बद्र, गुलजार, इब्ने इंशा, शहरयार, अदम गोंडवी, मुनव्वर राना, शाज तमकनत, मंसूर उस्मानी आदि ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल को निखारकर शिखर तक पहुँचा दिया है। पिछले चार सौ वर्षों से उर्दू ग़ज़ल की यह धारा निरंतर प्रवहमान है।

कोई ग़ज़लकार अपने विशिष्ट अंदाजेबयाँ के कारण ही महाकवि के रूप में प्रतिष्ठित हो पाता है। मीर तकी 'मीर' के अंदाजेबयाँ का उल्लेख करते हुए ज़ौक़ को कहना पड़ा–

न हुआ पर न हुआ 'मीर' का अंदाज नसीब
ज़ौक़ यारों ने बहुत जोर ग़ज़ल में मारा

मिर्जा 'ग़ालिब' भी अपने खास अंदाजेबयाँ के कारण ही उर्दू के सर्वश्रेष्ठ शाइर बने। ग़ालिब स्वयं कहते हैं–

हैं और भी दुनिया में सुख़नवर बहुत अच्छे
कहते हैं कि 'ग़ालिब' का है अंदाजेबयाँ और

शुरू में ग़ज़ल में शमअ-परवाना, सुरा-सुंदरी, प्रेम-सौंदर्य, गिले-शिकवे इत्यादि का ही वर्णन किया जाता था यानी ग़ज़ल का विषय रुमानियत ही था। लेकिन धीरे-धीरे ग़ज़ल रुमानियत की सँकरी गली से निकलकर ज़िंदगी के पूरे कैनवास पर अपने को प्रस्तुत करने लगी। अब ग़ज़ल का विज़न व्यापक है और वह आज के वृहतर मानव-समाज की ओर मुखातिब है। आज की ग़ज़ल समसामयिक-समाजार्थिक-राजनीतिक समस्याओं से

परिचय

नाम : डॉ. वरुण कुमार तिवारी
जन्म : 17 फरवरी, 1946
शिक्षा : एम.ए., बी.एल., पी-एच.डी.
कृतियाँ : 'तीसरी दुनियाँ के लिए', 'अपने होने का एहसास' और 'कुछ दूर रेत पर चलकर' (तीनों कविता संग्रह)
प्रकाशन : 'साहित्य के समकालीन हस्ताक्षर', 'धरती', 'उगते प्रश्न', 'शब्द संगम', 'कविता गोष्ठी' आदि काव्य संकलनों में रचनाएँ शामिल तथा देश की सुस्थापित स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन।
संपादन : 'हरेराम समीप : व्यक्ति और अभिव्यक्ति'
संप्रति : एल.एन.एम.एस. कॉलेज, वीरपुर, जिला-सुपौल (बिहार) से सेवानिवृत्त उपाचार्य। स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : स्टेट बैंक कॉलोनी, वीरपुर, जिला-सुपौल-854340 (बिहार) मो.-919472029050

रू-ब-रू होती है और समय-समाज की हर तरह की विद्रूपताओं-विसंगतियों से जूझती है एवं बेहतर दुनिया के लिए अपनी आवाज़ बुलंद करती है। इस तरह आज की ग़ज़लें आधुनिकता के विविध आयाम से युक्त युग-चेतना की अग्रदूत हैं। बाल स्वरूप 'राही', गोपालदास 'नीरज', राजेश रेड्डी, शेरजंग गर्ग, माधव कौशिक, कुँअर बेचैन, ज्ञान प्रकाश विवेक, दीक्षित 'दनकौरी', देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', रामदरश मिश्र, सूर्यभानु गुप्त, हरजीत, सुल्तान अहमद, देवेन्द्र कुमार 'आर्य', सलीम अख्तर, संजय ग्रोवर, भगवानदास जैन, भागवत प्रसाद 'नियाज', शिवओम अंबर, श्याम निर्मम, सुरेश पंडित, मधुर शास्त्री, कमलेश भट्ट 'कमल', हरेराम 'समीप', विज्ञान व्रत, वसीम बरेलवी, नूर मुहम्मद, 'नूर', जहीर कुरेशी, मिर्जा हसन नासिर, चन्द्रसेन 'विराट', लक्ष्मी शंकर बाजपेयी, चन्द्रभाल, 'सुकुमार', दरवेश भारती, रामकुमार कृषक, उर्मिलेश, आर.पी. शर्मा, चाँद

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेरी, गिरिराज शरण अग्रवाल, कृष्ण बिहारी नूर, मधुर नज़्मी, मेयार सनेही, अनिरुद्ध सिन्हा, वशिष्ठ अनूप, नोमान 'शौक', मदन मोहन 'दानिश', विनय मिश्र, सुनील 'दानिश', माणिक वर्मा, प्रदीप चौबे, पंकज गौतम, ब्रह्मजीत गौतम इत्यादि अनेक ग़ज़लकारों ने नए मुहावरे और नए संस्कार से सुसज्जित कर ग़ज़ल को बड़ी मार्मिकता एवं संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया है। इनके कहन, भंगिमा, मिजाज और कथ्य-विषय ने वृहतर पाठक-समुदाय को आकर्षित किया है।

ग़ज़ल की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी गेयता ही है। ग़ज़ल गायकी ने ही आज गुलाम अली, मेंहदी हसन, जगजीत सिंह आदि गायकों को संगीत की दुनिया में अमर कर दिया है। ग़ज़ल में 'मत्ले' का बहुत महत्त्व है। यह पहला शे'र है जिसके दोनों मिसरे तुकांत होते हैं और 'मक़्ता' अंतिम शे'र है जिसमें शाइर का उपनाम भी होता है। ग़ज़ल के हरेक शे'र में क़ाफ़िया (तुक या अंत्यानुप्रास) का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। क़ाफ़िया के बाद आने वाला शब्द या शब्द-समूह को रदीफ़ कहते हैं। ग़ज़ल के संदर्भ में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग़ज़ल यदि ग़ज़ल के बह्र में नहीं है या छंद में नहीं तो उसे ग़ज़ल नहीं माना जाएगा। सिर्फ ग़ज़ल के स्वरूप में कह देने भर से उसे ग़ज़ल नहीं कहा जा सकता। ग़ज़ल की तमाम बारीकियाँ, तगज्जुल, सलाहियत, शिल्प को अच्छी तरह समझ-सँवारकर ही ग़ज़ल कही जाती है। ग़ज़ल की भाषा भी प्रतीकात्मक व संकेतात्मक होती है। अलंकारों का सहज प्रयोग, रवानी और लयात्मकता प्रत्येक अश्आर में निखार ला देता है। प्रत्येक शे'र अपने आप में पूर्ण होता है अतः शे'र के दोनों मिसरों में अन्तर्सबंध रहता है। अब तक अरबी, फारसी, उर्दू और हिंदी के रास्ते ग़ज़ल ने चार सौ वर्षों के लंबे सफ़र को तय किया है; अतः इसकी अंतर्वस्तु, कथन-भंगिमा, इसके रिवायती प्रतीक—सभी बदले हैं।

यदि हिंदी ग़ज़ल की बात करें तो इसकी शुरुआत अमीर खुसरो से माना जा सकता है जिनकी ग़ज़लें हिंदवी में रचित हैं लेकिन ये व्रजभाषा के पुट के साथ फारसी शब्दावली और शिल्प से बँधी हैं। अमीर खुसरो की ग़ज़ल में एक पंक्ति ब्रजभाषा में तो अगली पंक्ति फारसी में मिलती है। ग़ज़ल में भाषा के स्तर पर यह नवीन प्रयोग था। भाषा की दृष्टि से उन्होंने एकता स्थापित करने का सर्वप्रथम प्रयास किया था। अपने 'खलीके बारी' में उन्होंने हिंदी-फारसी मिश्रित ग़ज़ल की रचना की। एक उदाहरण देखिए—

ज हाल मिस्कीं मकुन तगाफुल, डराए नैना बनाए बतियाँ
के तावे हिज्राँ न दा रम ऐ जाँ, न लेहु काहे लगाए छतियाँ
शबान हिज्राँ दराज चों ज़ुल्फ व रोज वस्लत चो उम्र कोताह
सखी पिया को जो मैं न देखूँ तो कैसे काटूँ अँधेरी रतियाँ
चो चश्मे सोजाँ चो ज़र्रा हैराँ हमेशा गिरियाँ बे इश्क आमाँ
न नींद नैना न अंग चैना न आप आवे न भेजी पतियाँ

अमीर खुसरो के बाद हिंदी ग़ज़ल में कबीर का उदाहरण है। लेकिन 'हमन है इश्क मस्ताना, हमन को होशियारी क्या' उनकी अब तक प्राप्त एकमात्र ग़ज़ल की प्रामाणिकता संदेह से परे नहीं है। आधुनिक समय में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'रसा' उपनाम से दो दर्जन से कुछ अधिक ग़ज़लें कहीं लेकिन उनकी ग़ज़लें उर्दू रंग में ढली हुई हैं। एक शे'र देखिए—

ख्वाब में उस गुल को देखा ऐ रसा,
वस्ल होगा उसकी ये ताबीर है

लेकिन भारतेन्दु ने ग़ज़ल को सामाजिक सरोकार से जोड़ने का महान कार्य किया । उन्होंने अपनी ग़ज़लों में अंग्रेजी साम्राज्यवाद एवं शोषण के ख़िलाफ़ भी आवाज़ उठायी है—

हिला देंगे अभी ऐ संगदिल तेरे कलेजे को
हमारी आतिशबाजी से बड़े पत्थर पिघलते हैं

सुप्रसिद्ध कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने उर्दू बह्रों और हिंदी कविता के वीच सामंजस्य स्थापित करते हुए अपनी ग़ज़लों में स्वदेश प्रेम का जिक्र किया है—

राह पर उसको लगाना चाहिए,
जाति सोती है, जगाना चाहिए।

लाला भगवानदीन ने संस्कृतनिष्ठ हिंदी में ग़ज़लें कहीं—

कहो तो आज कह दें आपकी आँखों को क्या समझें,
सिता सिंदूर मृगमद युक्त अद्‌भुत कुछ दवा समझें।

अगर इसको न मानो तो बता दें दूसरी उपमा,
सहित हाला हलाहल, मिश्रिता सुंदर सुधा समझें।

मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', जयशंकर प्रसाद, बलवीर सिंह 'रंग' आदि ने भी हिंदी ग़ज़ल की परंपरा को आगे बढ़ाने में अपना योगदान दिया। हिंदी में ग़ज़ल की व्यवस्थित शुरुआत सन् 1943 ई.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में 'निराला' की 'बेला' से हुई। कविता को छंदों से मुक्ति का पाठ पढ़ाने वाले निराला ने ही ग़ज़ल के रूप में छंद को स्वीकार कर लिया। निराला ने ग़ज़ल को शिल्प के स्तर पर फारसी छंदों को रखकर भी उसे हिंदी व्याकरण, मिजाज व मुहावरे से समृद्ध किया और फारसी बह्रों को मानते हुए ग़ज़ल का नया ढाँचा विकसित किया–

भेद खुल जाए वह सूरत हमारे दिल में है,
देश को मिल जाए जो पूँजी तुम्हारी मिल में है।

निराला का एक शे'र बहुत चर्चित है–

खुला भेद विजयी कहाये हुए जो,
लहू दूसरों का पिये जा रहे हैं।

निराला के पश्चात हिंदी के प्रगतिवादी कवि त्रिलोचन व शमशेर बहादुर सिंह ने नई भाषा और नवीन अर्थ-व्यंजना देकर ग़ज़ल का क्षेत्र विस्तार किया। प्रगतिवादी-जनवादी प्रख्यात कवि त्रिलोचन के हिंदी ग़ज़ल-संग्रह 'गुलाब और बुलबुल' की काफी चर्चा होती रही है। त्रिलोचन की ग़ज़लें प्रसाद, निराला की रौ की ग़ज़लें हैं। उनकी ग़ज़लों में अभावों, विवशताओं के साथ-साथ जनपदीय तेवर भी मौजूद हैं–

बिस्तरा है न चारपाई है
ज़िंदगी हमने खूब पाई है
जो बुराई है अपने माथे है
उनके हाथों महज भलाई है
अब तो जैसी भी आए, सहना है
दिल से आवाज़ ऐसी आई है
आदमी जी रहा है मरने को
सबसे ऊपर यही सच्चाई है
कच्चे ही हो अभी त्रिलोचन तुम
धुन कहाँ वह सँभल के आई है

त्रिलोचन की ग़ज़लें जीवन में संघर्ष की प्रेरणा देने से अधिक जीवन के सौंदर्य का साक्षात्कार कराती हैं। उनकी ग़ज़लों में प्रकृति से सहज लगाव है। प्रकृति के माध्यम से उन्होंने मानव-मन के भावों को भी प्रकट किया है। उनकी ग़ज़लों में विषय-वस्तु के स्तर पर भी काफी विस्तार है।

नई कविता के अद्वितीय कवि शमशेर बहादुर सिंह की ग़ज़लों में कोमल संवेदनाओं के वास्तविक चित्र हैं–

यह कैसा हममें तुममें है रिश्ता जवाब दो
कुछ तुमसे पूछते हैं खुलासा जवाब दो।

वह एक बेखुदी का-सा आलम जो याद हो
आँखों में फिर वो खोया हुआ-सा जवाब दो

× × ×

सब पार उतर गए हैं, अकेला किनारा है
लहरें अकेली रात अकेली, और मैं।

दिल, मेरी कायनात अकेली है, और मैं
बस अब खुदा की जात अकेली है, और मैं

हिंदी ग़ज़ल को व्यापक पैमाने पर बहुत प्रभावी ढंग से सामाजिक सरोकारों से जोड़ने की पहली पहल दुष्यंत कुमार ने की। दुष्यंत कुमार ने हिंदी में अपनी ग़ज़लों के माध्यम से एक नई ज़मीन तैयार करने और उस पर चलने की कोशिश की। उन्होंने इसे सोच का नया दृष्टिकोण और विचारों का आधुनिक बोध दिया। दुष्यंत का भाव बोध विराट बिम्बों और बड़े प्रतीकों के साथ पाठक को संवदेना के स्तर पर अपने साथ बहा ले जाता है–

हो गई है पीर पर्वत-सी, पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

दुष्यंत मानते हैं कि आदमी के भीतर ऊर्जा बड़ी चीज है। आदमी को ऊर्जस्वित होने की जरूरत है–

मेरे सीने में नहीं तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग लेकिन आग जलनी चाहिए।

आग जगाती है हमारे भीतर छिपी अनंत संभावनाओं को, अशेष क्षमताओं को। यहाँ एक चिनगारी जलकर हमारी सोई संभावनाएँ उजागर कर देती है–

एक चिनगारी कहीं से ढूँढ़ लाओ दोस्तों,
इस दिए में तेल से भींगी बाती तो है।

ग़ज़ल की असली शक्ति उसकी व्यंजना की गहराई और शब्द-साधना, भाव-बोध और कथन-भंगिमा है। दुष्यंत ने आम बोल-चाल की भाषा में वह असर पैदा किया कि वह सुनने वालों के दिलों में सीधे उतर गई; क्योंकि मुश्किल अल्फाज में कही गई पांडित्यपूर्ण कलाम को जनता खारिज कर देती

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है। जनता ने मुश्किल अल्फाज में कही गई ग़ालिब की ग़ज़लें भी खारिज कर दी थीं–

मजा कहने का जब है इक कहे और दूसरा समझे,
मगर इनका कहा यह आप समझें या खुदा समझे।

हिंदी ग़ज़ल के संदर्भ में एक प्रश्न विचारणीय है कि जब हिंदी ग़ज़ल का ढाँचा उर्दू ग़ज़ल का ही है तो फिर हिंदी ग़ज़ल की अपनी पहचान क्या है? ग़ज़ल तो ग़ज़ल में ही सोचकर कही जाती है। लिखते समय यदि वह देवनागरी या फारसी में लिखी गई हो तो इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है। दसअसल हिंदी में लिखी जा रही ग़ज़लें विषय विस्तार की दृष्टि से अधिक व्यापक हैं। आज के समय-समाज की जटिल संरचना को हिंदी ग़ज़लकारों ने निरंतर स्वर देकर उसे जनोन्मुख बनाया है। हिंदी ग़ज़ल के जनवादी तेवर ने ही उसे अलग पहचान दिया है। जीवन यथार्थ की क्रूर सच्चाइयों को अपनी निजी अनुभूतियों के धरातल पर उकेरने में हिंदी ग़ज़लकार बहुत सफल हुए हैं। समाजार्थिक विसंगतियों, पूँजीपतियों द्वारा किए जाने वाले निम्नवर्ग के शोषण, उपभोक्तावादी अपसंस्कृति का दुष्प्रभाव, सम्बन्धों की टूटन, पारिवारिक जटिलताओं के दर्द, अकेलेपन, ऊब, कृत्रिम व्यवहार, स्वार्थपरता, नारी मन की व्यथा, निम्नमध्यवर्गीय पारिवारिक यथार्थ, राजनीतिक विद्रूपता, जनता का मोहभंग, मूल्य-विघटन, सभ्यता के आवरण में पनप रहे छल-छंदों इत्यादि समस्याओं को दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़लकारों ने मार्मिकता एवं कलात्मकता से उजागर किया है।

संपर्क : स्टेट बैंक कॉलोनी, वीरपुर-85934 (बिहार)

'परती पलार' के
आगामी अंक के कुछ प्रमुख रचनाकार–

• कँवल भारती • डॉ. रमाकांत शर्मा • डॉ. ओंकार लाल शर्मा 'प्रमद' • डॉ. अनिल पंतग • डॉ. सूरज मृदुल, राजेन्द्र सिंह गहलौत • वसंत कुमार राय • डॉ. सुरेश प्रकाश शुक्ल • डॉ. रामबहादुर व्यथित • भारती • डॉ. आशा-नारायण अशोक •अरविन्द अवस्थी • प्रो. (डॉ.) जमना लाल वायती • डॉ. देवेन्द्र इन्द्रेश • ध्रुव तांती • डॉ. रमेश सोबती • अमरनाथ मेहरोत्रा • डॉ. महेशचन्द्र शर्मा • कृष्ण स्वरूप शर्मा मैथिलेन्द्र, अखिलेश त्रिवेदी 'शाश्वत' • रामकिशोर कपूर 'किशोर' • जगन्नाथ 'विश्व' • नलिनीकांत • डॉ. शान्ति सुमन • डॉ. चन्द्रभूषण चन्द्रेश • डॉ. संतोष गौड़ राष्ट्रप्रेमी • डॉ. जनार्दन यादव • डॉ. मालती शर्मा • चन्द्रकांत • एस.एन. सिंह • डॉ. नरेन्द्रनाथ लाहा • कीर्त्ति आनन्द एवं कई अन्य।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

ग़ज़ल का अनुशासन और हिंदी ग़ज़ल

❑ डॉ. ब्रह्मजीत गौतम

परिचय

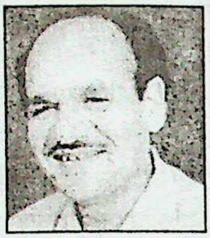

नाम : डॉ. ब्रह्मजीत गौतम
जन्म-तिथि : 28 अक्टूबर, 1940
मूल निवास : गाँव–गढ़ी नन्दू, जिला मथुरा (अब हाथरस) उ.प्र.
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी.
कार्य-क्षेत्र : म.प्र. शासन के उच्च शिक्षा विभाग में हिंदी प्रोफेसर के पद से अवकाश-प्राप्त
लेखन-विधाएँ : कविता, गीत, ग़ज़ल, मुक्तक, लघुकथा, निबंध, व्यंग्य, समीक्षा, एकांकी, रेडियो नाटक आदि।
प्रकाशित कृतियाँ : 1. कबीर-काव्य में प्रतीक-विधान (शोध-ग्रंथ), 2. कबीर-प्रतीक-कोश (कोश-ग्रंथ), 3. अंजुरी (काव्य-संग्रह), 4. जनकछंद : एक शोधपरक विवेचन (शोध-पुस्तक), 5. वक्त के मंजर (ग़ज़ल संग्रह), 6. जनकछंद की साधना (जनकछंद-संग्रह), 7. दोहा-मुक्तक-माल (दोहा-मुक्तक-संग्रह)
संप्रति : स्वतंत्र साहित्य लेखन।
संपर्क : बी-85, मिनाल रेजीडेंसी, जे.के. रोड, भोपाल, (म.प्र.)-462023
मोबाइल : 09425102154

कुछ समय पहले किसी पत्रिका में डॉ. अमरेन्द्र का एक शे'र पढ़ने में आया था– *'वो तवज्जो तो देते नहीं पर/मेरी ग़ज़लों के मीटर बहर देखते हैं'*। इसी प्रकार 'सौग़ात' के ग़ज़ल विशेषांक (अप्रैल 2009) में हिंदी के प्रख्यात ग़ज़लकार श्री विज्ञान व्रत का एक लेख था–'समकालीन हिंदी ग़ज़ल के परिदृश्य से गुजरते हुए,' जिसमें उनके विचार का केंद्रबिंदु था कि क्या छंदशास्त्र ही काव्य है? क्या छंदशास्त्र या अरुज़ जानने से ही कवि बना जा सकता है?...लोगों ने ग़ज़लों में पी-एच.डी. या डी. लिट तक की है। क्या ये डॉक्टर लोग अच्छे ग़ज़लकार हैं? श्री विज्ञान व्रत का यह लेख थोड़े-से संक्षिप्तीकरण के साथ 'संकल्परथ' के अक्टूबर-नवंबर 2008 अंक में भी 'कविता, व्याकरण की मोहताज नहीं' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इधर भोपाल से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र 'प्रेस मेन' के 25 अप्रैल, 2009 अंक में वरिष्ठ गीतकार और ग़ज़लकार श्री चन्द्रसेन 'विराट', प्रसिद्ध गीतकार श्री नरेन्द्र दीपक, प्रेस मेन के कार्यकारी संपादक श्री समीर श्रीवास्तव एवं साहित्य संपादक श्री मयंक श्रीवास्तव के बीच हिंदी ग़ज़ल के छंदानुशासन पर एक लंबी बातचीत प्रकाशित हुई। इस चर्चा में श्री मयंक का कहना था कि आज जिसे देखो, वह ग़ज़ल लिखे जा रहा है। लोग ऐसा समझते हैं मानो ग़ज़ल में छंदुनशासन की कोई आवश्यकता ही नहीं है। श्री समीर और श्री दीपक का मत था कि हिंदी ग़ज़ल को उर्दू के नज़रिए से देखने की आवश्यकता नहीं है, केवल मात्राओं पर ध्यान देना चाहिए, जब कि श्री विराट का पुरजोर आग्रह था कि हिन्दी ग़ज़ल को केवल मात्राओं के आधार पर नहीं, उर्दू के छंदानुशासन पर भी कसना होगा। कहने का आशय यह है कि ग़ज़ल के छंदानुशासन को लेकर आए दिन पत्र-पत्रिकाओं और हिंदी ग़ज़लकारों में बहस चलती रहती है। सब अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार इसकी आवश्यकता-अनिवार्यता और महत्त्व का निरूपण करते हैं।

आख़िर यह छंदानुशासन है क्या चीज़, जिसे लेकर हिंदी ग़ज़ल के क्षेत्र में आए दिन इतना हंगामा होता रहता है। वस्तुतः ग़ज़ल एक आयातित विधा है, जिसके अपने कुछ उसूल और नियम-कानून हैं। ग़ज़ल को फ़िक्र और फन की विधा कहा गया है। फ़िक्र से हमारा आशय उस कथ्य से है, जो ग़ज़ल के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है और फन से आशय उस कलात्मक तरीके से है, जिसके माध्यम से उस अभिव्यक्ति को रोचक और प्रभावपूर्ण बनाया जाता है। यह कोई अनोखी चीज़ नहीं है, क्योंकि हिंदी कविता में हम इसे भावपक्ष और कलापक्ष के नाम से जानते हैं। अंतर कवेल इतना है कि हिंदी कविता में जहाँ हम भावपक्ष अर्थात् कविता के आंतरिक सौंदर्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को विशेष महत्त्व देते हैं और कलापक्ष अर्थात् बाह्य सौंदर्य को गौण, वहाँ ग़ज़ल में कलापक्ष को भी उतना ही महत्त्व दिया जाता है जितना भावपक्ष को।

मत्ला, मक़्ता, बह्र, काफ़िया और रदीफ़ मुख्यतः वे पाँच उपकरण हैं, जो ग़ज़ल के बाह्य सौंदर्य को निखारने का काम करते हैं। ये ही वे पाँच मुख्य कसौटियाँ हैं, जिन पर कसकर यह परख की जाती है कि कोई ग़ज़ल छंदानुशासन की दृष्टि से शुद्ध है या नहीं। यदि इनमें से एक भी स्थल पर शिथिलता है, तो ग़ज़ल का अंतःपक्ष कितना भी समृद्ध क्यों न हो, उस्तादों के मुख से वाह नहीं निकलती। कदाचित् इसीलिए कहा जाता है कि हिंदी कविता में जहाँ हमारी दृष्टि उसके आंतरिक सौंदर्य से होती हुई उसके बाह्य सौंदर्य तक आती है, वहाँ ग़ज़ल में वह उसके बाह्य सौंदर्य से होती हुई आंतरिक सौंदर्य तक जाती है। तो देखना यह है कि हिंदी ग़ज़ल छंदानुशासन की इस कसौटी पर खरी उतरती है या नहीं? अगर नहीं, तो उसके क्या कारण हैं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है? आइए, इन पाँचों बिंदुओं पर कुछ विस्तार से चर्चा करते हैं।

मत्ला–ग़ज़ल में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान मत्ले का होता है, क्योंकि यही वह ज़मीन है, जिस पर ग़ज़ल की बहुमंज़िली इमारत तामीर होती है। और यह तो सभी जानते हैं कि ज़मीन अर्थात् आधार जितना दृढ़ होगा, भवन भी उतना ही मज़बूत होगा। मत्ला अपनी भूमिका तीन रूपों में निभाता है–1. ग़ज़ल किस बह्र में कही जाएगी? 2. ग़ज़ल में प्रयुक्त होने वाले काफ़ियों की प्रकृति क्या होगी? तथा 3. ग़ज़ल में रदीफ़ क्या होगा? ये सारे मुद्दे मतले की रचना के समय ही तय कर लिए जाते हैं। मत्ला इन तीनों बातों की पूर्व सूचना देता है। छांदसिक अनुशासन अर्थात् अरुज़ की दृष्टि से किसी ग़ज़ल का मूल्यांकन करते वक़्त इन तीन बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है, अतः कुशल ग़ज़लकार अपनी रचना में इनका अवश्य ध्यान रखते हैं।

बह्र–बह्र या छंद, ग़ज़ल के शास्त्रीय अनुशासन का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। ग़ज़ल किस बह्र में कही गई है, इसके अर्कान या लयखंड कौन-कौन से हैं, ग़ज़लकार को इसका ध्यान आदि से अंत तक रखना चाहिए। मत्ले के बाद के सभी मिसरों में वही बह्र और वे ही अर्कान कायम रहने चाहिए, जो मत्ले में प्रयुक्त हुए हैं। हिंदी ग़ज़लों में बह्र की शुद्धता को लेकर ही सबसे अधिक उँगलियाँ उठायी जाती हैं। कारण यह है कि हिंदी कविता या गीतों में मात्राओं के योग के आधार पर छंद की शुद्धता जाँची जाती है, जबकि ग़ज़लों में वर्णों के लघु-गुरु क्रम के आधार पर। चूँकि हिंदी के ग़ज़लकार मात्रिक आधार पर रचना करने के आदी होते हैं, अतः उनकी ग़ज़लों में मात्राओं का योग तो बराबर रहता है किंतु, अक्षरों का लघु-गुरु क्रम गड़बड़ा जाता है। यह भूल फ़ेलुन अर्थात् ऽऽ की आवृति वाली बह्रों में प्रायः देखने को मिलती है। वे भूल जाते हैं कि फ़ेलुन (ऽऽ) का विकल्प फ़इलुन (।।ऽ) तो हो सकता है किंतु फ़ऊल (।ऽ।) नहीं हो सकता। निरंतर दो लघु एक गुरु का विकल्प बन सकते हैं, किंतु छितराये हुए दो लघु एक गुरु का विकल्प नहीं बन सकते। उदाहरण के लिए **'डाल डाल पर फूल खिले हैं'** हिंदी के मात्रिक छंद (चौपाई-16 मात्राएँ) की दृष्टि से तो शुद्ध है किंतु बह्र की दृष्टि से नहीं, क्योंकि यहाँ रेखांकित अंश में फ़ऊल (।ऽ।) आ गया है। इसे यदि **'हर डाली पर फूल खिले हैं'** के रूप में संशोधित कर दिया जाए तो छंद और बह्र दोनों शुद्ध हो जाएँगे।

क़ाफ़िया–यह जान लेना बहुत आवश्यक है कि क़ाफ़िया कहते किसे हैं? बहुत से विद्वान दो शब्दों के अंत में आने वाले व्यंजन-साम्य को ही क़ाफ़िया मान लेते हैं, जैसे–अदा-ख़ुदा-फ़िदा। लेकिन यह भूल है। वास्तविकता यह है कि समान अक्षर या अक्षरों से पूर्व आए वर्णों में जो स्वर-साम्य होता है, उसे क़ाफ़िया कहते हैं। जैसे–भाया और गाया। यहाँ दोनों में 'या' समान है। इनके पूर्व 'भा' तथा 'गा' में 'आ' का ध्वनि-साम्य ही असली क़ाफ़िया है। अदा-ख़ुदा-फ़िदा में 'दा' तो समान है, किंतु इनके पूर्व में आए 'अ', 'ख़ु' एवं 'फ़ि' तीनों वर्णों में स्वर अलग-अलग हैं, अतः इन्हें शुद्ध क़ाफ़िया नहीं कह सकते।

ग़ज़ल में त्रुटिहीन क़ाफ़िये लाने के लिए मत्ले में प्रयुक्त क़ाफ़ियों के वज़्न का ध्यान रखना भी आवश्यक है। मान लीजिए किसी मत्ले में 'विकास' के साथ 'उदास' (।ऽ।) का क़ाफ़िया लाया गया है। इससे यह सूचना मिलती है कि आगे के शे'रों में भी ।ऽ। के वज़्न वाले क़ाफ़िये लाए जाएँगे। अब यदि इनके साथ 'अहसास', 'अनायास' या 'संत्रास' के क़ाफ़िये लाए जाते हैं, तो यह अमान्य होगा, क्योंकि इनका वज़्न अलग है। इसी प्रकार मान लीजिए, किसी मत्ले में 'कामना' के साथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'सामना' का क़ाफ़िया लाया गया है। इसका अर्थ हुआ कि शाइर शे'रों में भी ऐसे क़ाफ़िए लाना चाहता है, जिनके अंतिम वर्ण 'मना' तथा उसके पूर्व के वर्ण में 'आ' की ध्वनि हो। ऐसी स्थिति में 'कातना', 'भावना', 'याचना' जैसे क़ाफ़िये अमान्य होंगे, क्योंकि इनमें अंतिमाक्षर 'मना' नहीं हैं। अतः मत्ले में क़ाफ़िये प्रयुक्त करने से पहले यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उस प्रकृति के पर्याप्त क़ाफ़िये उपलब्ध हैं या नहीं।

क़ाफ़ियों के संबंध में कुछ अन्य बातें भी ध्यातव्य हैं, जैसे--एकाक्षरीय तुकें उर्दू शायरी में बहुतायत से प्रयुक्त होती हैं, किंतु हिंदी में इन्हें निकृष्ट कोटि की माना गया है, क्योंकि इनमें माधुर्य नहीं होता। अतः इनके प्रयोग से यथासंभव बचना चाहिए, जैसे–आईना-आपका-बेवफ़ा-देखना आदि। इन क़ाफ़ियों में केवल अंतिम वर्ण में 'आ' का स्वर-साम्य है। इसके अलावा स्वर-भेद (छेद-क़ैद, देन-चैन, डोर-ठौर); व्यंजन-भेद (डंक-पंख, भाड़-बाढ़, आकाश-आवास); अनुनासिकता (छाँह-निबाह, आग-माँग, जाय-पायँ); पुनरावृत्ति (राष्ट्र-धृतराष्ट्र, संबंध-अनुबंध, प्रवेश-परिवेश); अधिक व्यंजनागम (शास्त्र-पात्र, बात-पर्याप्त, अर्द्ध-बद्ध) आदि दूषित क़ाफ़िये भी वर्ज्य माने गए हैं।

रदीफ़–मत्ले में क़ाफ़िये के बाद जो शब्द या शब्द-समूह प्रयोग किया जाता है तथा जो हर शे'र के अंत में हर बार ज्यों का त्यों दोहराया जाता है, उसे रदीफ़ कहते हैं। यह अरबी भाषा का स्त्रीलिंग विशेषण शब्द है और ग़ज़ल के सौंदर्य, भाव तथा रस को परिपुष्ट करने में प्रबल सहायक होता है। अतः जो लोग रदीफ़ को केवल क़ाफ़िये के बाद आने वाला पुछल्ला मात्र मान कर चलते हैं, वे भारी भूल करते हैं। अधिकांश ग़ज़लकार मत्ले में तो रदीफ का प्रयोग भावानुकूल कर लेते हैं, किंतु शे'रों में उसकी चमक खो देते हैं। अतः हर शे'र में यह ध्यान रखना चाहिए कि रदीफ़ न केवल सार्थक और सटीक हो, अपितु वह शे'र के भाव से जुड़ा हुआ भी हो। ऐसे रदीफ़ को चस्पा कहते हैं। जो रदीफ़ शे'र के भाव से जुड़ा हुआ नहीं होता, वह भरती का बनकर रह जाता है। उसे फ़रार कहते हैं। कौन-सा रदीफ़ भावानुकूल है और कौन-सा भरती का, यह पहचानने का सीधा-सा तरीका यह है कि यदि रदीफ़ हटा देने से शे'र का आशय स्पष्ट न हो तो वह उत्तम कोटि का रदीफ़ समझना चाहिए और यदि उसे हटाने के बाद भी अर्थ स्पष्ट हो जाए तो समझ लीजिए कि वह भरती का है तथा शे'र में केवल पुछल्ले का काम कर रहा है। उदाहरण के लिए यह शे'र देखिए–

ये लातों का भूत न माने बातों से
कस के ठोकर मार, ज़माना ठोकर पे
शठ को शठ की भाषा में ही समझा तू
उठ, कोड़ा फटकार, ज़माना ठोकर पे

इन दोनों शे'रों में रदीफ़ 'ज़माना ठोकर पे' का शे'र के भाव से कोई संबंध नहीं है। वह रदीफ़ की सहायता के बिना भी पूरी तरह प्रकट हो रहा है, अतः इसे फ़रार या भरती का कहेंगे।

मक़्ता–जहाँ तक मक़्ते का सवाल है, उसे हिंदी के ग़ज़लकारों ने शुरू से ही महत्त्व नहीं दिया है। अधिकांश ग़ज़लकार रचना के अंत में अपना उपनाम देना पसंद नहीं करते, शायद ऐसा करने में उन्हें अहं की बू आती है। हिंदी ग़ज़ल संवेदना के स्तर पर निस्संदेह पर्याप्त समृद्ध है। उसे ग़ज़लकारों ने परंपरागत हुस्नो इश्क के सीमित दायरे से बाहर निकालकर बहुरंगी अनुभूतियों का विस्तृत आकाश और उड़ने के लिए कल्पना के सुंदर पंख दिए हैं। किंतु शिल्प के स्तर पर उसे अभी मीलों लंबा रास्ता तय करना है। हिंदी के बहुसंख्य ग़ज़लकार बह्र, क़ाफ़िया और रदीफ़ की बारीकियों से बेख़बर हैं। यदि वे निष्ठा के साथ एक चुनौती के रूप में ग़ज़ल और उसके अनुशासन को स्वीकार करें, तो कोई कारण नहीं कि हिंदी ग़ज़ल को सम्मान न मिले।

एक सूचना

'परती पलार' के सम्पादक मंडल के सद्यः निर्णयानुसार पत्रिका के आगामी अंकों में सदस्य रचनाकारों के समायोजन के पश्चात रिक्त बचे स्थानों पर अन्य रचनाकारों को भी समायोजित किया जा सकेगा। इस स्थिति में जिन रचनाकारों ने अब तक पत्रिका की सदस्यता स्वीकार करने की कृपा नहीं की है, उनकी रचनाओं के प्रकाशन में असाधारण विलम्ब संभावित है।

–प्रधान सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आलेख

हिंदी ग़ज़ल की विकास यात्रा

❑ हरीलाल 'मिलन'

हिंदी ग़ज़ल के उद्भव के संदर्भ में लोगों में दो भ्रम व्याप्त हैं—एक भ्रम यह है कि ग़ज़ल विधा को हिंदी ने उर्दू से प्राप्त किया है। दूसरा भ्रम यह है कि हिंदी ग़ज़ल दुष्यंत कुमार के ग़ज़ल संग्रह 'साये की धूप' से आरंभ हुई। यह दोनों तथ्य अप्रासंगिक एवं भ्रामक हैं। व्याकरण की दृष्टि से लोग चाहे हिंदी-उर्दू को एक कहें या दोनों को अलग-अलग कहें किंतु इतिहास ने उर्दू और हिंदी को भिन्न भाषाओं के रूप में प्रतिष्ठित ही कर दिया है। इसलिए एक साहित्य के व्याकरणिक मापदंडों को दूसरे साहित्य के व्याकरण के ऊपर थोपना सर्वथा अनुचित है। दोनों साहित्य एक ही समाज में रोपित, पुष्पित एवं पल्लवित होते हुए भी परंपरा और लिपि विशेष के कारण व्याकरण एवं उच्चारण में विशिष्ट अंतर रखते हैं।

उर्दू ग़ज़ल अरबी, फारसी शब्दावली और विदेशों में प्रयुक्त एक विधा विशेष का नाम है, जबकि हिंदी में लिखी जाने वाली ग़ज़ल उक्त शब्दावली और प्रतीकों से मुक्त है इसलिए हिंदी ग़ज़ल की उत्पत्ति उर्दू में मानना उपयुक्त नहीं है। इसी प्रकार दुष्यंत कुमार से आरंभ ग़ज़ल विधा के संदर्भ में प्रस्तुत किए जा रहे विचार भी भ्रामक हैं क्योंकि हिंदी ग़ज़ल का अस्तित्व आदिकाल से ही व्याप्त है।

यह भी उल्लेखित है कि विश्व की समस्त भाषाओं का उद्भव एवं विकास प्रायः पद्य साहित्य से माना जाता है। हिंदी साहित्य भी अपवाद नहीं है। इसका जन्म भी पद्य से ही हुआ है। इसलिए हिंदी ग़ज़ल के सम्यक् अनुशीलन के लिए हमें हिंदी साहित्य की विकास-यात्रा का युगवार अध्ययन करना होगा।

परिचय

नाम : हरीलाल 'मिलन'

जन्म तिथि : 08 जुलाई 1954

जन्म स्थान : ग्राम-पूरे गुलाब राय, पोस्ट-बाबूगंज, जिला-प्रतापगढ़, (उ.प्र.)

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी)

संप्रति : श्रम विभाग, उ.प्र. सरकार के अधीन श्रम प्रवर्तन अधिकारी

रचनाएँ प्रकाशित : अनेक पत्रिकाओं और दोहा दशक (तीन खंडों) में प्रथम दोहाकार रूप में, 'ग़ज़ल—दुष्यन्त के बाद', 'समय की शिला पर' सरीखे अनेक संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित।

प्रकाशित कृति : 'परित्यक्ता' (खंडकाव्य), 'वक्ता रो रहा है', 'ये आँसू' (ग़ज़ल-संग्रह)

प्रकाशनाधीन : उपन्यास 'प्रिया', 'मिलन के वियोगी गीत', 'दोहे इस युग के'

प्रसारण : आकाशवाणी से गीत, दूरदर्शन से देशगान।

संपर्क : 300ए/2, (प्लॉट सं.-16) दुर्गावती सदन, हनुमन्त नगर, नौबस्ता, कानपुर (उ.प्र.)

मो. : 09935299939

हिंदी साहित्य का आदिकाल (सन् 743 से 1313 ई.)

इस समय भारतीय समाज की स्थिति बड़ी अव्यवस्थित रही। चारों ओर युद्ध व अशांति का वातावरण छाया हुआ था। विदेशी आक्रमण हो रहे थे। भारतीय राजाओं में छोटी-छोटी बातों को लेकर युद्ध होते थे। उस समय के रचे गए काव्य पर सभी परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इस काल के कवि राज्याश्रित होते थे। वीर और शृंगार प्रधान रचनाएँ, युद्ध के सजीव वर्णन और अपने राजाओं की अतिश्योक्ति पूर्ण प्रशंसाएँ ही इनकी काव्य-सामग्री थीं। राष्ट्रीय भावनाओं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का पूर्ण अभाव था। पृथ्वीराज रासो, खुमाण रासो, हमीर रासो, विजयमल रासो, परमाल रासो, बीसलदेव रासो, जयचन्द्र प्रकाश एवं जयमयंक जशचंद्रिका आदि ग्रंथ इसके दृष्टांत हैं। छप्पय, दोहा, कवित्त, त्रोटक, तोमर, चौपाई, गाथा, आर्या, कुंडली तथा लोक-छंद की विशेषता के कारण हिंदी ग़ज़ल की ओर इस युग के कवियों का ध्यान आकर्षित नहीं हो सका। इसलिए हिंदी ग़ज़ल का विशेष विस्तार नहीं हो पाया। इस काल के प्रमुख ग्रंथों की भाषा राजस्थानी, मैथिली तथा खड़ी बोली का मिलाजुला रूप है। अमीर खुसरो खड़ी बोली के आदिकवि माने जाते हैं। आदिकाल में खड़ी बोली को काव्य की भाषा बनाने वाले अमीर खुसरो ही हैं। अकबर या मुगलों का जब अता-पता भी न था तब उनसे शताब्दियों पहले अमीर खुसरो ने ऐसी भाषा में रचना की जिसे वे 'हिंदी' या 'हिंदवी' कहते थे। मुगलों से पहले अलाउद्दीन खिलजी के जमाने में अमीर खुसरो ने हिंदी की कविता रची थी। वे पहले कवि हैं जिन्होंने ग़ज़ल की आधार-शिला रखी और निम्न ग़ज़ल की रचना की—

जब यार देखा नैन भर दिल की गई चिंता उतर।
ऐसा नहीं कोई अजब राखे उसे समझाय कर॥

फारसी शब्दकोश के अनुसार ग़ज़ल का अर्थ "औरतों के बारे में तथा उनके इश्क के संबंध में बात करना और वह बात जो औरतों तथा उनके इश्क की तारीफ़ में कही जाए" है। अरेबियन इंग्लिश डिक्सनरी, उर्दू शब्दकोष और हिंदी शब्दकोष भी ग़ज़ल का यही मिलता-जुलता अर्थ प्रकट करते हैं। आहत 'गजाला' हिरन के करुण स्वर को भी ग़ज़ल कहा गया है। किंतु इससे उत्पत्ति मानने वाले विद्वानों की संख्या कम है।

इसलिए असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि अमीर खुसरो ही हिंदी ग़ज़ल के जनक हैं तथा उर्दू से पूर्व ही हिंदी ग़ज़ल का जन्म हो गया था। डॉ. हनुमन्त नायडू का यह कथन है कि "हिंदी ग़ज़ल का सूत्र फारसी से बँधा है। हिंदी ग़ज़ल उर्दू ग़ज़ल से पहले उत्पन्न हुई है और एक लंबी परंपरा उसे 'उत्तराधिकार' में मिली है," पूर्णतः प्रासंगिक एवं न्यायोचित है। इस प्रमाण के आधार पर अब कोई संशय या संदेह नहीं रहना चाहिए कि हिंदी ग़ज़ल हिंदी भाषा की आदिकालिक विधा है तथा अमीर खुसरो हिंदी के प्रथम ग़ज़लकार हैं।

हिंदी साहित्य का पूर्व मध्यकाल (सन् 1343 से 1643 ई.)

आदिकाल के समाप्त होते-होते देश में सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ बदल गईं। मुसलमानों का राज्य स्थापित हो जाने पर परस्पर लड़ने वाले छोटे-छोटे राजा भी अब न रहे। हिंदू जनता पर निरंतर अत्याचार होते रहे तो सांसारिक राजाओं से निराश होकर जनता ने संसार के राजा 'सर्वशक्तिमान परमेश्वर' की ओर ध्यान लगाया। फलतः धार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रवृत्तिपूर्ण काव्य रचनाएँ की जाने लगीं। इसे हिंदी साहित्य का अत्यंत 'विकसित-काल' या 'स्वर्णकाल' भी कहा जाता है। कबीरदास, मलिक मोहम्मद जायसी, सूरदास, तुलसीदास, रैदास, दादू, नानक, कुतुबन, मंझन, उस्मान, भूपति, बेनी नाभादास, नंददास, हरिवंश एवं मीराबाई आदि विशिष्ट कवियों ने साहित्य में योगदान किया। दोहा, चौपाई, छप्पय, कवित्त, पद आदि जैसी पारंपरिक विधाएँ ही प्रवाह में रहीं। यह भी सत्य है कि हिंदी ग़ज़ल को इस युग में विशेष व्यापकता नहीं मिली किंतु उसका अस्तित्व पूर्ववत् बना रहा। ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवि कबीर ने भी हिंदी ग़ज़लों की रचना की

हमन है इश्क मस्ताना हमन को होशियारी क्या।
रहे आजाद या जग में हमन दुनिया से यारी क्या।

जो बिछड़े हैं पियारे से भटकते दर-ब-दर फिरते,
हमारा यार है हमसे हमन को इन्तज़ारी क्या।

न पल बिछड़े पिया हमसे न हम बिछुड़े पियारे से,
उन्हीं से नेह लागी है हमन को बेकरारी क्या।

कबीरा इश्क का मारा दुई को दूरकर दिल से,
जो चलना राह नाजुक है हमन सिर बोझ भारी क्या।

अनेक विद्वान इसी आधार पर संत कबीर को हिंदी का प्रथम ग़ज़लकार मानते हैं किंतु प्रमाणिकता के आधार पर यह सत्य नहीं है। हाँ, यह कहा जा सकता है कि संत कबीर ने हिंदी ग़ज़ल की प्रवाहमानधारा को गतिशील रखा।

हिंदी साहित्य का उत्तर मध्यकाल (सन् 1643 से 1843 ई.)

इस युग में विदेशी शासन की जड़ें स्थिर हो चुकी थीं। स्वदेशी राजा या तो इन विदेशी शासकों को कर देने लगे या उनके मनसबदार बन गए। इसी स्थिति में भारतीय शासक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वीरता और स्वाभिमान को छोड़कर सुरा और सुंदरी की उपासना में लीन हो गए। जो कृष्ण और राधा भक्ति के आलंबन थे अब वही श्रृंगार के आलंबन बन गए। इसके अतिरिक्त एक अन्य परिवर्तन भी आया। कवियों का ध्यान साहित्य शास्त्र की ओर गया और उन्होंने रस, अलंकार, छंद, नायक, नायिका आदि के उदाहरण रूप में काव्य रचना की। केशव, भूषण, राजा यशवन्त सिंह, देव, पद्‌माकर, विहारी, घनानन्द, गोरेलाल और सूदन आदिकवि थे। इस युग में वाग्वैचित्र्य, अलंकारिक चमत्कारिताएँ एवं पांडित्य प्रदर्शन के कारण हिंदी ग़ज़लों की गति सामान्य ही रही।

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल (सन् 1843 से वर्तमान तक)

भारतेन्दु युग (सन 1857 से 1900 तक)–भारतेन्दु आधुनिक साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं। यह युग चूँकि आधुनिक हिंदी कविता का एकदम आरंभिक युग था, इसलिए इसमें युगसंधि की प्रवृत्तियों का मिलना स्वाभाविक है। इस युग में हिंदी ग़ज़ल विधा को एक नया आयाम मिला और कवि ग़ज़ल विधा की ओर आकर्षित हुए। प्रस्तुत है भारतेन्दु की ग़ज़ल के कुछ शे'र–

लिखाय नाहीं देत्यो पढ़ाय नाही देत्यो।
सैंया फिरंगिन बनाय नाही देत्यो।
लँहगा दुपट्टा नीक न लागै,
मेमन का गौन मंगाय नाही देत्यो।

भारतेन्दु के अन्य सहयोगी कवि बदरीनारायन उपाध्याय, चौधरी 'प्रेमधन' तथा प्रताप नारायण मिश्र ने भी ग़ज़लों में विशिष्ट योगदान किया। मिश्र की यह हिंदी ग़ज़ल दृष्टव्य है–

दयानिधान! हमारी विधा सुनो तो सही।
पुकार पुत्र की अपने, पिता सुनो तो सही।
जो अपने लोगों के ऊपर दया नहीं करते,
कहेगा आपको संसार क्या सुनो तो सही।

द्विवेदी युग (1901 से 1918) पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी इस युग के आरंभकर्ता हैं। नए विषयों के आगमन के साथ ही कविता की भाषा में परिष्कार होना इस युग की विशेषता है। खड़ी बोली में काव्य-रचना इस युग में अपने वैशिष्ट्य के साथ आरंभ हुई। इस युग के प्रमुख कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामनरेश त्रिपाठी, मैथिलीशरण गुप्त आदि हैं। इस युग में हिंदी ग़ज़ल पूर्णतः परिष्कृत भाषा में लिखी गई है। प्रस्तुत है मैथिलीशरण गुप्त की ग़ज़ल के कुछ शे'र–

इस देश को हे दीनबंधो! आप फिर अपनाइए,
भगवान भारतवर्ष को फिर पुण्य-भूमि बनाइए।
जड़ तुल्य जीवन आज इसका विघ्न बाधा पूर्ण है,
हेरम्ब अब अवलंब देकर विघ्न-हर कहलाइए।

इस युग के कवियों ने हिंदी ग़ज़ल विधा की ओर विशेष ध्यान दिया। कवि 'त्रिशूल' ने भी इस विधा में रुचि प्रदर्शित करते हुए हिंदी ग़ज़ल को आम जीवन से जोड़ा–

कैसा नीरस जीवन बीता मैं प्यार किसी को कर न सका
अपकार किया किसका-किसका, उपकार किसी का कर न सका।
कितने दुखिया बहते देखे, दुख-सरिता में मझधार पड़े,
मैं मस्त रहा अपनी धुन में, उद्धार किसी का कर न सका!

छायावादी युग (सन 1918 से 1938 ई.) द्विवेदी युग की कविता वर्णनात्मक और स्थूल प्रकृति की थी। इसी की प्रतिक्रिया के रूप में छायावादी-काव्य का आगमन हुआ। कविताओं में भाषा-लाक्षणिकता और विषयों की विविधता है। प्रेम, सौन्दर्य, देशप्रेम, सूक्ष्म, प्रकृति-चित्रण, निराशावादी-दृष्टिकोण, मानवता की अनुभूति, नवीन अलंकारों का प्रयोग आदि इस काव्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इस काल के प्रमुख कवि पंत, निराला, प्रसाद, महादेवी वर्मा आदि हैं। सन् 1925 तक अनेक हिंदी के कवि हिंदी ग़ज़ल लिखने लगे थे। विद्रोही कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' भी पीछे न रहे–

मुसीबत में कटे हैं दिन मुसीबत मे कटी रातें,
लगी हैं चाँद-सूरज से निरंतर राहु की बातें।
जो हस्ती से हुए हैं पस्त समझे हैं वही क्या है,
गुजरती ज़िंदगी के साथ हरकत से भरी बातें।

प्रगतिवादी युग (सन् 1936 से 1943 ई. तक) छायावादी काव्य निराशा-मूलक और कल्पना प्रधान था। देश को जगाने वाली सामाजिक और राजनीतिक चेतना से सीधा संबंध न था। अतः नवीन चेतना के काव्य जगत में प्रवेश के साथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रगतिवादी युग आया। इस युग में कवियों ने हिंदी ग़ज़ल में अपना योगदान किया किंतु प्रगतिवाद के हावी होने के कारण ग़ज़ल का सर्वांगीण एवं सार्वभौमिक विकास धीमी गति से चला।

प्रयोगवाद (सन 1943 से 1960 ई. तक) प्रयोगवादी कविता नए-नए प्रयोगों की कविता है। इसमें हर काव्य-परंपरा का विरोध है। रस, छंद, अलंकार का बहिष्कार है। मुक्त यौन-चित्रण, भदेस-भाषा का प्रयोग, वैयक्तिता, बौद्धिकता आदि की प्रधानता है। प्रधान कवि अज्ञेय, मुक्तिबोध, भारत भूषण, माचवे आदि हैं। यह वह धरातल है जहाँ तुकांत को अतुकांत से सरस को नीरस से और गेयता को अगेयता से युद्ध-सा करना पड़ा। क्योंक प्रयोगवादी कविताएँ आम जनता के लिए नहीं बरन स्वयं कवियों की तथा साहित्य मनीषियों की सामग्री मात्र बनकर रह गईं। इस समय की काव्यधारा वर्षा या बाढ़ की नहीं वरन ऐसी बूँदों की तलाश कर रही थी जो सीपियों के अंदर पहुँचकर मोती बन जाएँ।

नई कविता (1960 ई. से) नई कविता प्रयोगवाद की ही अगली सीढ़ी है। नए उपमानों का प्रयोग, घोर वैयक्तिक, भाषा, व्यंग्य प्रधान शैली, नवीन प्रतीकों का प्रयोग, गद्यात्मक और अस्पष्ट अभिव्यक्ति इस काव्य की विशेषताएँ हैं। भवानी प्रसाद मिश्र, रामविलास शर्मा, नरेश मेहता, धूमिल आदि इस शृंखला के प्रमुख कवि हैं। यह भी सत्य है कि छायावाद के बाद हिंदी-काव्य की गेयता और लयात्मकता में गिरावट आई। छंद मुक्त कविताएँ अब आम नागरिकों के लिए नहीं रह गई। यह नैसर्गिक सत्य है कि जिन्हें सुन-पढ़कर अधर गुनगुनाते नहीं, आँखें भीगती नहीं और हृदय रोता या हँसता नहीं, उनमें स्थायित्य नहीं होता। यही स्थिति प्रगतिवादी व प्रयोगवादी मुक्त छंदों की रही। इस समय हिंदी साहित्य लय, गति एवं गेयता की पुनः तलाश करने लगा। इसी बीच वर्ष 1961 में शमशेर बहादुर सिंह की 'कुछ और कविताएँ' शीर्षक से सात ग़ज़लें प्रकाशित हुईं। शमशेर के बाद सन 1974-75 में दुष्यंत कुमार का प्रसिद्ध ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' प्रकाशित हुआ। इनमें उनकी कुल 52 ग़ज़लें संग्रहीत हैं। प्रायः कुछ विद्वान दुष्यंत कुमार को हिंदी विधा का प्रथम ग़ज़लकार मानते हैं, यह सही नहीं है। अमीर खुसरो से लेकर दुष्यंत कुमार तक हिंदी ग़ज़लकारों की एक लंबी शृंखला मिलती है। हाँ, दुष्यंत कुमार के 'साये में धूप' को प्रथम परिष्कृत हिंदी ग़ज़ल संग्रह होने का गौरव प्राप्त है उसके बाद हिंदी ग़ज़ल विधा की सुधा-स्रोतस्विनी अत्यंत वेग से प्रवाहमान हो चली।

हिंदी ग़ज़ल का स्वर्णकाल (वर्ष 1974 से)

दुष्यंत कुमार के ग़ज़ल संग्रह के बाद हिंदी ग़ज़ल का तीव्र गति से विकास हुआ। अनेक पुराने-नए कवि हिंदी ग़ज़ल विधा से जुड़ गए हैं। अनेक ग़ज़ल-संकलन प्रकाश में आए। अनेक साहित्यिक पत्रिकाएँ ग़ज़लों का प्रकाशन प्राथमिकता के आधार पर कर रही हैं। भूख, गरीबी, अनास्था, अनिश्चय, अराजकता, अन्याय, अविश्वास, घुटन आदि के कथ्य को भावात्मक गेयता प्रदान कर रही हैं। आज हिंदी ग़ज़लें शोषकों के प्रति आक्रोश, शोषितों का करुण-चित्रण, नैराश्य-भावना, अनास्था, वैयक्तिकता, राजनीतिक पतन एवं चारित्रिक अवमूल्यन आदि का निर्भय शब्दांकन कर रही हैं।

ये ग़ज़लें नाज़ुक हथेली पर मेहंदी नहीं, फफोले देखती हैं। पाँव में पायल नहीं, छाले देखती हैं। आँख में कमल नहीं, शोले देखती हैं। शायद, हृदय में प्यार की कम, भूख की लहरें ज़्यादा देखती हैं। इन ग़ज़लों में अमीरी और गरीबी का चित्रण बिलकुल उस माशूक और माशूका जैसा है जो आपस में कभी नहीं मिलते। उदाहरणार्थ कुछ ग़ज़लों के शेर उद्धृत हैं–

शब्द झूठे हैं सत्य कथाओं की तरह।
वक्त बेशर्म है वेश्या की अदाओं की तरह।

–डॉ. गोपालदास 'नीरज'

रोशनी करने का मतलब यह नहीं होता कि तुम,
जिसको पर्दा चाहिए उसको भी बेपर्दा करो।

–डॉ. कुँअर 'बेचैन'

घुटी-घुटी साँसों के झूले में तन झूल रहा है बेबस,
अंतर्मन के मौन रुदन से निकल चलो तो अच्छा होगा।

–डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

कहीं अगर कोई भूखा सोता है तो पक्का जानो,
उसके हिस्से वाली रोटी और कोई खा जाता है।

–प्रमोद तिवारी

यहाँ पर आत्मा से जिस्म तक, हर चीज बिकती है,
यहीं हर शख़्स में फैला हुआ बाजार है कोई।

–कमलेश भट्ट 'कमल'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भीतर-बाहर वहम गुमान।
जीना-मरना एक समान।

–विज्ञान व्रत

चन्द आँसू, चन्द आहें और कुछ ग़ज़लें,
यह हमारी ज़िंदगी भर की कमाई है।

–शिव ओम 'अंबर'

अपनी आवाज़ भी कोई सुनता नहीं,
इस शहर में किसी से कहें भी तो क्या।

–अंसार कंबरी

कुर्सी की दौड़ में पागल-से हुए हैं
एक नाज़नी हैं और दीवाने कई-कई।

–अशोक अंजुम

देने के लिए ईंट को इक सख्त-सा जवाब
पत्थर भी अपने हाथ में पत्थर उठाए हैं।

–कृष्णानन्द चौबे

पहले ट्यूशन की दुकानें भी नहीं होती थीं
फिर भी हैरत है हम टाप किया करते थे।

–डॉ. उर्मिलेश

देश की हालत बिगड़ती जा रही है,
और दिल्ली कह रही है कोई बीमारी नहीं है।

–राजेन्द्र तिवारी

छल-कपट जिनकी रही फितरत सदा,
रहनुमा उनको हमीं चुनते रहे।

–राजेन्द्र वर्मा

भूखा पेट, निगाहों को भी सपने में दिखती रोटी,
अजब चलन है इस नगरी का फिरते मारे-मारे लोग।

–सतीश गुप्ता

अपशकुन ये नाश के संकेत हैं
अब निकट शायद प्रलय है, क्या करें?

–चन्द्रसेन 'विराट'

इनके अतिरिक्त अनेक ऐसे लब्ध प्रतिष्ठ नाम हैं जो पूर्ण मनोयोग से हिंदी ग़ज़ल विधा से अनवरत जुड़े हैं किंतु सबका उल्लेख कर पाना इस साधारण भूमिका में संभव नहीं है। इस विधा में दोनों (हिंदी और उर्दू) भाषाएँ आज एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर चल रही हैं। जो भाषाई एकता का ज्वलन्त उदाहरण है। इस एकता में उनके शब्द-भंडार भी संवर्द्धित हो रहे हैं।

आगामी अंकों का विशेष आकर्षण

लोकप्रिय उपन्यास **'एक लड़की ऐसी भी'** के रचयिता
सुप्रतिष्ठ कथाकार **बसंत कुमार राय** का नवीनतम उपन्यास
'हम बुलबुले हैं इसकी' (धारावाहिक)
और पहली बार
अध्यापकों एवं छात्रों के लिए विशेष उपयोगी–
'शब्दित' (अनेक शब्दों के लिए एक शब्द का शब्दकोश) (धारावाहिक)
शोध एवं संकलन : बसंत कुमार राय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

हिंदी कविता की संवादहीनता और ग़ज़ल की जिम्मेदारियाँ

❑ अनिरुद्ध सिन्हा

सर्जनात्मक बदलाव के नए सूर्योदय विनम्र अभिलाषाओं, संस्कृत संपन्न बौद्धिक ध्वनियों एवं नए-नए संगीतिक अर्थोन्मेष रचती हुई हिंदी ग़ज़ल पाठक की अपराजेय जिजीविषा के साथ हिंदी कविता की अर्थध्वनि बदलना चाहती है। आज की विडंबनाओं, विवशताओं और वेदनाओं से सीधी जुड़े रहने के बावजूद समाज विज्ञा की दुनिया में हस्तक्षेप कर रहा है और आधुनिक भाव सृष्टि के साथ समाज की समग्रताओं की व्याख्या कर एक नए अर्थोन्मेष के साथ हमारे समक्ष उपस्थित है। ऐसा इसलिए संभव हो पा रहा है कि आलोचकीय मुठभेड़ की संभावना सदैव इसके समक्ष बनी रहती है। मुठभेड़ से मेरा मतलब आलोचकों का अनाप-सनाप प्रलाप हिंदी साहित्य के समीकरण के प्रश्न पर नए-नए षड्यंत्र।

भौगोलिक नक्शे पर ग़ज़ल के मामले में आलोचकों का यह संप्रदायिक नजरिया नैतिकता की नई परिभाषाएँ गढ़ने में सफल नहीं हो पाया। बात आदर्श और यथार्थ पर आकर खड़ी हो गई, क्योंकि ग़ज़ल अपने लंबे रास्तों पर आस्तिक भी रही और नास्तिक भी। यहाँ पर आस्तिकता का अर्थ सामाजिक आस्थाओं के प्रति झुकाव के रूप में देखा जाना चाहिए या जीवन दर्शन के अनुभवों के साथ जोड़ने की आकांक्षा भी कह सकते हैं। पुरानी जन्मकुंडलियों में नए भविष्य की पड़ताल और उसके अर्थ को आद्यंत जानने की सृजनात्मक बेचैनी। संवेदन और प्रतिरोध के समाज में समूहगान सिद्धांतों और विचारों का एक वर्कशॉप, समाज से छूटे हुए पहलुओं को पकड़ने की छटपटाहट। धुंध तो उस समय और बढ़ जाती है जब परखने वाली आँखें आत्ममुग्धता के घूँघट ताने रहती हैं। मेरा यह भी मानना नहीं है कि हिंदी ग़ज़ल समकालीन समाज की संपूर्णता की कसौटी बन गई है लेकिन इतना तो कहा ही जा सकता है कि समाज के अंतर्द्वन्द्व को पकड़ने के लिए इसके भीतर उत्कंठा है। तपिश से जलती, बर्फ से ठंडी वायु में लटकती या समाज के गहरे समुन्दर में भविष्य की खोज की छटपटाहट इसका मूलभूत उद्देश्य है। हिंदी में इसके जन्म के दो प्रचलित प्रकल्प या विकल्प हैं। हिंदी कविता की पाठकीय उदासीनता कविता से कला का लोप।

हर काल में कविता वास्तविकता में परिणत होकर इसके लक्ष्यों एवं उद्देश्यों ने जीवन को आंदोलित तथा अनवरत सृजनात्मक चरित्र प्रदान किया और नए तथ्यों और नए विषयों को जन्म दिया है तथा विचारों और भावों को नैतिक दर्शनशास्त्र के रूप में क्रमबद्ध किया है। सच मायने में कविता जीवन की कल्पना तो है मगर ऐसी कल्पना जिसमें जीवन स्वयं जीवन से अधिक वास्तविक हो जाता है। अंततः कविता हमारे जीवन की सृजनात्मक अभिव्यक्ति बन जाती है।

परिचय

नाम : अनिरुद्ध सिन्हा
जन्म तिथि : 02-05-1957
शिक्षा : एम.ए. (अर्थशास्त्र)
कृतियाँ : 'नया साल' (कविता संग्रह), 'दहेज' (कविता संग्रह), 'और वे चुप हो गए' (कहानी संग्रह), 'तिनके भी डराते हैं' (ग़ज़ल संग्रह) 'तपिश', (ग़ज़ल संग्रह), 'हिंदी ग़ज़ल : सौंदर्य' और यथार्थ (आलोचना), 'उद्भ्रांत की ग़ज़लों का यथार्थवादी दर्शन' (आलोचना), 'तड़प' (ग़ज़ल संग्रह), 'तमाशा' (ग़ज़ल संग्रह), 'हिंदी ग़ज़ल का सौंदर्यात्मक विश्लेषण (आलोचना), समकालीन हिंदी ग़ज़ल : परंपरा और विकास' (आलोचना)
संपादित कृति : बिहार के प्रतिनिधि ग़ज़लकार
प्रकाशन : देश की सुस्थापित स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन
संप्रति : सरकारी सेवा
संपर्क : गुलज़ार पोखर, मुंगेर-811201 (बिहार)
मो. : 09430450098

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह भी सच है कि कविता के माध्यम से मनुष्य और मनुष्य के बीच की अभिन्नता और आत्मीयता की पुष्टि होती है। कविता लेखन एक बड़ा अनुष्ठान है। इस अनुष्ठान में मन की विभिन्न परतें अपने-अपने स्पेस लेकर चलती हैं, जिनमें आदर्श संस्कृति और संभावना के अलग-अलग रंग होते हैं। साथ ही संवाद की प्यास भी होती है। कविता अच्छे मन और मिजाज से निकलती है। कविता हो या चाहे ग़ज़ल इनकी भूमिका मूलतः नैतिक पक्षधरता और विवेक पैदा करने की है। यह सिर्फ अनुभूतियों का उन्मोचन भर नहीं है बल्कि काल और समाज की आवाज़ भी है। इसके लिए आवश्यक है कि इन्हें संप्रेषण की विकलांगता से बचना चाहिए। मानवीय चैतन्यता के साथ घुल-मिलकर उसे एक नया स्वर दे। वैसा स्वर जो जीवन के तकनीकी यथार्थ को अपनी जड़ता के साथ मुठभेड़ करने के लिए प्रेरित करे। मसलन कविता विमर्श की बहुभाषिक अभिव्यक्ति है। ऐसा कहा भी गया है कि अस्तित्व की अभिव्यक्ति का सर्वोच्च क्षेत्र कविता है। तो सवाल उठता है कि क्या आज की कविता सशक्त और सक्षम है, अपने अस्तित्व में आत्म-निर्भर और दृढ़?

इस गैर बराबरी के दौर में जीवन को समझने की कोशिशें लगातार हो रही हैं। दरअसल यह साहित्य का उद्देश्य तो है ही ज़िद भी है। साहित्य के माध्यम से ही जीवन के अनेक रूपों को देखा जा सकता है। लेकिन आज हम परिवेश जो साहित्य का मौलिक विषय है, से अलग हटकर रचना रच रहे हैं और इसी के दम पर बेहतर भविष्य की कल्पना कर रहे हैं। हम अपने लेखकीय दायित्व के प्रति जब गंभीर नहीं होंगे तब तक उल्लेखनीय रचना की कल्पना नहीं कर सकते। हम इस बात को नज़रअंदाज नहीं कर सकते कि साहित्य जीवन के तमाम विस्तारों को एक सूत्र में बाँधने के लिए उकसाता है। इस क्रम में हमें भाव, विचार, संवेदना तथा सौंदर्य बोध अपनी ओर आकर्षित करते हैं! जहाँ तक मेरा मानना है कि समकालीन कविता अपनी सांस्कृतिक पहचान और अपने अस्मिता की रक्षा के लिए बेचैन नहीं है। नजीता सामने है समकालीन त्रासदियों फ़ासीवाद, दंगे पर्यावरण, भूमंडलीकरण आदि का विरोध करने के बावजूद पाठकों के बीच लोकप्रिय नहीं है। कहने को तो बहुत कुछ समकालीन आलोचक आज तक कहते आ रहे हैं। संघर्षशील पाठकीय चुनौती को स्वीकार करने से हिचकिचा रहे हैं। यह एक विडंबना है।

कविता लेखन के लिए काव्यात्मक भावातुरता और आत्मवितुष्टि को अनिवार्य माना गया है। कोरे अंकगणित यथार्थ की गणना तो कर सकता है लेकिन सामाजिक माँग की आवश्यक शर्तों की अवहेलना करने से भी उसे बचाया नहीं जा सकता। वस्तुस्थिति का वर्णन करना या प्रतिबिंबित करना ही पर्याप्त नहीं है। गति को क्रमबद्ध करने, सुनाई देने वाली ध्वनियों को पकड़ने का प्रयास तथा अनेक लक्षणों और विशिष्टताओं का पता लगाना, लयपूर्ण प्रारंभिक खंडों की तैयारी कविता रचने का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और स्थायी कार्य है। हम अपनी सुविधा के लिए कविता को अधिग्रहीत नहीं कर सकते। इसकी अपनी माँग है। अपनी अपेक्षाएँ हैं। लेकिन हिंदी में कविता सृजन के नीति संबंधी अंतर्विरोध लगातार बढ़ रहे हैं। कथ्य एवं अभिव्यक्ति के साथ-साथ इसकी बनावट और स्वरूप के साथ भी नए-नए प्रयोग किए गए। धीरे-धीरे कविता से पाठकों का पलायन होने लगा। राजनीतिक-सामाजिक वैमनस्य वैचारिक जड़ता और बाजारवाद के युग में कविता और पाठक के बीच में संवादहीनता की दीवार खड़ी हो गई। मैं मानता हूँ बहुत से लोग मेरे इस विचार से सहमत नहीं होंगे। मगर विरोध भी नहीं करेंगे। सिर्फ अपनी डफली पर अपना राग अलाप देंगे। यही समकालीन कविता की समकालीन लोक संस्कृति है। यह लोक संस्कृति कवियों के बीच मधुर वातावरण तैयार करती है। शब्द विन्यास की क्षमता, सामाजिक अनुशासन आत्माभिव्यक्ति आदि गुण कविताओं में साफ-साफ दिखलाई पड़ने लगते हैं। नतीजतन आत्ममुग्धता की एक नई जमीन सामने तैयार हो जाती है।

कविता लेखन का स्थायी भाव उत्साह है। यह उत्साह पाठकीय प्रतिक्रिया से प्राप्त होता है। यह सही है कि जिस स्तर पर साहित्य में प्रचलित मान्यताएँ परिवर्तित हुई, संस्कृति और सभ्यता समयानुसार बदलती रही। साहित्य विकास के साथ अपनी अभिव्यक्ति शैली तथा विचार समय के अनुकूल बदलता गया लेकिन इस स्तर पर पाठकीय संवेदना में परिवर्तन नहीं हुआ। हिंदी कविता को इसी बिंदु को समझने में भूल हुई। यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि समकालीन कविता के समक्ष पाठकीय संवादाहीनता की स्थिति कैसे आई है। जाहिर-सी बात है पाठकों ने इसे स्वीकार नहीं किया। निराला पर यह आरोप लगाना सर्वथा गलत है। निराला ने छंद के कठिन व्याकरण से कविता की मुक्ति का प्रयास किया था। छंदों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की कसौटी पर भले ही उनकी कुछ कविताएँ खरी न उतरें लेकिन छंदों के आसपास तो जरूर हैं। समकालीन कवियों की सबसे बड़ी दिक्कत है कि वे सीधे-सीधे गद्य के करीब चले गए। पूरी तरह से हिंदी छंदों को नकार दिया। गद्य लेखन में साफगोई की मान्यता है चाहे वह हास्य-व्यंग्य हो या गद्य की कोई और विधा। गद्य में वर्णन महत्त्वपूर्ण होता है। हिंदी गद्य में शैली और स्वस्थ प्रवृति ही नहीं, बल्कि विवेकशीलता भी शब्दों के प्रयोग में सुस्पष्टता से देखी जा सकती है। चाहे वे कहानी, उपन्यास, डायरी, संस्मरण, ललित निबंध आदि हों। ऐसी स्थिति में उलझे विचारों से लैस गद्य कविता को पाठक कैसे स्वीकार करता। गद्य कविता में घुमा फिराकर बात कहने का प्रचलन है। कविता जीवन के पर्यवेक्षण की पाठशाला होती है न कि दिन भर की घटनाओं की रिपोर्ट। कविता में शब्द चेतना का कड़ा अनुशासन है। इधर-उधर की बेकार बातें नहीं कर सकते, उसमें एक-एक शब्द को बड़ी सावधानी से चुनना पड़ता है। कविता उन्माद का भी वर्णन नहीं करती।

हिंदी कविता में एक नया शब्द भूमंडलीकरण सामने आया है। यह एक छोटा शब्द नहीं है। यह अमेरिका का शिकंजा है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' भमूंडलीकरण की जगह फीट नहीं बैठता है। हमारे पूर्वजों ने वसुधैव कुटुम्बकम में संपूर्ण दुनिया को परिवार माना था। बराबरी, सम्मान और प्यार के आधार पर विश्व परिवार की कल्पना वसुधैव कुटुम्बकम में थी। भूमंडलीकरण के इस युग में समकालीन कविता इसे सांप्रदायिकता के दर्पण में देखती है। प्रगतिशीलता के नाम पर अतीत के ज्ञान की अवहेलना करती है। एक शब्द में अतीत झूठ और बकवास है।

सहजता और विश्वसनीयता बनाए रखने के लिए अभिव्यक्ति में लोच आवश्यक है क्योंकि कविताओं में अपना समर्थन खोजना पाठक की एक स्वाभाविक प्रवृति है। कविताओं में कवि का अपना रूप भी उभरता है। उदाहरण के तौर पर इकबाल के शेरों को देखा जा सकता है। हिंदुस्तान प्रवास के दौरान उन्होंने लिखा... *''सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्तां हमारा/हम बुलबुले हैं इसके, ये गुलिस्तां हमारा/मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना/हिंदी है हम वतन, है हिंदोस्तां हमारा''* उपरोक्त शे'रों की मिठास और उनके कथ्य गौरवशाली परिवेश तैयार करते हैं। इकबाल की सारी आस्था भारतीयता की ओर इंगित है। आदर्शवादिता और कलात्मकता के बीच स्वस्थ परंपराओं के मार्ग को प्रशस्त करते जान पड़ते हैं।

लेकिन भारत के प्रति उनका करुणा भाव और भारत के पक्ष में खड़ा होने की जंग उस समय धूमिल हो जाती है जब वे लिखते हैं, *''चीनों अरब हमारा, हिंदुस्तां हमारा, मुस्लिम हैं हम, वतन है सारा जहाँ हमारा''* दरअसल इसे परिवेश का प्रभाव कहा जा सकता है। दोनों ग़ज़लें अलग-अलग परिवेश में कही गई हैं। बावजूद इसके परिवेश के प्रति भावुकतापूर्ण दृष्टिकोण रखने वाले महान शाइर इकबाल से यहाँ पर चूक हो जाती है। चिरंतन साहित्य द्वंद्ववाद को कोई स्थान नहीं देता।

कविता में शब्दों का व्यवहार पक्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहता है जो निरंतर पाठकों से संवाद करता रहता है। कविता यदि छंद से जुड़ी हो या गद्य से एक विश्वास के साथ पाठकों के अंतःशक्ति के विकास का माध्यम हुआ करती है। यह शक्ति समाज और पाठक के बीच सेतु का काम करती है। अपनी ऐसी नकारात्मक भूमिकाओं से कटकर ही समकालीन कविता महज कागज पर आकर सिमट गई है। डॉ. नामवर सिंह का मत है ''साहित्य तथा उसके नियम अन्य वस्तुओं और विचारों से संबद्ध है। इसलिए साहित्य तथा उसके नियमों की जड़ें स्वयं साहित्य में ही नहीं हैं बल्कि उसके बाहर हैं, बाहर का अर्थ है वातावरण, परिस्थिति और समाज। यही आदर्शवाद और भौतिकवाद में मतभेद है। आदर्शवाद विचारक साहित्य की जड़ें व्यक्ति साहित्यकार के मन में खोजते हैं, जबकि भौतिकवादी उन जड़ों को उस समाज और परिस्थिति में खोजता है, जिससे स्वयं व्यक्तिमन भी विकसित और निर्धारित हुआ है। समाज ने साहित्य को उत्पन्न किया है, साहित्य ने समाज को नहीं। इसलिए साहित्य का इतिहास समझने के लिए समाज के विकास का ज्ञान आवश्यक है। (इतिहास और आलोचना पृष्ठ-183) मुक्तिबोध की कविता की एक पंक्ति है ''अपनी मुक्ति के रास्ते अकेले में नहीं मिलते। यदि वह है तो सबके साथ है।''

अब देखा जाए तो कविता में जिन समस्याओं को उठाया गया है उनकी हम लगातार ही अनदेखी करते आए हैं। कवि को यह स्वयं निर्णय करना होगा कि पाठकीय अपेक्षाओं की कसौटी क्या है? जैसा कि आम आरोप है कि आज का कवि सृजनात्मक क्षणों में पाठकीय यथार्थ को स्वीकार नहीं करता। ऐसी स्थिति में वह अपनी कलात्मक प्रतिभा के बल पर अपनी कविता में यथार्थ को इस तरह प्रस्तुत करता है कि पाठक मानस में निहित परिचितता का भाव विलुप्त हो जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साहित्य में वर्तमान परिस्थिति के मद्देनज़र सुविधा और अनिवार्यता के बीच का अंतर आलोचकों के माध्यम से कम नहीं किया जा सकता। समकालीन आलोचक मात्र सुविधाओं को अनिवार्यताओं में बदलने का प्रयास कर रहे हैं। इस मुक्ति का अभिप्राय है कविता लेखन में सुविधा के नए आयाम।

कविता हिंदी साहित्य की प्रभावशाली विधा है। अपने कथ्य और अभिव्यक्ति के विभिन्न स्वरूपों की दृष्टि से यह सदैव परिवर्तित होती रही। इधर स्थितियाँ बदली हैं। नई पीढ़ी के संस्कार में उपस्थित यथार्थ से टकराने की और सामने के दृश्य को स्वीकार करने का उतावलापन और उसके विरोध में संवेदना और सरोकारों के सामूहिक परिणामों या प्रवृत्तियों तक जाने की छटपटाहट भी तेज हुई है। इसी का परिणाम है हिंदी में ग़ज़ल का उदय। ग़ज़ल लेखन निश्चय ही एक जटिल कार्य है। अपने विचारों को विकसित करने में बहुत ही कुशलता और निष्ठा का परिचय देना होता है। यह केवल औपचारिक बाह्य संपर्कों या साहित्यिक सृजनात्मकता के प्रतिक्रियावादी विचारों को ही जन्म नहीं देती बल्कि विचारों में कथावस्तु, अनुभव में संवेदन, मनोविज्ञान दर्शन और यथार्थबोध के जटिल भाव भी साफ-साफ दिखलाई पड़ते हैं। करूणा और संवेदना के मिले-जुले दर्शन भी मिलते हैं। जनवाद के प्रभाव के अंतर्गत मानसजाति का सांस्कृतिक विकास भी मिलता है। सांस्कृतिक विकास समाज और जीवन का एक हिस्सा है। हालाँकि इसके विरुद्ध साहित्य में ढेर सारी भ्रांतियाँ हैं। इन्हीं भ्रांतियों की आड़ में कई ऐसे कवि हिंदी साहित्य के लिए अप्रंसागिक हो गए जिन्हें पाठक समाज में अभूतपूर्व प्रतिष्ठा प्राप्त है। अनुभूति चिंतनपरक होते हुए भी आलोचकीय समाज में उनके प्रवेश पर आपत्ति बनी रही। हम इसे सुविधाभोगी आलोचकों का प्रतिशोध भी कह सकते हैं। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि गीत/ग़ज़ल या छंदयुक्त कविता का सृजन एक जटिल कार्य है। इन पर टिप्पणी करने से पूर्व इनके आंतरिक पक्षों को भी जानना होगा। हठात् कुछ कह देने की सुविधा के तिलिस्म की अनुमति छंद नहीं देता।

हाल के वर्षों में ग़ज़ल ने साहित्य में कला तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यकलाप को विकसित करने में बहुत कुशलता तथा निष्ठा का परिचय दिया है। कुछ लोगों का यह मानना है कि ग़ज़ल के माध्यम से हिंदी कविता की वापसी हुई हे लेकिन मैं इसे उचित नहीं मानता क्योंकि कविता सदा से लिखी जाती रही है। हाँ, भले कविता की संवादहीनता को खारिज नहीं किया जा सकता। लगातार कविता पाठकों के बीच से अलग होती चली गई। इसका एकमात्र कारण है कविता से छंदों का पलायन। शब्दों की मोहकशक्ति के सहारे सामाजिक आचरण संबंधी बिंबों को रचकर भावों का आह्वान और शक्ति के आंतरिक संघर्षो को अंकित करने के नाम पर एक स्वप्निल परिवेश में कविता से छंदों को निकाल दिया गया। आलोचकगण भी शब्दकोष से नए-नए कठिन शब्द चुनकर कवियों की पीठ थपथपाने लगे। पाठक की भावनाओं का ख़याल नहीं किया गया। आलोचक ही कविता की श्रेष्ठता का प्रमाण पत्र बाँटने लगे। जाहिर है पाठकीय अभिरुचि का ह्रास होना निश्चित था।

पाठकीय समाज को समझने और उसके कल्याण के लिए समर्पित मनोविज्ञान को अधिक उपयोगी बनाने के लिए हिंदी कविता ग़ज़ल के रूप में परिवर्तित हुई। अपने लयात्मक परीक्षणों के जरिए 'वांछनीय, सामान्य, स्वस्थ मानसिकता के मानक स्थापित करने का प्रयास करने लगी, क्योंकि लोक जीवन में समकालीन कविता के प्रति घोर असमंजस की स्थिति बनी हुई थी। यह कहने में मुझे थोड़ा-सा भी संकोच नहीं हो रहा है कि हिंदी कविता ने पिछले तीस-चालीस वर्षों से बड़ी शिद्दत से अपने अस्तित्व के संकट का अहसास किया है। यह बात अलग है कि सत्तर और अस्सी के दशक के बीच दुष्यंत कुमार ने अपनी उपस्थिति से हिंदी कविता में एक नई जान दी। उन्होंने कविता को मरने से बचा लिया।

काव्य का प्रेरणाश्रोत लोकमानस है किंतु समकालीन कविता के पक्षग्राही आलोचक लोक जीवन को अपने से दूर रखकर ही अपने रचनाकार को गुणकारी मानते हैं। भारत में लोकजीवन की लीला स्थली वे असंख्य ग्राम हैं जिनकी मिट्टी ने हमारी संस्कृति को सिरजा है किंतु प्रयोगवादी कविता के एक आलोचक का मत है कि कविता के सिलसिले में गाँव वाले की चर्चा अनावश्यक है। कविता शिक्षित वर्ग की चीज है और आज भी शिक्षित वर्ग गाँवों में नहीं नगरों में बसता है। सचमुच में यह नव-काव्य विधानवाद का तर्क चौंकाने वाला है।

साहित्य और शब्द की संस्कृति के बारे में हमें गंभीरता से सोचना होगा। हिंदी साहित्य का परिसीमन मात्र उपन्यास कहानी और कविता तक ही सिमटकर रह गया है। हाल के दिनों में डायरी और संस्मरण लेखन का प्रचलन बढ़ा है। इनसे साहित्य को कोई विशेष लाभ होने वाला नहीं है। हम इन्हें साहित्यिक हाज़मोला भी कह सकते हैं। रचनात्मकता की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

केन्द्रीय चेतना परंपरात विधाओं में आज भी केंद्रित है। ग़ज़ल लेखन की प्रवृत्तियाँ परम्परागत विधाओं की ही उपज है। मतलब पानी घटने के बाद नई मिट्टी निकल आती है। जो पुरानी मिट्टी को चिह्नित कर देती है। हिंदी ग़ज़ल में पठनीयता और श्रेष्ठता है। आम बोल-चाल की भाषा में ग़ज़ल कहने वाले उद्भ्रांत, ध्रुवगुप्त, राजेश रेड्डी, जहीर कुरेशी, ज्ञान प्रकाश विवेक, माधव कौशिक, नूर मुहम्मद नूर, हस्तीमल हस्ती, लक्ष्मण दुबे, विनय मिश्र, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, अशोक आलोक, अखिलेश तिवारी, उषा यादव, विकास आदि हिंदी काव्य प्रेमियों और ग़ज़ल के मर्मज्ञों के बीच बेहद सम्मानित और लोकप्रिय हैं।

यही कारण है कि तमाम बाधाओं के बावजूद ग़ज़ल साहित्य के मुख्य केंद्र में आ रही है। इस उदास हिंदी कविता के समय में यह हमें ढाढ़स बँधाती है। अनंत संभावनाओं की प्रक्रिया और उसकी सहज अबाध परिणतियों के प्रकट हो जाने की आश्वस्ति देती है। समकालीन ग़ज़लकारों ने अपनी सादगी और ईमानदारी से सृजनधर्म का निर्वाह करते हुए पठनीयता के संकट की दलदल से हिंदी कविता को निकालने का प्रयास किया है। इसमें दो राय नहीं है कि समकालीन कविता से हिंदी कविता की समग्रता खंडित हुई है। इसका प्रमुख कारण है आलोचकों ने इसका जोर-शोर से प्रचार किया। इस प्रकार का प्रभाव धीरे-धीरे पाठकों पर भी प्रभाव पड़ा। प्रचार और प्रभाव के अंतराल ने कविता की अन्य विधाओं को हाशिए पर डाल दिया। आलोचकों ने भीतर-भीतर पाठकीय उदासीनता को स्वीकार भी किया लेकिन अपनी बात मनवाने के लिए लगातार नई-नई परिभाषाएँ गढ़ते रहें। प्रत्युत्तर में हिंदी कविता के समक्ष पाठकीय मान्यता का संकट उत्पन्न होता चला गया।

दरअसल हिंदी कविता के अंतर्विरोध ने ही हिंदी ग़ज़ल को जन्म दिया। हिंदी के लिए ग़ज़ल सर्वथा नई विधा मानी गई। पाठकों के बीच अपनी जगह बनाने में सफल भी हुई। हिंदी में ग़ज़ल के अवतरण और पाठकीय स्वीकृति के विरुद्ध हिंदी काव्य-जगत में बेचैनी का भाव देखा गया। जिस गीत को सुनियोजित ढंग से मृत घोषित कर हाशिए पर धकेल दिया गया था उसी गीत की कशीदाकारी होने लगी। यह गीत की कशीदाकारी नहीं बल्कि हिंदी में ग़ज़ल के बढ़ते प्रभाव को रोकने का षड्यंत्र है। गीत और ग़ज़ल के बीच भ्रम की स्थिति पैदा की जा रही है। विभाजन की अनगिनत रेखाएँ खिंची जा रही हैं। हिंदी कविता को एक और आघात के लिए तैयार रहना होगा। मुझे यह कहने में थोड़ा-सा भी संकोच नहीं हो रहा है। अगर ग़ज़ल हिंदी में मान्यता प्राप्त नहीं करती है तो हिंदी कविता के भविष्य का आरंभ सूर, कबीर, तुलसी, मीरा की कविताओं से होगा। पाठकीय स्वाद के बिना कविता की कल्पना नहीं की जा सकती। समकालीन कविता ने शिल्प और विधान को नकार दिया है। शिल्पहीनता ही इसकी शक्ति और सीमा बनी। शिल्प विघटन ही इसकी मूल चेतना है जो इसे भारतीय कविता से भिन्न करती है। साथ ही इसमें भावुकताविहीन भाषा भी मिलती है। लेकिन हिंदी कविता में ग़ज़ल के रूप में सरलता का विकास हुआ। प्रतीक अधिक सूक्ष्म और संवेद्य हो गए। मूलतः इसका आरंभ दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों से हुआ। यह मान लेना कहीं से भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों की प्रमाणिकता मात्र वास्तविक यथार्थ की सही अभिव्यक्ति ही नहीं यथार्थ का सत्यपरक चुनाव भी है। दुष्यंत कुमार की ग़ज़लें सीधे-सीधे पाठकों से संवाद करती हैं। समकालीन ग़ज़लें भी दुष्यंत कुमार की परंपरा का निर्वाह करते हुए गुणात्मक उन्नयन की दशाओं को सूचित करती हैं। पाठकों से संवाद का रिश्ता कायम है।

छंदों के अंत की गुहार लगाने वाले यह मान चुके हैं कि एक आयामी संस्कृति की निरंतरता बनाए रखने में हिंदी ग़ज़ल सक्षम है। भले ही उनका यह विचार घोषणा की शक्ल अख्तियार नहीं कर सके। लेकिन शून्यता में उनका यह विचार उन्हें आंदोलित तो करता ही होगा।

अंत में कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी ग़ज़ल इस सदी में दबी-कुचली रौंदी विकृत भावनाओं का बाँध तोड़कर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के एक और नए क्षितिज की तलाश में है। छंदों का रागात्मक सम्मोहन तथा संगीतात्मकता की ओर वापसी है। इस वापसी के पीछे पाठकों से सीधे-सीधे उसका संवाद है। हिंदी साहित्य में लोकप्रिय संस्कृति का एक बड़ा भाग जो बड़ा लचीला है, हिंदी ग़ज़ल का पक्षधर है। हिंदी में ग़ज़ल का जिस तरह से विस्तार हो रहा है उससे आशा तो बँधती है। □

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

नई ग़ज़ल-लिपि और लहजे का प्रश्न

❑ डॉ. महेन्द्र अग्रवाल

ग़ज़ल विधा अतीत में जो भी रही हो, जैसी भी रही हो किंतु हिंदुस्तान में आने के बाद यहाँ के जन-जीवन में गंगा-जमुनी सभ्यता-संस्कृति की झंडाबरदार रही है। वह महलों से सड़कों पर उतरी, शहरों से गाँवों, खेतों-खलिहानों तक घूमी। खासोआम से होते हुए निचले तबकों तक पहुँची। लेकिन जैसे-जैसे वह मकवूलियत की पायदानों पर चढ़ी, उसकी भाषा, लिपि और लहजे को लेकर कई सवाल उठाये जाते रहे। मीर, ग़ालिब, फिराक़, जोश आदि के देवनागरी लिपि में प्रकाशित संस्करणों से लेकर दुष्यंत की ग़ज़लों के चर्चित होने तक और उसके बाद भी। इस दौर में ग़ज़ल को देवनागरी लिपि से लेकर उर्दू रसमुलखत में प्रकाशन की परिस्थितियों, उर्दू (अरवी, फारसी) एवं हिंदी (संस्कृत) के शब्दों में संयुक्त प्रयोग और रचनाकारों के वैयक्तिक लहजे (बोलने—लफ़्ज़ों के उच्चारण) के कारण अनेक समस्याएँ सामने आती रहीं। इन समस्याओं पर यदि वर्तमान पीढ़ी ने विचार नहीं किया तो शायद भविष्य में यह और भी विकराल रूप ले सकती है। मतभेद, मनभेद का कारण बन सकते हैं।

उर्दू और हिंदी दोनों ही भाषाओं में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनका किसी दूसरी भाषा में जाने पर उनके 'रूप' तथा 'उच्चारण' में परिवर्तन हुआ है, लिपि की समस्या भी अपनी जगह है। ऐसे शब्द बोलचाल के साथ-साथ ग़ज़लों में भी प्रयुक्त हुए हैं, कुछ उदाहरणों से हम इस बात को समझने का प्रयत्न करते हैं। आप उर्दू में हिंदी शब्द स्वयंवर, ऋतम्बरा, श्रवण, ऋचा को कैसे लिखेंगे और किस वज़न से व्यक्त करेंगे? हमारे सामने यक्ष प्रश्न यह है कि ऐसे शब्दों को तक्तीअ और आलोचना के नजरिए से उस भाषा विशेष में परिवर्तित स्वरूप और उच्चारण के अनुरूप मान्य किया जाये अथवा नहीं? क्या उन्हें किसी ऐब के रूप में देखा जाए? यद्यपि भाषा विज्ञान इसकी अनुमति देता है और इससे भाषा का विकास होता है। अतः गंभीरता पूर्वक मनन करने और कोई हल निकालने से हो सकता है कि दोनों भाषाएँ और संभवतः लिपियाँ भी एक दूसरे के करीब आ जाएँ।

परिचय

नाम : डॉ. महेन्द्र अग्रवाल

जन्म तिथि : 21-04-1964

शिक्षा : एम.एस-सी. (जन्तु शास्त्र) गोल्ड मेडलिस्ट, आयुर्वेद रत्न, एम.ए. (हिंदी साहित्य) गोल्डमेडलिस्ट, एल-एलबी., पी-एच.डी.

उपलब्धियाँ : आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारण,
'पेरोल पर कभी तो रिहा होगी आग' (ग़ज़ल संग्रह)
'शोख मंजर ले गया' (ग़ज़ल संग्रह) (पुरस्कृत)
'ये तय नहीं था' (ग़ज़ल संग्रह) (पुरस्कृत)
'क़बीले की नई आवाज़' (उर्दू में)
'बादलों को छूना है चांदनी से मिलना है' (ग़ज़ल संग्रह)
'नई ग़ज़ल : स्वरूप एवं संवेदना' (शोध प्रबंध)
देश-विदेश की उर्दू एवं हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन,
विविध ग़ज़ल संग्रहों एवं ग़ज़ल विशेषांकों में प्रकाशित
अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों एवं मुशायरों में सहभागिता

सम्पादित कृतियाँ : अंकुर (1981),
नई ग़ज़ल (1988)
हवा के विरुद्ध (1989)
नई ग़ज़ल : दिशा और दशा (1991)
ताकि सनद रहे (2002)

सक्रिय सेवाएं : सचिव—श्री रामकिशन सिंहल फाउंडेशन
सम्पादक—नई ग़ज़ल (त्रैमासिकी) स्काईलैब (त्रै)

स्थायी पता : वी.एम.के. मेडिकल स्टोर, सदर बाजार, गांधी चौक, शिवपुरी-473 551 (म.प्र.)

दूरभाष : (07492) 232558 405485, मो. 9425766485

ई-मेल : drmkagrwal@yahoo.com

हिंदी शब्द खलिहान, भूख, मर्ज़, होंठ, सिंह, उर्दू में क्रमशः खलियान, भूक, मरज, होंट, सिंग हो जाते हैं। हिंदी शब्द ब्राह्मण या ऋतु उर्दू में बिरहमन तथा रितु के रूप में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रचलित हैं और इसी वज़न पर वह प्रयोग किए गए हैं, उनके ऊपर कभी कोई आपत्ति नहीं उठाई गई, न उर्दू रसमुलखत में और न देवनागरी लिपि में प्रकाशित होने पर। उर्दू में अर्द्ध अक्षर की मान्यता न होने से हलन्त् का प्रयोग नहीं होता। अतः अर्द्ध अक्षर को भी पूर्ण लिख लिया जाता है। संस्कृत का यत्न, जन्म आदि उर्दू में यतन जनम का रूप ले लेते हैं तक्तीअ में वह उच्चारण अनुसार लिए जाते हैं न कि शब्द के मूल स्वरूप के आधार पर! चलिए कोई बात नहीं। लेकिन इस प्रश्न का क्या उत्तर है कि हिंदी संस्कृत के शब्दों को अपने ढंग से बरतने, उच्चरित करने का अधिकार उर्दू वाले कहाँ से, किस नियम के तहत पाते हैं? क्या ग़ज़ल में अपनी श्रेष्ठता, वरीयता के आधार पर? या अपने बहुमत के आधार पर?

उर्दू लफ़्ज, शह्र, बह्र, जह्र, वज़्न, अम्न और जह्न इत्यादि हिंदी में शहर, बहर, ज़हर, वज़न, अमन, ज़हन के रूप में इसी वज़न पर प्रचलित हैं। अर्थात् उर्दू में फ़ाई वज़न के लफ़्ज़ों को हिन्दी में फ़ऊ के वज़न पर इस्तेमाल किया जा रहा है। उर्दू का मुआफ़, मुआनी और मसअला भी हिंदी में अधिकतर माफ़, मानी और मसला के रूप में प्रचलित हैं। इनके प्रयोग पर शास्त्रीय दृष्टि से उँगली भी उठाई जाती रही है।

दोनों ही लिपियों में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनके 'प्रकाशित स्वरूप' से वज़न को लेकर मतभेद हो सकता है। उर्दू (अरबी, फारसी) शब्दों को उर्दू भाषी व्यक्ति उर्दू रसमुलखत में अपनी भाषा प्रकृति के अनुसार पढ़ेगा और अपने ढंग से इनका वज़न निर्धारित करते हुए तक्तीअ करेगा। जबकि हिंदी भाषी जो कि उर्दू को थोड़ा बहुत समझ लेता है, पढ़ लेता है, उसे अपनी भाषा प्रकृति के अनुसार पढ़ेगा और अपनी उच्चारण प्रवृत्ति के अनुसार वज़न निर्धारित कर तक्तीअ करेगा। यह स्थिति तब है जबकि शब्द का लिखित स्वरूप एक ही है लेकिन उनके पढ़ने और तक्तीअ में उनके वज़न को लेकर मतभेद बना रहेगा। आप अपनी भाषा के किसी लफ़्ज को किसी दूसरी भाषा में प्रयोग किए जाने पर अपनी ही भाषा की मूल ध्वनि या प्रकृति के अनुसार कैसे निर्धारित कर सकते हैं जबकि वहाँ उसका प्रयोग, लिपि और उच्चारण भिन्न हैं। ऐसी स्थिति में आप किसी लफ़्ज के लिखित रूप को देखकर बह्र के स्तर पर उसे कैसे नकार सकते हैं, जबकि आप उस व्यक्ति की भाषा और उस भाषा की मूल ध्वनियों तथा उसके उच्चारण से अपरिचित हों। किसी लफ़्ज की तक्तीअ में हरफों का विभाजन उस लफ़्ज की उच्चरित अवस्था के अनुरूप होता है, तब प्रयोक्ता की भाषा-शैली और उच्चारण प्रवृत्ति के अध्ययन के बिना उसका निर्धारण आप कैसे कर सकते हैं?

मेरे विद्वान मित्र इस तथ्य को भलीभाँति जानते हैं कि ग़ज़ल की बहूरों संबंधी तक्तीअ के नियम लफ़्ज के लिखित स्वरूप की तुलना में उच्चरित ध्वनि पर कहीं अधिक निर्भर हैं। ऐसी स्थिति में आप किसी भी लिपि में शब्द के लिखित स्वरूप को देखकर यह कैसे तय कर सकते हैं कि वह बह्र में है अथवा नहीं? जबकि हमें उस भाषा विशेष और उस व्यक्ति के उच्चारण का ज्ञान नहीं है।

भिन्न व्यक्तियों, भिन्न भाषाओं, भिन्न स्थानों पर रहने वाले लोगों की ध्वनियाँ भी भिन्नता लिए होती हैं। सबके उच्चारण का अपना विशिष्ट लहजा है। क्या आज उर्दू भाषी उन तमाम लफ़्ज़ों का उच्चारण वैसा ही करते हैं, जैसा अरबी, फारसी में होता रहा है। लैटिन, अमेरिकन और रशियन इंग्लिश के उच्चारण में आज कितना फ़र्क है? आप सब जानते हैं।

ग़ज़ल के नाम पर हिंदी में लेखन और आलोचना के स्तर पर सब कुछ स्वीकारने की प्रवृत्ति रही है लेकिन यही ग़ज़लें जब उर्दू रसमुलख़त में प्रकाशित होती हैं तो क्या इन्हें हिंदी भाषा में प्रचलित वर्तमान स्वरूप और हिंदी भाषी रचनाकारों की प्रवृत्ति के अनुरूप ग्रहण किया जाएगा?

हमें लिपि, उच्चारण या वज़न के आधार पर एक-दूसरे को गलत ठहराने की कोशिश करने की जगह वस्तुस्थिति को गंभीरता से समझने का प्रयास करना चाहिए ताकि ग़ज़ल की दुनिया के भविष्य को अन्य भाषाओं-बोलियों में भी संवार सकें। ग़ज़ल आज छत्तीसगढ़ी, पंजाबी, संस्कृत, मराठी आदि में कहने का रचनाकारों ने जोखिम उठाया है जो कि ग़ज़ल की बढ़ती लोकप्रियता का जीवंत प्रमाण है।

हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि में जाल, जे, ज्वाद, जोय आदि ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। जीम के अतिरिक्त जो कि हिंदी में ज के समकक्ष है अन्य ध्वनियों को ज के नीचे नुक्ता लगाकर दर्शा दिया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाता है। उर्दू में जीम के अतिरिक्त अन्य ध्वनियों (जे, जोय, ज्याद) आदि को काफ़िये में हरफे रवी के रूप में बाँधना वर्जित है। इसी तरह शब्दांत में अलिद और हे के साथ ऐन का काफ़िया बाँधना भी निषेध है। मैं इससे सहमत हूँ और मैंने हिंदी भाषा में ऐसे आंदोलनों का सूत्रपात भी किया है और हवा भी दी है, किंतु इन्हें देवनागरी लिपि में स्पष्ट करना बड़ा कठिन ही नहीं असंभव है क्योंकि शब्दांत के अलिफ, ऐन और हे को देवनागरी लिपि में दीर्घ स्वर आ की मान्यता दी गई है और वह एक ही मात्रा से व्यक्त होते हैं। हिंदी ज को जीम ध्वनि के समकक्ष माना गया है। शेष ज्याद, जोय, जे को नुक़्ता लगाकर व्यक्त कर दिया जाता है। इसी तरह 'उर्दू' में सात का क़ाफ़िया हाथ, झूठा का टूटा, पिरोना का खिलौना आदि सही माने जाते हैं क्योंकि वहाँ थ, में जुड़े ह को उनकी वर्तनी के कारण वर्ण गणना से अलग रखा जाता है तथा रो और लौ के लिए एक ही प्रकार की मात्रा 'वाव' प्रयुक्त की जाती है। परंतु हिंदी भाषा में अक्षर एवं मात्राएँ सभी अपना अलग अस्तित्व रखते हैं तथा उच्चारण स्पष्टतः अलग-अलग होता है।"[1]

देवनागरी लिपि में लिप्यांतरित सात हाथ, झूठा, टूटा, जैसी ग़ज़लें हिंदी में क़ाफ़िये की दृष्टि से दोषपूर्ण मानी जाती हैं जैसा की उर्दू में पूर्व में उद्धृत ग़ज़लों के संबंध में कहा गया है। ध्यान दें कि यह परिस्थितियाँ भाषा और लिपि के आधार पर निर्मित हुई हैं। कुछ ग़ज़ल के परंपरागत नियमों के आधार पर, न कि हिंदी-उर्दू भाषी ग़ज़लकारों व समालोचकों की मनःस्थिति के कारण।

उर्दू लिपि में एक वर्ण हैं वाव जो स्वयं में एक स्वर भी है और व्यंजन भी। स्वर के रूप में इसकी प्रयुक्ति 'ऊ' या 'ओ' मात्रा के लिए की जाती है और जब स्वर के रूप में अक्षर व की प्रयुक्ति करनी हो तब भी इस वर्ण की प्रयुक्ति की जाती है और जब वो लिखना हो तो वाव के साथ 'ह' जोड़ दिया जाता है। ऐसी स्थिति में उर्दू का कोई नवशिक्षार्थी वो को वह, तो को तू या बहो को वहू भी पढ़ सकता है अथवा हिंदी भाषा का कलरव को कलरो या कलरू, मानव शब्द को मानो या मानू उच्चारण दे सकता है...इसके अतिरिक्त वे वह एकवचन तथा वो बहुवचन दोनों को एक प्रकार से ही लिखा जाता है जबकि हिंदी में ऐसा नहीं है"[2] उर्दू में तू और तो, इसका और उसका, में और मैं भी एक ही तरह से लिखे जाते हैं, जो थोड़ा बहुत भ्रम तो पैदा करते ही हैं।

ऐसी और भी तमाम बातें हैं, उदाहरण है जिनकी विस्तृत विवेचना विस्तार भय से संभव नहीं है। मैं इन कायदे-कानूनों को जानता हूँ, मानता हूँ और दूसरों को भी समझाना चाहता हूँ, लेकिन मैं उन लोगों में से हूँ जो हजार पाँच सौ साल की परंपरा से ही नहीं अपने विवेक से भी निर्णय लेना जानते हैं और उसके लिए आगे बढ़कर साहस भी करते हैं। एक आदर्श स्थापित करते हैं। दूसरों को प्रेरणा देते हैं।

मेरा मकसद किसी एक भाषा या लिपि को दूसरे पर श्रेष्ठतर सिद्ध करना नहीं है लेकिन हमें यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि हर भाषा और लिपि की अपनी खूबियाँ, अपनी कमजोरियाँ होती हैं। अतः देर सबेर हमें भाषाई पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर अदब के लिए, मानव जाति के हित में कोई न कोई रास्ता निकालना होगा ताकि हम इन समस्याओं से पार पा सकें और इसे अदबी हल्कों में हिंदी-उर्दू या हिंदुस्तान-पाकिस्तान जैसा Prestige Point न बनायें। ग़ज़ल अगर हमारे समाज का आईना है तो दोनों समुदायों के विद्वानों को भाषाई दुराग्रह से ऊपर उठकर देखना, सोचना होगा। हमारी धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक मान्यताएँ एक जैसी न सही लेकिन भाषा विज्ञान के बहुतेरे नियम हमें इसकी अनुमति देते हैं और मुझे इस बात का संतोष है कि देर-सबेर कोई न कोई राह निकलेगी जरूर।

---

1. हिन्दी ग़ज़ल की लहरें–भानुमित्र (प्रथम संस्करण), पृ. 74
2. हिन्दी ग़ज़ल की लहरें–भानुमित्र (प्रथम संस्करण), पृ. 73

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

आज की हिंदी ग़ज़ल–विधा सवाल उद्धरणीयता का

❑ डॉ. मधुर नज़्मी

साहित्य में कविता और कविता में प्रायः दो-दो, चार-चार पंक्तियों वाला श्रेष्ठ काव्यांश उद्धरणीय बन पड़ता है। कविता में ग़ज़लें, दोहे इसी अर्थ में विशिष्ट हैं। छांदसिक कविता की यह गुणवत्ता, साहित्य के सरोकारियों को जियादः अपने में बाँधती है। छंद मुक्त कविता में यह स्थिति कम ही पैदा हो पाती है। कहीं अगर यह स्थिति बनती भी है तो कविता में छान्दसिक 'तात्त्विकता' के चलते ही। कविता की यह तात्त्विकता लोक-मन से जुड़ती है। वह कविता ही क्या जो ज़वान पर न चढ़े। कविता जहाँ भी होगी अपनी रसक्ता और मधुरिमा के साथ होगी। ग़ज़ल की लोकप्रियता का अर्थ उसकी उद्धरणीयता से अभिन्न है। वास्तव में ग़ज़ल की संरचना और उसमें जीवन के मुक्त यथार्थ की अभिव्यक्ति दोनों ही स्तरों पर उसमें उद्धरणीयता की संभावनाएँ सन्निहित हैं, जहाँ संरचना की दृष्टि से अपनी विशिष्ट लय, प्रवाह, सानुप्रासिकता एवम् बोल-चाल की सहज भंगिमा के कारण उसमें उद्धरणीयता की विशेपता आ जाती है।

कविता मात्र में उद्धरणीयता का होना उसके जीवन होने का पृथक प्रमाण है। वह कविता ही क्या जो उदाहरण में न आ सके। दरअसल कविता तो वही अच्छी समझी जाती है जो हमारे जीवन-संदर्भों में रचे-बसे। ज़िंदगी के कसावों की गुत्थियाँ सुलझाए। हमारी ज़िंदगी की तल्ख़ियों में मिठास घोलने का उपक्रम करे। वस्तुतः कविता के केंद्र में लोक-चिंता है तो उसे अनिवार्य रूप से लोकाभिव्यक्ति का हिस्सा बनना पड़ेगा। कवि, कथाकार, समीक्षक डॉ. वेद प्रकाश 'अमिताभ' का कथन इस संदर्भ में गौर तलब है, "आज जब कविता के पाठक कम होते जा रहे हैं तब गीत और ग़ज़ल-विधाओं ने कुछ पाठक पैदा किए हैं। दुष्यंत कुमार के बाद हिंदी में ग़ज़ल बहुतायत में लिखी गई। उनमें से कुछ ग़ज़लें पाठकों की ज़बान पर चढ़ीं। इन ग़ज़लों की प्रभावान्विति साहित्य से लेकर राजनीति तक संचरित है। हिंदी की आत्मापरक ग़ज़लों ने बहुत सजग-सतर्क तरीके से ग़ज़ल से संगोपित भावों और मनोवैज्ञानिक सच को प्रभावशाली ढंग से उजागर किया। सांप्रदायिकता, आतंकवाद, सामाजिक विषमताओं आदि से संबंधित शे'र पाठकों के मर्म तक पहुँचे हैं और उनमें से कुछ उनकी वैचारिकता के सोपान बन गए हैं।"

हिंदी-ग़ज़ल में 'हिंदीपन' और उद्धरणीयता की पहचान कराने वाले कुछ सारगर्भित उदाहरण प्रस्तुत हैं–

इधर हम नई कल्पना कर रहे हैं
उधर लोग आलोचना कर रहे हैं

–विकल साकेती

भँवरों से गीत लेकर कलियाँ सुना रही हैं
मधुपान करने वाले मधुपान कर रहे हैं।

–विकल साकेती

पास रखती नहीं सब कुछ लुटाएगी नदी
शंख, सीपी, रेत, पानी जो भी लाएगी नदी

–कमलेश भट्ट 'कमल'

विरोध अपना जताने का तरीका पेड़ का भी है
जहाँ से शाख़ काटी थी वहीं से कोपलें निकलीं

–कमलेश भट्ट 'कमल'

मेरे सुख-दुःख का असर तुझ पर हो कुछ ऐसा
मैं रहूँ भूखा तो तुझसे भी न खाया जाए

–डॉ. गोपाल दास 'नीरज'

आग गंगा में है झेलम में भी
कोई बतलाए कहाँ जा के नहाया जाए

–डॉ. गोपाल दास 'नीरज'

जीवन का पर्याय आज कुछ आँसू बोना है
इस पर्वत से उस पर्वत तक पत्थर ढोना है।

–अशोक अंजुम

सब कुछ है मगर देने को कुछ पास नहीं है
यूँ ख़ुद को पिया है कि हमें प्यास नहीं है।

–अशोक अंजुम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किस मुसीबत में शजर है होके इससे बेख़बर
कुछ परिन्दे, मुतमइन हैं अपनी-अपनी डाल पर

–डॉ. मधुर नज़्मी

कँपकँपाते होठों की सिसकियाँ बुलाती हैं
माँ के जर्द चेहरे की झुर्रियाँ बुलाती हैं।

–डॉ. मधुर नज़्मी

बहुत बूढ़े हुए तो क्या हुआ त्योहार ज़िन्दा है
इन्हीं की सरपरस्ती में गले हर साल मिलते हैं।

–डॉ. वेद प्रकाश 'अमिताभ'

छत के पंखे से कट गया जुगनूँ
फ़र्श पर गिरके मर गया सपना।

–डॉ. अनिल गौड़

कृष्ण का बड़ा क़द है आदमी से ईश्वर तक
क्योंकि वे अकेले हैं प्रेम के समर्थन में।

–डॉ. अनिल गौड़

एक तो गहरा तम हो जाना
फिर दीपक मद्धम हो जाना
किसने देखा तुम थे मैं था
फिर दोनों का हम हो जाना।

–डॉ. किशन तिवारी

आस्था, विश्वास, श्रद्धा भावना
बस इन्हीं का योग है आराधना

–सुधीर वेकस

कामना मर जाएगी सब भावना मर जाएगी
एक क्षण में जन्म भर की साधना मर जाएगी।

–सुधीर वेकस

ये राज़ ख़ानाबदोशों की ज़िंदगी से खुला
ख़ुदा सभी को ज़माने में घर नहीं देता।

–एहसान, एम.ए.

चैन पाता नहीं मख़मल पे भी सोकर कोई
और पत्थर पे लगा लेता है बिस्तर कोई।

–एहसान, एम.ए.

मेरी आँखें चली गईं जबसे
मैंने दुनिया को कान से देखा।

–ज़हीर क़ुरैशी

समुंदर शक्ल से कितना शरीफ़ लगता है
ये तस्करों से मिला है पता नहीं चलता।

–ज़हीर क़ुरैशी

हम अपनी मुहब्बत के अंदाज़ से डरते हैं
पानी के परिन्दे हैं परवाज़ से डरते हैं।

–डॉ. मधुरिमा सिंह

लोग फूल लाये जो सूख कर झरे होंगे
हम तेरी इबादत में ख़ुशबुएँ चढ़ाते हैं।

–डॉ. मधुरिमा सिंह

सारी भेड़ें ऊन देकर आ गईं
सोच में डूबा हुआ इक मेमना है।

–वीरेन्द्र हमदम

नेवले-साँप दोस्त बन बैठे
पेट भूखा रहा मदारी का।

–ज्ञान प्रकाश 'विवेक'

यहाँ वहाँ से कहाँ-कहाँ से तिनके लाती है
कई दिनों से एक बया घोंसला बनाती हैं।

–डॉ. वशिष्ठ अनूप

चुपके-चुपके माँ-बेटी के भीतर उतर गई
माँ जैसे ही बेटी को बेटी समझती है।

–डॉ. शिव ओम 'अंबर'

हमारे दौर की ग़ज़लें जहाँ हैं
नुकीला काँच मीलों तक बिछा है।

–डॉ. शिव ओम 'अंबर'

यह उनका अभिनव प्रयोग है
कीचड़ से कीचड़ धोने का।

–सुरेन्द्र शास्त्री

लफ़्ज़ों में बो रहा हूँ मुहब्बत की आरज़ू
हिंदी का एक रंग हूँ उर्दू अदा के साथ।

–डॉ. महेन्द्र अग्रवाल

माँ ने सारी उम्र गुज़ारी माटी सोना करने में
हमने दो ग़ज़ लत्ता देकर सारा क़र्ज उतार दिया।

–इंजीनियर किशन स्वरूप

लकीरें पीटना छोड़ो हमारे साथ आ जाओ
नई परिकल्पनाओं के सृजन के पक्षधर हैं हम।

–'सौरभ' प्रतापगढ़ी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नई नस्लों अब तक ये कोई समझा नहीं पाया
ज़रा हद में रहो वर्ना तुम्हें ज़िल्लत उठानी है।

–क़मर मुहम्मदावादी

ये कुछ उद्धरण समकालीन हिंदी-ग़ज़ल के हैं जिनमें सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक स्वरों में ज़िंदा धार है। इन शे'रों की बुनावट में भाषाई कारीगरी में दस्तकारी की समन्विति है। इनकी उद्धरणीयता में हिंदी-ग़ज़ल की मिठास की रंगिमा शे'र-दर-शे'र में आकारित होकर हिंदी-ग़ज़ल की विस्तृति को उसकी सहज भंगिमा देकर, प्रायोगिक ज़मीन से जोड़ने का उपक्रम करती है।

दरअसल, कालावधि के नज़रिया से विचार करें तो अभी हिंदी-ग़ज़ल में प्रयोग-काल है। हिंदी-ग़ज़ल की दिशा में अभी बाढ़ की स्थिति है। बाढ़ का पानी शबाब पर है। इस सैलाबी स्थिति से उबर कर, जो तल में शेष रह जाएगा, उसका मूल्यांकन-आकलन समय करेगा। उर्दू के नामचीन समीक्षक हिंदी-ग़ज़ल की साहित्यिक त्वरा को आकलित कर रहे हैं किंतु हिंदी के कम ही समीक्षकों को हिंदी-ग़ज़ल की धार का अंदाज़ा हो पाया है। जिन्होंने कुछ लिखने का प्रयास भी किया तो सिर्फ़ कथ्य को केन्द्र में रखकर कुछ कहा है। इसके शिल्प पर क़लम उठाने का साहस कम ही समीक्षकों ने किया है। शिल्प के बग़ैर ग़ज़ल का कोई वजूद नहीं होता। हिंदी-ग़ज़ल के अधिसंख्य ग़ज़लकारों ने इस हुनर को साध लिया है। नए ग़ज़लकार संकल्पित-समर्पित मन से इसके अनुशासन को साधने में लगे हुए हैं। साहित्य की कोई भी विधा पुरानी नहीं पड़ती बशर्ते उसकी अनुभूति का कलेवर अधुनातन होता रहे। विनम्रता से कहा जाए तो आज हिंदी-ग़ज़ल में सुखद स्थिति कम और ख़तरे की स्थिति ज़ियादः है। हिंदी-ग़ज़ल की दुश्वारियों और संभावित ख़तरों से आगाह करते हुए सुख्यात कवि स्व. कैलाश गौतम ने कहा था, "आज हिंदी-ग़ज़ल धीरे-धीरे ग़रीब की बीवी होती जा रही है। लोग उसकी सिधाई का भरपूर और ग़लत फ़ायदा उठा रहे हैं। हर रचनाकार अपना इस पर हस्त-लाघव दिखा रहा है। बेचारी हिंदी-ग़ज़ल। टुकुर-टुकुर उसका मुँह देख रही है।" यह स्थिति हिंदी-ग़ज़ल के लिए कम सांघातिक नहीं है। हिंदी-ग़ज़ल की दिशा में हो रहे प्रयासों की गुणवत्ता से भी इनकार नहीं किया जा सकता।

दुष्यंत कुमार ने हिंदी-ग़ज़ल के 'अनुभूतिक कलेवर' को जागतिक जामा पहनाया। उर्दू-ग़ज़ल के समान्तर अपनी कथन-भंगिमा से हिंदी-ग़ज़ल को पहचान दी किंतु अपने शैल्पिक रचाव में प्रतिक्रियावादी ताक़तों का शिकार होने से बच नहीं पाए। उनकी हिंदी-आत्मा की ग़ज़लें साहित्य के गलियारे से लेकर राजनीति के कोटरों तक ख़ूब विस्तारित हुईं। दुष्यंत कुमार के शे'रों में जो दुनियावी की मक़बूलियत है उसे इन शे'रो में देखा-परखा जा सकता है–

मैं जिसे ओढ़ता-बिछाता हूँ
वो ग़ज़ल आप को सुनाता हूँ।

–दुष्यंत कुमार

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

–दुष्यंत कुमार

सिर से सीने में कभी पेट से पाँवों में कभी
इक जगह हो तो कहें दर्द यहाँ होता है।

–दुष्यंत कुमार

मैं तो छोटा हूँ झुका दूँगा कभी भी अपना सर
सब बड़े यह तय तो कर लें कौन है सबसे बड़ा?

–कृष्ण बिहारी 'नूर'

देना है तो निगाह को ऐसी रसाई दे
मैं देखूँ आईना तो मुझे तू दिखाई दे।

–कृष्ण बिहारी 'नूर'

जो इक बात जो ज़िंदगी बन गई है
जो तुम भूल जाओ तो हम भूल जाएँ।
वो ख़ामोशियाँ जिनमें तुम हो न मैं हूँ
मगर हैं हमारी तुम्हारी सदायें

–शमशेर बहादुर सिंह

हिंदी-ग़ज़ल के नए-पुराने ग़ज़लकारों में जीवन के विविध संदर्भों की सूक्ष्म गहन अभिव्यक्ति ज्यों-ज्यों आती जाएगी, त्यों-त्यों उसमें अधिक प्रगाढ़ता, रचाव-कसाव आएगा। परंपरित ग़ज़लों के समान उद्धरणीयता का गुण सु-विकसित होता जाएगा। प्रतीक्षा है ऐसे कवियों ग़ज़लकारों की जो हिंदी ग़ज़ल के लिए बने हों और जिनकी दृष्टि जीवन के हर पहलू को उजागर करने में लगी हो। सहज, सुगम, सुबोध हिंदी-ग़ज़लों की निर्मिति से ही उद्धरणीयता का सपना साकारित होगा।

संपर्क : 'काव्यामुखी साहित्य-अकादमी'
गोहना मुहम्मदाबाद, ज़िला–मऊ 276403 (उ.प्र.)
मो.-09369973494

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

हिंदी ग़ज़ल का अस्तित्व संघर्ष

❑ डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम'

परिचय

नाम : मुहम्मद तारिक असलम
उपनाम : तस्नीम
जन्म : 03/04/1962, ग्राम-पो.–धनगाई, बिक्रमगंज, रोहतास।
शिक्षा : बी.एम.बी.एस. (चिकित्सा स्नातक/कोलकाता) बी.ए. सम्मान (समाजशास्त्र), एम.ए. डिप्लोमा (पत्रकारिता एवं जन संचार)
संपादन : त्रैमासिक हमसफर (1980), मासिक नई शिक्षा संदर्भ पत्रिका (1981), साप्ताहिक भारतीय राजनीति एवं लोकसत्ता (1992), कथा सागर, 2000 से संपादक।
प्रकाशित कृतियाँ : आदमीनामा (बिहार के लघुकथाकारों का प्रथम संकलन), 1985
सिर उठाते तिनके (लघुकथा संग्रह), 2000
शब्द इतिहास नहीं रचते (काव्य संग्रह), 2003
प्रतिनिधि लघुकथाएँ (लघुकथा संकलन), 2006
खुदा की देन (लघुकथा संग्रह), 2008
मुस्लिम समाज के बंद दरवाजे (आलेख संग्रह)–प्रकाश्य
स्टॉट लाइट (मराठी लघुकथा संग्रह)–2007
स्त्री नहीं प्रकृति हो तुम (काव्य संकलन)–प्रकाश्य
धड़कनें दिल की (ग़ज़ल संकलन)–प्रकाश्य
हाशिये का सच (काव्य संग्रह)–प्रकाश्य
पत्थर हुए लोग (कहानी संग्रह)–प्रकाश्य
संप्रति : कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार विभाग तथा राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार अंतर्गत कार्यरत।
संपर्क : 6/2, हारून नगर कालोनी, फुलवारीशरीफ, पटना-801505
मोबाईल : 9430060154

उर्दू साहित्य में ग़ज़ल को एक अलग और खासमखास मुकाम हासिल है। उर्दू साहित्य में एक नहीं सैकड़ों ऐसे शाइरों के नाम मौजूद हैं, जिनकी शाइरी से न केवल साहित्य बल्कि समाज के चेहरे को कम-से-कम शब्दों में शे'रों के माध्यम से प्रस्तुत कर, लोगों के दिलो-दिमाग़ पर अमिट छाप छोड़ने में सफल हुए। बेशक ग़ज़ल का जन्म अरबी साहित्य में हुआ, जहाँ से फ़ारसी भाषा साहित्य के स्थान बनाने के बाद उर्दू साहित्य और जुबान का एक अहम् हिस्सा बनी।

प्रचलित शब्दावली में कहें तो ग़ज़ल का अर्थ होता है–इश्को-मोहब्बत, आशिक और माशूक की आशिकाना बातचीत, हुस्नो-शबाब की चर्चा। चूंकि जमाने में एक दौर ऐसा भी था, जबकि मनुष्य की इच्छाएँ और कामनाएँ रोजी-रोटी तक सीमित थीं, ज़िंदगी में रास-रंग के लिए समय बहुत था और राजा-रजवाड़े अपने लोगों के बीच ऐशो आराम की ज़िंदगी गुजारते थे। यों कि पूरा सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक परिवेश की संरचना ऐसी थी कि लोग प्रेम, सौंदर्य, चाहत आदि के लिए काफी समय निकाल लिया करते थे। जीवन को पूरी तन्मयता और सहजता से जीते थे। बहरहाल, ग़ज़ल को सौंदर्य बोधक विचारों और भावनाओं से परिपूर्ण किया गया।

किसी शहंशाह की प्रशंसात्मक रचना सुनाने-सुनने का दरबारियों के बीच जो सिलसिला चला तो लोगों के एक देश से दूसरे देश आवागमन के साथ यह विधा ईरानी साहित्य में शामिल होकर फारसी के ढ़ाँचे में ढल गई और ग़ज़ल ने एक मुकम्मल शक्ल एख्तियार कर लिया, जहाँ से यह उर्दू अदब का हिस्सा बनी और हिंदुस्तान के सरजमीं में उर्वरक आबोहवा के साथ परवान चढ़ती चली गई। उर्दू साहित्य में फारसी के साथ अरबी शब्दों का भरपूर उपयोग हुआ है और कुछ शाइर आज भी कर रहे हैं किंतु इस देश की राष्ट्रभाषा उर्दू और फारसी नहीं रही। इसका एहसास हमारे शाइरों को है, इसलिए कम-से-कम ऐसे शब्दों का प्रयोग करने लगे हैं जो एक पाठक या श्रोता के लिए अबूझ पहेली न बनें और उनको मंच पर बेआबरू न होना पड़े।

ग़ज़ल को न केवल भारत बल्कि इस पूरे महादेश में एक अत्यंत लोकप्रिय विधा का दर्जा प्राप्त है, जिसे मिर्जा ग़ालिब, मीर तकी मीर, जां निसार अख्तर, ज़ौक, अकबर इलहाबादी, मोमिन खां मोमिन, सौदा, जिगर मुरादाबादी, अली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सरदार जाफरी, फ़ैज़, फिराक गोरखपुरी, शकील बदायूनी, कैफी आजमी, साहिर लुधियानवी, नूर लखनवी, जज्बी आदि और भी ढेर सारे नाम हैं, जिन्होंने ग़ज़ल की परंपरा को समृद्ध किया। इसकी पारंपरिक संरचना की शुद्धता को बनाए रखा। वह ग़ज़ल जो एक दौर में हुस्नो इश्क के जलवों तक सीमित थी। इसकी जुबान प्रेम और सौंदर्य के बखान में जुटी थी। ग़ालिब ने अपने जमाने में ही आधुनिक युग की धमक को महसूस किया और कहने लगे–''रगे-संग से टपकता, वो लहू कि फिर न थमता/जिसे गम समझ रहे हो, यह अगर शरार होता।'' इस एक शे'र से आपको क्या लगता है कि आजादी से पहले मध्यकालीन युग में सम्राटों, राजतंत्रों, कुलीनतंत्रों, अंग्रेजों आदि के युग में समाज में विषमताएँ और समस्याएँ नहीं थीं और इसकी अनुभूति साहित्यकारों को नहीं थी?

ऐसे एक नहीं अनेक अशआर मिलेंगे उन शायरों के कलाम में जिन पर आरोप है कि उनकी शाइरी इश्क-मुहब्बत की दास्तान के सिवाए कुछ नहीं है। यदि ऐसे ही हालात थे तो ग़ालिब को यह सोचने की क्या आवश्यकता थी कि–

बेदरो-दीवार-सा इक घर बनाया चाहिए
कोई हमसाया न हो और पासबां कोई न हो

राजनीतिक और सामाजिक विषमताएँ और समस्याएँ प्रत्येक दौर में किसी-न-किसी रूप में हम को प्रभावित करती रही हैं। इससे मानवीय मूल्यों, आदर्शों और मान्यताओं को हानि ही पहुँची है। फिर भला इन स्थितियों से कोई शाइर किस प्रकार स्वयं को हाशिए पर रख सकता है? विचारणीय प्रश्न है यह? अरबी साहित्य में बहुप्रचलित काव्य विधा 'कसीदे' के शुरुआती हिस्से को अलग करते हुए फारसीदां शाइरों ने ग़ज़ल की नीवं रखी, जिसे कसीदे यानी प्रशंसात्मक बयान के 'तश्बीब' वाले अशआर को ही ग़ज़ल नामकरण किया गया। फारसी जुबान ओ अदब में यह ग़ज़ल के रूप में दाखिल हो गई और उर्दू शाइरों की ऐसी चहेती बनी कि वर्तमान समय में उर्दू साहित्य से कहीं अधिक संख्या में लिखी जा रही है। छोटी-सी-छोटी पत्रिकाओं और अखबारों तक में ग़ज़ल पेश की जा रही है। अब यह अलग प्रश्न है कि ग़ज़ल के नाम से जो कुछ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रहा है और प्रतिवर्ष सैकड़ों की तादाद में ग़ज़ल संग्रह और संकलन प्रकाशित हो रहे हैं उनके कितने अशआर ग़ज़ल के मापदंड को पूरा करते हैं? ऐसे तथाकथित शाइरों को मतला, मकता, क़ाफिया, रदीफ़, वज़न अर्थात मात्राओं का सही ज्ञान भी है या नहीं?

बकौल डॉ. सुशील गुरु–''यह एक कला है जिसमें प्रतिभा, अभ्यास, शब्द ज्ञान, शास्त्रीय अनुशासन, संतुलन एवं भावनात्मक उदगारों की आवश्यकता है, प्रत्येक रचना कथ्य का पर्याय एवं आंतरिक साधना का परिणाम होती है यों कि ''रूह जब रू-ब-रू होती है/ग़ज़ल वहीं से शुरू होती है।''

हिंदी साहित्य में ग़ज़लें लिखने वालों की कोई कमी नहीं है किंतु यह कटु सच्चाई है कि हिंदी साहित्य में इस विधा ने अब तक कोई ग़ालिब, इकबाल, मीर, साहिर लुधियानवी का जोड़ीदार पेश नहीं किया है। जबकि यह वास्तविकता है कि हिंदी में पहले पहल ग़ज़ल सृजन का अधिकार अमीर खुसरो को प्रदान किया जाता है, तदोपरान्त भारतेंदु हरिशचन्द्र, अयोध्या सिंह उपाध्याय, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', त्रिलोचन के अतिरिक्त गंभीरतापूर्वक शमशेर बहादुर सिंह, गोपालदास 'नीरज', कुँअर बेचैन, शेरजंग गर्ग, सूर्यभानु गुप्ता, जहीर कुरैशी, महेश दर्पण, ज्ञान प्रकाश विवेक, चन्द्रसेन 'विराट', माहेश्वर तिवारी, रऊफ़ परवेज, रामकुमार कृषक, अदम गोंडवी, रमेश माहेश्वरी, विनोद तिवारी, डॉ. अली अब्बास उम्मीद, वर्षा सिंह, अक्षय गोजा, मधुर नज़्मी, मदन मोहन उपेन्द्र, आशित हैदराबादी, हस्तीमल हस्ती जैसे अनेक कामयाब शाइरों के नाम लिए जा सकते हैं जो अपनी यथार्थवादी जमीन से जुड़ी दिलफरेब ग़ज़लें कहते रहे हैं लेकिन हमें यह स्मरण रहना चाहिए कि अपने प्रारंभिक दौर से ग़ज़ल ने उन तमाम मानवीय पक्षों के प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनुभवों को आत्मसात करते हुए, मनुष्य के व्यापक सोच, विचार, कल्पना, मर्म को व्याख्यायित किया है।

हिंदी साहित्य के एक विधा के रूप में ग़ज़ल काफी समय पूर्व से कही जा रही है किंतु सच यही है कि हिंदी पाठकों के बीच जबरदस्त लोकप्रियता दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों से मिली। अपने एकमात्र ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' में अपना पक्ष रखते हुए वे स्पष्ट करते हैं कि–''उर्दू और हिंदी अपने-अपने सिंहासन से उतरकर जब-जब आम आदमी के पास आती हैं तो उनमें फर्क कर पाना मुश्किल होता है। मेरी नीयत और कोशिश यह रही है कि इन दोनों भाषाओं को ज़्यादा-से-ज़्यादा करीब ला सकूँ। इसलिए ये ग़ज़लें उस भाषा में कही गई हैं, जिसे मैं बोलता हूँ।'' अर्थात् दुष्यंत कुमार ने अपनी ग़ज़लों के लिए आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया और आम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आदमी के सुख-दुख, अभाव, असंतोष, पीड़ा, प्रताड़ना, अपेक्षाओं के पक्ष में खड़े होते हुए कहने से गुरेज़ नहीं किया–

कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए

आज़ादी के बाद के दौर को अपनी जुबान की शिद्दत से तौलते हुए वह करारी चोट करते हैं, जो मुल्क के सियासी माहौल पर चस्पां होता है। आम आदमी की सामाजिक कैफियत पर तीक्ष्ण नज़र जाती है तो कह उठते हैं–

यहाँ तो सिर्फ गूंगे और बहरे लोग बसते हैं,
खुदा जाने यहां पर किस तरह जलसा हुआ होगा।

एक और शे'र पर गौर कीजिए–

कभी कश्ती, कभी बतख, कभी जल,
सियासत के कई चोले हुए हैं।

उनके दिलो-दिमाग़ पर आवेश और आक्रोश का जुनून सवार होता है। वक्त और हालात से बौखला कर कहने से नहीं चूकते–

गिड़गिड़ाने का यहाँ कोई असर होता नहीं,
पेट भरकर गालियाँ दो, आह भरकर बद्दुआ

दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों में सामयिकता, सहजता, कल्पनाशीलता, कोमलता और कठोरता सारे तत्त्व मौजूद हैं, जो हिंदी ग़ज़लों को एक नए साचे में पेश करते नज़र आते हैं। उनकी शे'रों ने सामाजिक विडंबनाओं पर कठोरतम शैली में काफी तल्ख अंदाज में टिप्पणियाँ दर्ज की हैं। उनकी ग़ज़लों की यही मौलिक विशेषता और बेबाकी अलग पहचान स्थापित करने में मददगार साबित हुई हैं क्योंकि वे साफतौर पर कहते हैं–

मैं जिसे ओढ़ता बिछाता हूँ
वो ग़ज़ल आपको सुनाता हूँ

हिंदी ग़ज़लों का यह लबो लहज़ा कोई आधुनिक प्रयोग नहीं है। इस आवाज़ और अंदाज में क्रांतिकारी आंदोलनों के समय अनेक जांबाज नौजवान शाइरों ने न केवल ऐसे धधकते हुए अशआर कहे, वरन उसे गुनगुनाते हुए फाँसी के फंदे में झूल भी गए। उूर्द साहित्य में ऐसी ग़ज़लें अनेक शाइरों ने दर्ज की हैं, जिसे दुष्यंत कुमार ने केवल अपनी ग़ज़ल का नाम दिया, जबकि हिन्दी ग़ज़ल के नाम को उर्दू ग़ज़ल के तर्ज पर भुनाने की कोशिशें तेजतर हुई हैं। हालांकि यह वास्तविकता है कि उर्दू साहित्य में सिर्फ ग़ज़ल का वजूद ही मायने रखता है। इसी प्रकार यह किसी भाषा में लिखी जाए, कहना ग़ज़ल ही चाहिए, लेकिन इसके दुष्यंत कुमार के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक इत्यादि विचारों से ओतप्रोत ग़ज़लों को कुछ बड़बोले और कुढ़मगज लोग इसे इस नाम के बजाए तेवरी, गीतिका, अनुगीत और न जाने क्या-क्या अनाप-शनाप नामकरण कर अपनी एक अलग पहचान के लिए संघर्षरत दिख रहे हैं। दो दशक पहले 'तेवरी' को भुनाने के लिए कुछ लोग झंडाबरदार बनकर सामने आए, खूब फतवेबाजियाँ हुईं, ग़ज़लकारों को लताड़ा गया और उनको खेमे में लाने के प्रयास हुए, किंतु सबके सब हाशिए पर चले गए। ग़ज़ल ज्यों की त्यों बनी रही।

इन सारी करतूतों का परिणाम यह हुआ कि हिंदी ग़ज़ल वर्तमान समय में भी अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत दिख रही है। कुछ हिंदी वाले कहते हैं कि हमारी ग़ज़लों में उर्दू शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिए। परंतु मेरा मत है कि इससे ग़ज़ल का प्राकृतिक सौंदर्य नष्ट होगा और ग़ज़ल की आत्मा प्रभावित होगी। इसलिए, उचित तो यही होगा कि जो शब्द जहाँ बिलकुल मौजूं लगे, उसे बिना झिझक इस्तेमाल किया जाए। आखिर उर्दू को लश्कर की जुबान क्यों कहा गया? चूंकि इस साहित्य में दुनिया भर के भाषाओं के शब्दों को अपने तन-मन में आत्मसात् किया और आम आदमी की जुबान बन बैठी। फिर परहेज तो ऐसे शब्दावली से होना चाहिए जो आम आदमी को समझ में न आए। इसे न तो उर्दू में समाहित किया जा सकता है और न ही हिंदी में।

हिंदी भाषियों को यह जानना चाहिए कि उर्दू जुबान ने हिंदी के अनेक प्रचलित शब्दों को शान से आत्मसात किया है, फिर इससे परहेज क्यों? हिंदी ग़ज़ल की लोकप्रियता और सहजता में यह सोच भी बाधक रही है। कुछ कवियों और शाइरों को देख रहा हूँ कि ऐसी शब्दावली का प्रयोग कर रहे हैं, जिसे सहजता से समझ पाना कठिन होगा। उनसे पूछा जा सकता है कि फिर ये क़िसके लिए ग़ज़लें लिख रहे हैं? ग़ज़ल को केवल ग़ज़ल ही रहने दें और उसे आम आदमी से जोड़ेंगे तो बेशक दुष्यंत कुमार की परंपरा और पहचान से आगे जा सकते हैं। अन्यथा इस सीमा को पार कर पाना मुश्किल काम होगा। हिन्दी ग़ज़ल की संरचनात्मक सैद्धांतिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एवं व्यवहारिक पक्ष उर्दू के बहरों पर आधारित है। किंतु इसका अर्थ कदापि यह नहीं है कि उर्दू शब्दों का ग़ज़लों में अधिकाधिक प्रयोग होना चाहिए। प्रश्न शब्दों के औचित्य का है।

यह तो सभी जानते हैं कि ग़ज़ल का प्रत्येक शे'र मायने और मतलब में भिन्नता लिए होता है। एक शेर में प्रेम, दूसरे में वैराग्य, तीसरे में दर्शन, चौथे में सौंदर्य और पाँचवे में सियासी हालात पर कटाक्ष किया जा सकता है। एक शे'र की यह विशेषता होती है। इसके साथ मतला, मकता, वज़न की बंदिशें बहुत मायने रखती हैं। एक शे'र में दो पंक्तियाँ होती हैं जो एक ही बह्र के अनुरूप होनी चाहिए। ग़ज़ल में सर्वमान्य कुल बह्रों की तादाद सैंतीस है। एक शे'र में बिंब, प्रतीक, उपमा, अलंकरण, वैचारिकता, बौद्धिकता, कल्पनाशीलता का बड़ा महत्त्व होता है, जिसके बगैर कामयाब अशआर नहीं कहे जा सकते। अलबत्ता तुकबंदी की जा सकती है, जैसा कि आज हजारों ग़ज़लों में रोज ही देख-पढ़ रहा हूँ। ऐसी ग़ज़लें बह्रों के लिहाज से ठीक सही किंतु चिंतन-मनन की मौलिकता के दृष्टिकोण से पूरे तौर पर खारिज की जा सकती हैं। इन्हें इन अशआर की तरह कोई याद नहीं रखना चाहेगा जैसा कि निम्न पंक्तियों में अशआर पेश हैं। आप भी गौर कीजिए—

ज़िंदगी मौत तेरी मंजिल है, दूसरा कोई रास्ता ही नहीं
चाहे सोने के फ्रेम में जड़ दो, आईना झूठ बोलता ही नहीं

—कृष्ण बिहारी 'नूर'

कृष्णबिहारी नूर 30 मई, 2003 को इस दुनिया को अलविदा कह गए किंतु ग़ज़लकारों को यह मालूम होना चाहिए कि इनका शुमार शहरयार, निदा फाजली और बशीर बद्र सरीखे मशहूर शाइरों के साथ किया जाता है।

उर्दू हिंदी के शब्दों का कितने सलीके से व्यवहार रमेश माहेश्वरी ने अपनी एक ग़ज़ल में किया है—

मन अब जैसे महानगर है
यहाँ किसी की किसे ख़बर है

इसी प्रकार कुछ अन्य शायरों के कलाम में भी अभीष्ट अर्थ तक पहुँचने की जबरदस्त तड़प और ललक दिखाई पड़ती है, जिसकी तह तक दाखिल होकर सच को रेखांकित करना सहज नहीं लगता। जैसा कि—

क्या करें तूफ़ान की बातें
झोपड़ी में ज्ञान की बातें

—मदन मोहन उपेन्द्र *(बदल गए दस्तूर से)*

मैंने अनेक ऐसी ग़ज़लें देखी हैं, जिन में थोड़ा शाब्दिक उलटफेर कर दें तो उस ग़ज़ल की ग्राह्यता बढ़ जाती है, बावजूद इस दृष्टिकोण के कई शाइर अपनी तथाकथित हिंदी ग़ज़लों में जबरदस्ती क्लिष्ट हिंदी-उर्दू शब्दों का इस्तेमाल करते हैं, जिसके शायद वे मायने भी नहीं जानते, जबकि शाइरा वर्षा सिंह के इस एक शे'र को देखिए, कितनी खुबसूरती से शब्दों का प्रयोग किया है—

हृदय के द्वार बंद कर, स्वयं से हो गए जुदा
मंदिरों में देवता तलाशना फिजूल है।

आज के नामवर शाइरों में एक नाम डॉ. अली अब्बास 'उम्मीद' का भी शामिल है, जो बिना किसी लाग-लपेट के अपने अनुभव की कसौटी पर पके ख्यालों तजुर्बों को रेखांकित करते हैं जिसकी तीव्र अनुभूति अवश्य होती है। इनके लिए शाइरी सैकड़ों शाइरों की तरह महज एक रस्म अदायगी नहीं है। इनके कुछ अशआर देखिए—

तमाम शहर था ख्वाबों की तेज बारिश में
मैं अपनी जात के जलते हुए मकान में था

× × ×

खिड़कियाँ ही खोल लें गर बंद दरवाजा रहे
आते-जाते मौसमों का कुछ तो अंदाजा रहे

यह कहना असंगत नहीं होगा कि दुष्यंत कुमार ने अपनी ग़ज़लों को न केवल हिंदी-उर्दू के लेबल से दूर रखा बल्कि जहाँ जो शब्द छंदों की शर्तो को पूरा करता दिखा, उसे इस्तेमाल किया। इसलिए, आज भी उनकी ग़ज़लें पाठकों को बाधँती हैं, साहित्य से जोड़ती हैं और एक ग़ज़ल की सारी शर्ते भी पूरी करती हैं। दुष्यंत के पदचिह्नों पर चलने का काफी लोग दावा करते हैं, फिर वह हिंदी ग़ज़ल की बात क्यों करते हैं? उर्दू ग़ज़ल से उन्हें कौन-सा खतरा है? वे अपनी भाषा में चाहें तो एक क्या हजार ग़ज़लें कहें। हिंदी भाषा में यह विशेषता है। बशर्ते उन्हें अपनी भाषा का ज्ञान हो तब न? ग़ज़ल के मिजाज में बदलाव वक़्त और हालात की देन हैं, न की मीर और ग़ालिब की? जिसने जिस माहौल में सांस लिया, वैसा ही समाज को साहित्य दिया। अपनी हदों के अंदर रह कर मधुर नज़्मी ने भी कुछ कम कामयाब शे'र नहीं कहे। इन शे'रों की तरोताजगी का एहसास इसकी बानगी से लगा सकते हैं—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ये धरती उगाएगी लाशों की फस्लें
जो बारूद बोयेंगे अखबार वाले

× × ×

किस्तों में वो कत्ल हुए हैं
छोड़ के जो अपना घर निकले

ग़ज़ल की जुबान आम बोलचाल की जुबान होनी चाहिए। एक सफल ग़ज़ल की पहली शर्त यही हो सकती है कि उसे भाषा की सीमाओं में बाँधने की बचकानी कोशिश नहीं होनी चाहिए। भाषा किसी देश या समाज की बपौती नहीं हुआ करती है, जिसे अपनी मनमर्जी के मुताबिक पाठकों पर थोपा जाए। यही कारण है कि हिंदी साहित्य में दुष्यंत कुमार ने ग़ज़ल को जिस मुकाम पर छोड़ा था, वह आज भी वहीं खड़ी है क्योंकि उसे हिंदी ग़ज़ल के अलावा कई दूसरे नामों से पुकारने का प्रयास किया जा रहा है। ये थोथे और भोथरे विचार ग़ज़ल के हित में नहीं। ग़ज़ल को एक उचित मकाम के लिए आज भी संघर्ष करना पड़ रहा है चूँकि जो लोग शाइरी कर रहे हैं, वे अपनी कलम का हक अदा कर रहे हैं और जो इसे पेशा बना चुके हैं, इसे कोठे की चारदिवारी में कैद करने के इच्छुक हैं मानो ग़ज़ल उनकी रखैल हो। जबकि ग़ज़ल वर्तमान परिवेश के सच को उद्घाटित करने के अलावा समाज को उसका असली चेहरा बेनकाब कर दिखाने लगी है। ग़ज़ल को इससे कतई कोई मतलब नहीं कि लोग उसके आगे-पीछे सार्थक, समकालीन और आधुनिक सरीखे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं या नहीं। यह तो बस सीप से निकले मोती के समान है, जिसे आप जैसे चाहे काम में लाएँ। ग़ज़ल तो बस ग़ज़ल है, जिसे ग़ालिब ने तब गले लगाया था, जब वह मदरसे में पढ़ा करते थे। वह दस-ग्यारह साल की उम्र में शाइरी करने लगे थे।

ग़ज़ल से संबंधित एक अहम् प्रश्न यह है कि आखिर क्या कारण है कि उर्दू साहित्य में हिंदी की अपेक्षा बेहतर ग़ज़लें आज भी कही जा रही हैं। उर्दू साहित्य में शाइरी को आज भी उस खालीपन का सामना नहीं करना पड़ रहा है, जैसा कि हिंदी साहित्य में दिख रहा है। यहाँ वर्तमान में निदा फाजली, शहरयार, बशीर बद्र, जावेद अख्तर, मख्मूर सईदी, बेकल उत्साही, डॉ. अजरा नूर, मरियम ग़ज़ाला, वहीद हसन सीवानी, प्रेम किरण किसी-न-किसी रूप में ग़ज़ल की स्तरीयता को बरकरार रखने में तल्लीन दिख रहे हैं। वर्तमान सामाजिक परिवेश पर कटाक्ष करते कुछ अशआर देखिए–

कोई हिंदू है न मुस्लिम कोई
सोचने वाला फरिश्ता होगा

–प्रेम किरण

कमअक्ल था अजीज तुझे मानता रहा
मुझ को फरेब दे गया तेरा नकाब दोस्त

–आशित हैदराबादी

अब हमें सूरत नहीं सीरत बदलनी चाहिए
तंग राहों से नई राहें निकलनी चाहिए

–रउफ परवेज़

सच कहा जाए तो अपने दौर का इतिहास लिख रही हैं ग़ज़लें। इन ग़ज़लों से संतुष्ट इस मायने में हुआ जा सकता है कि उर्दू काव्य साहित्य में खासकर शाइरी में 'उस्ताद' और 'शार्गिद' की परंपरा आज भी कायम है। यह तल्ख हक़ीक़त है कि कभी रिक्शाचालक रहे रम्ज़ अजीमाबादी वक़्त से पहले रुख्सत हो गए, मगर प्रेम किरण उनके शार्गिदों में से एक रहे हैं, जो शाइरी को नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में जुटे हैं। ऐसी कोई परंपरा हिंदी शाइरों के नाम नहीं है। यहाँ सबके सब तीसमार खां हैं, जो लिख दिया, सो लिख दिया। उनसे बड़ा कोई न तो शाइर है और न होगा। हिंदी के शाइरों के मिजाज का यही हाल है कि वे चंद अशआर नहीं, वरन साल में दो-चार संग्रह प्रकाशित करवा रहे हैं। उनका प्रचार-प्रसार हो रहा है। चूंकि उनको अपनी वाह-वाह के आगे कुछ सूझता ही नहीं। आँख के अँधे, नाम नयनसुख की कहावत को चरितार्थ करते ये शायर अपने शे'रों के बारे में न तो अपने बुजुर्गों से सलाह-मशविरा करते हैं, न मार्ग दर्शन लेते हैं। इससे शे'र कहने का शऊर कैसे जान लेंगे भला? आप ही बताइए जरा? जबकि शाइरी के लिए भाषा ज्ञान, प्रयोग, उच्चारण, मापदंड, नफासत, काबलियत, ख्यालात, तजुर्बात की बारीकियों का उच्चस्तरीय ज्ञान होना बेहद जरूरी है। यह सारे गुर बिना उस्ताद के पुस्तकों के अध्ययन मात्र से नहीं हासिल की जा सकती हैं। यही कारण है कि हिंदी भाषा में ग़ज़ल को आज भी अस्तित्व संघर्ष के दौर से गुजरने को विवश होना पड़ रहा है। जहाँ शाइरों की तादाद अधिक दिखती है, किंतु अविस्मरणीय अशआर कम नज़र आते हैं। ❑

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृति-शेष

उर्दू-हिन्दी के शाइरों की ग़ज़लें

उर्दू शाइरी के *बाबा आदम वली दकनी* की दो ग़ज़लें

(1)

तुझ मुख का रंग देख कँवल जल में जल गए
तेरी निगाह-ए-गर्म सूँ गुल गल पिघल गए

हर इक कूँ काँ[1] है ताब जो देखे तेरी निगाह
शेराँ तेरी निगाह की दहशत सूँ टल गए

साफ़ी तेरे जमाल की काँ लग बयाँ करूँ
जिस पर क़दम निगाह के अक्सर फिसल गए

मरने से पहले जो कि मरे इस जगत मिनीं
तस्वीर की निमत[2] वो ख़ुदी सूँ निकल गए

पाएँ जो कोई लज़्ज़त-ए दीं जग में ऐ 'वली'
दुनिया में हाथ अपने वो हसरत सूँ मल गए

1. कहाँ, 2. समान, भाँति

(2)

तुझ मुख का यो तिल देखकर लाले का दिल काला हुआ
तुझ दौर-ए-ख़त सों तौक़ ज्यूँ महताब पर हाला हुआ
मस्ती मनीं महशर[1] तलक कौनैन[2] को बिसरा है वो
जो तुझ नयन के जाम सों मद पी के मतवाला हुआ
काजल नयन का देख कर बोले हैं यूँ जादूगराँ
उश्शाक़[3] की तस्ख़ीर[4] कूँ यूँ सहर-ए-बंगाला[5] हुआ
ग़म्ज़ाँ[6] की फ़ौजां बाँधकर आए है रावत[7] नैन के
हर मू पलक का हाथ में उनके सो जूँ भाला हुआ
जलता है दोज़ख़ रात दिन तेरे जले के रश्क सों
मुश्ताक़ तेरे दरस का जन्नत सों निरवाला[8] हुआ
सट नैन की शमशीर को ऊझड़[9] 'वली' के दिल उपर
तेरे शिकारिस्तान में यो नख़्वीर[10] है पाला हुआ

1. हश्र का मैदान, 2. दीन और दुनिया, लोक-परलोक, 3. आशिक़ का बहुवचन, 4. घेरना, क़ाबू में लाना, 5. बंगाल का जादू, 6. नाज़-नखरे, 7. सिपाही, 8. उदासीन, 9. चोट, वार, 10. शिकार किया हुआ जानवर

मीर की ग़ज़लें

(1)

है आग का-सा, नालःए-काहिश फ़िज़ा का रंग
कुछ और सुबूह दम से हुआ है, हवा का रंग
देखे इधर तो मुझ से न यूँ आँख वह छुपाए
ज़ाहिर है मेरे मुँह से, मिरे मुद्द'आ का रंग
किस बेगुनह के ख़ूँ में, तिरा पड़ गया है पाँव
होता नहीं है सुर्ख़ तो ऐसा हिना का रंग
गुल, पैरहन न चाक करें, क्योंकि रश्क से
किस मर्तबे में शोख़ है उस की क़बा का रंग

पूछे हैं वज्ह-ए-गिरियः-ए-ख़ूनी जो मुझ से लोग
क्या देखते नहीं सब उस बेवफ़ा का रंग
मक़दूर तक न गुज़रे मिरे ख़ूँ से यार, मीर
ग़ैरों से क्या गिलः है यह है आश्ना का रंग

नालः ए-काहिश फ़िज़ा—कष्ट देने वाला आर्तनाद। मुद्द'आ—उद्देश्य। सुबूह—बेगुनाह निर्दोष। ख़ूँ—ख़ून, रक्त। सुर्ख़—लाल। हिना—मेहंदी। गुल—फूल। चाक करना—फाड़ना। रश्क—ईर्ष्या, जलन। किस मर्तबे में—कितना ज़्यादा। शोख—तेज़। क़बा—वस्त्र, कपड़े। वजूह-ए-गिरियःए-ख़ूनीं—खून के आँसू बहाने के कारण मक़दूर—संभव। गिला—शिकायत। आश्ना—परिचित।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(2)

उल्टी हो गईं सब तदबीरें, कुछ न दवा ने काम किया
देखा, इस बीमारि-ए-दिल ने, आखिर काम तमाम किया

'अह्द-ए-जवानी रो रो काटा, पीरी में लीं आँखें मूँद
या'नी रात बहुत थे जागे, सुब्ह हुई आराम किया

नाहक हम मजबूरों पर, यह तोह्मत है मुख़्तारी की
चाहते हैं सो आप करें हैं, हम को 'अबस बदनाम किया

सारे रिन्द, औबाश, जहाँ के, तुझ से सुजूद में रहते हैं
बाँके, टेढ़े, तिरछे, तीखे, सब का तुझको इमाम किया

सरज़द हम से बेअदबी तो बहशत में भी कम ही हुई
कोसों उस की ओर गए, पर सिज्दः हर हर गाम किया

किसका का'बः, कैसा क़िब्लः, कौन हरम है, क्या एह्राम
कूचे के, उसके, बाशिन्दों ने, सब को यहीं से सलाम किया

याँ के सुपैद-ओ-सियह में हम को, दख़्ल जो है सो इतना है
रात को रो रो सुब्ह किया, या दिल को जूँ तूँ शाम किया

सुब्ह, चमन में, उसको, कहीं तक्लीफ़-ए-हवा ले आई थी
रुख से गुल को मोल लिया, क़ामत से सर्व गुलाम किया

अहद-ए-जवानी–यौवन का जमाना। पीरी–बुढ़ापा। तोह्मत–आरोप, इल्ज़ाम। मुख़्तारी–स्वाधीनता, आजादी। 'अबस–व्यर्थ, फ़िज़ूल। रिन्द–भोग-विलास और मदिरापान में रत रहने वाला। औबाश–दुराचारी, लम्पट, आवारा। सुजूद–सिज्दे का बहुवचन। इमाम–नेता, अगुवा। सरज़द–घटित। बेअदबी–असभ्यता। बहशत–घबराहट, पागलपन। सिज्दा–माथा टेकना। गाम–क़दम। क़िब्लः–वह दिशा जिधर मुंह करके सिज्दा करते है, काबा। हरम–मस्जिद, काबा। एह्राम–हाजियों का वस्त्र, दो चादरें बिना सिली हुई, एक बाँधी और एक ओढ़ी जाती है।

स्मृति शेष

मिर्ज़ा ग़ालिब की ग़ज़लें

(1)

जहाँ तेरा नक्श-ए-क़दम देखते हैं
ख़ियाबाँ ख़ियाबाँ इरम देखते हैं

दिल आशुफ़्तगाँ ख़ाल-ए-कुंज-ए-दहन के
सुवैदा में सैर-ए-अदम देखते हैं

तिरे सर्व क़ामत से इक क़द्द-ए-आदम
क़यामत के फ़ितने को, कम देखते हैं

तमाशा कर अय महूव-ए-आईनादारी
तुझे किस तमन्ना से हम देखते हैं

सुराग-ए-तुफ़-ए-नाल ले, दाग-ए-दिल से
कि शब रौ का नक़्श-ए-क़दम देखते हैं

बना कर फ़क़ीरों का हम भेस, ग़ालिब
तमाशा-ए अहल-ए-करम देखते हैं

(2)

हुस्न-ए-मह गरचे ब हँगाम-ए-कमाल अच्छा है
उससे मेरा मह-ए-खुर्शीद जमाल अच्छा है

बोस देते नहीं और दिल पे है हर लह्ज निगाह
जी में कहते हैं, कि मुफ़्त आए, तो माल अच्छा है

और बाज़ार से ले आए, अगर टूट गया
सागर-ए-जम से मिरा जाम-ए-सिफाल अच्छा है

बेतलब दे तो मजा उसमें सिवा मिलता है
वह गदा, जिसको न हो ख़ू-ए-सवाल अच्छा है

उनके देखे से, जो आ जाती है मुँह पर रौनक
वह समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है

देखिए पाते हैं अश्शाक, बुतों से क्या फैज
इक बह्मन ने कहा है, कि यह साल अच्छा है

हम सुखन तेशे ने फ़रहाद को शीरीं से किया
जिस तरह का कि किसी में हो कमाल अच्छा है

कतर दरिया में जो मिल जाए, तो दरिया हो जाए
काम अच्छा है वह, जिसका कि मआल अच्छा है

खिज्र सुलताँ को रखे, ख़ालिक-ए-अकबर सरसब्ज
शाह के बाग में, यह ताज निहाल अच्छा है

हम को मालूम है, जन्नत की हक़ीक़त लेकिन
दिल के खुश रखने को, ग़ालिब यह ख़याल अच्छा है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृति शेष

पं. बृजनारायण चकबस्त की ग़ज़लें

(1)

दिल ही बुझा हुआ हो तो लुत्फ़े बहार[1] क्या
साक़ी[2] है क्या शराब है क्या सब्ज़ा ज़ार[3] क्या।

ये दिल की ताज़गी है वो दिल की फ़सुर्दगी[4]
इस गुलशने जहाँ की ख़िज़ाँ[5] क्या बहार क्या।

देखा सुरूरे बाद-ए हस्ती[6] का ख़ातमा
अब देखें रंग लाये अजल[7] का ख़ुमार क्या।

दुनिया से ले चला है जो हसरतों का बोझ
क़ाफी नहीं है सर पै गुनाहों का बार क्या।

ख़िलअत[8] क़फ़न का हम तो ज़माने से ले चुके
अब है उरूसे मर्ग तुझे इन्तज़ार क्या।

बादे फ़ना[9] फ़िज़ूल है नामोनिशाँ की फ़िक्र
जब हम नहीं रहे तो रहेगा मज़ार क्या।

चलती है इस चमन में हवा इन्कलाब की
शबनम को आए दामने गुल को क़रार क्या।

छिटकी हुई है गोरे ग़रीबाँ[10] पै चाँदनी
है बेकसों की फ़िक्र चिरागे मज़ार[11] क्या।

---

1. बसंत का आनंद, 2. मद्य पिलाने वाला, 3. हरियाली, 4. रूखापन, 5. पतझर, 6. ज़िंदगी का नशा, 7. मृत्यु, 8. क़फ़न की पोशाक, 9. मरने के बाद, 10. लोगों की समाधि, 11. समाधि का दीपक।

(2)

दिल ही की बदौलत रंज भी है दिल ही की बदौलत राहत भी
ये दुनिया जिसको कहते हैं दोज़ख़ भी है और जन्नत भी।

अरमान भरे दिल ख़ाक हुए और मौत के तालिब[1] जीते हैं
अँधेरे पै इस दुनियाँ के हमें आती है हँसी भी रिक्कत[2] भी।

या ख़ौफ़े ख़ुदा या ख़ौफे सक़ा[3] हैं दो ही बयान तेरे वाअज़[4]
अल्लाह के बंदे दिल में तेरे है सोज़ो गुदाज़[5] मुहब्बत भी।

जब तक है जवानी का आलम क्या ऐश की मस्ती रहती है
जब पीरी मौत की लाई ख़बर फिर ज़ुहद[6] भी है और ताअत[7] भी।

गिरते ही ज़मीं के दामन में ऐ तिफ़्ल[8] ये रोना धोना क्या
दुनिया में अगर तू आया है याँ रंज भी है और राहत भी।

---

1. चाहने वाले, 2. रंज, 3. नरक का डर, 4. उपदेशक, 5. दुःख शोक, 6. पाप से परहेज़, 7. भक्ति पूजा, 8. बच्चे।

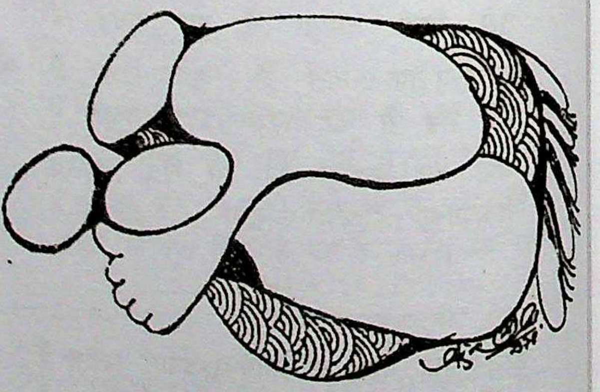

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृति शेष

दुष्यंत कुमार की ग़ज़लें

(1)

कहाँ तो तय था चरागाँ हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग़ मयस्सर नहीं शहर के लिए

यहाँ दरख़्तों के साये में धूप लगती है
चलो यहाँ से चलें और उम्र भर के लिए

न हो कमीज़ तो पाँवों से पेट ढक लेंगे
ये लोग कितने मुनासिब हैं, इस सफ़र के लिए

खुदा नहीं, न सही, आदमी का ख़्वाब सही
कोई हसीन नज़ारा तो है नज़र के लिए

ये मुतमइन है कि पत्थर पिघल नहीं सकता
मैं बेकरार हूँ आवाज़ में असर के लिए

तेरा निज़ाम है सिल दे जुबान शायर की
ये एहतियात जरूरी है इस बह्र के लिए

जिएँ तो अपने बग़ीचे में गुलमोहर के तले
मरें तो ग़ैर की गलियों में गुलमोहर के लिए

(2)

ये जो शहतीर है पलकों पे उठा लो यारो
अब कोई ऐसा तरीका भी निकालो यारो

दर्दे दिल वक़्त को पैगाम भी पहुँचाएगा
इस कबूतर को जरा प्यार से पालो यारो

लोग हाथों में लिए बैठे हैं अपने पिंजरे
आज सय्याद को महफ़िल में बुला लो यारो

आज सीवन को उधेड़ो तो ज़रा देखेंगे
आज संदूक से कुछ ख़त तो निकालो यारो

रहनुमाओं की अदाओं पे फिदा है दुनिया
इस बहकती हुई दुनिया को सँभालो यारो

कैसे आकाश में सूराख नहीं हो सकता
एक पत्थर तो तबियत से उछालो यारो

लोग कहते थे कि ये बात नहीं कहने की
तुमने कह दी है तो कहने की सज़ा लो यारो

(3)

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी
शर्त लेकिन थी कि बुनियाद हिलनी चाहिए

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए

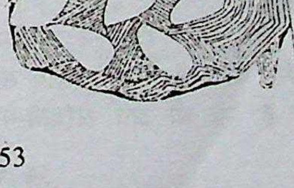

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृति शेष

फ़िराक़ गोरखपुरी की ग़ज़लें

(1)

नसीब-एक-ख़ुफ़्ता[1] के शाने झँझोड़ सकता हूँ
तिलिस्म-ए-ग़फ़लत[2]-ए-कोनेन तोड़ सकता हूँ
न पूछ है मेरी मजबूरियों में न्या कस-बल
मशय्यतों[3] की कलाई मरोड़ सकता हूँ
उबल पड़ीं अभी आवे हयात[4] के चश्में[5]
शरार-ओ-संग[6] को ऐसा निचोड़ सकता हूँ
बहार-ए-फ़स्ले ख़िज़ाँ हो ख़िज़ाँ हो फ़स्ले बहार
चमन में ऐसे शगूफ़े भी छोड़ सकता हूँ
निग़ाहे ग़ैब भी जिन तक अभी नहीं पहुँची
उन उँगलियों से वो तारे भी तोड़ सकता हूँ
रवाँ हैं ख़ून-ए-शफ़क़[7] सुबह कार-ए-गूँ[8] में मेरी
शब-ए-स्याह की ज़ंजीर तोड़ सकता हूँ
बहुत दिनों तक अलग रह चुके सवाब-ओ-गुनाह
में ख़ैर-ओ-शर के मनाज़िल को जोड़ सकता हूँ
है ज़ीरो बम मेरी लय का हरीफ़[9] ए-ज़र्ब-ए-कलीम[10]
बुलंद-ओ-सख़्त चट्टानों को फोड़ सकता हूँ
फ़िराक़ देख बदलती है मंज़िल-ए-आफ़ाक़
के महर-ओ-माह[11] की मैं बागडोर मोड़ सकता हूँ

(1943)

---

1. सोया हुआ भाग्य, 2. गफ़लत का, इंद्रजाल, 3. स्वेच्छा, 4. अमृत, 5. झरना, सोता, 6. चिनगारी एवं पत्थर, 7. लाल ख़ून, 8. कार्यर्थ, 9. विरोधी, 10. समक्ष बोलने वाला, 11. सूर्य-चंद्रमा

मज़रूह सुल्तानपुरी की ग़ज़लें

(1)

अहले-तूफ़ाँ[1] आओ, दिल वालों का अफ़साना[2] कहें
मौज[3] की गेसू[4], भँवर को चश्मे-जानाना[5] कहें।
दार[6] पर चढ़ कर लगाएँ नारा-ए-ज़ुल्फ़े-सनम[7]
सब हमें बा-होश[8] समझें, चाहे दीवाना कहें।
वो शहे-ख़ूबाँ[9] किधर है, फिर चलें उसके हुज़ूर
ज़िंदगी को दिल कहें, और दिल को नज़राना[10] कहें।
थामें उस बुत[11] की कलाई और कहें उसको जुनूँ[12]
चूम लें मुँह और इसे अंदाज़े-रिन्दाना[13] कहें।
सुरख़ी-ए-मै[14] कम थी मैं ने छू लिए साक़ी[15] के होंट
सर झुका है, जो भी अब अरबाबे-मैख़ाना[16] कहें।
तिश्नगी[17] ही तिश्नगी है, किसको कहिए मैकदा[18]
लब[19] ही लब हम ने तो देखे, किस को पैमाना[20] कहें।
पारा-ए-दिल[21] है वतन की सर-ज़मी[22] मुश्किल ये है
शहर को वीराँ[23] कहें या दिल को वीराना कहें।
ऐ रुख़े-ज़ेबा[24] बता दे और अभी हम कब तलक
तीरगी[25] को शमअ, तन्हाई[26] को परवाना[27] कहें।
आरज़ू ही रह गई 'मजरूह' कहते हम कभी
इक ग़ज़ल ऐसी जिसे तस्वीरे-जानाना[28] कहें।

(1958)

---

1. तूफ़ान वालो, 2. कथा, 3. लहर, 4. केश, 5. प्रेयसी की आँख, 6. फाँसी, 7. प्रेयसी के केशों का नारा, 8. बुद्धिमान, 9. ख़ूबसूरतों के बादशाह सुंदरियों की रानी, 10. तोहफ़ा, भेंट, 11. मूर्ति, सुंदरी, प्रेमिका, 12. उन्माद, 13. शराब पीने/मद्यपों का ढंग, 14. शराब की लाली, 15. मधुबाला, शराब पिलाने वाली, 16. मधुशाला वाले, 17. प्यास, 18. मधुशाला, 19. प्याला, 20. होंठ, 21. हृदय का टुकड़ा, 22. देश की धरती, 23. वीरान या सुनसान स्थान, 24. सुंदर मुखड़े वाले, 25. अंधकार, 26. एकाकीपन, 27. पतंगा, 28. प्रिय का चित्र या रूप

(2)

हम को जुनूँ[1] क्या सिखलाते हो, हम थे परेशाँ तुम से ज़ियादा
चाक[2] किए हैं, हमने अज़ीज़ो[3] चार गरेबाँ[4] तुम से ज़ियादा।
चाके-जिगर[5] मोहताजे-रफ़ू[6] है, आज तो दामन सिर्फ़ लहू है
इक मौसम था, हम को रहा है, शौक़े-बहाराँ[7] तुम से ज़ियादा।
अहदे-वफ़ा[8] यारों से निभाएँ, नाज़े-हरीफ़ाँ[9] हँस के उठाएँ
जब हमें अरमाँ तुम से सिवा था, अब हैं पशेमाँ[10] तुम से ज़ियादा।
हम भी हमेशा क़त्ल हुए और, तुम ने भी देखा दूर से लेकिन
ये न समझना हम को हुआ है, जान का नुक़्साँ[11] तुम से ज़ियादा।
जाओ तुम अपने बाम[12] की ख़ातिर, सारी लवें[13] शमओं[14] की कतर लो
ज़ख़्म[15] के महरो-माह[16] सलामत, जश्ने, चिराग़ाँ[17] तुम से ज़ियादा।
देख के उलझन ज़ुल्फ़े-दोता[18] की, कैसे उलझ पड़ते हैं हवा से
हम से पूछो, हम को है यारो, फ़िक्रे-निगाराँ[19] तुम से ज़ियादा।
ज़ंजीरो-दीवार ही देखी, तुम ने तो 'मजरूह', मगर हम
कूचा-कूचा देख रहे हैं, आलमे-ज़िंदाँ[20] तुम से ज़ियादा।

(1980)

---

1. उन्माद, 2. फाड़े है, 3. प्रियजनों, प्यारो, 4. कॉलर, वस्त्र का गले के पास का भाग, 5. फटा हुआ जिगर, 6. रफ़ू चाहता है, 7. वसंत ऋतुओं का शौक या प्रेम, 8. प्रेम निभाने की प्रतिज्ञा, 9. प्रतिद्वंद्वियों के नखरे, 10. लज्जित, पछताए, 11. हानि, 12. छत के लिए, 13. बाती, 14. अर्थात रोशनी करने के लिए, 15. घाव, 16. मेहर-सूर्य, माह-चाँद, माहचाँद : चाँद सूरज, 17. रोशनियों का जश्न, 18. प्रिय के केशों की, 19. सुदंरियों (देश) की चिंता, 20. क़ैद-खाने का-सा दृश्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृति शेष

इब्ने इंशा की ग़ज़लें

कल चौदहवीं की रात थी, शब भर रहा चर्चा तेरा
कुछ ने कहा यह चाँद है, कुछ ने कहा चेहरा तेरा

हम भी वहीं मौजूद थे, हम से भी सब पूछा किए
हम हँस दिए, हम चुप रहे, मंजूर था पर्दा तेरा

इस शहर में किस से मिलें, हम से तो छूटीं महफिलें
हर शख़्स तेरा नाम ले, हर शख़्स दीवाना तेरा

कूचे को तेरे छोड़कर जोगी ही बन जाएँ मगर
जंगल तेरे, पर्वत तेरे, बस्ती तेरी, सहरा तेरा

हम और रस्मे-बंदगी? आशुफ्तीगी? उफ़्तादगी
एहसान है क्या-क्या तेरा, ऐ हुस्ने-बेपरवा तेरा

दो अश्क जाने किसलिए, पलकों पे जाकर टिक गए
अल्ताफ़ की बारिश तेरी, एकराम का दरिया तेरा

ऐ बेदरेग़ो-बेअमाँ, हनने कमी की है फोग़ाँ
हम को तेरी बहशत सही, हम को सही सौदा तेरा

हम पर ये सख्ती की नज़र? हम हैं फक़ीरे-रहगुज़र
रस्ता कभी रोका तेरा? दामन कभी थामा तेरा

हाँ-हाँ तेरी सूरत हँसी, लेकिन तू ऐसा भी नहीं
उस शख़्स के अशआर से, शोहरा हुआ क्या-क्या तेरा

बेदर्द सुननी हो तो चल, कहता है क्या अच्छी ग़ज़ल
आशिक तेरा, रुस्वा तेरा, शायर तेरा, इंशा तेरा

कैफी आज़मी की ग़ज़लें

(1)

क्या जाने किसी की प्यास बुझाने किधर गईं
उस सर पे झूम के जो घटाएँ गुज़र गईं

दीवाना पूछता है यह लहरों से वार-वार
कुछ बस्तियाँ यहाँ थीं बताओ किधर गईं

अब जिस तरफ़ से चाहे गुज़र जाए कारवाँ[1]
वीरानियाँ तो सब मिरे दिल में उतर गईं

पैमाना टूटने का कोई ग़म नहीं मुझे
ग़म[2] है तो यह के चाँदन रातें बिखर गईं

पाया भी उन को खो भी दिया चुप भी यह हो रहे
इक मुख़्तसर[3] सी रात में सदियाँ[4] गुज़र[5] गईं

---

1. यात्री दल, 2. दुख, 3. संक्षिप्त, 4. शताब्दियाँ, 5. बीत गई

(2)

शोर यूँ ही न परिंदों ने मचाया होगा
कोई जंगल की तरफ शहर से आया होगा

पेड़ के काटने वालों को यह मालूम तो था
जिस्म जल जाएँगे जब सर पे न साया[1] होगा

बानी-ए-जश्न-ए-बहारा[2] ने यह सोचा भी नहीं
किसने काँटों को लहू[3] अपना पिलाया होगा

बिजली के तार पे बैठा हुआ हँसता पंछी
सोचता है के वोह जंगल तो पराया होगा

अपने जंगल से जो घबरा के उड़े थे प्यासे प्यासे
हर सराव[4] उन को समुद्र नज़र आया होगा

---

1. छाया, परछाई, 2. बसंत उत्सव के संस्थापक, 3. ख़ून, 4. मृग मरीचिका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बशीर बद्र की ग़ज़लें

(1)

कोई जाता है यहाँ से न कोई आता है
ये दिया अपने अँधेरे में घुटा जाता है

सब समझते हैं वही रात की क़िस्मत होगा
जो सितारा कि बुलंदी पे नज़र आता है

बिल्डिंगें लोग नहीं हैं जो कहीं भाग सकें
रोज़ इंसानों का सैलाब बढ़ा जाता है

मैं इसी खोज में बढ़ता ही चला जाता हूँ
किसका आँचल है जो कोहसारों पे लहराता है

मेरी आँखों में है इस अब्र[1] का टुकड़ा शायद
कोई मौसम हो सरेशाम बरस जाता है

दे तसल्ली जो कोई आँख छलक उठती है
कोई समझाए तो दिल और भी भर आता है

अब्र के खेत में बिजली की चमकती हुई राह
जाने वालों के लिए रास्ता बन जाता है

(1970)

---

1. बादल

(2)

यूँ ही बेसबब न फिरा करो, कोई शाम घर भी रहा करो
वो ग़ज़ल की सच्ची किताब है उसे चुपके-चुपके पढ़ा करो

कोई हाथ भी न मिलाएगा जो गले मिलोगे तपाक से
ये नए मिज़ाज का शहर है ज़रा फ़ासले से मिला करो

अभी राह में कई मोड़ हैं कोई आएगा कोई जाएगा
तुम्हें जिसने दिल से भुला दिया उसे भूलने की दुआ करो

मुझे इश्तहार-सी लगती हैं ये मुहब्बतों की कहानिय
जो कहा नहीं वो सुना करो जो सुना नहीं वो कहा क

कभी हुस्ने परदा नशीं[1] भी हो ज़रा आशिक़ाना लिबास ह
जो मैं बन सँवर के कहीं चलूँ मिरे साथ तुम भी चला क

नहीं बे हिजाब[2] वो चाँद-सा कि नज़र का कोई असर न ह
उसे इतनी गरमि-ए-शौक़ से बड़ी देर तक न तका क

ये ख़िज़ाँ की ज़र्द-सी शाल में जो उदास पेड़ के पास है
ये तुम्हारे घर की बहार है इसे आँसुओं से हरा क

(1977

---

1. पर्दादार प्रेमिका 2. बेशर्म

सम्पर्क–11, रेहाना कॉलोनी, ईदगाह हिल्स,
भोपाल-46001

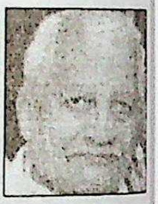

अदम गोंडवी की ग़ज़लें

(1)

काजू भुनी प्लेट में व्हिस्की गिलास में
उतरा है रामराज विधायक निवास में

पक्के समाजवादी हैं तस्कर हों या डकैत
इतना असर है खादी के उजले लिबास में

आज़ादी का वो जश्न मनायें तो किस तरह
जो आ गए फुटपाथ पर घर की तलाश में

पैसे से आप चाहें तो सरकार गिरा दें,
संसद बदल गई है यहाँ की नखास में

(2)

जनता के पास एक ही चारा है बगावत
यह बात कह रहा हूँ मैं होशोहवास में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भूख के अहसास को शे'रो-सुखन तक ले चलो
या अदब को मुफलिसों की अंजुमन तक ले चलो

जो ग़ज़ल माशूक के ज़ल्वों से वाकिफ हो गई
उसको अब बेवा के माथे की शिकन तक ले चलो

मुझको नज़्मों जब्त की तालीम देना बाद में
पहले अपनी रहबरी को आचरन तक ले चलो

गंगाजल अब बुर्जुआ तहजीब की पहचान है
तिश्नगी को वोदका के आचमन तक ले चलो

खुद को जख्मी कर रहे हैं, ग़ैर के धोखे से लोग
इस शहर को रोशनी के बांकपन तक ले चलो

(3)

सौ में सत्तर आदमी फिलहाल जब नाशाद है
दिल पे रखके हाथ कहिए देश क्या आज़ाद है

कोठियों से मुल्क के मेआर को मत आंकिए
असली हिंदुस्तान तो फुटपाथ पे आबाद है

जिस शहर में मुंतज़िम अंधे हों जल्वागाह के
उस शहर में रोशनी की बात बेबुनियाद है

ये नई पीढ़ी पे आयद है वही जज्मेंट दे
फलसफा गाँधी का मौजूँ है कि नक्सलवाद है

ये ग़ज़ल मरहूम मंटो की नज़र है दोस्तों
जिसके अफसाने में ठंडे गोश्त की रूदाद है

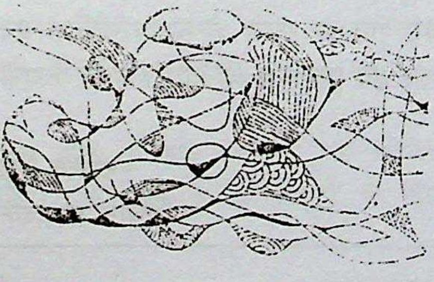

निदा फाज़ली की ग़ज़लें

हम हैं कुछ अपने लिए कुछ हैं ज़माने के लिए
घर से बाहर की फिज़ा हँसने-हँसाने के लिए

यूँ लुटाते न फिरो मोतियोंवाले मौसम
ये नगीने तो हैं रातों को सजाने के लिए

अब जहाँ भी हैं वहीं तक लिखो रुदादे-सफर[1]
हम तो निकले थे कहीं और ही जाने के लिए

मेज़ पर ताश के पत्तों सी सजी है दुनिया
कोई खाने के लिए है कोई पाने के लिए

तुमसे छूट कर भी तुम्हें भूलना आसान न था
तुमको ही याद किया तुमको भुलाने के लिए

1. कथायात्रा

शादाँ सिरौज़ी की ग़ज़लें

जब किसी घर के निगैहबान बदल जाते हैं।
ऐशो ईशरत के भी सामान बदल जाते हैं।

हमने देखी थी बदलते हुए आलम की फज़ा
ये खबर ही न थी इंसान बदल जाते हैं।

सामने आके कुछ इफलास के मारे बच्चे
सारी खुशहाली के उनवान बदल जाते हैं।

मुफलिसी हाय रे आग़ाज बुरा है तेरा
घर में आए हुए महमान बदल जाते हैं।

ग़मे जाना से कठिन है ग़मे रोज़ी 'शाँहा'
शौक तबीयत के भी इंसान बदल जाते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शहरयार की ग़ज़लें

(1)

शमूए-दिल, शमूए-तमन्ना न जला, मान भी जा
तेज आँधी है, मुख़ालिफ है हवा, मान भी जा

ऐसी दुनिया में जुनूँ, ऐसे जमाने में वफा
इस तरह खुद को तमाशा न बना, मान भी जा

कब तलक, साथ तेरा देंगे ये धुँधले साये
देख नादाँ न बन, मेरा कहा मान भी जा

ज़िंदगी में अभी खुशियाँ भी हैं, रा'नाई भी
ज़िंदगी से अभी दामन न छुड़ा, मान भी जा

शहर फिर शहर है, याँ जी तो बहल जाता है
शहर से भाग के सहरा को न जा, मान भी जा

फिर न कुछ होगा, अगर बाद में पछताया तू
वक़्त है अब भी ज़रा होश में आ, मान भी जा

(2)

की है कोई हसीन ख़ता[1] हर ख़ता के साथ
थोड़ा-सा प्यार भी मुझे दे दो सज़ा के साथ

गर डूबना ही अपना मुकद्दर[2] है तो सुनो
डूबेंगे हम ज़रूर मगर नाखुदा के साथ

मंज़िल से वोह भी दूर था और हम भी दूर थे
हमने भी धूल उड़ाई बहुत रहनुमा[3] के साथ
रक़्स-ए-सबा[4] के जश्न में हम तुम भी नाचते
ऐ काश तुम भी आ गए होते सबा[5] के साथ

इक्कीसवीं सदी की तरफ़ हम चले तो हैं
फ़ित्ने[6] भी जाग उठे हैं आवाज़-ए-पा[7] के साथ

ऐसा लगा ग़रीबी की रेखा से हूँ बुलंद
पूछा किसी ने हाल कुछ ऐसी अदा के साथ

सम्पर्क–101, शैफिना कैम्पलेक्स,
मेडिकल रोड, अलीगढ़ (उ.प्र.)

1. गलती, त्रुटि, 2. भाग्य, 3. मार्गदर्शक, 4. वायु का नृत्य, 5. वायु, 6. उपद्रव, 7. पांव की आवाज

शीघ्र प्रकाश्य परती पालर का एक और विशेष आकर्षण–'कोशी माटी के कथाकार विशेषांक' *के लिए कोशी क्षेत्र के मूल निवासी कथाकारों से उनके संक्षिप्त परिचय एवं पासपोर्ट साईज के हालिया फोटो सहित उनकी एक संवदेनापूर्ण संदेशपरक स्तरीय किंतु सर्वथा अप्रकाशित कहानी दिनांक* ***31 अगस्त, 2012*** *तक सादर आमंत्रित है। कहानी के अंतिम पृष्ठ पर रचना के सर्वथा मौलिक एवं अप्रकाशित होने के प्रमाणपत्र सहित रचनाकार का हस्ताक्षर एवं पूरा पता अनिवार्य। लम्बी कहानी स्वीकार्य नहीं।*

–नमिता सिंह
प्रधान सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. कुँअर बेचैन की ग़ज़लें

(1)

हक़ीक़त ही बताता है न अपना राज देता है
मुझे मेरे ही अंदर से कोई आवाज़ देता है

निकलकर घोंसलों से आसमानों को भी छू आएं
वो इस उम्मीद से हमको नये परवाज़ देता है

भले ही हम नहीं समझें इशारे, वो हमें लेकिन
हर इक अंज़ाम का पहले से ही आग़ाज़ देता है

हम उस पर प्यार के ही गीत गाएँ आख़िरी दम तक
यही कुछ सोचकर वो ज़िंदगी का साज़ देता है

सभी का एक जैसी ज़िंदगी जीना भी क्या जीना
वो अपने-अपने जीने का अलग अंदाज देता है

न उसके नाम से वाक़िफ़ न सूरत से, न सीरत से
यही क़ाफ़ी है मुझको भी कोई आवाज़ देता है

मेरे दिल में ये ग़ज़लें मौन रखकर बैठी रहती हैं
न जाने कौन है वो, जो इन्हें अल्फाज़ देता है

(2)

बेखुदी में तू ही तू गाता था इकतारे के साथ
यूँ तो कितनी भीड़ थी उस मस्त बंजारे के साथ

पत्थरों को पूजने वालों से इतना पूछिए
क्या कभी बैठे हैं दो पल भी थके-हारे के साथ

ज़िंदगी का कोई तो इक फलसफा तय कीजिए
साथ पारे ही के रहना है कि ध्रुवतारे के साथ

यूँ तो सब ही साथ थे पर कोई भी मेरा न था
मेरे रिश्ते यूँ थे जैसे ख़त हों हरकारे के साथ

घर का बँटवारा हुआ तो घर का आँगन रो पड़ा
दिल भी कितने बँट रहे थे घर के बँटवारे के साथ

आपका वो बात सुनने का सलीक़ा क्या हुआ
आप जब औरों के दुख सुनते थे हुंकारे के साथ

मौत के मारे हुए को तो कई काँधे मिले
कौन चलता है 'कुँअर' यूँ वक़्त के मारे के साथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भगवान दास ऐजाज की ग़ज़लें

(1)

सच कहते घबराते लोग।
झूठी कसमें खाते लोग॥

चाँद ईद का अपनी छत से।
कितनों को दिखलाते लोग॥

गैरों की शह पर बच्चों से।
अपना घर फुंकवाते लोग॥

जाल में अपने खुद फँस जाते।
अफवाहें फैलाते लोग॥

नेताओं के साथ बैठ कर।
तस्वीरें खिंचवाते लोग॥

काम कहीं फँस जाए किसी का।
उँगली पर नचवाते लोग॥

साथ हमारे चलते-चलते।
कहाँ गैब हो जाते लोग॥

बुरे भले दिन सब पर आते।
हमसे क्यों कतराते लोग॥

शहर है या भूतों का डेरा।
दिन चढ़ते सो जाते लोग॥

मुँह तकते रहते ऐजाज़।
किस्मत पर झुँझलाते लोग॥

(2)

लोग कहते रहे मर गया।
जी नहीं, थक गया, घर गया॥

जो था आधा भरा तर गया।
भर गया वो कनस्तर गया॥

उलझा-उलझा-सा देखा उसे।
उसका दुनिया से जी भर गया॥

लोग बुद्धू समझते रहे।
वो इशारा कोई कर गया॥

उसके घर को जमीं खा गई।
धड़ सलामत रहा सर गया॥

घर से कैसे निकालूँ उसे।
दिल का जीना उतर कर गया॥

सिर्फ कुत्ता ही रोता रहा।
कोई झुग्गी में था मर गया॥

अब ना ऐजाज़ ढूँढ़े मिले।
बाँध कर अपना बिस्तर गया॥

गुलज़ार की ग़ज़लें

जब भी ये दिल उदास होता है
जाने कौन आसपास होता है

आँखें पहचानती हैं आँखों को
दर्द चेहरा-शनास होता है

गो बरसतीं नहीं सदा आँखें!
अब्र तो बारह मास होता है

छाल पेड़ों की सख़्त है लेकिन
नीचे नाखून के मास होता है

जख़्म कहते हैं दिल का गहना है
दर्द दिल का लिबास होता है

डस ही लेता है सब को इश्क कभी
साँप मौका-शनास होता है

सिर्फ उतना करम किया कीजे
आपको जितना रास होता है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रो. भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज़' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : प्रो. भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज़'
पता : एफ.एफ.-4, बी-ब्लॉक, सनपावर फ्लैट्स, गुरुकुल रोड, अहमदाबाद-380052

(1)

ज़ईफी का ये आलम भी क्या आलम है?
ख़ुशी तो दूर जहाँ देखो बस वहाँ गम है।

वह फिर भी आके हालचाल पूछ लेते हैं,
ख़ुदा का शुक्र मेरे वास्ते ये क्या कम है।

इक ज़माना था शम्मा इंतजार करती थी
एक दिल है कि उस की आँख भी हुई नम है।

मैं पूछता हूँ क़यामत से जरा तू ही बता,
जो तुझ को रोक सके कौन है जिसमें खम है।

मेरा मयार मगर यूँ नहीं मरने वाला
ज़िंदगी में जो किया है वह मेरा हमदम है।

(2)

मैं चला जाऊँगा बस याद ही रह जाएगी,
वक्त वेवक्त वो आकर तुम्हें सताएगी।

न था मैं जब, तब भी याद तो आती ही थी,
करीब अब, हूँ तो क्यूँ दिल को छूके जाएगी।

ज़माना हमने बहुत देखा है और देखेंगे,
किसलिए हमको फिर मायूसी नज़र आएगी।

शाम के बाद भी लाली दिखाई देती है,
रौशनी उसकी हमें रास्ता दिखाएगी।

जितना जीना है वो मस्ती से जियो मेरे नियाज,
गुजरी जो ज़िंदगी वो लौट के न आएगी।

(3)

चराग़ फिर से जलाओ कि रात बाकी है,
रुकेगी और अभी कायनात बाकी है।

मैं दीवाना नहीं हूँ कि फना हो जाऊँ,
मेरे हबीब की जब सारी बात बाकी है।

रात आयी है तो सुबह तो होगी ही सनम,
रोशनी किरनों से आए बिसात बाकी है।

मेरे पहलू में कभी बैठते थे आ आकर,
आज भी प्यार की वो मुलाक़ात बाकी है।

चलो यूँ ही सही, तुम फेर लो मुझसे आँखें,
मेरी तसल्ली की ख़ातिर वो याद बाकी है।

तुमको देखें कि तुमसे बात करें बोलो 'नियाज़',
यूँ तो अफसानों की सारी जमात बाकी है।

(4)

तुम्हारे प्यार की सूरत नज़र नहीं आती।
गुले-बहार की सूरत नज़र नहीं आती।

हमें तो तुमने बना डाला अपना दीवाना।
चश्म-तर होने की सूरत नज़र नहीं आती।

ज़माना था कि पहुँचे थे मैकदे में हम,
अब तो इक जाम की सूरत नज़र नहीं आती।

ये बुलबुलों से कहो अब न वे यहाँ आएँ,
बहार आने की सूरत नज़र नहीं आती।

ये बेरुख़ी कैसी कि फेर लीं आँखें
तेरी मुसकान की सूरत नज़र नहीं आती।

तुम को देखे कि तुमसे बात करें, बोलो 'नियाज़'
हमें मज़ार की सूरत नज़र नहीं आती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजेन्द्र नाथ रहबर की ग़ज़लें

परिचय
नाम : राजेन्द्र नाथ रहबर
शिक्षा : एम.ए., एल.एल. बी
संपर्क : 1085, सराय मुहल्ला, पठानकोट-145001
मो. : 094170-67191
फोन नं. : 0186-2227522

(1)

क्या करे एतिबार अब कोई
रूठ जाए न जाने कब कोई

वो तो खुशबू का एक झोंका था
उसको लाए कहाँ से अब कोई

क्यों उसे हम इधर-उधर ढूँढें
दिल ही में बस रहा है जब कोई

प्यार से कह के हम को दीवाना
दे गया इक नया लक़ब कोई

उस से क्या अपनी दोस्ती 'रहबर'
वो समझता है खुद को रब कोई

(2)

ईद का चाँद हो गया है कोई
जाने किस देस जा बसा है कोई

एक दिन मैं खुदा से पूछूँगा
क्या ग़रीबों का भी ख़ुदा है कोई

इक मुझे छोड़ के वो सब से मिला
इस से बढ़ के भी क्या सज़ा है कोई
दिल में थोड़ी-सी खोट रखता है
यूँ तो सोने से भी खरा है कोई

तुम ही अब जा के सो रहो 'रहबर'
ये न सोचो कि जागता है कोई

(3)

इक आग तन-बदन में लगाती है चाँदनी
हाँ दिलजलों को और जलाती है चाँदनी

नग़मे मुहब्बतों के सुनाती है चाँदनी
जादू खुली छतों पे जगाती है चाँदनी

आती है दिल को एक शबे-दिलनशीं की याद
जब साहिलों पे धूम मचाती है चाँदनी

पुर दर्द लय में पिछले पहर इक उदास गीत
महरूमियों के साज़ पे गाती है चाँदनी

सैरे चमन को तुम जो निकलते हो रात को
फूलों से रास्तों को सजाती है चाँदनी

(4)

मुंतज़िर बैठे हुए हैं शाम से
और हम वाक़िफ़ भी हैं अंजाम से

मिले जब तुम तो कैसा काम फिर
घर से हम निकले थे यूँ तो काम से

जो पिता के हुक्म का पालन करे
अब कहाँ बेटे जहाँ में 'राम' से

भर गया काँटों से दामन प्यार में
दिल मेरा वाक़िफ़ न था अंजाम से

आ मेरी गहराइयों में डूब जा
कह रही है ये सुराही जाम से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रो. भगवानदास जैन की ग़ज़लें

(1)

कुछ हसीं सपने दिखाकर चंद रोज़।
छल किया अपना बनाकर चंद रोज़।

ज़ीस्त क्या है जान लेगा, घूम ले,
लाश काँधे पर उठाकर चंद रोज़।

इन दिनों है मौत का बाज़ार गर्म,
ज़िंदगी है कुल मिलाकर चंद रोज़।

साल भर में तीज-त्योहारों के दिन,
छूट है तू हँस लिया कर चंद रोज़।

हो गया बरगद बहुत बूढ़ा अगर,
फर्ज़ कुछ तू भी अदा कर चंद रोज़।

उम्र सिज़दों में ही गुज़री रायगाँ,
अब तो जी लें सिर उठा कर चंद रोज़।

हश्र क्या तैमूरो नादिर का हुआ,
देख तू भी ज़ुल्म ढा कर चंद रोज़।

(2)

राख का ढेर सही उसमें भी आतिश होगी।
हाथ जल जाएगा छूने की जो कोशिश होगी।

वो लबेदम है मगर रूह निकलती ही नहीं,
उसके दिल में अभी हसरत कोई ख़्वाहिश होगी।

हर तरफ़ आज फ़लकबोस उठी दीवारें,
फिर भी नाकाम नहीं मेरी गुज़ारिश होगी।

नक़्शा-ए-मुल्क सही आप जो देखा चाहें,
देखिए आके मेरे घर को नवाजिश होगी।

लौट आ दैरोहरम से मेरे साथी लौट आ,
वर्ना बेमौत मरेगा वहाँ साज़िश होगी।

जिनमें क़िस्मत की गुलामी की लकीरें होंगी,
ऐसे हाथों की न अब मुझसे सिफ़ारिश होगी।

□

परिचय

नाम : प्रो. भगवानदास जैन

जन्म तिथि : 1 मार्च, 1938, अहमदाबाद

शिक्षा : एम.ए. (प्रथम श्रेणी) गुज. हिंदी साहित्य रत्न (प्रयाग)

प्रकाशित कृतियाँ : 1. रोशनी की तलाश, 2. आस्था के स्वर (कविता-संग्रह) **ग़ज़ल-संग्रह :** 3. ज़िंदा है आईना, 4. कटघरे में हूँ, 5. देख नज़ारे नई सदी के, 6. ज़िंदगी के बावजूद

सहयोगी काव्य संकलन : डेढ़ दर्जन से अधिक

कुछ उल्लेख्य : समकालीन हिंदी कविता-गुजरात, पछुआँ के हस्ताक्षर, बहुरंगी हिंदी ग़ज़लें, गुजरात की समकालीन हिंदी कविता, संवेदना के स्वर, ग़ज़ल—दुष्यंत के बाद (भाग-1), गीत हमारे-अर्थ तुम्हारे, कलियों को खिलने दो, सामाजिक चेतना-काव्य-मंजूषा, 'शब्द सृष्टि' का अखिल भारतीय ग़ज़ल-विशेषांक का संपादन।

साहित्यिक समीक्षात्मक आलेख : शताधिक प्रकाशित

संप्रति : सेवानिवृत्त; एकांत रूप से काव्य-सृजन में प्रवृत्त

संपर्क-सूत्र व दूरभाष : बी-105, मंगल तीर्थ पार्क, कैनाल के पास, जशोदानगर रोड, मणीनगर (पूर्व), अहमदाबाद-382445

दूरभाष (घर) : 079-25835618

मो. : 09426016862

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चन्द्रसेन विराट की ग़ज़लें

परिचय

नाम : चन्द्रसेन विराट
शिक्षा : 1958 में नागरी यांत्रिकी में स्नातक
संप्रति : म.प्र. शासन लोक निर्माण विभाग में अधीक्षण यंत्री के पद से सेवानिवृत्त, सेवानिवृत्ति वर्ष 1994 अंत में।
कृतियाँ : 1. गीत-संग्रह-13, 2. हिंदी ग़ज़ल-संग्रह-10, 3. मुक्तक-संग्रह-5, 4. दोह-संग्रह-2,
संपादन-कविता संग्रह-7
संपर्क सूत्र : 121, वैकुण्ठधाम कॉलोनी, इन्दौर, 452018 (म.प्र.)
फोन : 0731-2562586, 256423
मोबाइल : 09329895540

(1)

कौन जिसने बात यह जानी मगर मानी न हो
ज़िंदगी हो और कोई भी परेशानी न हो

दुख न जग का गा सके वह एक सच्चा कवि नहीं
प्यास होंठों पर न जिसके, आँख में पानी न हो

खूब खिलता है प्रिया का रूप हर परिधान में
आँख भरती ही नहीं पर रंग यदि धानी न हो

प्रेम से वंचित महारानी बनी दासी रही
प्रेम पाकर इक मजूरन क्यों महारानी न हो

मोल ले गोविंद को जो और गिरिधर को वरे
यह नहीं संभव कि मीरा प्रेम-दीवानी न हो

आदमी की ज़िद कि वह सपने सजाएगा सतत
क्या जरूरी आसमानी या कि सुलतानी न हो

बंधुवर! उसको नया हीरा कभी मिलता नहीं
ख़ाक जिसने भी खदानों की कभी छानी न हो

वह सफ़र पूरा करोगे तो खुशी होगी अधिक
मुश्किलें जिसमें अधिक हों औ आसानी न हो

ज़िंदगी! तू क्यों बुलाती खूब आग्रह से उसे
मौत आती ही नहीं है, वह अगर आनी न हो

व्यक्ति केवल योग्यता से हो सफल, संभव नहीं
भाग्य की उस पर अगर कोई मेहरबानी न हो

शांत हो सागर तरी को ऊब होती है बहुत
वह सुहाता ही नहीं जब तक कि तूफानी न हो

प्यार में संकल्प बाजीराव का कितना बड़ा
पेशवाई जाए पर अब दूर मस्तानी न हो

(2)

कहीं भीतर हुआ है घाव दिखलाया नहीं जाता
हृदय में दर्द इतना है कि बतलाया नहीं जाता

न पूछें आप कुछ मुझसे, स्वयं ही देख लें नाड़ी
समझ लें आप समझें तो कि समझाया नहीं जाता

हुआ अनुभूत तो लेकिन, नहीं वह शब्द में बँधता
यही है गीत गूँगे का जिसे गाया नहीं जाता

न आती नींद मुझको तो तुम्हारे रूप का सपना
विवश है चाहता आना मगर आया नहीं जाता

तुम्हारे रूप की अभ्यर्थना की है, तुम्हें गाया
तुम्हारा नाम होठों तक मगर लाया नहीं जाता

सुबह से निर्जला एकादशी का व्रत तुम्हारा है
परोसा प्यार से मुझसे मगर खाया नहीं जाता

सवारी चाँर काँधों की जरूरी है पहुँचने को
जहाँ तुम जा रहे, पैदल वहाँ जाया नहीं जाता

न छोड़ा कीर्तन करना, प्रणय का, रूप का अब तक
बहुत हैं गीत-कवि, हमसा हठी पाया नहीं जाता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विज्ञान व्रत की ग़ज़लें

परिचय

नाम : विज्ञान व्रत
जन्म : 17 अगस्त 1943
जन्म स्थान : ग्राम-तेड़ा, मेरठ (उ.प्र)
शिक्षा : एम.ए.फाइन आर्ट (आगरा), डिप्लोमा इन फाइन आर्ट (राज.)
कृतियाँ : 'बाहर धूप खड़ी है, 'चुप की आवाज', 'जैसे कोई लौटेगा', 'तब तक हूँ' (सभी ग़ज़ल संग्रह)। एक उपन्यास, एक ग़ज़ल संग्रह और एक बाल गीत संग्रह प्रकाशनाधीन। 'सप्तपदी' (दोहा संग्रह) में दोहे तथा पेंटिंग्स के आधार पर कैलेंडर का प्रकाशन।
संप्रति : स्वतंत्र लेखन एवं पेंटिंग्स।
संपर्क : एन-138, सेक्टर-25, नोएडा-201301 (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2535138, **मो.**-09810224571

(1)

क्या रखवाले क्या दरबान
ख़ाली घर हूँ बेसामान

दिल में मंज़िल का अरमान
पर हूँ रस्ते से अनजान

रोज़ सुबह हो जाता है
मुझमें कोई घर वीरान

तहरीरें ही तहरीरें
पर सबकी-सब बे-उन्वान

सारी दुनिया एक-जुबान
जीना मरने का सामान

(2)

जब तक एक विवाद रहा मैं
तब तक ही आबाद रहा मै

महलों के लफ़्फ़ाज़ कँगूरे
गूँगी-सी बुनियाद रहा मैं

काल-पात्र में ज़िक्र नहीं था
लेकिन सबको याद रहा मैं

उनकी सब परिभाषाओं में
एक प्रखर अपवाद रहा मैं

शब्दों के उस कोलाहल में
अनबोला संवाद रहा मै

(3)

मैं खिड़की वो परदा है
देखो तो क्या रिश्ता है

अबके उसने खुद को भी
और नज़र से देखा है

उसने अपना नाम-पता
अकसर खुद से पूछा है

अबकी बार निशाने को
वो दानिस्ता चूका है

रोज़ बदल जाता है जो
किस दुनिया का नक़्शा है

(4)

आँगन में है चीख़-पुकार
दरवाज़े पर बंदनवार

सब दरवाज़े बेसाँकल
और अकेला चौकीदार

रोज़ नई शर्तों पर ही
साँसें मिलतीं आज उधार

एक ज़माना जीने को
दिन हैं गिनती के दो-चार

उसने ही अहसान किया
होकर मेरा शुक्रगुज़ार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जहीर कुरैशी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : जहीर कुरैशी
जन्म तिथि : 5 अगस्त, 1950 ई.
जन्म स्थान : चन्देरी (जिला-अशोक नगर), मध्यप्रदेश
शिक्षा : स्नातक
रचना काल : 1965 से अब तक...अविराम
लेखन की मूल विधा : हिंदी ग़ज़ल
प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह : 1. 'लेखनी के स्वप्न' (1975), 2. 'एक टुकड़ा धूप' (1979), 3. 'चाँदनी का दुःख' (1986), 4. 'समंदर ब्याहने आया नहीं है' (1992), 5. 'भीड़ में सबसे अलग' (2003), 6. 'पेड़ तन कर भी नहीं टूटा' (2010)
संपर्क : समीर, कॉटेज, बी-21, सूर्यनगर, शब्द-प्रताप आश्रम के पास, ग्वालियर-474012 (म.प्र.)

(1)

जब दुआ के स्वर निकलते हैं,
सत्य, शिव, सुंदर, निकलते हैं।

वो सुबह की सैर करने भी,
वायुयानों पर निकलते हैं।

हो गए पूरी तरह निर्भय,
मन से ज्यों ही डर निकलते हैं।

बेचने को रूप का जादू,
खूब सज-धज कर निकलते हैं।

आपने हीरे बना डाले,
खान से पत्थर निकलते हैं।

हम उठा पाए न उनका लाभ,
रोज ही अवसर निकलते हैं।

रात भर होती है तैयारी,
तब कहीं दिनकर निकलते हैं।

(2)

कैद आँखों में खुद नमी कर ली,
मुस्कुराने की नौकरी कर ली।

अपने आँगन के बीच में उसने,
ऊँची दीवार भी खड़ी कर ली।

झील कितनी पवित्र दिखती है,
तल में एकत्र गंदगी कर ली!

सर्जरी से बदल गया चेहरा,
उसने पहचान फिर नई कर ली!

अब जरूरत नहीं है मुखबिर की,
जब्त मुजरिम की डायरी कर ली!

वो घड़ी हो या कीमती कंगन,
खुद पसंद उसने हथकड़ी कर ली।

आदमी क्यों चुराएगा सपने,
जिसने सपनों की तस्करी कर ली?

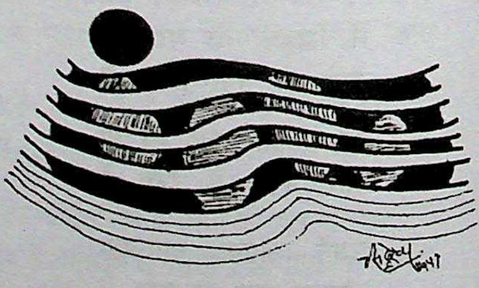

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इब्राहीम 'अश्क' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : इब्राहीम खान गौरी
उपनाम : 'अश्क'
जन्म : 20 जुलाई 1951
मुलतानपुरा, मंदसौर (म.प्र.)
शिक्षा : एम.ए. (प्रथम वर्ष)
पत्रकारिता : 4 वर्ष दैनिक 'इंदौर समाचार', 6 वर्ष शमा/सुषमा, 2 वर्ष सरिता ग्रुप में इलहाम, आगही, करबला, आलाव (शाइरी) अंदाज़े-बयां और अल्लामा इक़बाल तनक़ीदी शऊर (समालोचना), रामजी का दुख (कहानियाँ) बिजूका, नया मंज़रनामा, आसमां अकेला (संपादन)
साहित्य : लालन और चहारन जैसी नई विधा की रचना संगीत के आधार पर अरूज़ को ढालना, 10 नई बह्रों की रचना, ग़ज़ल, नज़्म, मरसिया, सलाम, दोहा, कसीदा, मसनवी, गीत, रुबाई, माहिया—ग़ज़ल, बग़ैर नुक्तों की शायरी के तजरूबात
फिल्म : कहो ना प्यार है, कोई मिल गया, क्रिश, दस कहानियाँ, वेलकम, ब्लैक एण्ड व्हाइट, आप मुझे अच्छे लगने लगे, जांनशीन, कोई मेरे दिल से पूछे, ये तेरा घर ये मेरा घर, बहार आने तक, जीना मरना तेरे संग, दो पल, धुंध घुटन में गीत लेखन, 700 से ज़्यादा प्राइवेट अलबम में रचनाओं की रिकार्डिंग।
संपर्क—सी-3, फ्लैट नं. 310, अलनसार, मिल्लत नगर, अंधेरी (पूर्व), मुंबई-400053 (महाराष्ट्र)

(1)

पेड़ों की शाख़ों पर जब फल आने लगते हैं
दुनिया वाले सब पत्थर बरसाने लगते हैं

अपनी नादानी का आलम क्या बतलाएँ हम
रस्ते चलते लोग हमें समझाने लगते हैं

करना पड़ता है भुगतान जहाँ में साँसों का
क़दम-क़दम पर जीने के हरजाने लगते हैं

जाल पड़े हैं झुर्री के जो अपने हाथों में
कुदरत के ये बुने हुए दस्ताने लगते हैं

अपने आप से ऐसे भी पहचान बदलती है
कभी-कभी हम खुद को भी अनजाने लगते हैं

कोई तसव्वुर जिसका अपने दिल में होता है
उसकी सूरत देख के हम मर जाने लगते हैं

(2)

कड़ी है धूप जहाँ प्यास ले के आया हूँ
वतन से अपने मैं बनवास ले के आया हूँ

समुंदरों की ये गहराइयाँ है कम जिस से
मैं अपने दिल में वो अहसास ले के आया हूँ

महकता रहता है मेरे जुनूँ से ये आलम
के साथ मिट्टी की बू-बास ले के आया हूँ

बुलंद रखे मेरा सिर तो है कमाल तेरा
अना मैं अपनी तेरे पास ले के आया हूँ

उड़ा तो एक जहाँ था मेरी उड़ानों में
गिरा तो साथ में आकाश ले के आया हूँ

हज़ारों साल की तहज़ीब से बना हूँ मैं
हज़ारों साल का इतिहास ले के आया हूँ

(3)

ये और बात के हालात का शिकार रहा,
हर इक क़दम पे मुझे इश्क़ का खुमार रहा।

वो एक लम्हा जो गुज़रा नहीं, गुज़रना है,
वो एक लम्हा ज़माने में यादगार रहा।

हर एक बार दिया है मुझे फ़रेब उसने,
हर एक बार मुझे उसका एतबार रहा।

वो एक पल के लिए भी कभी नहीं आया,
मेरा ये हाल के सदियों का इंतज़ार रहा।

दुआ किसी की हो मिल जाए तो गनीमत है,
ये वो शजर है हमेशा जो सायादार रहा।

न कोई क़ब्र में ढूँढे के मैं तो शाइर हूँ,
हर एक शे'र मेरी फ़िक्र का मज़ार रहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंसार क़ंबरी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : अंसार क़ंबरी
जन्म : 3.11.1950, कानपुर
शिक्षा : स्नातक
लेखन : ग़ज़ल, गीत, दोहे, मुक्तक व यदा-कदा आलेख एवं पुस्तक समीक्षा
प्रकाशन : प्रायः देश की सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं एवं अनेक समवेत संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित
संप्रति : उद्योग निदेशालय, उत्तर प्रदेश, कानपुर से संबद्ध
संपर्क : 'ज़फ़र मंज़िल' 11/116, ग्वालटोली, कानपुर-208001
मो. : 9450938629 E-mail–ansarqumbari@gmail.com

(1)

ऐसे न फेंक अब यहाँ पत्थर उछाल कर
शीशे के हैं मकान ज़रा देख-भाल कर
अमृत का कोई और कलश भी छिपा न हो
देखो फिर एक बार समंदर खँगाल कर
क़ातिल है कौन इसका मुझे कुछ पता नहीं
मैं फँस गया हूँ लाश से ख़ंजर निकाल कर
एहसान के जताने से कुछ फ़ायदा नहीं
नेकी को भूल जाइए दरिया में डाल कर
मैं क्या हूँ, क्या नहीं हूँ, इसे जानते हैं सब
अब 'क़म्बरी' से दूसरा कोई सवाल कर

(2)

फूल क्या काँटे भी तो सस्ते नहीं हैं दोस्तो
इसलिए सब लोग अब हँसते नहीं हैं दोस्तो
खिड़कियों से झाँकिए मत अब सड़क पर आइए
हाथ में पत्थर हैं गुलदस्ते नहीं हैं दोस्तो
हम सभी ने एक-सी तालीम पाई है यहाँ
पेट कसते हैं, कमर कसते नहीं हैं दोस्तो
एक से झंडे दिखाई दे रहे हैं दूर तक
हर तरह के लोग अब बसते नहीं हैं दोस्तो
इनपे गंगुवा भी चलेगा और राजा भोज भी
ये किसी के पैतृक रस्ते नहीं हैं दोस्तो

(3)

कोई रहजन न कोई राहबर था
हमें लूटा है जिसने हमसफ़र था
जो तूफ़ाँ थम गया, उठने से पहले
हमारे डूब जाने का असर था
मुझे तूने ही जो चाहा बनाया
मैं जब दुनिया में आया बेख़बर था
उसे भी ले गया सूरज चुरा कर
जो ख़्वाबों में हमारे रातभर था
उन्हीं लोगों ने मारा 'क़ंबरी' को
कि जिनका हाथ उसकी पीठ पर था

(4)

जागने का जब था अवसर सो गया
आदमी बेवक़्त अक्सर सो गया
फिर फ़सादों से सहमकर सो गया
अम्न का प्यारा कबूतर सो गया
जब मिला ख्वाबों का बिस्तर सो गया
ओढ़ कर यादों की चादर सो गया
फिर नदी का करते-करते इंतज़ार
प्यास का मारा समंदर सो गया
मेरे क़ातिल को न जाने क्या हुआ
रख के मेरे पास ख़ंजर सो गया
राहबर जागा तो सोया क़ाफ़ला
क़ाफ़ला जागा तो रहबर सो गया
घर का मुखिया रात भर जागा किया
भूख की आग़ोश में घर सो गया
भूल कर वो सब पुरानी रंज़िशें
आईने के साथ पत्थर सो गया
कुछ अधूरी हसरत दिल में लिए
प्यार फिर सूली पे चढ़कर सो गया
धूप में जो चल रहा था साथ-साथ
मिल गई छाया तो रुककर सो गया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' की ग़ज़लें

(1)

हर सिम्त खुले चाकू हर सू हैं तने ख़ंजर
जाएँ तो किधर जाएँ पुरख़ौफ हैं ये मंज़र

घर छोड़के हम अपना, इस शहर में आए थे
शीशे की दुकानों में रिश्तों के मिले दफ़्तर

इंसानों की बस्ती में रहते वो .ख़िरद[1] वाले
जज़्बात की लाशों पर जो .फेंकते हैं पत्थर

गुलशन में खुदा हाफ़िज़ सरसब्ज निहालों[2] का
तूफ़ाँ में सभी उखड़े जो नख़्ल[3] थे क़द्दावर

उस शहर में क्या कोई करता न ख़रीदारी
दहक़ानों[4] के दर पे अब आने लगे सौदागर

इस राह में बैठे हो क्यूँ आँख बिछाए तुम
अर्से से इधर कोई लौटा न कभी जाकर

किस-किस को दुआ दीजे, किस-किस की दवा कीजे
बीमारों के टोले में बीमार ही चारागर[5]

---

1. बुद्धि, 2. अंकुर, 3. वृक्ष, 4. कृषकों, 5. चिकित्सक

(2)

मत पूछ कि तय कैसे सफ़र हमने किया है
ता-उम्र बयाबाँ में बसर हमने किया है

जिस दर्द की नूरानी[1] में घुलती न सियाही
उस दर्द का आग़ाज़े-सहर[2] हमने किया है

दिन-रात पसीने की नदी हमने बहाई
जलते हुए सहरा को बह्‌र हमने किया है

ग़र्क़ाब[3] समुंदर में हुए शम्सो-क़मर[4] भी
कहते थे जो अफ़लाक[5] पे घर हमने किया है

पाँवो के तले उगने लगे धूप के शो' ले
वीराने में साया-ए-शजर[6] हमने किया है

जो आँख से चलकर कभी आरिज़[7] पे न पहुँचा
उस अश्क के क़तरे को गुहर[8] हमने किया है

पत्थर भी जिसे सुनके पिघलने को है बेबस
अशआर में पैदा वो हुनर हमने किया है

---

1. रोशनी, 2. सुबह की शुरुआत, 3. जलमग्न, 4. सूर्य-चन्द्र, 5. आकाश का बहुवचन, 6. वृक्ष की छाया, 7. कपोल, 8. मोती

परिचय

नाम : देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'

जन्म तिथि : 1.4.1934

'नए दोहाकार' एवं 'नवगीतकार' के रूप में प्रख्यात कवि। नवगीत संग्रह-12; खंड काव्य-1; दोहा संग्रह-3, संपादित कविता संग्रह-1, संपादित दोहा-संग्रह-19.25, सप्तपदी-सात खंडों में शृंखलाबद्ध दोहों का संग्रह; 2002 ई. में ग़ज़ल संग्रह, 'धुएँ का पुल' विशेष रूप से चर्चित।

संपर्क : 10/61 सेक्टर-III, राजेन्द्र नगर साहिबाबाद, गाजियाबाद-201005 (उ.प्र.)

डॉ. राजकुमार निजात की ग़ज़ल

(1)

हम तो काँटों के जंगल में फूल खिलाने आए हैं
सबको मतवाला कर दे वो गीत सुनाने आए हैं

अपनों के अपने हैं हम तो ग़ैरों के भी अपने हैं
अनजानी राहों को अपना मीत बनाने आए हैं

लेकर पीर पराई दिल में हम बस्ती में फिरते हैं
होंठों की मुस्कान बाँटकर अश्क चुराने आए हैं

दर्द हमारे हिस्से में गर आता है तो आने दो
हम प्यासे दरियाओं की भी प्यास बुझाने आए हैं

हिचकी आती है तो आए दिल की दिल से कह डालो
हम आए हैं तो महफ़िल में रंग ज़माने आए हैं

तेरी आँखों में सपनों की एक निराली दुनिया है
तुझको तेरे सपनों का कुछ मोल बताने आए हैं

तुम माज़ो[1] के हुनरबाज़ हो हम हैं कल के जादूगर
इसीलिए हाथों में लेकर नए ज़माने आए हैं

मैं 'निजात' तेरे क़दमों की आहट सुनकर चौंक गया
नए वक़्त के साथ वही अंदाज़ पुराने आए हैं

---

1. माज़ी—बीता हुआ कल

संपर्क : कंगनपुर रोड, कीर्तिनगर,
सिरसा-125055 (हरि.) मो. 09416729760

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. हरिराज सिंह 'नूर' की ग़ज़लें

(1)

हर मुश्किल में, आसानी में तुम रहना मेरे साथ।
जीवन की शाम सुहानी में तुम रहना मेरे साथ॥

रिश्तों की वुस्अत अपनाकर, लेकर चाहत के रंग।
हर क़िस्से और कहानी में तुम रहना मेरे साथ॥

सुख-दुख में साए की सूरत, जीवन की राहों पर।
जज़्बों के गहरे पानी में तुम रहना मेरे साथ॥

क्यों ख़ौफ सताएगा मुझको, रिश्तों के मिटने का।
यादों की रूत तूफ़ानी में तुम रहना मेरे साथ॥

भावों की कोमल भाषा से जब मौसम गाए गीत।
आशा की राह पुरानी में तुम रहना मेरे साथ॥

जब तक सागर में लहर उठे साहिल से करने प्यार।
तब तक ग़म की तुग़ियानी में तुम रहना मेरे साथ॥

क्या संध्या और सवेरा क्या, तय अपना सफ़र करना।
बस 'नूर' सरा-ए-फ़ानी में तुम रहना मेरे साथ॥

परिचय

नाम : डॉ. हरिराज सिंह 'नूर'
जन्मतिथि/स्थान : 8.9.1943 (मुरादाबाद)
शिक्षा : एम.एस.सी, पी-एच डी.
व्यवसाय/पूर्व पद : यूनिवर्सिटी प्रोफेसर/ पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
उस्ताद : डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज'
लेखन विधाएँ : कविता गीत, कहानियाँ
प्रकाशित कृतियाँ : 1. मेरे घोंसले का शिल्प (कविता संग्रह), 2.'दूर उस पार' (कविता संग्रह), 3. 'प्रश्न व्यास' (कविता संग्रह), 4. 'आई हैव नो मिरर' (अंग्रेजी कविता संग्रह), 5. 'नील गगन की ओर' (गीत संग्रह), 6. 'तारों की अंजुमन (ग़ज़ल संग्रह)
वर्तमान पता : 3/33 श्रद्धापुरी, फेज-1, मेरठ-250001, (उ.प्र.)
मो. : 941003582 फोन-0121-2556957
Email: profsinghhr@yahoo.co.in

(2)

अख़बार में छपे हैं क़िस्से वही पुराने।
मिटती कहीं पे क़द्रें, लुटते कहीं ख़ज़ाने॥

यह दिन तो ईद का है, मिलते नहीं गले क्यों?
डरने की बात क्या है, क्यों कर रहे बहाने?

मायूसियों का दामन अब छोड़ दें यहीं हम।
कुछ ख़्वाब ले के घर से निकलें कहीं सजाने॥

ऐ दोस्त कुछ बता दे, तू क्या इरादा लेकर?
ख़ामोश रात में भी किस को चला सताने??

सब मुन्तज़िर हैं कब से वो रहनुमा तो आए।
भटके हुओं को रस्ते आएँ जिसे दिखाने॥

अपने शबाब पर है शहज़ादी-ए-शबे-ग़म।
चलते हैं 'नूर' घर से ज़ुल्मात आज़्माने॥

(3)

क़फ़स से निकलकर चला आ रहा हूँ।
मगर उनकी चालों से घबरा रहा हूँ॥

करूँ अब किसी घर मैं कैसे भरोसा?
लगातार धोखे ही जो खा रहा हूँ॥

इरादे थे अच्छे जो आगे बढ़ा मैं।
मगर अन्धे रस्तों से घबरा रहा हूँ।।

गुनाहों से बचने की खायी क़सम हैं।
तो फिर क्यों गुनाहों पे इतरा रहा हूँ।

जिन्हें जानता तक नहीं मैं ज़मीं पर।
मता-ए-अदब उनपे बरसा रहा हूँ॥

भटक कर वफ़ाओं की राहों में पैहम।
जहाँ से चला मैं वहीं जा रहा हूँ॥

अजल वक़्त से पहले आएगी कैसे?
इसी फ़ैस्ले पर जिए जा रहा हूँ।

मिरे सब बयां ठीक से दर्ज करना।
हुआ जो, तुम्हें मैं वो बतला रहा हूँ॥

वसीअत चराग़ों के हक़ में हुई है।
अँधेरों को मैं 'नूर' समझा रहा हूँ॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सजीवन मयंक की ग़ज़लें

(1)

आज कोई तो फैसला होगा।
कौन जो दूध का धुला होगा॥
एक पगडंडी अलग से दिखती है।
कोई इस पर कभी चला होगा।
होगी मशाल जिसके हाथों में।
पीछे उसके एक काफिला होगा॥
जो आदमी को गले लगाता था।
वो पागल आपको मिला होगा॥
झूठ बनकर गवाह आया है।
सांच की आंच में जला होगा॥
ठूंठ-सा जो आज उपेक्षित है।
कभी इस पर भी घोंसला होगा॥
रोशनी का स्याह चेहरा है।
अँधेरे ने कहीं छला होगा॥
ये लावारिस पड़ा हुआ मुर्दा।
किसी की गोद में पला होगा॥

(2)

बात कुछ की कुछ बताई जाती है।
आग यूँ घर में लगाई जाती है॥
उम्र भर की जमा पूँजी खर्च कर।
बेटी की डोली सजाई जाती है॥
लोग लाखों मर गए जब युद्ध में।
संधि की बैठक बुलाई जाती है॥
बहुत मीठा बोलती इसलिए मैना।
कैद में रखकर सताई जाती है॥
राज भक्तों के सहारे से टिकी।
झोंपड़ी अक्सर गिराई जाती है॥
पूछिए उससे जो बोझा ढ़ो रहा।
किस तरह रोटी कमाई जाती है॥
वक्त आया सीख लेंगे आप से।
दुश्मनी कैसे निभाई जाती है॥

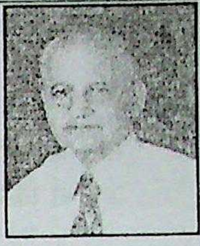

परिचय

नाम : सजीवन मयंक
जन्म : 21.10.1943
शिक्षा : एम.एस.सी. (रसायन), हिंदी संस्कृत विशारद।
लेखन विधा : ग़ज़ल, गीत, क्षणिकाएँ, मुक्तक, साक्षरता, गीत, व्यंग्य
संकलन : गाते चलें पढ़ते चलें, उजाले की कसम, माटी चंदन है, फागुन आने वाला है, **दिन अभी ढला नहीं** (ग़ज़ल संग्रह) किसकी तलाश है।
संप्रति : प्राचार्य के पद से सेवानिवृत। वर्तमान में साहित्य सृजन एवं सामाजिक कार्य में संलग्न।
संपर्क : 251-शनिचरा वार्ड-1, नरसिंह गली, होशंगाबाद (म.प्र.)
दूरभाष : (07574) 252850, **मो.**-9425043627
E-mail: sajeevan_gubrelay@yahoo.co.in

श्याम झँवर 'श्याम' की ग़ज़ल

(1)

ईश्वर में विश्वास बढ़ा है, जीवन में प्रतिघातों से,
कुछ हमने भी सीख लिया है, दुनिया में संतापों से।

जीवन का उद्देश्य हो गया, भागो पैसे के पीछे,
सुधरा नहीं एक भी अब तक, भाषण-मंचों-नारों से।

कैसे हैं संस्कार कहाँ है दोष, समझ न पाए हम,
दादा-दादी हुए तिरस्कृत, आज यहाँ परिवारों से।

हुए नहीं हैं बंद अभी भी, सब दरवाजे पुण्यों के,
ईश्वर प्राप्त नहीं होते हैं, माला-मनकों-जापों-से।

कुछ भी मिलता नहीं मुफ्त में, दुनिया का दस्तूर यही,
कुछ पाया है ठोकर से तो, कुछ-कुछ यहाँ दुलारों से।

कोई नहीं समझ पाया है, ये दुनिया किस ओर चली,
सदाचार-सदभाव खो गए, कर्मों और जुबानों से।

मन में हो संकल्प शक्ति तो, कर सकते हो कुछ भी तुम,
कोई फर्क नहीं पड़ता है, दुनिया के अंगारों से।

संपर्क : 581, विकास नगर, नीमच कैंट,
पोस्ट/जिला-नी 45844 (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजेन्द्र चाँद की ग़ज़लें

परिचय

नाम : राजेन्द्र चाँद

जन्म : 3 जनवरी, 1944, रावलपिंडी (अब पाकिस्तान में) अंग्रेजी दैनिक 'दि ट्रिब्यून', चण्डीगढ़ मे डिप्टी मैनेजर के पद से सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन।

प्रकाशित कृतियाँ : 1. कभी न कभी (कहानी संग्रह), 2. नहीं अब और नहीं (कहानी संग्रह), 3. वक्त की शतरंज पर (ग़ज़ल संग्रह), 4. आज का सच (काव्य संग्रह), स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं एवं महत्त्वपूर्ण संग्रहों में कविताएँ, ग़ज़लें तथा कहानियाँ प्रकाशित। आकाशवाणी व दूरदर्शन से भी प्रसारण। कुछ ग़ज़लें गायकों द्वारा स्वरबद्ध।

संपर्क : 147, ट्रिब्यून मॉडल ग्राम, बलटाना (ज़ीरकपुर), ज़िला–मोहाली नगर (पंजाब) **मो. :** 098148-10147,

(1)

सोच के देखो क्या-क्या खोया जाता है
जब भी किनारे ला के डुबोया जाता है

तन को धोते रहे मगर न सीख सके
मन की मैल को कैसे धोया जाता है

मूल मंत्र है यह तनाव से मुक्ति का
घोड़े बेच के चैन से सोया जाता है

उम्र हुई लिखते, न अब तक यह आया
शब्द में कैसे भाव पिरोया जाता है

'चांद' रहा है कुदरत का कानून यही
वही काटना पड़े जो बोया जाता है

(2)

हमको ऐसे पुकारता है कोई
जैसे चाबुक-सी मारता है कोई

अपने रस्ते पे जा रहा तनहा
क्या किसी का बिगाड़ता है कोई

तुमसे हारा वो मानते हैं मगर
इस तरह से भी हारता है कोई

दिल से ऐसे निकाल कर फेंका
कील जैसे उखाड़ता है कोई

नींद में उठ के 'चाँद' चलता है
ज़िंदगी यूँ गुज़ारता है कोई

(3)

है कौन-सा ग़म दिल में जो आबाद नहीं है
होठों पे मगर एक भी फ़रियाद नहीं है

फिर भी डरे हुए हैं सब शहर के परिंदे
मौजूद जबकि शहर में सय्याद नहीं है

दुनिया की लज़्ज़तें इसे काफ़िर बना गईं
रूह जिस्म की गुलाम है आज़ाद नहीं है

अपने दिमाग़ पर दें हम ज़ोर किस लिए
उस बेवफ़ा का नाम भी अब याद नहीं है

लिक्खा है आज तक जो अपने ही दम पे लिक्खा
ऐ 'चाँद' अपना कोई उस्ताद नहीं है

(4)

सफ़ेदी ओढ़ती जुल्फ़ों को भी काली कहे जाओ
अगर चेहरे पे ज़र्दी है उसे लाली कहे जाओ

भले ही नोच ले हर फूल को वो बेरहम खुद ही
मगर फिर भी उसी को बाग का माली कहे जाओ

कोई भी बंद ताला खोलने का दम जो रखती है
सीना ठोंककर 'रिश्वत' को वो ताली कहे जाओ

सियासत देखने में आ रही है आजकल जैसी
शराफ़त को तुम अपने दौर की गाली कहे जाओ

बदल लेंगे नज़र का ज़ाविया ऐ 'चांद' हम इक दिन
भरे बर्तन को तुम हर हाल में ख़ाली कहे जाओ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ब्रह्मजीत गौतम की ग़ज़लें

(1)

पर्वत को पर्वत और राई को राई बोलेंगे
आँख मिलाकर सूरज से हम सच्चाई बोलेंगे

यूँ तो तेरे और भी होंगे दीवाने दुनिया में
पर हम ख़ुद को सौ-सौ जान से शैदाई बोलेंगे

शोलों से कर प्यार जिन्होंने फूँक दिया बस्ती को
उन बदज़ात हवाओं को हम हरजाई बोलेंगे

पर्वत को ऊँचाई दे दी खाई को गहराई
कुदरत पर भी आज सियासत है छाई बोलेंगे

तेज़ हवा के बल पर तिनका जा पहुँचा अंबर में
इस ऊँचाई को हम कैसे ऊँचाई बोलेंगे

दौलत या ताकत से जो चाहें उल्फ़त को पाना
ऐसे कमज़र्फों को हम तो सौदाई बोलेंगे

'जीत' न करना बह्र की चर्चा अब हिंदी ग़ज़लों में
वरना इक दिन लोग तुम्हें सब बल्वाई बोलेंगे

(2)

ज़िंदगी का तू मुक़द्दर को सहारा मत समझ
कर यक़ीं मेहनत पे ख़ुद को यूँ बिचारा मत समझ

और भी हैं मुसकराहट के बहुत-से मायने
मुस्कराहट को मुहब्बत का इशारा मत समझ

बादलों की वज़्ह से कम हो गई होगी चमक
चाँद तो है चाँद ही, उसको सितारा मत समझ

प्यार में जो जान की बाज़ी लगाते हैं सदा
उन से बढ़कर कोई रूस्तम या कि दारा मत समझ

मंज़िलों की राह में ख़म रोज़ आते हैं, मगर
इन ख़मों के सामने ख़ुद को तू हारा मत समझ

क्या हुआ जो मुफ़लिसी में वे किनारा कर गए
ऐसे यारों को कभी अपना सहारा मत समझ

'जीत' ख़ुद्दारी की होती है सदा संसार में
अपनी ख़ुद्दारी को तू कमतर ख़ुदारा मत समझ

(3)

कैसी ज़ोर-ज़बरदस्ती है
रोक सके किसकी हस्ती है

कोई भी महफ़ूज़ न दिखता
बटमारों की यह बस्ती है

चर्चा का फल निकले कैसे
संसद में धींगामस्ती है

अग में, जग में, पग-पग देखो
महँगाई कितनी सस्ती है

मत समझो उसको एकाकी
हर गुण्डा उससे नस्ती है

दौरे के मिस वह आफ़ीसर
करता रोज़ाना मस्ती है

'जीत' किसी को धोखा देना
आला दर्ज़े की पस्ती है

(4)

चलना यारों आँख गड़ाए रस्ते में
मौत खड़ी है घात लगाए रस्ते में

किसको पता किस कोने से आकर गोली
दिल अपना छलनी कर जाए रस्ते में

शंका-संदेहों का कुहरा है इतना
अपने भी हैं आज पराए रस्ते में

मानवता का ख़ून पिए मदमस्त बने
नाच रहे रिंदों-से साये रस्ते में

हाय, बने हैं वो अपने जानी-दुश्मन
कल तक थे जो शीश झुकाए रस्ते में

ज्वालाओं में देख घिरा अपना उपवन
फूलों के चेहरे कुम्हलाए रस्ते में

'जीत' युवा पीढी को यह क्या आज हुआ
सब पर रंग विदेशी छाए रस्ते में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रा. शशिकांत पशीने 'शाकिर' की ग़ज़लें

(1)

मैली न तुम करो कभी, तस्वीर प्यार की।
बुझने न पाए लौ कभी, चाहत-दुलार की।
रंजिश की आग फैल, घरों को जला रही,
कीजे न बात अब कोई, खंजर-कटार की।
दिल का मिलन ज़रूरी है, कोई पहल करो,
दिल से हवस निकाल दें हम, जीत-हार की।
नफ़्ख से बढ़ रहे हैं, दिलों के ये फ़ासले,
मिल-जुल के पाटना है, ये खाई दरार की।
अब खत्म कर भी दीजिए, तांडव ये मौत का,
कुछ कद्र हो जनाब, दिलों के पुकार की।
सौग़ात है गुलाब की, काँटों की गोद में,
तस्वीर है हयात, खिज़ाँ औ' बहार की।
मरने पे भूल जाते हैं, अपने अज़ीज़ तक,
रहती नहीं हैं याद भी, 'शाकिर' मज़ार की।

परिचय

नाम : प्रा. शशिकांत पशीने 'शाकिर'
जन्म : 9 जून, 1941, गोंदिया (महाराष्ट्र)
शिक्षा : एम.एससी. (कृषि)
संप्रति : 1. निवृत्त प्राध्यापक, श्री शिवाजी कृषि महाविद्यालय, अमरावती (महाराष्ट्र), 2. अध्यक्ष, सप्तरंगी हिंदी साहित्य संस्था, अमरावती
प्रकाशन : कृषि-विषयक लेख, पत्रक व पुस्तिकाएँ प्रकाशित। फूल-पौधों के विविध विषयों पर लेख प्रकाशित।
प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह : 1. टिमटिमाते दीपक 2. सोच की बूँदें, 3. गलियाँ ग़ज़लों की, 4. शब्दों के झरने, 5. ग़ज़ल-गुंजन, 6. कुहरे का साया
संपर्क : नामदेव महाराज मंदिर के पास, गाडगे नगर, अमरावती-444603 (महाराष्ट्र)
फोन : (0721) 2664548 **मो. :** 9881601621

(2)

तक़्दीर बदलती रहती है, हालात बदलते रहते हैं।
जीवन में हमेशा सुख-दुख के, अनुपात बदलते रहते हैं।
उठती है समुंदर में लहरें, हलचल-सी हुआ करती दिल में,
रुख देख मुखातिब का अक्सर, जज़्बात बदलते रहते हैं।
दुनिया का चलन है सदियों से, दस्तूर भी है ये कुदरत का,
मौसम के बदलने पर पेड़ों के, पात बदलते रहते हैं।
है कौन यहाँ रहबर-रहजन, कुछ फ़र्क़ नहीं है आदत में,
अपने ये मुखौटे आपस में, दिन-रात बदलते रहते हैं।
तकलीफ दें क्यों हम गैरों को, हैं यार बहुत रंजिश लिए,
साज़िश में सभी माहिर अपने, ये घात बदलते रहते हैं।
फल-फूल रही है बर्बरता, श्मशान बनी है मानवता,
ज़ालिम ही बसे हैं बस्ती में, दर्ज़ात बदलते रहते हैं।
कुछ ज़ख़्म दिए कुछ पीड़ा दी, आँसू भी दिए हैं अपनों ने,
मर्ज़ी के मुताबिक 'शाकिर' ये, सौग़ात बदलते रहते हैं।

(3)

गर मुहब्बत का ही रिश्ता, दरमियाँ बन जाएगा,
हमसफ़र बन जाएगा तू, हमजुबाँ बन जाएगा।
तू क़दम पहले उठाकर, रास्ता हमवार कर,
फिर दिलों को जोड़ने से, कारवाँ बन जाएगा।
पंख देते हैं सलीका, हो यकीं पर्वाज़ पर,
हौसला गर तू रखेगा, आसमाँ बन जाएगा।
मुसकुराने दे कली को, गुल मसलना छोड़ दे,
सीख ले गुलशनपरस्ती, बागबाँ बन जाएगा।
तिनका-तिनका जोड़ ले तू, घोंसले के वास्ते,
ये मकाँ बेमिस्ल तेरा, आशियाँ बन जाएगा।
पेड़-पंछी, फूल-तितली, का रखें हम गर ख़याल,
मुल्क अपना इक महकता, गुलसिताँ बन जाएगा।
तेरी हस्ती क्या है 'शाकिर', है गुमाँ किस बात का,
राख होगी मूठ भर, बाकी धुआँ बन जाएगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ख़याल खन्ना की ग़ज़लें

परिचय

नाम : राजेन्द्र कुमार खन्ना
उपनाम : ख्याल खन्ना
जन्म : 8 अक्टूबर, 1940
शिक्षा : एम.ए. (अर्थशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान)
प्रकाशन/प्रसारण :
अनेक हिंदी-उर्दू पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित, मुशायरों/कवि सम्मेलनों में भागीदारी।
संप्रति : भारतीय खाद्य निगम से सेवानिवृत्ति सन् 2000 में। राष्ट्रीय अध्यक्ष, ऑल इण्डिया कुँवर मोहिन्दर सिंह बेदी मेमो. सोसाइटी, मुख्यालय-हल्द्वानी (नैनीताल) उत्तराखंड
संपर्क : 1090, जनकपुरी, बरेली-243122 (उ.प्र.)
मो. : 9368019451

(1)

तर्क करके शराब लोगों ने
मुझसे माँगा हिसाब लोगों ने
नफरतों के सबब बुझा डाले
सैंकड़ों आफ़ताब लोगों ने
ख़ून हमने दिया वतन के लिए
और देखे हैं ख़्वाब लोगों ने
कितने वीरानों को किया आबाद
हमसे ख़ाना-ख़राब लोगों ने
दामने-गुलस्तिाँ सजाने को
मिल के सींचे गुलाब लोगों ने
की जो लोगों से आशनाई 'ख़याल'
ज़ीस्त कर दी अज़ाब लोगों ने

(2)

बोझ सूरज का वो सर पर ढ़ो गया
छाँव में जिस वक़्त आया सो गया
हर तरफ़ देखे गए हैं सर ही सर
कौन ये नफ़रत की फ़स्लें बो गया
झिलमिलाया एक आँसू आँख में
और दिल के जख़्म सारे धो गया
ढूँढ़ना तुझको कोई आसाँ नहीं
ढूँढ़ने वाला तुझे, खुद खो गया
आइए अब और कुछ बातें करें
छोड़िए, जो हो गया, सो हो गया
उसके आगे आपका दिल क्या 'ख़याल'
लो गया, वो लो गया, वो लो गया

(3)

खुश अपने ख़ोल में है, मस्त अपनी खाल में है
वो आदमी जो ग़लत-फहमियों के जाल में है
कमंद डाल रही है अभी सितारों पर
ख़िरद अभी तो जुनूँ ही की देखभाल में है
गुज़र चुका है ज़माना खुलूस का लेकिन
खुलूस आज भी कसरत से बोलचाल में है
हैं लफ़्ज़े-सब्र में कहने को ढ़ाई हर्फ़, मगर
ये वो शजर है कि फल जिसकी डाल-डाल में है
अज़ल से देख रही है, ये जन्म-जन्म में ख़ाब
ये ज़िंदगी जो अभी क़ैद माह-ओ-साल में है
खुलूस बाँट रहा है ग़रज़-परस्तों में
'ख़याल खन्ना' खुदा जाने किस ख़याल में है

(4)

सोचता हूँ क्या थी अच्छाई-बुराई आपकी
आपसे बिछड़े तो बेहद याद आई आपकी
तीर-ओ-तरकश के फ़साने आपको ज़ेबा नहीं
फूल की डाली से नाज़ुक है कलाई आपकी
आपकी मक़्बूलियत में शक नहीं कोई मगर
आपको रुसवा करेगी, आशनाई आपकी
आप उस तस्वीर पर पूरे उतरते ही नहीं
ज़हन में तस्वीर जो हमने बनाई आपकी
हो नहीं सकता कोई भी काम रिश्वत के बग़ैर
रहज़नी से कम नहीं है, रहनुमाई आपकी
आ गए हैं आप अहले-इल्म-ओ-दानिश में 'ख़याल'
देखना है अब कहाँ तक है रसाई आपकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिवनाथ 'बिस्मिल' की ग़ज़लें

(1)

इस ओर आचमन, उधर सागर दिए गए
अधिकार इस प्रकार बराबर दिए गए

आँखें खुलीं तो एक मरुस्थल समक्ष था
सपने मगर बड़े-बड़े सुंदर दिए गए

जीवन में पल सुखों के मिले हैं कभी-कभी
घावों पे घाव किंतु निरंतर दिए गए

हर वस्तु में अगर यहाँ उसका निवास है
फिर पूजने को मात्र क्यों पत्थर दिए गए

फल से विहीन और है छाया भी नाम की
'बिस्मिल' यह कौन-से हमें तरुवर दिए गए

(2)

निवेदन डाल देगा प्राण, संभव हो नहीं सकता
पिघल जाए कोई पाषाण, संभव हो नहीं सकता

सभी मिलकर मुखर हो जाएँ उसके सामने वर्ना
विषमता से अकेले त्राण, संभव हो नहीं सकता

निकल जाए जो मुँह से बात वह अपनी नहीं रहती
पलट आएगा छूटा वाण, संभव हो नहीं सकता

सँवर सकता है यह जीवन हमारे भाईचारे से
वरन् सद्‌भाव का निर्माण, संभव हो नहीं सकता

बढ़े कुछ प्रेम आपस में तो कुछ कल्याण हो'बिस्मिल'
घृणा से विश्व का कल्याण संभव हो नहीं सकता

(3)

छलक आते हैं माना आँख में अपमान से आँसू
उमड़ भी आते हैं लेकिन कभी गुणगान से आँसू

वह मिलते हैं तो आँसू पोछने की बात करते हैं
बिछड़ते ही उतर जाते हैं उनके ध्यान से आँसू

परिचय

नाम : शिवनाथ 'बिस्मिल'
जन्म : 11 जुलाई, 1935
शिक्षा : शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त
अध्यक्ष : काव्य गंधा, बरेली
प्रकाशन/प्रसारण : ग़ज़ल संग्रह 'एक कंकर ताल में'। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन, आकाशवाणी, कवि सम्मेलनों एवं मुशायरों में भागीदारी।
संप्रति : संचालक-उज्ज्वल प्रेस, कॉलेज रोड, बरेली।
संपर्क : 333-अ, सिकलापुर, कालेज रोड, बरेली।
फोन : 9411470389, 9319052727

सहन हो जाते हैं मिलते हैं जो आँसू परायों से
सहे जाते नहीं, मिलते हैं जो सन्तान से आँसू

निठारी में अबोधों की वह जाके हड्डियाँ देखें
जो कहते हैं निकल सकते नहीं पाषाण से आँसू

अकेले तुम नहीं 'बिस्मिल' सभी को मिलते आये हैं
कभी मधुपान से आँसू, कभी विषपान से आँसू

(4)

बिन गुरु कृपा कला कब कोई किसी मनुज को आती है
बूँद सीप के संरक्षण में ही मोती बन पाती है

सबका अपना-अपना दुख है, सबका सुख अपना-अपना
पीर किसी को दुखदायी है, पीर किसी की थाती है

वंशी कभी नहीं करती है अपने सुख-दुख की बातें
जिसके ओंठों से लग जाए गीत उसी के गाती है

क्या उजियारा फैलाएगा वह क्या मार्ग दिखाएगा
स्नेह नहीं है जिस दीपक में केवल बाती-बाती है

अब तक के मधुपानों से तो 'बिस्मिल' तृप्ति न मिल पाई
जितना इसे बुझाओ उतनी ही तृष्णा बढ़ती जाती है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मदन मोहन 'उपेन्द्र' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मदन मोहन 'उपेन्द्र'

जन्म : 8 सितंबर, 1934 (जलेसर, एटा)

शिक्षा : बी.कॉम. साहित्य रत्न

प्रकाशित : उलझी अलकें, किरण भर उजाले को, जन्मेजय, बच्चे चुप हैं, सवेरा होने वाला है। कविता संग्रह—खरीदा हुआ वह, दुम हिलाता आदमी, कविता संग्रह—पेशावर पर्व, लघु नाटक—लालच बुरी बला (पंचतंत्र की पद्यकथाएँ), कंजूस राजा (लोककथाएँ), नारद जी बंदर बने (खंडकाव्य) बाल पुस्तकें—रक्त तिलक, कहानियाँ भोर की, पुरवा की पायल पुस्तकें हिप्रस (मासिक), अतिरेक (मासिक) वर्ष 72 से 80तक सम्यक (सामयिक सृजन संवाद की पत्रिका) 1989 से सतत प्रकाशित।

संप्रति : स्वतंत्र लेखन तथ सम्यक का संपादन एवं प्रकाशन।

निदेशक : हिंदी प्रचार सभा, मथुरा। पूर्व लेखाधिकारी (भारतीय लेखा सेवा प्रयाग)

संयोजक : सम्यक संस्थान, ए-10 शांति नगर (संजय नगर) मथुरा—281001

(1)

मौत सचमुच ज़िंदगी का छल हुई है
इक पहेली प्रश्न बन कर हल हुई है

सहज जो पाए, गंवाया मुश्किलों में
मरुथलों में भटकती मृगज़ल हुई है

मरसिया गाये अभी तक मरघटों में
शून्य में कैसी भला हलचल हुई है

बैशाखियों का भरोसा अब क्या करें हम
आसरे की बात भी छल बल हुई है

इस बदलते दौर में बदलें 'उपेन्द्र'
वरना बाकी ज़िंदगी दल-दल हुई है।

(2)

अपनेपन की बात नहीं अब दिखती है
रिश्तों की औकात नहीं अब दिखती है

कोशिश करते हैं खुशबू हो फूलों में
खुशबू की सौगात नहीं अब दिखती है

बहुत हुई हैं बातें दिशा बदलने की
किसी दिशा में प्रात नहीं अब दिखती है

कैसे हैं आसार समय की रंगत क्या
सुख सपनों की बात नहीं अब दिखती है

साज़िश पर साज़िश का दौर चला कैसा
अपनों की संगात नहीं अब दिखती है

(3)

अपनों की पहचान जरूरी है
मन में भी अरमान जरूरी है

खोये-खोये रहने वालों में
जीने की भी शान जरूरी है

टूटे सपने जुड़ भी सकते हैं
सपनों में भी जान जरूरी है

बिछुड़न में मिलने की गर्मी हो
अपनेपन की आन जरूरी है

आँखों में आकर्षण भीतर अनगढ़ता
होने का भी भान जरूरी है

(4)

वक्त को मिसाल मत कहो
दर्द को ख़याल मत कहो

ज़िंदगी जी सको जियो
उम्र को उबाल मत कहो

दोस्ती में दूरियाँ भी हों
दुश्मनी बवाल मत कहो

इंसानियत तो खो गई कहीं
'आदमी कमाल' मत कहो

रिश्ते हैं बर्फ के पहाड़
इसको भी चाल मत कहो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रामप्रकाश गोयल 'सोज' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : रामप्रकाश गोयल 'सोज'

जन्म : 30 जून, 1925

जन्म स्थान : बरेली (उ.प्र.)

प्रकाशित कृतियाँ : 'टूटते सत्य' (उपन्यास), 'दर्द की छांव में' (ग़ज़ल गीत संग्रह), 'आईना' (टी सीरिज द्वारा रिलिज्ड ग़ज़लों का कैसेट), 'रिश्ते घाव' (ग़ज़ल गीत संग्रह), 'दिल और दिमाग' (नाटक), 'सच्चे प्रेम-पत्र' (प्रेम-पत्र संकलन), 'आकाशवाणी वार्त्ताएँ (आकाशवाणी से प्रसारितवार्त्ताओं का संकलन), 'एक समंदर प्यासा सा' (ग़ज़ल-गीत कविता संग्रह), 'सफर तन्हाइयों का' (ग़ज़ल-गीत-कविता-संग्रह), 'दीप यादों के' (ग़ज़ल-गीत-संग्रह) 'मुसकुराते ग़म' (ग़ज़ल-गीत-कविता संग्रह), 'तबस्सुम' (ग़ज़ल सी.डी.) 'सबको आना-जाना है' (ग़ज़ल-गीत-संग्रह) 'चाहत' (उपन्यास), 'जीवन को मुसकान बना' (ग़ज़ल एवं गीत संग्रह)

संप्रति : सेवानिवृत विधि प्रवक्ता, अधिवक्ता, स्वतंत्र लेखन

संपर्क : जी-12, रामपुर बाग, बरेली, 243001 (उ.प्र)
मो. : 094122-87787

(1)

हम कितने पास थे मगर अब दूर हो गए ,
यह कौन जान पाएगा मजबूर हो गए।

कोशिश तो हमने लाख छुपाने की की मगर,
वो इस तरह मिले हैं कि मशूहर हो गए।

ये उम्र का तकाज़ा है या हुस्न का कमाल,
मिलते हैं इस अदा से कि मग़रूर[1] हो गए।

दिल दे रहा हूँ आपको रखिए सँभाल कर,
लौटा के यह न कहिएगा मजबूर हो गए।

ताउम्र साथ रहने को खाई थी जो क़सम,
उसको भुला के किस तरह हम दूर हो गए।

जब पास थे तो सामने रहते थे रात दिन,
अब दूर जा के आँख के वो नूर[2] हो गए।

पाया है 'सोज़' प्यार का कितना बड़ा सिला[3],
हम इस तरह मिटे हैं कि मंसूर[4] हो गए।

(2)

कितनी बार किया है बस में, फिर भी मन है पारा-सा,
इसीलिए तो रहता इन्साँ, हर पल ही दीवाना-सा।

यूँ तो सारी दुनिया जीती, हार नहीं मानी उसने,
भारत से जब टकराया तो, लगा सिकंदर हारा-सा।

चाहा कितनी बार है मैंने, कभी तो खुल कर हँस लेता,
पग-पग पर मिलता रहता है, दुख मुझको दुर्वासा-सा।

सारी दुनिया एक करेंगे, सब नेता ही कहते हैं,
सच्ची बात तो यह है यारो, है यह केवल नारा-सा।

इस दुनिया का गोरख-धंधा, समझ न पाया है कोई,
संत-फ़क़ीरों की वाणी है, जग है एक तमाशा-सा।

हार पाण्डवों का हिस्सा है, जीत कौरवों का हिस्सा,
दुर्योधन के द्यूत-भवन में, पड़ता उल्टा पाँसा-सा।

मंदिर-मस्जिद-गिरजा ढूँढा, कहीं न 'सोज' वह मिल पाया,
झाँका जब अपने अंदर तो, मैं था उसका साया-सा।

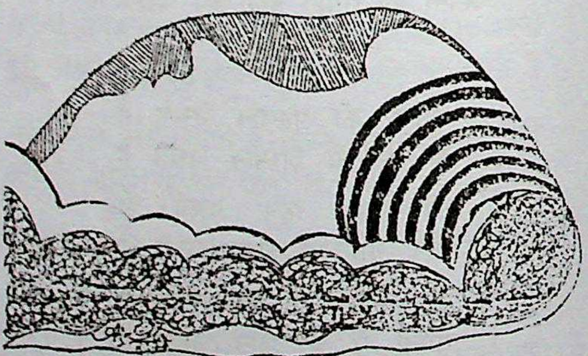

1. घमंडी, 2. ज्योति, प्रकाश, 3. इनाम, 4. एक मुस्लिम संत जिसने कहा था' अनहलक' (मैं ही ब्रह्म हूँ) और उसे फाँसी पर लटका दिया गया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आचार्य भगवत दुबे की ग़ज़लें

(1)

संत-इमाम मिलेंगे बिकते, बाज़ारों के बीच मियां
बोली लगती है ईश्वर की व्यापारों के बीच मियां

शोषण, भ्रष्टाचार, ठगी से भरे हुए सब कालम हैं
मानवता का जिक्र नहीं है, अख़बारों के बीच मियां

लज्जा, मर्यादा, संयम के, आभूषण जो पहने हैं
कैसे लाज बचाती होंगी, व्यभिचारों के बीच मियां

कमी नहीं है राजनीति में चारण और भटैतों की
कुत्तों जैसी पूँछ हिलाते दरबारों के बीच मियां

स्वार्थ सिद्धि के लिए हमेशा नतमस्तक जो रहते हैं
ऐसे चाटुकार भी मिलते सरदारों के बीच मियां

मानव सेवा के तगमें जो लोग लगाए फिरते हैं
नाक बंद करने लगते हैं, बीमारों के बीच मियां

(2)

हर जनम में, तू मुझे ममतामयी माई मिले
तेरी सेवा और तेरी पाँव पखराई मिले

दीप हो आशीष के बस टिमटिमाते साथ में
फिर अँधेरी रात में, पर्वत मिले, खाई मिले

इतना ऊँचा भी न देना क़द मुझे मालिक कभी
बाँह में भरने न मुझको मेरा ही भाई मिले

कोई भी दौलत न चाहूँ दंभियों के द्वार की
निष्कपट जो हो गरीबी उसकी पहुनाई मिले

हों विटप, छतनार-छायादार सद्‌गुण के जहाँ
वह बुजुर्गों के सुगंधित भव्य अमराई मिले

मैं भुला न पाऊँ तुमको जन्म लूँ सौ बार भी
गूँजती कानों में, अनहद स्वर की शहनाई मिले

लिख रहा हूँ जो भी मैं, तूने लिखाया बोलकर
मेरे लेखन में सदा, तेरी ही परछाई मिले

परिचय

नाम : आचार्य भगवत दुबे
जन्म : 18 अगस्त, 1943
जन्म स्थान : ग्राम-हिनौता, जबलपुर (म.प्र.)
कृतियाँ : 'स्मृतिगंधा' (गीत संग्रह), 'अक्षरमंत्र' (साक्षरता गीत संग्रह), 'शब्दों के संवाद' (दोहा संग्रह), 'हरीतिमा' (पर्यावरणीय गीत संग्रह), 'रक्षा कवच' (स्वास्थ्य शिक्षा गीत संग्रह), 'संकल्प रथी' (गीत संग्रह), 'बजे नगाड़े काल के' (गीत-संग्रह) 'बनपाँखी' (काव्य-संग्रह), 'दधीय', (महाकाव्य), 'जियो और जीने दो' (काव्य संग्रह), 'विषकन्या' (गीत संग्रह), 'शंखनाद' (राष्ट्रीय गीत संग्रह), 'चुभन' (ग़ज़ल संग्रह), 'दूल्हादेव' (कहानी संग्रह), 'प्रणय ऋचाएँ', 'काँटे हुए किरीट', 'करुणा यज्ञ' (तीनों गीत संग्रह), 'कसक' (ग़ज़ल संग्रह), 'हिंदी तुझे प्रणाम' (काव्य-संग्रह), 'शिकन' (ग़ज़ल संग्रह), 'हिरण सुगंधों के (नवगीत संग्रह) एवं 'घुटन' (ग़ज़ल संग्रह)
संप्रति : स्वतंत्र लेखन
संपर्क : 2672, 'विमल स्मृति', पिसनहारी की मढ़िया के पास, जबलपुर-482003 (म.प्र.) **मो.** : 09300613975

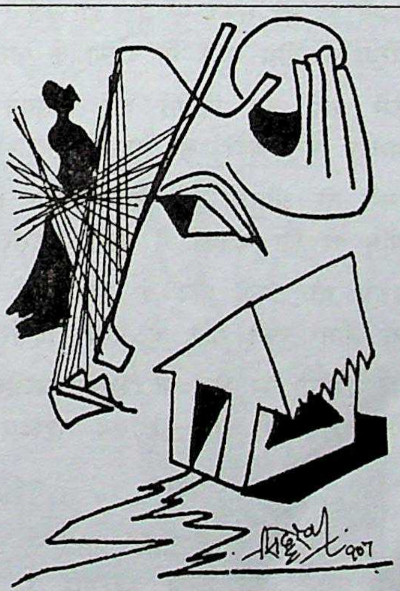

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'खन्ना' मुज़फ़्फ़रपुरी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : प्रह्लाद नारायण खन्ना
उपनाम : 'खन्ना' मुज़फ़्फ़रपुरी
(कवि, लेखक)
संस्थापक एवं अध्यक्ष : 'साहित्यिक-अंजुमन', मुज़फ़्फ़र-मुंबई
संपर्क : 1/डी-1, ब्लू आर्च, सेन्ट लुइस स्कूल मार्ग, प्राइवेट रोड, चार बंगला, अँधेरी (प.), मुंबई-53
फोन : 26393966 मो. 9324557634

(1)

जब तेरे ग़म सिमट के आते हैं
अश्क आँखों में मुस्कुराते हैं

फूल रख दीजिए किताबों में
ये खिजां में भी काम आते हैं

कौन खेती करे मुहब्बत की
फ़स्ल-नफ़रत की सब उगाते हैं

वक्त के साथ जो नहीं चलते
उम्र भर वो फ़रेब खाते हैं

बात अब के खुशी की क्या होगी
सबके चेहरों पे दर्द पाते हैं

मुख़्तसर सा सफर था 'खन्ना' का
घर से आए थे घर को जाते हैं

(2)

जो दोस्तों ने जख़्म दिए बेशुमार थे
जिनपे था एतबार वह बे-एतबार थे

कश्ती का वह सफर भी बड़ा ही अजीब था
दरिया के बीच रहके भी दरिया के पार थे

कैसे कहूँ और किससे कहूँ दास्ताने-ग़म
हालात मेरे चेहरे से सब आशकार थे

हमने तो आँसुओं को समेटा बहुत मगर
आँसू थे कि पलकों पे बहुत बेक़रार थे

धरती भी उनके पाँव के नीचे नहीं रही
जो लोग अपने गाँव के परवर दिगार थे

यह कुर्सियों का खेल भी 'खन्ना' अजीब है
जितने सियासी लोग थे सब मालदार थे

(3)

जब भी हमने ग़ज़ल सुनाई है
जाने क्यों आँख डबडबाई है

दर्द को ग़ैर का कहूँ कैसे
पीर कैसे कहूँ पराई है

सच को मैं झूठ में बदल न सका
ये जुबां इसलिए कटाई है

राह देखी थी उम्र भर जिसकी
वो मिला जब नज़र गंवाई है

क्या बताऊँ मैं ज़िंदगी का मजा
अब किसी वक्त भी जुदाई है

खत्म होने को है सफ़र 'खन्ना'
मुस्कुराने में ही भलाई है

(4)

उसका आना खुशियाँ लाना
लेकिन कब तक इक दिन जाना

आकर भूला प्रीत निभाना
तीर चलाकर हर मनमाना

धन-दौलत से मन भरमाना
समझें अपनों को अनजाना

जीवन कुछ दिन सब रह जाना
सबके कांधे चढ़कर जाना
'खन्ना' फिर क्यूँ रोना-गाना?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नरहरि अमरोहवी की ग़ज़लें

(1)

हुई है आप से भी दोस्ती क्या,
ये जाना मैंने अब है ज़िंदगी क्या।

छलकती हैं हमेशा मेरी आँखें,
सहर क्या, तीरगी क्या, चाँदनी क्या।

जहाँ का जो सबक तूने दिया है,
समझ में आ गया है आदमी क्या।

छुपाकर वो कभी कुछ क्यों रखेंगे,
ग़रीबों को मिली है ज़िंदगी क्या।

हवेली के नशे में जी रहे है,
कहाँ समझेंगे वो है सादगी क्या।

(2)

वो अपना चेहरा दिखा रहा था,
वो आदमी है बता रहा था।

हरे दरख़्तों की ज़िन्दगी को,
क्यूँ रास्ता ही मिटा रहा था।

ख़तों के पर्चों को फाड़ कर वो,
किताब में क्यों छिप रहा था।

चराग़ ज़िसके लिए जलाये,
बशर उन्हें ही बुझा रहा था।

सुबूत इल्ज़ाम से जुदा हो,
नक़ाब उनका उठा रहा था।

परिचय

नाम : महेन्द्र नाथ नरहरि (हिंदी लेखन), म.ना. नरहरि नाम से केवल ग़ज़ल सृजन एवं प्रकाशन नरहरि अमरोहवी नाम से

जन्म तिथि : 12.6.1934

जन्म स्थान : अमरोहा, (उ.प्र.)

प्रकाशन : अधिकांश स्तरीय साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कुछ समवेत संग्रहों में गीत, दोहे एवं ग़ज़लें

प्रसारण : विविध भारती एवं दूरदर्शन मुंबई

संपादन : साप्ताहिक, बाल पत्रिका, त्रैमासिक पत्रिकाओं का।

संप्रति : केवल ग़ज़ल और नवगीत सृजन

संपर्क : श्रीपाल बन नं.--एक, सी-विंग, जी-दस, खारोडी नाका, विरार-401303 (महा.)

मो. : 9322125416

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हरेराम समीप की ग़ज़लें

परिचय

नाम : हरेराम नेगा
साहित्यिक नाम : हरेराम समीप
जन्म : 13 अगस्त, 1951
जन्म स्थान : ग्राम-मेख, जिला-नरसिंहपुर (म.प्र.)
कृतियाँ : 'हवा से भीगते हुए', 'आँधियों के दौर में', 'कुछ तो बोलो' (तीनों ग़ज़ल संग्रह), 'जैसे (दोहा संग्रह) 'समय से पहले' (कहानी संग्रह), 'किसे नहीं मालूम' (ग़ज़ल संग्रह)
संपादन : 'कथाभाषा' (त्रैमासिक) और 'निष्पक्ष भारती' तथा 'मसि कागद' के विशेषांक
प्रकाशन : देश की स्तरीय एवं प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में।
संप्रति : नेहरू स्मारक निधि, त्रिमूर्ति भवन, नई दिल्ली में कार्यरत। साहित्य साधना।
संपर्क : 550/10, फरीदाबाद-121006 (हरियाणा)
दूरभाष : 0129-2290258

(1)

झुलसती धूप, थकते पाँव, मिलों तक नहीं पानी
बताओं तो कहाँ धोऊँ, सफर की ये परेशानी
इधर भागूँ उधर भागूँ जहाँ जाऊँ वहीं पाऊँ
परेशानी परेशानी परेशानी परेशानी
बड़ा सुंदर-सा मेला है, मगर उलझन मेरी ये है
नज़र में है किसी खोए हुए बच्चे की हैरानी
यहाँ मेरी लड़ाई सिर्फ इतनी रह गई यारो
गले के बस ज़रा नीचे, रुका है बाढ़ का पानी
तबीयत आजकल मेरी यहाँ अच्छी नहीं रहती
विषैला हो गया शायद, यहाँ का भी हवा-पानी
समय के ज़ंग-खाए पेंच दाँतों से नहीं खुलते
समझ भी लो मेरे यारो बग़ावत के नए मानी

(2)

हमको सोने की क़लम, चाँदी की स्याही चाहिए
शे'र कहने के लिए साकी, सुराही चाहिए।
रख दिए हैं ताक पर सबने ही अब जलते सवाल
आज के फनकार को बस वाह-वाही चाहिए।
ख़ून से लथपथ पड़ा है हर क़दम पर आदमी
क्रूरता की और क्या तुमको गवाही चाहिए।
खौफ़ बेचा जा रहा बाज़ार में कम दाम पर
क्योंकि ज़ालिम को मुनाफे में तबाही चाहिए।
सिर्फ़ कहने के लिए, जम्हूरियत है देश में
आज भी आवाम को ज़िल्ले-इलाही चाहिए।
आपकी बातों में आकर, आपके हम हो लिए
क्या पता था आपको भी बादशाही चाहिए।

(3)

सुन लो मुखिया अब उधार का उजियारा मंज़ूर नहीं
और हमारे ऊपर थोपा अँधियारा मंज़ूर नहीं।
खुदगर्ज़ों की सरकारें और न्यायालय सब बंद करो
सत्ता होगी सिर्फ हमारी, हरकारा मंज़ूर नहीं।
मेरी बस्ती दिल वालों की, सारे मिलकर एक रहें
बाँटे जाने की अब कोशिश दोबारा मंज़ूर नहीं।
राजनीति की हिंसक चालें जिसमें चलती हों हर रोज़
चाहे मंदिर, मस्जिद हो या गुरुद्वारा मंज़ूर नहीं।
जैसा भी हूँ मैं हूँ पूरे जीवन की सामर्थ्य लिए
यह गलीज संबोधन मुझको 'बेचारा' मंज़ूर नहीं।
मैं 'सपीप' हिंदू हूँ पक्का, कह दो जग से ये लेकिन
शंख, मँजीरा, थाली वाला जयकारा मंज़ूर नहीं।

(4)

यहीं पर छोड़कर, इन रहवरों को
चलो, वापस चलें, अपने घरों को।
हमें जो मुद्दतों से छल रहे हैं
भगाओं दूर इन जादूगरों को।
वो मेरे दोस्त बनकर रह रहे थे
कहाँ पहचानता हमलावरों को।
तुम्हें ही काट खाएँगे किसी दिन
न पालो नफरतों के विषधरों को।
बजाएँ तालियाँ हम उस सभा में
पुरस्कृत कर रही जो तस्करों को।
तुम्हें उड़ना भी आ जाएगा प्यारे
ज़रा खोलो तो इन सिमटे परों को।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. मधुर नज़्मी की ग़ज़लें

(1)

कँपकँपाते होंठों की सिसकियाँ बुलाती हैं
माँ के ज़र्द चेहरे की झुर्रियाँ बुलाती हैं
फिर हमें मुहब्बत की वादियाँ बुलाती हैं
अपने बेटे को माँ की लोरियाँ बुलाती हैं
अपने क़द्रदानों को खुशगवार मौसम में
अपनी बाँह फैलाए तितलियाँ बुलाती हैं
मैंने जिनके घेरे में ज़िंदगी गुज़ारी है
उन हसीन हाथों की चूड़ियाँ बुलाती हैं
दोस्तो! चलो चलकर मर्म गाँव का समझें
लोकगीत की ज़िंदा बोलियाँ बुलाती हैं
सोंधी-सोंधी खुशबू से हर डगर को महकाएँ
लहराते खेतों की बालियाँ बुलाती हैं
सूनी-सूनी चौपालें प्यार से सजाने को
मीठे-मीठे लहजे में ठुमरियाँ बुलाती हैं
जिनके दम से दुनिया में है अदब अभी रौशन
हमको उन बुजुर्गों की नेकियाँ बुलाती हैं
आज की नई पीढ़ी ग़र्क़ है नुमाइश में
उनको अहदे-माज़ी की झाँकियाँ बुलाती हैं
रौशनी में शहरों की जिनकों भूल बैठे हो
गाँव की 'वो' अनसुलझी गुत्थियां बुलाती हैं

(2)

हसीं अंदाज़ से सबको मुहब्बत जोड़ लेती है
सभी टूटे दिलों को यह इबादत जोड़ लेती है।
खुशी से छोड़ना कब चाहते हैं अपनी मिट्टी हम
दयारे ग़ैर से रिश्ता ज़रूरत जोड़ लेती है।
बिखरते, टूटते, पामाल होते हर ज़माने को
हुनर अपना दिखाकर आदमीयत जोड़ लेती है।
समय की धूप से जब मुंतशिर मैं होने लगता हूँ
घनेरी छाँव देकर रब की रहमत जोड़ लेती है।
तबीयत का असर लेकर किसी मजबूर से रिश्ता
औरत तोड़ लेती है इक औरत जोड़ लेती है।
असर अंदाज़ है कितनी कि अपने हुस्न से दिल को
तेरी पाकीज़ा आँखों की इबारत जोड़ लेती है
इलाकाई तअस्सुब को ये ख़ातिर में नहीं लाती है
जहाँ के ज़र्रे-ज़र्रे को गज़लियत जोड़ लेती है।

परिचय

नाम : कैलाश चौबे
उपनाम : मधुर नज़्मी
जन्म : 01 दिसम्बर, 1949
जन्म-स्थान : ग्राम-कोंडर, थाना-रानीपुर, जनपद-मऊ (उ.प्र.)
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी., विद्यावाचस्पति
लेखन विधा : मुख्यतः गीत और ग़ज़ल
कृतियाँ : 'थोड़े आँसू ढ़ेरों काजल' (गीति-काव्य), 'ऐ परिंदो घरों में रहो' (जदीद ग़ज़ल संग्रह), 'साये में सवालों के' (खायती ग़ज़ल संग्रह), 'कुछ दरख्त पानी के' (जदीद ग़ज़ल संग्रह), 'मधुर नज़्मी की चुनी हुई ग़ज़लें (जदीद ग़ज़ल संग्रह)
प्रकाशन : देश की अधिकांश प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में।
सम्पादन : 'समकालीन हिन्दी ग़ज़ल', 'प्रसंगवश' पत्रिका, अलीगढ़ का ग़ज़ल विशेषांक, 'भोजपुरी-लोक' पत्रिका लखनऊ का कविता विशेषांक, भोजपुरी पत्रिका 'पाती' का ग़ज़ल विशेषांक।
संपर्क : महानिदेशक, 'काव्यमुखी साहित्य अकादमी', मोहना गुहम्मदाबाद, जिला-मऊ-275101 (उ.प्र.)

(3)

किस मुसीबत में शजर है, होके इससे बेख़बर
फूल जैसा बा-वफ़ा होता है जिसका हमसफ़र
ज़िंदगी होती है उसकी ख़ूब से भी ख़ूबतर
कुछ परिंदे मुतमइन हैं अपनी-अपनी डाल पर
गाँव की तहज़ीब गाँवों ही में गिरवी हो गई
शहर की तामीर में गुम हो गए मिट्टी के घर
हौसला है दिल की चौखट पर तो इसका गम न कर
ज़ब्त का नन्हा दिया है दर्द की दहलीज़ पर
मर रहे थे भूख के मारे जहाँ मुफ़लिस वहीं
एक हंगामा बरपा था क़हक़हों का रात भर
कंकरीटों के घने जंगल अगर उगते रहे
कटते, कटते, कट ही जाएँगे ज़मीं के सब शजर
दोस्तो! आओ बनाएँ ख़ूबसूरत कारवाँ
इनको, उनको, सबको अपनी शाइरी से जोड़कर
आसमानों तक पहुँचती है कलाकारों की गूँज
ऐ 'मधुर'! आवाज़ होती है क़लम की पुरअसर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. महेन्द्र अग्रवाल की ग़ज़लें

(1)

मैं लड़ूँ, किसकी तरफ से इतनी हकदारी मुझे
हर कबीला सौंपना चाहता है सरदारी मुझे

मैं बदलने की करूँ ख्वाहिश जरा-सी भी अगर
चैन से रहने कहाँ देती है खुद्दारी मुझे

मैं किसी की चाह में डूबा हुआ समझा नहीं
एक दिन ले डूबेगी उसकी तरफ़दारी मुझे

वक्त किस्मत बेवसी झुंझला रहा धृतराष्ट भी
बाँध कर पट्टी लगी संतुष्ट गंधारी मुझे

मैं ग़ज़ल का शुक्रिया वर्षो अदा करता रहूँ
हाँ इसी ने हैसियत दी और दमदारी मुझे

शे'र अच्छा है, मगर कुछ तो सलीके से पढो
मंच पर अच्छी नहीं लगती अदाकारी मुझे,

मैं फ़क़त शाइर समुन्दर पार मेरा नाम है
यार रूसबा मत करो यूँ कहके ज़रदारी मुझे

(2)

डाह रिश्तों में, कुछ ऐसी, मरी भी होती है
आग लगती है, धुएँ से भरी भी होती है

आप जब मिलते हैं, हँसते हुए, तो लगता है
दोस्ती दोस्तों कारीगरी भी होती है

याद आती है उसी की जो अभी है दिल में
बेल उठती है वही जो हरी भी होती है

सीख आया हूँ मैं अहले सुखन की सुहबत में
शाइरी लफ़्ज़ों की बाज़ीगरी भी होती है

ज़िंदगी, यार बुजुर्गों के नए सपनों-सी
ज्यूं कहानी में अभी तक परी भी होती है

(3)

आपकी हम पर हुई, अब तक, महरबानी कहाँ?
रोटियाँ, तो छोड़िए, पीने को है, पानी कहाँ?

लोरियाँ मांओं की टी.वी. छीनकर हँसती रही?
हैं कहाँ परियों के किस्से घर में अब नानी कहाँ?

ज़िंदगी को दांव पर रख दें जो खुद ही दान में?
आज की दुनिया में राजा कर्ण-सा दानी कहाँ?

मीडिया हल्ला मचाए और शोहरत बख्स दे?
बात वो इतनी अभी भी आपने तानी कहाँ?

चांद अब मामा नहीं, बच्चों को भी मालूम है?
हम बड़े बूढ़े हुए पर बात ये जानी कहाँ?

खो दिया, घर का भरोसा, एक रंडी के लिए?
आपने सत्ता चुनी अब लफ़्ज मे मानी कहाँ?

(4)

हसीन ख़्वाब है, मंज़र, मेरी हदों में है
यकीन कर ये समुंदर, मेरी हदों में है

गुजिश्तः वक़्त नहीं मेरा दौरे हाजिर भी
गवाह अब भी मुकद्दर, मेरी हदों में है

मुदीर होके रिसाले की अहमियत जानी
हरेक शख्स सिकंदर, मेरी हदों में है

बनूँ मैं उसकी तरह सोच के बढ़ा आगे
तभी तो आज पयम्बर, मेरी हदों में है

तुम्हारे साथ गवाही में ये भी शामिल हो
उठा के फेंक ये पत्थर, मेरी हदों में है

संपर्कः संपादक (नई ग़ज़ल), सदर बाजार
शिवपुरी-473551 (उ.प्र.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जुबैरूल हसन 'गाफिल' की ग़ज़लें

(1)

है जिनके दिलों में हौसला हाथों में है हुनर
दरया निकाल लाते हैं पत्थर निचोड़ कर
अपने ही घर में आज वह परदेसी बन गया
परदेस कल गया था जो घर अपना छोड़कर
एक बार प्यार से तो सदा दे के देखिए
दीवाना आएगा हर एक जंजीर तोड़ कर
दर तक पहुँच के फिर ना पलट जाए वो कहीं
ऐ दिल ज़रा ठहर अभी इतना ना शोर कर
जुगनू की तो ज़मीं पे हिफ़ाज़त ना कर सके
दावा मगर के लाएँगे तारों को तोड़कर
लैला मताए[1] दिल है तो दीवानगी हयात[2]
जाए भी कैस[3] किस तरह वीराना छोड़कर
'गाफिल' रूबावे दिल पे वही गीत छेड़िए
मुर्दा जमीर को भी जो रख दे झिंझोड़ कर

1. पुंजी, 2. हयात–जीवन, 3. कैस–मजनूं का असल नाम

(2)

आँख जब उनकी नम[1] हुई होगी
सांस गीती[2] की थम गई होगी
कुछ तो साजिश रची गई होगी
यूँ ही बस्ती नहीं जली होगी
संग[3] बरसे थे जिस जगह मुझ पर
दोस्तों की गली रही होगी
जोर तूफां का थम तो जाने दो
फिर चरागों में रौशनी होगी
पा के खोने का हौसला रखिए
वरना दुश्वार ज़िंदगी होगी
जिक्र जब आप का चला होगा
बात मेरी-भी आ गई होगी
शख्सियत में निखार आएगा
धूप जब जीख्त[4] की कड़ी होगी
हिज्र[5] की इन अँधेरी रातों में
तीरी यादों की चाँदनी होगी
जाने कब तक रहूँगा मैं 'गाफिल'
जाने कब मुझ को अगही[6] होगी

1. भींगना, 2. संसार, 3. पत्थर, 4. ज़िंदगी, 5. जुदाई, 6. आन

परिचय

नाम : जुबैरूल हसन 'गाफिल'
जन्म : 2 जनवरी, 1944
जन्म स्थान : ग्राम-कमलदाहा, जिला-अररिया (बिहार)
शिक्षा : बी.एस.सी. एल.एल.बी.
कृति : अज़नबी शहर (ग़ज़ल एवं नज़्म संग्रह)
प्रकाशन : देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में।
संप्रति : अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद से सेवानिवृत्त स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : हसन विला, वार्ड न.-26, इस्लाम, नगर बसंतपुर अररिया-854311 (बिहार) मो. 9199488128

दीपक कुमार की ग़ज़लें

(1)

गर नहीं हम इसे जफ़ा कहते
झूठ को और क्या भला कहते

क्या करें है हमें ख़बर सच की
आप को हम नहीं खुदा कहते

आरज़ू थी कभी हमें वो भी
इक अता की गई दुआ कहते

कह रहा था–चलो खला ढूँढ़ें
क्यों नहीं हम उसे जुदा कहते

काश वो देखता इधर इक पल
फूल कहते उसे सबा कहते

था कहीं गुम भला उसे क्यूँ हम
बेवफ़ा और बावफ़ा कहते

संपर्क : द्वारा श्री धीरण पंडित, मोगल बाजार,
बासुदेवपुर, मुंगेर-811202 (बिहार)
मो. 9430655827

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुकुट सक्सेना की ग़ज़लें

(1)

हम बुझे रिश्तों में जज़्बा आतिशी ढूँढ़ा किए
किस क़दर मायूस थे, लेकिन खुशी ढूँढ़ा किए।

यूँ तो भारी भीड़ थी अपनों की अपने पास पर
दोस्तों के बीच में, हम दोस्ती ढूँढ़ा किए।

वे तो अपनी फितरतों पर खरे उतरे और हम
रहज़नों की नीयतों में रहबरी ढूँढ़ा किए।

दोस्तों की गमगुसारी उम्र भर थी की मगर
अपनी कह लेने को हम इक अजनबी ढूँढ़ा किए।

हर इबादतगाह में जब फूल मुर्झाने लगे
काग़ज़ी फूलों में तब हम ताज़गी ढूँढा किए

जाम तो लबरेज़ रक्खा था हमारे सामने
हम खड़े सहरा में अपनी तश्नगी ढूँढा किए

अब हमारी बेख़ुदी में और क्या बाकी रहा
हाथ में लेकर दिया, हम रौशनी ढूँढ़ा किए

(2)

ज़िंदगी भर आईने में क्या से क्या देखा किए
वक़्त के संग-संग चढ़ा उतरा नशा देखा किए।

वे न बाज़ आए जफा से, और वफा से हम कभी
सिलसिला दर सिलसिला ये सिलसिला देखा किए।

उनके दस्ताने रंगे थे खून लेकिन शक्ल पर
बेगुनाहों की तरह का हौसला देखा किए।

हम से गुस्ताख़ी हुई थी साफगोई की कभी
उसकी ऐवज़ में ही अपना घर जला देखा किए।

आँधियाँ उमड़ीं तशद्दुद की उजाड़ीं बस्तियाँ
और नाज़िम लोग घर बैठे हवा देखा किए।

एक डायन[1] और सारे शहर में हड़कम्प है
हम हमारी ज़हनियत का ये सिला देखा किए।

जिन के चुग्गे के लिए नापा किए थे आस्मां
पंख पाकर उड़ गए, हम घौंसला देखा किए।

(3)

बात की बात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत
बात बेबात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत।

चैन दिन में न पड़ा, रात भी काटी जगते
दर्द सौगात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत।

चोर कोई भी सही, शक उसी पे जाएगा
मुफलिसी ज़ात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत।

दिल जो उमड़ा तो बरसती हुई आँखें न थमीं
ये तो बरसात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत।

चाँद की शक्ल में यादों का उतरना मुझ में
आज की रात ही ऐसी है कि कुछ पूछो मत

(4)

हर घड़ी, इस तरह से छलती है
ज़िंदगी बर्फ-सी पिघलती है।

हादसे उसको घेर लेते हैं
घर से लड़की जभी निकलती है।

ख्वाहिशें सब की सब हुईं ऐसे
जैसे जंगल की घास जलती है।

एक मुफलिस की बेबसी हरदम
उसकी छाती पे मूंग दलती है।

सिर्फ झण्डे उठाए फिरने से
सूरत-ए-हाल कब बदलती है।

आस्मां से उतरना पड़ता है
उम्र जब आदमी की ढलती है?

सब्र रखना बहुत ज़रूरी है
फलते-फलते ही बेल फलती है।

संपर्क : 5-ग-17, जवाहर नगर, जयुपर-302004
मो.-9828089417

---

1. कई बार शहरों में ऐसी अफवाहें उड़ा ही जाती हैं कि घर के द्वारों पर महंदी के थापे लगा लो नहीं तो शहर में आई अज्ञात डायन उस घर का सर्वनाश कर देगी जहाँ उसे ये थापे नहीं दीखेंगे और बुद्धिजीवियों तक के द्वारों पर थापे लग जाते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माधव कौशिक की ग़ज़लें

(1)

दिलों की बंद खिड़की खोलना अब जुर्म जैसा है
भरी महफिल में भी सच बोलना अब जुर्म जैसा है।

परिंदों से कहो अब लौट आएँ आसमानों से
हवाओं में परों को तौलना अब जुर्म जैसा है।

कहाँ तो लोग, लोगों के दिलों में कैद रहते थे
कहाँ अपने ही दिल में झाँकना अब जुर्म जैसा है।

गुलामी का ज़हर सब के लहू में हो गया शामिल
बगावत के विषयों में सोचना अब जुर्म जैसा है।

ये कैसा वक़्त है, है वक़्त की ज़ालिम हवा कैसी
खुली आँखों से सपने देखना अब जुर्म जैसा है।

शराफत का मुलम्मा ओढ़ कर बैठे हुए लोगों
किसी भूखे का रोटी माँगना अब जुर्म जैसा है।

चलो हर ज्यादती को सहन कर ख़ामोश हो जाओ
शहर में इस तरह से चीखना अब जुर्म जैसा है।

(2)

किस कदर वाचाल निकली सुर्खियाँ अखबार की
खून से भी लाल निकलीं सुर्खियाँ अखबार की

लाद कर काँधे पे अपने रोज़ विक्रम सत्य का
झूठ का बेताल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

उम्र भर आतंक की, हिंसा की या फिर भूख की
आग से बेहाल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

कौन किसके पक्ष में देगा गवाही रात को
बाल की भी खाल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

मूठ तो तलवार की मालिक के हाथों में रही
जंग खाई ढाल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

मरते दम तक आदमी के जिस्म को जकड़े रहीं
जान का जंजाल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

खुश्क आँखों से बहाती ही रहीं आँसू सदा
वेश्या घड़ियाल निकली, सुर्खियाँ अखबार की।

परिचय

नाम : माधव कौशिक
जन्म-तिथि : 1.11.1954
जन्म स्थान : भिवानी (हरियाणा)
शैक्षिक योग्यता : एम.ए. (हिंदी), बी. एड., स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा
ग़ज़ल-संग्रह : 1. आईनों के शहर में, 2. किरण सुबह की, 3. सपने खुली निगाहों के, 4. हाथ सलामत रहने दो, 5. आसमान सपनों का, 6. नई सदी का सन्नाटा, 7. सूरज के उगने तक, 8. अँगारों पर नंगे पाँव
खंड-काव्य : 9. सुनो राधिका (पुरस्कृत), 10. लौट आओ पार्थ (पुरस्कृत)
नवगीत : 11. मौसम खुले विकल्पों का, 12. शिखर संभावना के
कथा-संग्रह : 13. ठीक उसी वक्त (पुरस्कृत)
कविता-संग्रह : 14. सबसे मुश्किल मोड़ पर, 15. एक अदद सपने की खातिर
बाल-साहित्य : 16. खिलौने मिट्टी के, 17. आओ अंबर छू लें
संपादन : 20. हरियाणा की प्रतिनिधि हिंदी कविता
आलोचना : 21. नवगीत की विकास यात्रा
संपर्क : मकान नं. 1110, सेक्टर-41 बी,
चंडीगढ़-160036
दूरभाष : 0172-2636992, **मो.** : 09888535393
Email : k.madhav9@gmail.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी की ग़ज़लें

(1)

अमन का नया सिलसिला चाहता हूँ
जो सबका हो ऐसा ख़ुदा चाहता हूँ।

जो हर दिल में इंसानियत को जगा दे
मैं जादू का ऐसा दिया चाहता हूँ।

कहा उसने धत् इस निराली अदा से
मैं दोहराना फिर वो ख़ता चाहता हूँ।

तू सचमुच ख़ुदा है तो फिर क्या बताना
तुझे सब पता है मैं क्या चाहता हूँ।

अँधरों से लड़ लूँगा बेशक अकेले
बस इक हौसले की सदा चाहता हूँ।

वहुत हो चुका डर के, छुप छुप के जीना
सितमगर से अब सामना चाहता हूँ

किसी को भंवर में न ले जाने पाए
मैं दरिया का रुख़ मोड़ना चाहता हूँ

मुझे ग़म ही बाँटे मुक़द्दर ने लेकिन
मैं सबको ख़ुशी बाँटना चाहता हूँ

ये कल नदिया से बोला समंदर
मैं तेरा ही होकर रहना चाहता हूँ

(2)

सांस लेना भर नहीं है, ज़िंदगी सोचो कभी
ज़िंदगी में ज़िंदगी, सचमुच है कितने फ़ीसदी।

उसको शायद इसलिए ही देर से मंज़िल मिली
वो हमेशा ऐसे रस्ते पर चला जो था सही।

कुछ न इस दुनिया का बिगड़ा इक न पत्ता तक हिला
कितनी जांबाज़ी से उस पागल ने की थी खुदक़ुशी।

सत्य को विषपान सूली या गोली का चलन
दौर कोई हो रही दुनिया हमेशा सरफ़िरी।

वाह रे मज़हब कि मुर्दा पत्थरों के वास्ते
आदमी बनते हैं क़ातिल और मरते आदमी

बस तभी तक गूँजते हैं तीरगी के क़हक़हे
जब तलक ख़ामोश बैठे देखती है रोशनी।

मैंने हैरत से ये देखा है कि मुश्किल वक़्त में
धूप के टुकड़े में ढल जाती है मेरी चाँदनी।

(3)

तू है बादल! तो, बरसा, जल।
एक शून्य को कितनी हलचल!
महल के नीचे मीलों दलदल।
नाम ही माँ का है गंगाजल।
छांव है ठंडी तेरा आँचल।
नन्हीं बिटिया नदिया कलकल।
तेरी यादें महकें हर पल।
और पुकारो खुलेगी सांकल।

(4)

सारे एहसास मरने लगे।
हम कहाँ से गुज़रने लगे॥

शर्म शैतान को आ गई।
लोग ऐसा भी करने लगे॥

एक जंगल लगे ये नगर।
ऐसे मंज़र उभरने लगे॥

आज के दौर की ज़िंदगी।
लोग किश्तों में मरने लगे॥

रूठ कर जो परिंदे उड़े।
फिर छतों पर उतरने लगे॥

फिर सियासत को भेजो खबर।
फिर मेरे ज़ख़्म भरने लगे॥

संपर्क : 304, लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली-110023
मो.-9899844933

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हरीलाल मिलन की ग़ज़लें

(1)

हर रात मेरे ख्वाब में आती है ज़िंदगी।
सच्चाइयों की चोट दिखाती है ज़िंदगी।

लूटा उसी ने बाग को सत्ता जिसे मिली,
यह राज आँसुओं से बताती है ज़िंदगी।

जिसको दिया था प्यार से सपना गुलाब का,
काँटे उसी अमीर से पाती है ज़िंदगी।

जीने की आरजू में गुलामी के दुर्ग से,
'आज़ाद है' आवाज़ लगाती है ज़िंदगी।

वादे की झील भी उसे तट से न छू सकी,
कहते हैं लोग, प्यास बुझाती है ज़िंदगी।

छोटी-सी बात पर भी उसे मौत का डर है,
कैसे जिए, सवाल उठाती है ज़िंदगी।

कुछ इस तरह उदास है मानो के हँस रही,
लगता है, कई राज़ छुपाती है ज़िंदगी।

(2)

रिक्शे पर दौलत वालों को ढोता आया रामलखन,
फिर भी जितना चाहा उतना जोड़ न पाया रामलखन।

लाला के पाँवों पर रख दी पगड़ी उसने इज्जत की,
पर, बेटी को ब्याह न पाया रोया-गाया रामलखन।

मैला गमछा, मैली धोती, कीचड़ में डूबी आँखें,
नई सभ्यता में समाज को तनिक न भाया रामलखन।

कभी भीड़ से थप्पड़ पाए कभी दरोगा से चाँटे,
समझ न पाया, जग की माया, ऐसी काया रामलखन।

तोड़ गईं सीमा विपदाएँ अब जीने की चाह नहीं,
ओझा-सोखा बचा ले गए विष भी खाया रामलखन।

विरह-मिलन का रोना-गाना तबसे ग़ज़लें भूल गईं,
शहर की सूनी आँखों पर जब से छाया रामलखन।

(3)

क्या मालूम कल इस जंगल में फिर बहेलिया आएगा,
किस-किस बेकसूर पंछी पर अपने बाण चलाएगा।

मर जाएँगे ये निरीह या सिर्फ बधिक रह जाएँगे,
तब बचाव के अस्त्र-शस्त्र को समय कहाँ दफ़नाएगा।

पशु-परिंदे भी फँसे भूख की सँकरी भूल-भुलैया में,
हिंसाएँ आगे-पीछे हैं कब तक, कौन बताएगा।

पूछ रहीं कलियाँ, फूलों से मन में ज्वालामुखी लिए,
आखिर, इस आतंकवाद को कब तक मौन निभाएगा।

दूर राजधानी में खोया राज ताज बचाने में,
दरबारी क्या जानें कल फिर हिंसक जाल बिछाएगा।

राख न कर दे वह चिंगारी जो जंगल के अंदर है,
यदि जंगल में आग लगी तो सिंहासन जल जाएगा।

(4)

कितने नए सवाल आज ढो रही दिल्ली
हँसती हुई लगती है मगर रो रही दिल्ली

लड़ता है दुराचार, सदाचार के लिए
हमको जगा रही है मगर सो रही दिल्ली

काटेगी वही सत्य-अहिंसा की क्या फसल
हिंसा-घृणा-विस्फोट जहाँ बो रही दिल्ली

कह भी नहीं सकती उन्हें कि वो हैं दरिंदे,
जिनसे सुबह-सुबह ही शाम हो रही दिल्ली।

अंजलि में राजनीति के हैं स्वार्थ का पानी,
कुर्बानियों का रक्त आज धो रही दिल्ली।

धूमिल हुए हैं कुछ इधर इतिहास के पन्ने,
लगता है आज वो नहीं, कल जो रही दिल्ली।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. गणेश गायकवाड़ की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. गणेश गायकवाड़
जन्म : 15 जनवरी, 1970
शिक्षा : एम.वी.बी.एस., एम.एस.
कृतियाँ : आग़ाज़ (काव्य संग्रह), चाँद का सफ़र (ग़ज़ल संग्रह), मंज़र बदल न जाए (ग़ज़ल संग्रह), नए सफ़र का आग़ाज़ (उर्दू ग़ज़ल संग्रह), आजादी रिटायर हो रही है (धारदार कविताएँ), कभी सोचा न था (ग़ज़ल संग्रह)
संपादन : धनक रंग ज़ज़्बे एवं आजादी की चुनिदां रचनाएँ
प्रकाशन : देश की कतिपय प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में
संप्रति : शल्य चिकित्सक एवं स्वतंत्र लेखन
संपर्क : स्वर्ण नगर, बुल्डाणा (महाराष्ट्र)
दूरभाष : 07262-244765, **मो. :** 09850377609

(1)

इस दौर ने हमें भी सँवरने नहीं दिया
हालात ने उसे भी उबरने नहीं दिया।

दिल की वो बस्तियां भी उजड़ती चली गई
मंजर कोई सुहाना सफर ने नहीं दिया।

बरसात ना हुई तो दरकने लगी जमीन
मौसम ने फस्ल को ही लहरने नहीं दिया।

दुश्मन ने लाख चाहा मुझे कत्ल ही करे
एक साये ने ही मुझको बिखरने नहीं दिया।

खुशफहमी की सिढ़ी पे जो हम चढ़ते ही गए
यारो ने फिर जमी पे उतरने नहीं दिया।

(2)

मेरी वफा की जमाना मिसाल देता है
वही बनाके बहाने क्यूँ टाल देता है।

हुए जो हल वो मसाइल सभी पुराने थे
नए नए वो हमें अब सवाल देता है।

अजब इलाज मसीहा का हमने देखा है
नमक मरीज के जख्मों पे डाल देता है।

कोई किसी की निगाहों में डूब जाएगा
किसी-किसी को समंदर उछाल देता है।

वो मुस्करा के यहाँ की फजा बदल देगा
किसी-किसी को खुदा ये कमाल देता है।

खुदा ए पाक तेरा ये करम रहा मुझ पर
हमेशा मुझको तू रिज्के हलाल देता है।

(3)

उजालों के लिए ऐसी हिमाकत कौन करता है
जला कर घर अँधेरों से बगावत कौन करता है।

कभी तुम भी जरा चलकर हमारे शहर में देखो
हवाओं में चरागों की हिफाजत कौन करता है।

उठाकर खाकसे मुझको सितारों में बिठाया है
खुदा तेरे सिवा ऐसी इनायत कौन करता है।।

चुराकर यूँ सभी का दिल निगाहें फेर लेता है
मुहब्बत में दिलों की ये तिजारत कौन करता है।

कोई दस्तक हुई तो है मगर दर पर नहीं कोई
हमारे साथ अक्सर ये शरारत कौन करता है।

जलाकर घर हमारे फिर बुझाने दौड़ आता है
हमारे हाल पर ऐसी सियासत कौन करता है।

महकता हूँ कहीं जो मैं बहकती हैं हवाएँ सब
मुझे मालूम है मेरी शिकायत कौन करता है।

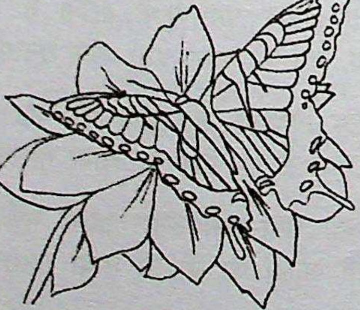

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनिरुद्ध सिन्हा की ग़ज़लें

(1)

दर्द की सारी हदों से पार होना चाहिए
ज़ख़्म के फूलों से इतना प्यार होना चाहिए

दिल मिले ऐसा कि जैसे शब्द होंठों से मिले
क्या जरूरी इश्क़ को अखबार होना चाहिए

साथ में चलते उजाले रास्ते देंगे ज़रूर
शर्त है मंज़िल से भी दो चार होना चाहिए

शोर है चारों तरफ ली फूल ने अंगड़ाईयां
रुत बहारों की है तो इजहार होना चाहिए

आँख की पहचान खातिर दिल के वीराने में भी
बेज़ुबाँ ख़्वाबों का इक संसार होना चाहिए

(2)

दिलों को याद जो आए कहानी छोड़ देता है
वो ऐसा ज़ख़्म देता है निशानी छोड़ देता है

कभी गुल के हवाले से मुझे आवाज़ देता है
कभी आँखों में अश्क़ों की रवानी छोड़ देता है

वो अपने गाँव का साया शहर से दूर रखता है
बताने के लिए माँ की ज़ुबानी छोड़ देता है

तेरे आने के धोखे में रहा मैं रात भर ऐसे
कि जैसे भूख से बचपन जवानी छोड़ देता है

चिरागों का धुँआ लेकर भरी बरसात में चुपके
गुज़रते वक़्त की रंजिश पुरानी छोड़ देता है

(3)

सवाल जैसे वो कल के लम्हे हँसी-हँसी में गुज़ार देंगे
कभी सुबह की मिली जो आहट तो सारे किस्से उचार देंगे

ज़ुबान वाले ये कह रहे हैं सियासतों की ज़मीन देकर
धुली हुई इस नई सदी में नसीब अपना सँवार देंगे

हज़ार कोशिश है बारिशों की न भींग पाएं तमाम बच्चे
दिलों की दरियादिली में सागर घटा की चाहत नकार देंगे

सुना है ज़ख़्मों से करके वादा वो तोड़ देंगे पुराने टाँके
लहू में देकर वफा का मरहम हमारी रग में उतार देंगे

हमारे बच्चे जवाब देंगे हवेलियों से हिसाब लेंगे
फफोले जिस्मों के फोड़ देंगे निशान सारे उभार देंगे

(4)

अपने रिश्तों की खुशबू से दूर लगा
प्यार निभाना शर्तों पर दस्तूर लगा

रोज़ नया इक मोड़ लिया है मौसम ने
आग-हवा-पानी कितना मजबूर लगा

आख़िर कैसे तन्हा होकर हँसता मैं
हर कोई जब अपने ग़म में चूर लगा

मौसम की चौखट पर भावुक साँसों से
पलकों पर आँसू आना मंज़ूर लगा

रख लेता छोटी चादर में चाहत को
लेकिन घर का मौसम कुछ बे नूर लगा

संपर्क : गुलज़ार पोखर, मुंगेर-811201 (बिहार)
मो. 09430450098

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नरेश शांडिल्य की ग़ज़लें

परिचय

नाम : नरेश चन्द्र शर्मा।
साहित्यिक नाम : नरेश शांडिल्य
जन्म तिथि : 15 अगस्त, 1958
जन्म स्थान : नई दिल्ली
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी)
प्रकाशित कृतियाँ : 'टुकड़ा-टुकड़ा ये ज़िंदगी' (काव्य संग्रह), 'दर्द जब हँसता है' (दोहा-काव्य संग्रह), 'नाट्य प्रस्तुति में गीतों की सार्थकता' (शोधकार्य) 'मैं सदियों की प्यास' (ग़ज़ल संग्रह)
पत्रकारिता/संपादन : 'अक्षरम सगोष्ठी' अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी, अंतर्राष्ट्रीय मासिक पत्रिका 'प्रवासी टाइम्स' का रचनात्मक निदेशक
संप्रति : यूनियन बैंक में सेवारत/नाट्य गीत लेखन एवं नाट्याभिनय स्वतंत्र लेखन
संपर्क : ए-5, मनसाराम पार्क, संडे बाज़ार रोड, उत्तम नगर, नई दिल्ली 110059

(1)

पिंजरे में भी पर रखना
ऊँचा अपना सर रखना

लाख रहो बाहर लेकिन
भीतर अपना घर रखना

प्यार करोगे तो सीखो
सीने पर पत्थर रखना

ये जो अपने बनते हैं
इन पर ख़ास नज़र रखना

लौटानी भी है इक दिन
उजली ये चादर रखना

(2)

वक़्त लहू से तर लगता है
इस दुनिया से डर लगता है

इंसानों के धड़ के ऊपर
हैवानों का सर लगता है

बाज़ के पंजों में अटका वो
इक चिड़िया का पर लगता है

रिश्ते-नाते पलड़ों पर हैं
बाज़ारों-सा घर लगता है

जितना ज़्यादा सच बोलें हम
उतना ज़्यादा कर लगता है

(3)

आफ़त हैं वो बला हैं, ये जानते हैं हम भी
उनसे मिले बिना पर, कब मानते हैं हम भी

वो कोहेनूर देखें आख़िर किसे मिलेगा
यूँ ख़ाक उस गली की तो छानते हैं हम भी

वो एक बार कह दें, हम बोझ हैं ज़मीं पर
उठ जाएँगे उसी पल, लो ठानते हैं हम भी

फुरसत ही गर नहीं है, पढ़ने की यारो उसको
काग़ज़ को फिर क़लम से क्यों सानते हैं हम भी

जाएँ भले कहीं भी, लौटेंगे अपने घर ही
इतना तो यारो ख़ुद को पहचानते हैं हम भी

(4)

कोई हमें ख़बर दे, हम ख़ाक हो रहे हैं
जलते शरर जिगर के अब ताप खो रहे हैं

दरपन तलक भी हमसे सच को लगा छिपाने
सबके छिपे इरादे अब साफ़ हो रहे हैं

बढ़ती ही जा रही है फ़ेहरिस्त दुश्मनों की
अब उँगलियों पे गिन लें कुछ दोस्त जो रहे हैं

अब रंग वो नहीं है, अब संग वो नहीं हैं
फागुन की रुत को भी हम पतझर-सा ढो रहे हैं

बस कुछ पलों में ऐ दिल होने को चाँदनी है
पलकों में डबडबाया हम चाँद बो रहे हैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नूर मुहम्मद 'नूर' की ग़ज़लें

(1)

हर इक से प्यार की चाहत ने मारा
मुझे, मेरी इसी आदत ने मारा
ये फ़िक्रोफन ये नज़्में और ग़ज़लें
मुझे अलफाज़ की सोहबत ने मारा
न शाइर बन सका ढ़ंग का न इसां
हुई ग़फलत इसी ग़फलत ने मारा
लिया था बाँध तूफ़ानों को मैंने
मुझे मेरी इसी ताक़त ने मारा
मैं ख़ुद को भीड़ में पहचानता था
मुझे मेरी इसी शोहरत ने मारा

(2)

मैं उलझता रहूँगा ख़ारों से
मुझको कुछ काम है बहारों से
क्यो न रोऊँगा अपने लफ़्ज़ों में
मेरा रिश्ता है आबश्यारों से
अब तो खुलकर के बोलिए साहब
बात बनती नहीं इशारों से
पहले जलिए तो कोएले की तरह
आंच भी जाएगी शरारों से
लाँघकर जंगलों, पहाड़ों को
अब भी गुज़रुँ मैं रेगज़ारों से
'नूर' बैठो अभी अँधेरे में
रौशनी आ रही है तारों से

(3)

मुझे खींचा मुझे ताना गया है
मुझे तब जाके पहचाना गया है
कि पहली बार दुश्मन बस्तियों में
मुझे दुश्मन नहीं माना गया है
जहाँ पहुँची नहीं मेरी हक़ीक़त
वहाँ तक मेरा अफसाना गया है
न सूझे शे'र तो लगता है जैसे
मेरा पानी मेरा दाना गया है
तख़ल्लुस 'नूर' क्या यूँ ही है मेरा
अँधेरे से मुझे छाना गया है

परिचय

नाम : नूर मुहम्मद 'नूर'
जन्म : 17 अगस्त, 1954, गाँव, महासन, महुअवा कारखाना, जिला-देवरिया (उ.प्र.)
मातृभाषा : भोजपुरी
अन्य भाषाएँ : उर्दू, अरबी, फारसी, अंग्रेजी और बांग्ला लेखन हिंदी भोजपुरी में साहित्य की हर विधा में विगत तीन दशकों से सक्रिय। दो दर्जन कहानियाँ, विभिन्न विधाओं की पचास पुस्तकों की समीक्षा, ढेरों व्यंग्य रचनाएँ, आलोचना लेख, लघुकथाएँ, कविताएँ आदि हिंदी की विभिन्न लघु-पत्रिकाओं में प्रकाशित। उर्दू, बांगला, अंग्रेजी और उड़िया से अनगिनत रचनाओं का फुटकर हिंदी अनुवाद कई एक साप्ताहिकों, दैनिकों में परिशिष्ट संपादन एवं व्यंग्य-स्तंभ लेखन। नुक्कड़ नाटकों में अभिनय। आकाशवाणी दूरदर्शन से काव्यपाठ। दर्जनों काव्य संकलनों, ग़ज़ल संग्रह में रचनाएँ शामिल। कविताओं की पहली किताब 'ताकि खिलखिलाती रहे पृथ्वी' फरवरी, 1997 में, 'प्रतिध्वनि' कलकत्ता द्वारा प्रकाशित और एक कहानी संग्रह 'आवाज़ का चेहरा' (2003) में विकास प्रकाशन कोलकाता द्वारा प्रकाशित।
संप्रति : दक्षिण पूर्व रेलवे मुख्यालय के दावा विधि विभाग कोलकाता में प्रधान लिपिक
संपर्क : सी.सी. एम. कॉम्प्लेक्स, लॉ सेक्सन, दक्षिण पूर्व रेलवे 3, कोयलाघाट स्ट्रीट, कोलकाता-1, **मोबाइल :** 09433203786

(4)

अभी रख हासिलों से दूर मुझको
अभी मंज़िल नहीं मंज़ूर मुझको
इसी से मैं निकलता हूँ सँवर कर
किए जा और चकनाचूर मुझको
मेरी गुमनामियाँ बेइंतिहा हैं
ये करता कौन है मशहूर मुझको
जो शय करती है मेरा क़त्ल हर पल
जिलाती है वही भरपूर मुझको
बता तो 'नूर' क्या ज़ालिम अँधेरा
बना डालेगा कोहेनूर मुझको

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विनय मिश्र की ग़ज़लें

परिचय

नाम : विनय मिश्र
जन्म तिथि : 12.8.1966
जन्म स्थान : देवरिया (उत्तर प्रदेश)
शैक्षणिक योग्यता : एम.ए., पी-एच.डी. जूनियर एवं सीनियर रिसर्च फेलोशिप प्राप्त (यूजीसी)
संप्रति : राजकीय कला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलवर में एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी विभाग) के पद पर कार्यरत
प्रकाशन : पिछले तीन दशकों से देश के सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ एवं आलेख अनवरत प्रकाशित 'दीप ज्योति' पत्रिका के 'तुलसी' विशेषांक का संपादन (1998) 'शब्द कारखाना' (मार्च-मई, 2007 अंक) हिंदी की त्रैमासिक पत्रिका के समकालीन ग़ज़ल विशेषांक का अतिथि संपादन। 'स्व. मंजु अरुण की प्रतिनिधि रचनाओं के संग्रह 'पलाश वन दहकते हैं' का संपादन (सितंबर, 2009) 'जहीर कुरैशी : महत्त्व और मूल्यांकन' पुस्तक का संपादन (अगस्त, 2010)
स्थायी पता : बी-161, हसन खाँ मेवाती नगर, अलवर-1 (राज.)
मोबाइल : 09414810083, **दूरभाष** : 0144-2730188

(1)

लहर है औ' उछाल है मुझे भी अब पता चला
समद्रु-सा ख़याल है मुझे भी अब पता चला

बहुत बहस हुई है अब कोई तो फैसला करे
ये ज़िंदगी सवाल है मुझे भी अब पता चला

हरेक शख़्स चढ़ उतर रहा है मोल भाव में
हरेक शख़्स माल है मुझे भी अब पता चला

है चाँद उनके हाथ में कोई लपक के छीन ले
किसी की क्या मजाल है मुझे भी अब पता चला

मुझे कहा गया था मोड़ पर ही इंतजार कर
उसे भी अब मलाल है मुझे भी अब पता चला

लहर-सी एक प्यास है बहाव ढूँढ़ती हुई
नई सदी का हाल है मुझे भी अब पता चला

चमक रही है दूर तक उदासियों में रौशनी
ये ख़्वाब भी कमाल है मुझे भी अब पता चला

(2)

ये अँधेरे कह रहे हैं रोशनी की बात कर
मौत के हालात में भी ज़िंदगी की बात कर

मुश्किलों से रात-दिन लड़कर भी जो हारा नहीं
राह में चलते हुए उस आदमी की बात कर

एक तपती रेत का सैलाब है अब सामने
आ गया हूँ किस जगह मैं भी नदी की बात कर

किस तरह बिखरे हुए हालात में है यह न देख
आज बस उस शख़्स की जिंदादिली की बात कर

इन दुखों की धूप में झुलसे हुए सदियाँ हुई
आँख भर आयी है मेरी अब खुशी की बात कर

चाहतों में तैरती है एक खुशबू पीर की
गुनगुना लेकिन यहाँ मत बेबसी की बात कर

देखता हूँ हर तरफ इक मायूसी है बरकरार
तुझमें कोई ख़्वाब है तो ताज़गी की बात कर

(3)

आँसुओं की गोद में डाला गया
मैं बड़े ही प्यार से पाला गया

ज़िंदगी है मौत है सच और है
एक पर्दा इस तरह डाला गया

राख होकर उड़ गई उम्मीद जब
शुक्र है तब आँखों का जाला गया

सोच में प्रतिकार के कुछ शब्द थे
और डाला जीभ पर ताला गया

मैं अकेला था तो अपनाता कोई
लापता दृश्यों में क्यों डाला गया

एक वीरानी मेरा बिस्तर बनी
इस तरह अस्तित्व को ढाला गया

राह अब तक गुनगुनाती है जिसे
क्या इधर से कोई मतवाला गया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अशोक 'अंजुम' की ग़ज़लें

(1)

ये ज़मीं साथ रहे, आसमान साथ रहे
मैं सच कहूँ, और मेरी ज़बान साथ रहे

वो शख़्स बढ़ता है जितना भी बुलंदी की तरफ
बताओ उसको कि उतनी ढलान साथ रहे

सफ़र की आग सितारों में कहीं खो जाए
यूँ न हो तुझसे मिलूँ और थकान साथ रहे

यूँ कबूतर अमन के उसने उड़ाए हर सू
मगर हमेशः ही तीरो-कमान साथ रहे

हयात बख़्शी है मुझको तो वो हुनर भी दे
करूँ मैं आरती जिस पल अजान साथ रहे

वो सादगी वो हँसी, वो तेरे थिरकते लब
मैं घर से दूर रहूँ तेरा गुमान साथ रहे

नहीं है कौन जो बाज़ार की न जद में हो
चले हैं राह पे लेकिन दुकान साथ रहे

(2)

यूँ परवतों से उतरती है शान पानी की
के गीत छेड़ रही है जुबान पानी की

ये जो बादल हैं परिंदे हैं अर्श पर फैले
या कि निकली है सफ़र पे उड़ान पानी की

बढ़ी जो प्यास तो दर्‌या ने भी मुँह मोड़ लिया
लगी हैं जाल बिछाने दुकान पानी की

ये कहीं राह में बेसुध न हो के गिर जाए
यूँ बढ़ रही है मुसलसल थकान पानी की

ये शह्र बढ़ रहे हैं ले के क़ातिलों का हुजूम,
मुझे है डर कि ये ले लें न जान पानी की।

(3)

सबको चुभती रही मेरी आवारगी
मुझमें सबसे भली मेरी आवारगी

रंग भरे सजाकर विधाता ने तब
रफ़्ता-रफ़्ता रची मेरी आवारगी

वक़्त ने यूँ तो मुझसे बहुत कुछ लिया
जाने क्यों छोड़ दी मेरी आवारगी

जुल्मतें-जुल्मतें हर तरफ जुल्मतें
चाँदनी-चाँदनी मेरी आवारगी

ज़िंदगी की डगर में जो काँटे चुभे
बन गई मखमली मेरी आवारगी

हादसों ने कसर कोई छोड़ी नहीं
मेरी रहबर बनी मेरी आवारगी

(4)

लोग देते रहे दुआ यूँ ही
कारवाँ फिर भी लुट गया यूँ ही

तेरी यादें थीं और तनहाई
चाँद देता रहा सदा यूँ ही

तुम पे विश्वास करके जीते थे
हो गए तुम भी बेवफा यूँ ही

एक दुनिया उजड़ गई पल में
कर दिया तुमने फैसला यूँ ही

मैंने पूछा कि क्यों नहीं आए?
तुमने मुसका के कह दिया यूँ ही

संपर्क : संपादक-अभिनव प्रयास
615, ट्रक गेट, कासिमपुर (पावर हाउस)
अलीगढ़-202127
मो.-09258779744

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फ़साहत अनवर की ग़ज़लें

परिचय

नाम : फ़साहत अनवर

शिक्षा : एम.ए., बी.एड., मुअल्लिम (उर्दू)

प्रकाशित कृतियाँ : खुशबू (ग़ज़ल संग्रह), महक (ग़ज़ल संग्रह), यीशु महिमा (दोहावली), जग के पालन हार हमारे-यीशु हैं (कविता संग्रह)

संबद्धता : आकाशवाणी आगरा केंद्र

प्रकाशन : देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित

सम्प्रति : वरिष्ठा अध्यापक, सेंट थोमस सीनियर सैकण्डरी स्कूल, मैनपुरी (उ.प्र.)

प्रकाशनाधीन : आईना (ग़ज़ल संग्रह), दरीचे (कहानी संग्रह), दीवारो-दर (नज़्म संग्रह) फासले (उपन्यास)

संपर्क : 370, दरीबा, मैनपुरी-205001 (उ.प्र.)

मो.- 9997921366, 9368626422

(1)

कुछ नहीं हासिल हुआ है उसको इतराने के बाद
वो भी बेघर हो गया है मेरा घर ढाने के बाद

आ गई मेरी समझ में शहर की सच्चाइयाँ
मैं कभी भी हँस न पाया गाँव से आने के बाद

मैंने ही रखखा है लोगों पारसाई का भरम
तोड़ दी हर शख़्स ने तौबा घटा छाने के बाद

बंद मुट्ठी थी तो सब करते थे झुक झुक कर सलाम
फेर लीं दुनिया ने नज़रें हाथ फैलाने के बाद

मुश्किलें ही मुश्किलें हैं आज कल परदेस में
आ गया मेरी समझ में ठोकरें खाने के बाद।

शाह होकर भी फ़क़ीरी को बनाया हमसफ़र,
सो गया काँटों पे मैं फूलों को बरसाने के बाद।

इसलिए मैं जी रहा हूँ आज तक संसार में,
किसको वो कोसेगा 'अनवर' मेरे मर जाने के बाद।

(2)

अभी तो यारो घुटनों-घुटनों पानी है
इतनी जल्दी नहीं क़यामत आनी है

दौलत-शौहरत-रुतबा सब हासिल उसको
फिर क्यों उसने मर मिटने की ठानी है

बेशरमी को 'वैलेनटाइन डे' कहना
भारत के नवयुवकों की नादानी है

बिरजू को मस्जिद से कोई बैर नहीं
मंदिर में आता-जाता रमज़ानी है

उम्र बढ़ाता है शाकाहारी भोजन
जान की दुश्मन बन जाती बिरियानी है

सदियाँ गुज़रीं मरे हुए 'डलहौज़ी' को
ज़िंदा अब तक झाँसीवाली रानी है

दौड़ रहे हो क्यों 'अनवर' पीछे-पीछे
नहीं जानते हो कि दुनिया फानी है

(3)

मुझसे हर पल आँख चुराना आखिर क्यों?
दुश्मन के घर आना-जाना आखिर क्यों?

मेरे उसके जुर्म में कोई फ़र्क़ नहीं,
फिर मुझ पर इतना जुर्माना आखिर क्यों?

जान निछावर करने से हम डरते हैं,
दूर है शम्मा से परवाना आखिर क्यों?

अपने घर की चटनी-रोटी अच्छी है,
ढूँढे वो परदेस में आबो-दाना क्यों?

मुट्ठी में जो बंद किए है सूरज को?
उसको जुगनू से बहलाना आखिर क्यों?

मुझको तो हर पल पीने की आदत है,
उसकी आँखों में मयखाना आखिर क्यों?

'अनवर' तेरी ग़ज़लों के सब दीवाने,
तू है ग़ालिब का दीवाना आखिर क्यों?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. कपिल कुमार की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. कपिल कुमार
जन्म : 2 जनवरी, 1935
जन्म स्थान : हाथरस (उ.प्र.)
शिक्षा : बी.कॉम
कृतियाँ : 'काजल की रेखा' 'बुरा भला', 'आवेश' (तीनों उपन्यास), 'नन्हें मुन्ने' (बाल गीत संग्रह), 'कहें कपिल कविराय' (कुंडलियों का संग्रह), 'हल्दी लिपटे हाथ' (काव्य संग्रह)
प्रकाशन : देश की सुस्थापित स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन
संप्रति : फिल्मों में अभिनय तथा गीत संवाद लेखन
संपर्क : 4, गंगा भवन, सम्मुख सेंट थेरेसा चर्च, 24 वां रास्ता बांद्रा (प.) मुंबई-400050 (महाराष्ट्र)

(1)

अच्छा हो, खोटा सिक्का चलने से थम जाए।
गंगाजल गंदा बन कर बहने से थम जाए।
हरियाली की दुश्मन-सी अब धूप नहीं निकले,
परदेसी खुद को सावन कहने से थम जाए।
इंसानों की फ़ितरत में आ जाए तब्दीली,
दुनिया की सारी रौनक जलने से थम जाए।
समझ सके तो आज आदमी अपनापन समझे,
दिल में बेगाना कोई बसने से थम जाए।
'कपिल' किसी के लिए ज़लज़ला, कहीं सुनामी है,
कोशिश करते रहो कि वह डसने से थम जाए।

(2)

जब कभी हमला किया है बेवजह कठिनाइयों ने।
सामना उनका किया है पुण्य की अच्छाइयों ने।
छोड़ कर जाते सभी, आता न कोई संग अपना,
देखिए तो साथ उस पल भी दिया तनहाइयों ने।
चल रहे, चलते रहेंगे कारवां नादानियों के,
हर घड़ी दुनिया बचाई सत्य की गहराइयों ने।
दूर देशों से हवा बहती रही, कहती रही है,
वेद-मंत्रों को सुनाया आज तक पुरवाइयों ने।
गीत-ग़ज़लों से दग़ा जब-जब मिली कवि-शाइरों को,
साथ उनका तब निभाया मुक्तकों-रूबाइयों ने।
जो कुछ मिला, जैसा मिला, जिसको मिला, उसका नहीं,
तार जोड़े हैं सुरीले-से 'कपिल' शहनाइयों ने।

(3)

ज़िंदगी चलने लगी तो सब दिशाएँ थम गईं।
प्यार की बूँदें गिरीं तो सब घटाएँ थम गईं।
मौसमों के साथ मन व्याकुल-मगन जिस पल हुआ,
पंख गीतों के उड़े तो कल्पनाएँ थम गईं।
भावनाओं को भरोसा जब मिलन का मिल गया,
आसमां के साथ सारी अस्मिताएँ थम गईं।
जन्म से रिश्ता जुड़ा हे प्रीति का, संयोग का,
देख खुशियों के सफ़र को वेदनाएँ थम गईं।
आह जब निकले यहाँ तो वाह भी होती वहाँ,
हर वियोगी की व्यथा सुनकर व्यथाएँ थम गईं।
साथ जो भी चल पड़ा, बस हो गए उसके 'कपिल',
बेवफ़ाई की डगर पर क्यों वफ़ाएँ थम गईं।

(4)

तितलियों के साथ जब भँवरा ग़ज़ल गाने लगा।
हमको तनहाई का मंज़र और भी भाने लगा।
मिल गया हमदम हुई आवारगी से दोस्ती,
आईना अपना हमें दुश्मन नज़र आने लगा।
आसमां से जब कभी दो बूँद टपकीं प्यार की,
तब ज़मीं की ज़िंदगी में बीज मुसकाने लगा।
हम न करते थे कभी दिल से ज़रा-सी गुफ़्तगू,
देखिए अव दिल हमारा छोड़ कर जाने लगा।
चाँद-तारे देखते हैं अब हमारा रतजगा,
लिखते-लिखते काग़ज़ों पर कोई शरमाने लगा।
उम्र के उस पार जाने को 'कपिल' तैयार थे,
मनचला मन कुछ घड़ी रुकने को वहकाने लगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

ग़ज़ल की लोकप्रियता के आयाम

❑ डॉ. रामबहादुर चौधरी 'चंदन'

सार्थक रचना वही है जिससे पाठकों का सरोकार जुड़ा हो, फिर चाहे कविता हो, कहानी हो या अन्य कोई विधा। इस अर्थ में आज ग़ज़ल की सार्थकता सिद्ध हो चुकी है। वैसे यह सच है कि प्रायः सभी प्रकार की रचनाओं का आंतरिक उद्देश्य कमोवेश पाठकों के सरोकार से जुड़ा रहता है, लेकिन यह सरोकार प्रायः भाषा, शिल्प, भाव, संवेदना, विचार, अनुभूति, संरचना और अंतर्वस्तु के दुर्बोध अंधकार में उलझकर रह जाता है। ऐसे में रचना का पाठकों से सीधा संवाद नहीं हो पाता है। अतएव रचना लोकप्रिय नहीं हो पाती है। आज की हिंदी कविता बौद्धिकता के इसी इंद्रजाल में उलझकर रह गई है। वह आमजन से जुड़ने का जितना अधिक प्रयास या प्रयास का नाटक करती है, वह उतना ही दूर होती जा रही है। ऐसे में समकालीन हिंदी ग़ज़ल ही है जो कविता से विमुख होते पाठकों को फिर से काव्य विधा की ओर आकर्षित करने में कामयाब हो रही है। इसमें निश्चित रूप से ग़ज़ल की छांदसिक बनावट, उसकी क्षिप्रता, कशिश, तग़ज्जुल, रवानी, व्यंजकता, रागात्मकता, परिपक्व अनुभूति की आत्मीयता, संप्रेषणीयता तथा शब्दानुशासन की महत्ता का अपूर्व योगदान है। इसमें शे'र की दो पंक्तियों के बीच से शायर को अपनी पूरी कहन के साथ प्रभावी ढंग से सलामत गुजरना पड़ता है। ठीक उसी तरह जैसे गंभीर मेघ-मालों के बीच से बिजली चमककर अचानक सबका ध्यान आकर्षित कर लेती है। ग़ज़ल के अंदाज़ेबयां का तेवर ही कुछ अलग होता है, जिसके चुम्बकीय आकर्षण में हम अक्सर खींच जाते हैं और हमारे मुँह से बरबस आह या वाह निकल जाता है। ग़ज़ल में फक़त शे'र होते हैं, कोई जंगल नहीं—

पहेली-सी लगे लेकिन, हक़ीक़त है यही 'चंदन'
ग़ज़ल में शे'र होते हैं मगर, जंगल नहीं होता

प्रश्न उठ सकता है कि आखिर ग़ज़ल में ऐसा क्या है जिससे कविता की डूबती नैया को बचाने का इसे श्रेय दिया जा रहा है? इस छोटे-से प्रश्न का उत्तर पाने के लिए हमें ग़ज़ल के इतिहास, भूगोल, उसकी बनावट, बुनावट, उसके छांदसिक स्वरूप तथा समकालीनता की विभिन्न चुनौतियों से जूझने के उसके तीक्ष्ण तेवर को परखना होगा। परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तित उसके नए स्वरूप को समझना होगा। उसकी आंतरिक कशिश के एहसास को महसूस करना होगा। लेकिन इस छोटे से आलेख में इन तमाम बिंदुओं की परिक्रमा करना न तो संभव है और न अपेक्षित ही। आए दिन इन तमाम बिंदुओं पर विभिन्न विद्वानों द्वारा विषद् विवेचन होते रहे हैं। अतः हम यहाँ केवल समकालीन ग़ज़ल की कुछ विशिष्ट पहलुओं को छूने का प्रयास करेंगे, जिसके बीना पर आज की ग़ज़ल सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त कर सकी है।

ग़ज़ल मनुष्यता से संवेदना का संवाद है। यह बूँद में समुद्र के समान है। जैसे सागर की एक बूँद से समस्त सागर के खारेपन का एहसास हो जाता है, ठीक उसी तरह एक शे'र में शायर के समस्त वजूद के साथ उसके कथन, कहन और उसकी साधना का आकलन हो जाता है। ग़ज़ल में मानवीय पीड़ा की गहरी गूंज ही नहीं होती अपितु जीवन के अंतर्विरोधों एवं जटिलताओं से जूझने का जज़्बा भी होता है। इसके छांदस स्वर में ज़िंदगी की गहरी तड़प को व्यक्त करने की अपूर्व ताकत होती है। यह सच है कि ग़ज़ल को सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त करने के क्रम में लम्बी यात्रा तय करनी पड़ी। इस दरमियान उसे कठिन सामयिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। महलों और महफिलों से निकलकर आमजनों के बीच आने में, उसके सुख-दुःख में शरीक होने में लंबा समय लगा। इसके लिए समयानुसार सांकेतिक प्रतीकों, नए मुहावरों और बिंबों को आत्मसात् करना पड़ा। इश्क़-मुहब्बत के सीमित दायरे से निकलकर उसे अपनी व्यक्तिगत पीड़ा को समष्टिगत करना पड़ा। ऐसा करने से ही आज की ग़ज़ल व्यापक जीवन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संदर्भ से जुड़ सकी तथा साहित्य ही नहीं, समाज में भी स्थापित हो सकी। इसके लिए उसे अपने पुराने खयालों को छोड़कर युगानुरूप परिस्थितियों के अनुरूप अपने स्वरूप को भी ढालना पड़ा। निश्चित रूप से नई दुनिया को नई दृष्टि से देखने का उसका प्रयास उसे निरंतर जीवंतता प्रदान करता रहा।

भाषिक तौर पर विभेद किए बिना हिंदी के ग़ज़लकारों ने फारसी के इस प्रसिद्ध काव्यरूप को समय की माँग के अनुरूप अपने कठिन साधनों से सिद्धकर, सामयिक संदर्भो की जटिलता को बड़ी आत्मीयता और सहजता से भेद कर जनसामान्य की चेतना का इसे अभिन्न अंग बना दिया। उनके जन-जीवन से गहरे जुड़ाव और सचेत जिम्मेदार काव्यबोध ने अमानवीय व्यवस्था से मानवीय संघर्ष के पक्ष में अपनी संपूर्ण शक्ति लगा दी। अपनी गहरी समझ की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने विवेकपूर्ण साहस का परिचय दिया। इस नई काव्यदृष्टि के आलोक में ग़ज़लकार की ग़झिन अनुभूति की सहज संप्रेषणीयता ने ग़ज़ल को लोकप्रियता का नया आसमान दे दिया। समकालीनता की चुनौतियों से टकराती ग़ज़ल की यह वेगवती धारा आज जन-मन को तृप्ति प्रदान करने का प्रयास कर रही है।

ग़ज़ल एक गंभीर काव्य विधा है। इसका स्वभाव और मिजाज ही अलग होता है। इसमें जीना होता है, मरना होता हैं। यह आग का दरिया है जिसमें डूबकर जाना होता है। यह गहनतम एहसास के तीक्ष्ण अनुभूति की कलात्मक अभिव्यक्ति है जो पाठकों या श्रोताओं से सीधा संवाद करती हुई व्यक्ति, व्यवस्था, समाज और समय की विद्रूपताओं को व्यंजित करती है। रदीफ और काफिए की तुकबंदी मात्र ग़ज़ल नहीं है। यह विधा गंभीर अध्ययन और गहन अनुभूति की अपेक्षा करती है। असंवेदनशील होते इस समय में संवेदनशीलता की संवाहिका ग़ज़ल विधा की समालोचकीय उपेक्षा शायद हमसे कुछ और अधिक गंभीरता की अपेक्षा करती है। वैसे यह भी सच है कि उड़ती निगाह से इसकी कशिश, इसके पैनेपन को नहीं परखा जा सकता है। यह दुर्भाग्य है कि समालोचना के पंडितों द्वारा इसे आज भी अछूत मानकर ही व्यवहार किया जाता है। न जाने इसके बारे में उनके मन की पूर्ण धारणा का भूत कब तक उन्हें भरमाता रहेगा? लेकिन यह सच है कि इसकी विस्तृत पाठकीय स्वीकृति और लोकप्रियता निश्चित रूप से उन्हें भी कलम उठाने के लिए बाध्य कर देगी। बशर्ते कि इस चुनौती को कसौटी मानकर खरा उतरने के लिए हमें और अधिक श्रम और साधना में तपना होगा। तभी यह लोगों के दिलों में ही नहीं, बल्कि पाठ्यक्रमों में भी अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकेगी।

संपर्क : फुलकिया, बरियारपुर, मुंगेर : 811211, (बिहार)
मोबाइल : 9204636510

परती पलार का इस वर्ष का विशेष आकर्षण

'नारी कथाकार विशेषांक'

के लिए भारतीय एवं प्रवासी भारतीय महिला कथाकारों से उनके संक्षिप्त परिचय एवं पासपोर्ट साईज के हालिया फोटो सहत उनकी सर्वथा अप्रकाशित उद्देश्यपूर्ण एवं प्रेरणास्पद मौलिक कहानी या/और नारी कथाकारों से संदर्भित शोधपरक आलेख रचना के अप्रकाशित होने के प्रमाण-पत्र सहित दिनांक **31 मई 2012** तक सादर आमंत्रित हैं। रचना के अंत में भी रचनाकार का हस्ताक्षर एवं पूर्णयता वांछित। लंबी कहानी स्वीकार्य नहीं है।

–नमिता सिंह
प्रधान सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

समकालीन हिंदी ग़ज़ल और सामाजिक सरोकार

❑ प्रेम कुमारी कटि

जिस तरह हिंदी कविता के विभिन्न अंगों में समाज की बात हो रही है उसी प्रकार उर्दू की लोकप्रिय विधा ग़ज़ल में भी समाज का आईना सामने आ रहा है। यूँ कहा जा सकता है कि अब उर्दू के ग़ज़लकार जब कहने के लिए अपनी कलम उठाते हैं तो वह अपने आसपास के हालात पर निगाह डालते हैं। वैसे आम आदमी जो कुछ ज़िंदगी में भोग रहा है या देख रहा है—उसे ग़ज़ल में ही कहने का जिम्मा आम आदमी उठा रहा है। फिर कविता में या ग़ज़लों में नया कहने की आज की सबसे बड़ी जरूरत है। हम जब पिछली यानी अग्रज पीढ़ी के ग़ज़लकारों पर खासतौर से आजादी के पहले की ग़ज़ल के अंदाज पर निगाह डालते हैं तो मालूम होता है कि ग़ज़ल की कहन में तब बात कुछ और थी और आज कुछ और। आजादी के बाद की ग़ज़ल की कहन में आम आदमी का दर्द गाया जा रहा है। वैसे उूर्द जुबान एक मीठी और ज़िंदगी को गाने वाली भाषा है। उर्दू में हमारी अग्रज पीढ़ी ने बहुत ही अच्छा योगदान दिया है और आजादी के दौर में भी हिंदू ग़ज़लकारों का नाम आज भी इतिहास में दर्ज है।

बात ग़ज़ल में सामाजिक सरोकार पर मुझे कहनी है—अतएव दुष्यंत के अनेक समकालीन ग़ज़लकारों और बाद के अनेक नए ग़ज़लकारों ने लीक से हटकर अपनी बात कही जिनका सीधा संबंध आम आदमी के दर्द को गाने से है। आज का ग़ज़लकार वह सबकुछ देख-सुन और भोग रहा है जिसे ग़ज़ल में गाना उसकी जिम्मेदारी बन गई है। आम आदमी को किस तरह ग़ज़ल में गाया जा सके उसके प्रति उसका ग़ज़ल सृजन बखूबी सामने आ रहा है। वह चाहे हिंदू हो या मुसलमान सबका दर्द समान है और समाज का एक हिस्सा होने के कारण उसे अपनी जिम्मेदारी का अहसास हो चुका है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि दुष्यंत ने ग़ज़ल को नए अर्थ दिए। जिसे हम नवाचार कह सकते हैं। उसे हम किसी-न-किसी रूप में रेखांकित कर सकते हैं या उसे नारा बना सकते है। जैसे दुष्यंत की एक ग़ज़ल का शे'र कई जगहों पर नारों का स्वरूप ले चुका है, वह है—

कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता
एक पत्थर तो तबियत से उछालो यारो।

इस शे'र में अपने सिर पर आए किसी संकट को करने के लिए आम आदमी को अपनी ताकत को तोलने पहली जरूरत है। आदमी ज़िंदगी में हारता नहीं—उसे अपनी ताकत का अहसास करना है। यह वास्तव में सामाजि सरोकार को अभिव्यक्त करने वाला शे'र है। दुष्यंत के अनेक नए ग़ज़लकारों ने भी अपनी ग़ज़लों में समाज के हाल बयान किए हैं और इस तरह ग़ज़ल को इश्क, शबाब, जा शराब और मुहब्बत की कहन से बाहर निकाला है।

इस समय हिंदी कविता में 'दलित' शब्द ने नई ज बना ली है और दलित साहित्य पर आलोचनात्मक आले और पुस्तकें छपी हैं। दलितों की आवाज गाँधी जी के स से ही उठी थी। इस शब्द ने ग़ज़लकारों को सामाजिक सरोक से जुड़ने की बड़ी ताकत दी है। यद्यपि कहन में तीखा आ गया है किन्तु उसकी जरूरत भी है। दलित साहित्य मद्देनज़र जो ग़ज़लकार चर्चा में आए हैं—उनमें डॉ. रामगोप भारतीय का नाम लिया जाता है। उनका एक ग़ज़ल सं आया है 'हासिए के लोग'। 'राजनीतिक दृष्टि से कतार अंतिम आदमी के लिए यह संबोधन दिया जाता है। यह अं आदमी ही दलित है क्योंकि ताकतवर उसे फैलने का अव नहीं देते। अब दलितों में जागृति आई है। इस कृति में भारतीय ने अपनी ग़ज़लों में यही सब बयान किया है—प्रस्तुत है कुछ शे'र...

हमने कब माँगे किसी से चाँद-तारे या फलक
क्यूँ हमारी आरजुओं पर जमाने को है शक
इस जहाँ में रोशनी पर सबका हक है आज तो
कैद क्यूँ फिर कर रहे कुछ लोग सूरज की चमक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सूरज की रोशनी सबके लिए है और इसे कोई अपनी मुट्ठियों में कैद करने का प्रयास क्यों करना चाहता है? रोशनी है तो आम आदमी अँधेरे से मुकाबला करेगा। डॉ. भारतीय ने बड़े तीखे सवाल उठाकर हक मारने वालों को कठघरे में खड़ा कर दिया है। ये शे'र भी बात करते हैं–

पेट की आग को बेकार न समझा जाए
हर कोई शख़्स गुनहगार न समझा जाए।
बोझ इस देश की छत का है हमारे सर पर
अब हमे रेत की दीवार न समझा जाए।

'हाशिए के लोग' के इस शेर में यह ध्वनि आती है कि जो लोग प्रताड़ित हुए हैं उनमें जागरण के बीज पड़ चुके हैं और उनको शोषण से मुक्ति मिलने का समय करीब है–

छीनकर हक दूसरों का रहनुमा हो जाएंगे
या तो तुम खुद को बदल दो या कि इस माहौल को
वरना ये तेवर बगावत का सिला हो जाएंगे

इसमें कोई संदेह नहीं है कि आज की ग़ज़ल की कहन नए तेवर के साथ कही जा रही है। डॉ. रामगोपाल भारतीय की ग़ज़लें दलित-संघर्ष की नई जमीन को तोड़ रही है। उनकी ही तरह श्री ऋषिवंश का नाम छोटी बहर में ग़ज़लें कहने वालों में शुमार है। उनकी अनेक ग़ज़लें नए अर्थ और नए संदर्भो में जुड़कर अपनी बात कहती है। उनके आसपास का वातावरण कैसा है–उसे उनका ग़ज़लकार पहचानने में सिद्धहस्त है। सामाजिक सरोकार से जुड़ना उनके लिए कोई नई बात नहीं है। इसका कारण यह.है कि वह वन-विभाग से जुड़े हैं। और किसी-न-किसी रूप में जंगल का आदमी ग़ज़लों में मौजूद रहे, इसे ऋषिवंश जानते हैं। कुछ शेर–

गाँव है मेरा नदी के तीर पर
पहनता है फटा कोट शरीर पर
पाथती कंडे-खिलाती रोटियाँ
बूढ़ी अम्मा बरसती तकदीर पर
कचहरी में मुकदमे चलने लगे
किसी नामाकूल की तहरीर पर।

आज के युग में किसी मजबूर और आफत में फँसे व्यक्ति को कोर्ट-कचहरी की देहरी पर चढ़ना बहुत ही आसान है। प्रतिशोध के लिए सबसे अच्छा तरीका शायद यही होगा। आम तौर पर किसी गरीब का घर-खेत-खलिहान बिकना या गिरवी रखा जाना रोजमर्रा की बात है। कचहरी के चक्कर मारते-मारते अनेक तो ज़िंदगी से हाथ धो बैठते हैं और बाद में बच्चे सड़कों-गलियों में बिलखते रहते हैं। ऋषिवंश की अनेक ग़ज़लों में यह हालात बयान होते हैं जैसे–

जीने का कोई कानून नहीं होता
गैर, गैर हैं...अपना खून नहीं होता
हल न चलते पसीना अगर नहीं गिरता
रोटी का टुकड़ा दो जून नहीं होता।

और देखिए यह विरोधाभास–

वहाँ कोई बारात निकल रही है
नदी किनारे चिता जल रही है
दिया गाँव में तेल से जल रहा है
शहर में सितारों की हलचल रही है।

आज के साहित्य के लिए यह भी एक शर्त है कि उसमें से हालातों की आवाज सुनाई दे। फिर कविता, गीत-ग़ज़ल के लिए तो यह शर्त समयानुकूल है क्योंकि कविता-गीत-ग़ज़ल को श्रोता सामने बैठकर सुन रहा होता है और सुनकर वह अपने को पहचानने की कोशिश में लग जाता है।

किसी भी विधा के उद्‌गम या जनम का अपना इतिहास होता है। जैसे यह सवाल आज भी ताजा है कि सबसे पहले ग़ज़ल किसने कही और वह भारत में कैसे आई। ग़ज़ल ईरानी भाषा के बाद फारसी में आई फिर उर्दू के बाद अब हिंदी में। यह भी माना जाता है कि हिंदुस्तान में ग़ज़ल को सबसे पहले अमीर खुसरो ने गाया था। उर्दू जुबान जब धीरे-धीरे सरल और सहज होती गई तो ग़ज़ल की लोकप्रियता में इजाफा हुआ। वैसे उर्दू जुबान में बड़े शायरों की लंबी फेहरिश्त है। मिर्जा ग़ालिब, मीर तकी मीर, दाग देहलवी के अलावा अनेक शाइरों ने इस विधा को अपनी कलम से बड़ी ताकत दी और आज ग़ज़ल नए अंदाज में है। उसकी लोकप्रियता मुशायरों के बाद हिंदी कवि सम्मेलनों में भी बढ़ गई है। ग़ज़ल की पुरानी पीढ़ी के बाद भी अनेक शाइर ऐसे हुए जिनको फिल्मों के माध्यम से खूब सराहा गया इनमें साहिर लुधियानवी, जाँ निसार अख्तर, राजा मेहंदी अली खान, कैफी आजमी का नाम है। भोपाल के कैफ भोपाली का नाम भी ग़ज़लकारों की सूची में शामिल है।

आज हर आदमी यह चाहता है कि आज की ग़ज़लों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में आदमी का दर्द बयान होना एक बड़ी जरूरत है। नए ग़ज़लकारों ने इस भ्रम को तोड़ा है कि ग़ज़ल हिंदी में नहीं कही जा सकती। परंतु ग़ज़ल के साथ भी अब समकालीन शब्द जुड़ने से हिंदी ग़ज़लकार वही कह रहे हैं जिसकी जरूरत है। दिनेश रस्तोगी की एक ग़ज़ल का शे'र सीधे भीतर तक उतरता है—

ऐसी क्या मजबूरियाँ जो कैद होकर रह गई
कांच के मछलीघरों में मछलियाँ इस्पात की

बात स्पष्ट है कि आदमी कितना ही सामर्थ्यवान क्यों न हो किंतु, समाज का नया ढांचा उसे अपने को समझने का मौका ही नहीं देता। आम आदमी की दैहिक और मानसिक क्षमता चाहे कितनी ही ताकतवर हो, वह चंद ताकतवरों के सामने चुप को ओढ़ लेता है और उसकी मजबूरी खुलकर सामने आ जाती है। दरअसल, यह शोषण की एक तस्वीर है। आदमी की जुबान पर लगा ताला कौन खोलेगा उसे कोई नहीं जानता। हिंदी में जो ग़ज़लें कही जा रही है—उनमें दर्द की आहट आती है। हिंदी का ग़ज़लकार हो या उर्दू का ग़ज़लकार वह चाहे मुसलमान ही क्यों न हो अपनी बात सच्चाई के साथ बड़ी ताकत से कहता है, जैसे अब्बास खां 'संगदिल' ने कहा—

है तराजू न्याय की झुकती नहीं उसकी तरफ
दुनिया बेईमानों की सुनती नहीं फरियाद है

खुशी इस बात की है कि श्री संगदिल अपने इस शे'र को हिंदी के बहुत करीब ले आए हैं। यह तो स्वीकारना होगा कि हिंदी की समकालीन ग़ज़ल हिंदी राज्यों में जब कही जाती है तो वहाँ का सांस्कृतिक परिवेश उसे सम्मान देने लगता है। इस देश का आम आदमी ज़िंदगी के किन मोड़ों पर खड़ा है या वह किन रास्तों को नापना चाहता है—इसकी अनेक निशानियाँ वह छोड़ता जाता है। निश्चय ही हिंदी ग़ज़लकारों का उर्दू से भी उतना ही प्यार है जितना वह हिंदी को करता है। बिहार के श्री उपेन्द्र प्रसाद सिंह गाँव की माटी से जुड़े और उसमें ही वह इतने रच-बस गए कि अपनी बात इस तरह कहते हैं—

आत्मा रहती भले ही गाँव में इस मुल्क की
मन सियायत के शहर में रम गया, तो रम गया।

वास्तव में वह एक तरह की पीड़ा का अनुभव कर रहे हैं। गाँव के नाम पर आज सबकुछ हो रहा है। वहाँ शोषण, गरीबी, अन्याय, पीड़ा और न जाने क्या-क्या दृश्य उभरते हैं अन्यथा स्व. बलवीर सिंह 'रंग' क्यों गाते—

नगर-नगर बढ़ रही अमीरी मेरा गाँव गरीब है...

एक वीभत्स प्रसंग यह भी कि—

जोरावर जाटव के घर में बीमारी घर कर गई
कल ही उसकी सुघड़ पतोहू, तड़प-तड़प कर मर गई
संयत होकर कहता हूँ मैं, इसे न लो आवेश में
बिना दवा के मरी बिचारी धन्वन्तरी के देश में

जोरावर की मजबूरी क्या होगी यह हम सब जानते हैं किंतु राजनीतिक घोषणाएँ सब तरफ अपने पंख फैलाए हैं और उनमें कहीं सचाई के दरस नहीं होते। और इन हालात में डॉ. अशोक गुलशन समाज की इस तस्वीर को बड़े साहस के साथ बनाते हैं—

गुलशन में हर शख़्स से खुशियाँ तो हैं मगर
बेटी जवान घर में हो अच्छा नहीं लगता है

और डॉ. ओमप्रकाश सिंह एक कटु सत्य पर से पर्दा उठाते हैं—

जातिवादी अक्षरों की भीड़ में
अर्थ की रोटी न छलकर बाँटिए

× × ×

योजनाएँ बादलों-सी छा रहीं चारों तरफ
द्वार के खलिहान तक घर का पनारा जाएगा

बात केवल हिंदी की ही नहीं है, उर्दू साहित्य में भी ग़ज़ल हो या कहानी सबमें सामाजिक सरोकार का बराबर उल्लेख किया जा रहा है। वैसे सामाजिक सरोकार को रेखांकित करने में नवगीत आगे हैं। और जब ग़ज़ल हिंदी में कही जाने लगी तो उसमें भी वही स्वर सुनाई देने लगे, भले ही यह स्वर उर्दू के तेवर नहीं ला सका किंतु, भाषा की अपनी संस्कृति होती है और उसे स्वीकारने की मानसिकता जन्म लेने के लिए काफी समय लगता है। किंतु ग़ज़लों में ये तेवर अब ताज़गी के साथ जन्म ले रहे हैं। हिंदी ग़ज़लों को समकालीनता के मुकाम तक आने की कुछ ही दूरी तय करनी है।

संपर्क : 108-ए, प्रगति नगर, रिषीपुरम फेज-एक बरखेड़ा, भोपाल, मो.-9755195423

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

अपने परिवेश के प्रति सचेत है आज की ग़ज़ल

❑ अशोक 'अंजुम'

'ग़ज़ल' आज हिंदी कविता की एक बहुश्रुत, बहुपठित विधा बन चली है, इसमें दो राय नहीं। ग़ज़ल क्या, साहित्य की कोई भी विधा उस स्थिति में अधिक लोगों तक पहुँचती है जब पाठक व श्रोताओं को यह लगे कि इस रचना में तो उसके अपने ही जीवन की छवि है। इसमें तो उसके अपने सुख-दुख पिरोए गए हैं। वह रचना जो लोगों के घाव पर मरहम लगाए और अँधेरे में दीपक का कार्य करे। जीवन-व्यापार के विभिन्न क्षणों में जिसे उदाहरण की तरह प्रस्तुत किया जा सके। वह रचना जो जीवन की तपती दोपहरी में अचानक छा जाने वाले बादल के सदृश दिखाई दे। कबीर, तुलसी, रहीम, ग़ालिब आदि आज इसी गुण के कारण जीवित हैं। हिंदी ग़ज़ल ने भी इन गुणों को अपनाया। इसने सुंदरी की देहयष्टि पर लफ़्ज़ों की कूची चलाना धीरे-धीरे कम किया और आम आदमी के सुख-दुख को अपना कंठहार बनाने में इसका विशेष रूप से रुझान दिखाई देने लगा। 70 के दशक में इस क्षेत्र में दुष्यंत कुमार का आगमन एक चमत्कार की तरह हुआ। दुष्यंत कुमार ने सर्वहारा वर्ग की चिंताओं को अपनी ग़ज़लों के शे'रों में पिरोया और भविष्य के ग़ज़लकारों के लिए उदाहरण बन गए। यूँ तो दुष्यंत कुमार के पूर्व से ही हिंदी में ग़ज़ल की शुरुआत हो चली थी किंतु दुष्यंत कुमार ने ग़ज़ल को नया मुहावरा दिया तथा भाषा और भाव के स्तर पर उसे आम आदमी के अधिक नज़दीक लेकर आए, उसके कारण हिंदी कविता जगत में एक हलचल-सी मच गई। उन्होंने कहा–

कहाँ तो तय था चरागां हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए
न हो कमीज़ तो पाँवों से पेट ढक लेंगे
ये लोग कितने मुनासिब हैं इस सफ़र के लिए

इसके बाद तो ग़ज़ल में सामाजिक, राजनीतिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक आदि विषय प्रमुखता से अपनी पैठ बनाते चले गए और ये सारे विषय आम आदमी के इर्द-गिर्द ही परिक्रमा लगाते हुए नज़र आने लगे। नीरज जी जैसे स्थापित गीतकारों को भी ग़ज़ल के आकर्षण ने अपने पाश में ले लिया और वे कहने लगे–

वो और ही थे जिन्हें थी ख़बर सितारों की
मेरा ये देश तो रोटी की ही ख़बर में रहता है

रामअवतार त्यागी की ग़ज़लों में आम आदमी को लेकर जो तल्ख़ी है वो कहीं अधिक तेज है–

चेहरे पढ़े हैं गौर से हर ख़ासो-आम के
लिक्खा है हम गुलाम हैं, वह भी गुलाम के
थोड़ी-सी पी चुके हैं, थोड़ी-सी और दो
चर्चे करेंगे बैठकर हम तब अवाम के

यूँ तो स्व. बलबीर सिंह 'रंग' ने दुष्यंत कुमार से पहले हिंदी ग़ज़ल को अपनी अभिव्यक्ति दी किंतु आपकी ग़ज़लों का तेवर इतना तीखा नहीं रहा। श्री रंग जी की ग़ज़लों में पारंपरिकता का रंग अधिक दिखाई देता है।

आज हिंदी ग़ज़लकारों की एक समृद्ध सूची हमारे सामने है। आज ग़ज़ल में हमें व्यवस्था से असंतुष्टि, विसंगतियों पर प्रहार, व्यंग्य, राजनीतिक छल-कपट, दोहरे चरित्र, तमाम सामाजिक समस्याएँ, रिश्ते-नाते, पारिवारिक परिदृश्य आदि आम आदमी से जुड़े विभिन्न चित्र दिखाई देते हैं। आज तमाम ऊर्जस्वी ग़ज़लकार अपने परिवेश के प्रति सचेत हैं और अपने अशआरों में उसकी सफल अभिव्यक्ति कर रहे हैं। डॉ. कुँअर बेचैन जब भूख और रोटी की बात करते हैं तब उसकी अपनी ही खुशबू होती है–

हजारों खुशबुएँ दुनिया में हैं पर उससे कमतर हैं
जो भूखे को किसी सिकती हुई रोटी से आती है

आज का ग़ज़लकार अपने परिवेश के प्रति चिंतित ही नहीं है वरन् अपने अशआरों में अपने जमीन से जुड़े होने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की बात का ज़ोरदार पक्षधर भी है। उदयभानु 'हंस' कहते हैं—

जन्म लेती नहीं आकाश में कविता मेरी
फूट पड़ती है स्वयं धरती में कोंपल की तरह

'रहमत अली' को रदीफ़ की तरह प्रयोग करके सशक्त ग़ज़लकार शिवओम 'अम्बर' आज के आम आदमी की तसवीर कुछ यूँ गढ़ते हैं—

आप खुद अपने अहद का हाल है रहमत अली
बाढ़, सूखा, भुखमरी, भूचाल है रहमत अली
मुल्क-भर के पोस्टरों पे मुसकराता है मगर
आईने के सामने बेहाल है रहमत अली

दुष्यंत जैसे तेवर के साथ ग़ज़ल को सजाने-सँवारने वाले ग़ज़लकारों में एक महत्त्वपूर्ण नाम अदम गोंडवी का भी है। आप कहते हैं—

न महलों की बुलंदी से न लफ़्ज़ों के नगीने से
तमद्दुन में निखार आता है घीसू के पसीने से
अब मर्क़ज में रोटी है, मुहब्बत हासिए पर है
उतर आई ग़ज़ल इस दौर में कोठी के ज़ीने से

साथ ही—

भूख के अहसास को शेरो-सुखन तक ले चलो
या अदब को मुफलिसों की अंजुमन तक ले चलो

आज की व्यवस्था और रहनुमाओं पर तीक्ष्ण प्रहार करते हुए चर्चित ग़ज़लकार डॉ. उर्मिलेश ग़रीबों की नियति को कुछ यूँ लफ़्ज़ देते हैं—

वो शख़्स ही कमीज़ उतारेगा इनकी कल
कंबल जो दे रहा है ग़रीबों को दान में

अथवा

अल्सर के रोगियों को दवाएँ बुखार की
क्या ख़ूब! क्या इलाज है आँखों के सामने

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल भी ग़ज़ल के एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं, वे आदमी को अपनी ग़ज़ल के आईने में कुछ यूँ देखते हैं—

आदमी मजबूर है, दुख-दर्द का मारा भी है
और यह जीवन उसे हर हाल में प्यारा भी है

दुख-दर्दों से जूझते हुए जीवन को प्यार करना वाकई जिंदादिली है। लेकिन इन दुःख-दर्दों व आपाधापी के बीच हम संवेदनशून्य भी होते चले जा रहे हैं, और यह निश्चित ही बहुत भयावह स्थिति है। हरेराम समीप के शब्दों में—

शहर के चौक पे' घायल पड़ा हुआ है समीप
निकल गए हैं फ़क़त डालकर नज़र कितने

'बहुत प्यासा है पानी' ग़ज़ल-कृति से ग़ज़ल के क्षेत्र में अपनी पुख़्ता पहचान बनाने वाले चर्चित हास्य व्यंग्य कवि प्रदीप चौबे की ग़ज़लों में व्यंग्य और परिवेश की जुगलबंदी देखते ही बनती है

हर तरफ गोलमाल है साहब
आपका क्या ख़याल है साहब
रिश्वतें खाके जी रहे हैं लोग
रोटियों का अकाल है साहब

राजनेताओं द्वारा बस्ती को दिए जाने वाले आश्वासन जब खोखले निकलते हैं तब कमलेश भट्ट 'कमल' जैसे ग़ज़लकार कैसे चुप रहें—

बादलों के वायदे हर रोज़ बारिश के
बूँद के लाले मगर हर बार बस्ती में

विज्ञान व्रत के लफ़्ज़ों में आम आदमी की व्यथा—

बरसों खुद से रोज ठनी
तब जाकर कुछ बात बनी
इतने दिन बीमार रहा
ऊपर से तनख़्वा कटनी

और लक्ष्मण कहते हैं—

ग़म अगर कुछ कह न पाए आदमी
एक-दो आँसू बहाए आदमी
रोज़ पाने के लिए कोई खुशी
घर से कितना दूर जाए आदमी

अनिरुद्ध सिन्हा की आज के आदमी को लेकर जो चिंता है—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज फिर संदर्भ से टूटा हुआ
हाशिए पर चीखता है आदमी

आज के वातावरण पर बड़ी तल्ख़ नज़र रखने वाले ग़ज़लकार अशोक रावत भी हैं–

पुलिस लगी है कक्षाओं के भीतर भी और बाहर भी
बंदूकों की ज़द में हैं अब स्कूलों के परिसर भी
समझ नहीं पाता हूँ किसके सपनों का ये भारत है
जिसकी संसद में जा पहुँचे क़ातिल भी औ' तस्कर भी

वातावरण का वहशियानापन भी ग़ज़लकार से कहाँ छिपता है। गुलशन मदान के अनुसार–

फिर कोई होने को है क्या वहशियाना हादसा
इस तरह छाई हुई है ख़ामुशी हर मोड़ पर

सियासतदां की मनःस्थिति को बयान करते हुए चन्द्रसेन 'विराट' कहते हैं–

यहाँ सामान्यजन जो है चतुर वह हो नहीं जाए
सियासत चाहती है ये उसे मतिमंद रहने दो

और हस्तीमल 'हस्ती' की कहन का नजारा भी क़ाबिले-ग़ौर है–

ये मुँह ये कौर बीच में कितने बिचौलिए
बेहाल किस तरह न हो ये पेट बोलिए

इन पंक्तियों के लेखक अशोक 'अंजुम' ने भी आज के हालात के मद्देनज़र कुछ कहने का प्रयास किया है–

ऊपर वाले बड़े मज़े से खींच रहे हैं माल मियाँ
लेकिन हमको नहीं मयस्सर हर-दिन रोटी-दाल मियाँ
होरी औ' धनिया की क़िस्मत लो अब बदली, तब बदली
आज़ादी के बाद से नेता बजा रहे हैं गाल मियाँ

उपरोक्त उदाहरणों को आज के परिवेश पर ग़ज़ल की नज़र की बानगी भर ही कहा जा सकता है अन्यथा बालस्वरूप राही, मुनव्वर राना, शेरजंग गर्ग, मोहदत्त साथी, अश्वघोष, विनोद तिवारी, आचार्य भगवत दुबे, सूर्यभानु गुप्त, रामकुमार कृषक, रमेश नीलकमल, ओंकार गुलशन, भानुमित्र, अल्हड़ बीकानेरी, रमासिंह, राजगोपाल सिंह, सुरेन्द्र चतुर्वेदी, ज्ञानप्रकाश विवेक, रोहिताश्व अस्थाना, रामसनेहीलाल शर्मा, ज़हीर कुरेशी, अंसार कम्बरी, चन्द्रभाल सुकुमार, हरीलाल मिलन, राजकुमार चंदन, दिनेश सिंदल, दीक्षित दनकौरी, अनन्त राम मिश्र 'अनन्त', सुल्तान अहमद, पुरुषोत्तम यक़ीन, सुरेश कुमार, राजेन्द्र तिवारी, अखिलेश तिवारी, मनोज अबोध, संतोष जैन, द्विजेन्द्र द्विज, डॉ. महेन्द्र अग्रवाल, मधुर नज़्मी, नरेन्द्र गरल, डॉ. अनूप वशिष्ठ, आचार्य सारथी, शहद सिंह, वर्षा सिंह, कीर्ति काले, शशि जोशी, आलोक श्रीवास्तव, योगेन्द्र मोदगिल, रश्मि सानन आदि ग़ज़ल के क्षेत्र में निरंतर सक्रिय ऐसे सशक्त हस्ताक्षर हैं जो अपने परिवेश के प्रति पूर्णतया सचेत हैं।

संपर्क : 615, ट्रक गेट, कासिमपुर
पावर हाउस, अलीगढ़-202127
(उ.प्र.), मो. 9358218907

शोक संवाद

पिछले दिनों श्रीलाल शुक्ल, डॉ. परमलाल गुप्त, जसवंत सिंह विरदी, डॉ0 हर्ष नन्दन भाटिया, कालीचरण प्रेमी एवं रमाकांत खरे उर्फ बाबाजी प्रभृति कलमकारों एवं असाधारण ग़ज़ल गायक जगजीत सिंह के आकस्मिक निधन से 'परती पलार' परिवार मर्माहत है। उनके निधन से हिन्दी साहित्य एवं संगीत जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। लेकिन विधना के लेखे को कौन मिटा सकता है। हम उनके शोक संतप्त स्वजनों एवं परिजनों को इस त्रासदपूर्ण घड़ी से संघर्ष करने का धैर्य, साहस और संबल देने तथा उन सभी मृत पवित्र आत्माओं की शांति हेतु ईश्वर से प्रार्थना करते हैं।

–परती पलार परिवार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

गीत-ग़ज़ल में अंतर

❑ श्याम सखा श्याम

बहुत लोगों ने बहतु कुछ कहा है ग़ज़ल के बारे में। मुझे लगता है कि हिंदी भाषा में गीत एक पारंपरिक छंद होने के कारण आम साहित्य अनुरागी गीत की परिभाषा जानता समझता है अतः हिंदी ग़ज़ल क्षेत्र के नवागंतुक को पहले गीत व ग़ज़ल में क्या अंतर है समझ लेना चाहिए तब ग़ज़ल लेखन में आगे बढ़ना चाहिए। संक्षिप्त आलेख इस ओर एक कदम है। कुछ उदाहरणों से आरंभ करते हैं इस अंतर को समझने के लिए–

(अ)

1. *बदला-बदला देख पिया को चुनरी भीगे। सावन में*
2. *बस यह हुआ कि उसने तक्ल्लुफ़ से बात की*
   रो-रो के रात हमने दुपट्टे भिगो लिए

या

(ब)

1. *मेरी उम्र से दुगनी हो गई*
   बैरन रात जुदाई की

2. *ये न थी हमारी किस्मत कि विसाले यार होता*
   अगर और जीते रहते, यही इंतजार होता

(स)

1. *जाग-जागकर काटूँ रतियाँ*
   सावन जैसी बरसें अँखियाँ

2. *उठाके पायँचे चलने का वो हँसी अंदाज*
   तुम्हारी याद में बरसात याद आती है

अब देखिए इन तीनों उदाहरणों में नंबर 1 पंक्तियाँ गीतांश हैं और अंकित नं 2 पंक्तियाँ शे'र हैं।

जबकि भाव एक ही हैं। यानी हम कह सकते हैं कि गीत में स्त्रैण कोमलता है जबकि ग़ज़ल कहने में पुरुषार्थ झलकता है। या गीत सीधे-सरल राह से अभिव्यक्ति का माध्यम है, वहीं ग़ज़ल एक पहाड़ी घुमावदार पगडंडी है। जैसे पहाड़ी पगडंडी पर पहली बार सफ़र कर रहे मुसाफ़िर को यह पूर्व अनुमान नहीं होता कि अगले मोड़ पर पगडंडी दाईं तरफ मुड़ेगी या बाईं तरफ, ऊपर की ओर पहाड़ पर चढ़ेगी या आगे ढलान मिलेगा इसी तरह शे'र के पहले मिस्रे (पंक्ति) को सुन या पढ़कर श्रोता या पाठक जान ही नहीं पाता कि अगले मिस्रे में शायर क्या कहेगा। अनेक बार दूसरा मिस्रा श्रोता को चमत्कृत कर जाता है और यह चमत्कृत करने का अंदाज ही ग़ज़ल की खसूसियत है। इसे और महसूस करें और चमत्कृत हुआ महसूस करें। ये शे-र वसीम बरेलवी साहिब के हैं–

अपनी सुबह के सूरज उगाता हूँ खुद

(अब थोड़ा रुक कर सोचिए कि आगे क्या कहा जा सकता है?)

जब्र का जहर कुछ भी हो पीता नहीं

(अब थोड़ा रुक कर सोचिए कि आगे क्या कहा जा सकता है?)

जमीन तो जैसी है वैसी ही रहती है लेकिन

(यहाँ भी थोड़ा रुक कर सोचिए कि आगे क्या कहा जा सकता है?)

अब ये तीनों शे'र पूरे पढ़ें और देखे आप चमत्कृत होते हैं या नहीं–

अपनी सुबह के सूरज उगाता हूँ खुद
मैं चरागों की सांसां से जीता नहीं

जब्र का जहर कुछ भी हो पीता नहीं
मैं ज़माने की शर्तों पे जीता नहीं

× × ×

जमीन तो जैसी है वैसी ही रहती है लेकिन
जमीन बाँटने वाले बदलते रहते हैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक और बात—यति और गति या ग्त्यात्मकता और लयात्मकता के बिना ग़ज़ल का अस्तित्व ही नहीं हो सकता। क्योंकि ग़ज़ल की बुनियाद सरगम की तरह संगीत के आधार पर (और कहें तो गणित के आधार पर) टिकी है। ग़ज़ल का हर शे'र अपने आप में संपूर्ण तो होता ही है—

वह श्रोता या पाठक को अद्‌भुत, आकर्षक, अनजाने और एक निराले अर्थपूर्ण अनुभव तक ले आने में सक्षम होता है। देखें कुछ उदाहरण—

चाँद चौकीदार बनकर नौकरी करने लगा
उसके दरवाजे के बाहर रोशनी करने लगा

चाँद को चौकीदार केवल ग़ज़ल का शाइर ही बना सकता है—

बाल खोले नर्म सोफ़े पर पड़ी थी इक परी,
मेरे अंदर एक फरिश्ता खुदकुशी करने लगा

अब बतलाएँ फरिश्ते को खुदकुशी करवाना शाइर, ग़ज़ल के शाइर के अलावा और किसके वश में है। ऐसा विचित्र एवम् चमत्कृत करने वाला अनुभव साहित्य की किस विधा में मिल सकता है। कुछ और उदाहरण देखें—

तुझे बोला था आँखें बंद रखना
खुली आँखों से धोखा खा गया ना
मेरे मरने पे कब्रिस्तान बोला
बहुत इतरा रहा था आ गया ना

—दिनेश दर्पण

मित्रों एक बात और ग़ज़ल की सारी कमनीयता, सौष्ठव व चमत्कृत करने की क्षमता बह्र या छंद पर ही टिकी है।

हम कह सकते हैं कि ग़ज़ल शब्दों की कलात्मक बुनकरी है। अगर हम उपरोक्त शेर को बह्र के बिना लिखें—

मरने पे मेरे कब्रिस्तान बोला
इतरा रहा था बहुत आ गया ना

आप ही कहें सारे शब्द वही हैं, केवल उनका थोड़ा-सा क्रम बदलने से क्या वह आनंद जो पहली बुनकरी में था, गायब नहीं हो गया। बस इसीलिए बह्र का ज्ञान आवश्यक है।

संपर्क : सम्पादक मसि-कागद, पुरी अस्पताल, सदर बाज़ार, करनाल (हरि.)-132001

मोबाइल-09416359019

आपकी रचना प्रकाशन में नहीं आ पा रही है ?

निराश न हों
समय प्रकाशन
है न

पुस्तक प्रकाशन आर्थिक सहयोग योजना का लाभ उठाएं

इस योजना के अंतर्गत समय प्रकाशन लेखकों को उनकी पुस्तकों के प्रकाशन के लिए 40 प्रतिशत आर्थिक सहयोग प्रदान करता है।

अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क करें :-

समय प्रकाशन

आई-1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2

फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 011-23270889

ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

हिंदी में ग़ज़ल

❑ विपिन जैन

परंपरागत अर्थ में ग़ज़ल को महबूब या प्रेमी-प्रेमिका की बातचीत के लिए लिया जाता है। प्रेमिका के रूप सौंदर्य का वर्णन ग़ज़ल का आरंभिक प्रतिपाद्य रहा है। प्रेम की काव्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए भी ग़ज़ल का सहारा लिया जाता रहा है। भारत में ग़ज़ल फारसी के जरिए आयी। पहले पहल अमीर-खुसरो ने फारसी हिंदी की वह ज़मीन तैयार की जहाँ से हिंदी ग़ज़ल की शुरुआत होती है। अमीर खुसरो की ग़ज़लें ठेठ हिंदी का स्वर लेकर आईं। अमीर खुसरो ने ग़ज़ल को हिंदुस्तानी पोशाक व भाषा प्रदान की। उन्होंने हिंदी की भाषिक-जातीय परंपरा के भावबोध को आत्मसात करके हिंदी ग़ज़ल की आधारशिला रखी। उनकी ग़ज़लें देशीपन और लोकतत्व लिए हुए थीं।

उसके बाद भारतेन्दु, निराला, शमशेर, त्रिलोचन, बलबीर सिंह 'रंग', आदि की ग़ज़लें हिंदी ग़ज़ल परंपरा से आकर जुड़ती हैं। जयशंकर प्रसाद ने भी ग़ज़लें लिखीं। जानकी वल्लभ शास्त्री मूल रूप से गीतकार थे, उन्होंने भी ग़ज़लें लिखीं। कई और नाम भी इस ग़ज़ल परंपरा से जुड़े थे। हिंदी ग़ज़ल के विकास में शमशेर के योगदान को अलग से रेखांकित किया जा सकता हैं। हिंदी ग़ज़ल की जमीन को इन कवियों ने धीरे-धीरे पुख्ता किया। निसंदेह उनके योगदान को नहीं भुलाया जा सकता परंतु एक प्रकार का व्यापक गहरा व बैचेन कर देने वाला प्रभाव वह लोग अपनी मुख्य काव्य विधा न होने के कारण नहीं छोड़ पाए। बाद में दुष्यंत कुमार ने हिंदी ग़ज़ल को नया मुहावरा, पहचान व अस्तित्व दिया। दुष्यंत की ग़ज़लों ने हिंदी ग़ज़ल को ऐसा मुकाम दिया जहाँ से हिंदी ग़ज़ल का नया सफ़र शुरू हुआ। उन्होंने हिंदी ग़ज़ल को मौजूदा हालात से जोड़कर आम आदमी की व्यथा, संघर्ष नाउम्मीदी और मोहभंग को उसमें ढाला। दुष्यंत के बाद से हिंदी ग़ज़ल में एक नए युग का सूत्रपात हुआ। ग़ज़ल ने लोकप्रिय विधा के रूप में हिंदी भाषा में जगह बनाई। इसके साथ ही ग़ज़ल के कथ्य, भाषा, और शिल्प में बदलाव आया। हिंदी ग़ज़ल में हिंदी के तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिकाधिक दिखलाई दिया। इसका भाषाई संस्कार बदलने के साथ सहजता आई। बलबीर सिंह 'रंग' से चाहे हिंदी ग़ज़ल की परंपरा न बनी हो पर हिंदी में ग़ज़ल को जमने का आधार मिला। हिंदी में ग़ज़ल की नई धारा दुष्यंत के बाद ही फूटती दिखलाई देती है। दुष्यंत के ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' की ग़ज़लों के कई शे'र लोगों की जुबाँ पर आकर लोकप्रिय हुए, जैसे–

कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता
एक पत्थर तो तबियत से उछालो यारो।

× × ×

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

दुष्यंत की ग़ज़लों से प्रभावित ग़ज़लकारों का एक बड़ा वर्ग बाद में उभरा जिन्होंने दुष्यंत के तेवर और तर्ज को पकड़ने की कोशिश की। दुष्यंत के बाद हमारा समय और समाज भी बदला है। शाइर या कवि अपने समय के यथार्थ, विसंगतियों और बदलाव के मंजर को सामने लाता ही है। आज बाजारवादी प्रवृतियाँ समय और समाज को प्रभावित कर रही हैं। जरूरी तौर पर आज की ग़ज़ल का कथ्य बदला है। हिंदी में ग़ज़ल अब अधिक परिपक्व व प्रयोगधर्मी व असरकारी रूप में आ रही है। समय की जटिलताएँ, सामाजिक मूल्यों में गिरावट, सांप्रदायिकता, आदमी का बढ़ता अकेलापन, डर, रूढ़िया, वर्जनाएँ रिश्तों में आई स्वार्थ-भावना, भ्रष्टाचार, निराशा आदि हिंदी ग़ज़ल के शे'रों में ढल रहे हैं। कहीं व्यवस्था विरोध, या प्रतिवाद के स्वर हैं तो आत्मीय रिश्तों, आसपास की विसंगतियों, संबंधों को लेकर भी ग़ज़लें कही जा रही हैं।

हिंदी ग़ज़ल कहने वालों में बड़ा वर्ग सहज, आमफहम व मिलीजुली भाषा के प्रयोग को सही मानता है तो एक वर्ग ऐसा भी है जो ग़ज़ल में उर्दू के शब्दों से परहेज का हिमायती है। वह लोग हिंदी ग़ज़ल के लिए मित्र शब्द संयोजन, और भाव भंगिमा, अपनाने पर जोर देते हैं तथा वह लोग ऐसे प्रयोग भी कर रहे हैं। हिंदी ग़ज़ल का लब्बो-लहजा अलग नज़र आना चाहिए, उनका ऐसा मानना है। अपने संग्रह में भी जहीर कुरेशी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहते हैं—"हिंदी ग़ज़ल आज की यानि विचार युग की ग़ज़ल है। वह कोठों पर गायी जाने वाली संगीत उन्मुख ग़ज़ल नहीं बल्कि खेतों-कारखानों, दफ़्तरों में तल्लीन होकर काम करने वालों की भावनाओं की निर्मल अभिव्यक्ति है। हिंदी ग़ज़ल अपने संस्कार अपने स्वभाव, शब्द संयोजन, मुहावरे के आधार पर उर्दू ग़ज़ल से एकदम भिन्न नज़र आती है। नई हिंदी ग़ज़ल दोनों रास्तों को अपना रही है। कभी-कभी ऐसा होता है कि शब्द को ग़ज़ल के शे'र में लाने की कोशिश उसे कृत्रिमता से भर देती है। शे'र में अनुगूँज या कल्पनाशीलता की कमी और बात को कहने का ढंग सपाट लगने लगता है। आखिर बोल-चाल के शब्द ही ग़ज़ल को लोच, रवानी, लय और उसका मिज़ाज दे पाते हैं। मशहूर शाइर बशीर बद्र ने अपने साक्षात्कार में कहा है—"जो शब्द हमारी ज़िंदगी में घुलमिल गए हैं, ग़ज़ल की भाषा उन्हीं से बनती है। हिन्दी ग़ज़ल के असर से उर्दू ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल के असर से हिंदी ग़ज़ल में बडी खूदी आती जा रही है। मुझे वो ग़ज़ल ज़्यादा भरपूर लगती है जिसकी भाषा सुनने में हिंदी और उर्दू के फर्क को खत्म करती है।

दुष्यंत ने अपनी पुस्तक 'साये में धूप' की भूमिका में अपनी ग़ज़लों की भाषा के संबंध में लिखा है—

"हिंदी और उर्दू जब अपने-अपने सिंहासन से उतर कर जब आम आदमी के पास आती है तो उनमें फर्क कर पाना बड़ा मुश्किल होता है। ये ग़ज़लें उसी भाषा में कही गई हैं जिसे मैं बोलता हूँ।"

हिंदी ग़ज़ल की भाषा के बारे में प्रसिद्ध साहित्यकार कमलेश्वर भी कहते हैं—"मेरा निवेदन सिर्फ इतना है कि हिंदी ग़ज़ल को इस विराट व व्यापक परंपरा से अलग मत कीजिए।"

सुप्रसिद्ध कवि त्रिलोचन शास्त्री का मत भी इसी के अनुरूप है। वह मानते हैं कि हिंदी भाषा के पास ग़ज़ल के लिए उपयुक्त लोच नहीं है। हिंदी का वातावरण अलग है। उसको रूपायित करने के लिए वाक्यों में लोच की जरूरत है और इस लोच को लाने में बड़ी मशक्कत है। जो ग़ज़लें बोलचाल का लहजा पकड़ती हैं उन्हीं में जीवन तत्त्व आता है।

हिंदी ग़ज़ल के जरिए कविता में छंद की वापसी का स्वर भी जेरे बहस हुआ है। उर्दू-ग़ज़ल में भी भाषागत उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। संवेदना का फलक विस्तृत हुआ है तथा ग़ज़ल बेहतर सोच, नएपन, कलात्मक, सुगठित अभिव्यक्ति के शे'रों के साथ अच्छी बनती है। नए शाइर ग़ज़ल को बदलने का हुनर भी दिखला रहे हैं। छोटी बह्र में असरदार अभिव्यक्ति नई ज़मीन व नए ढंग से बहुतों ने दी है। हिंदी में अच्छी व असरदार ग़ज़लें कहने वालों में बहुत से वरिष्ठ व नए नाम हैं। बालस्वरूप राही, सूर्यभानू गुप्त, रामदरश मिश्र, हरजीत सिंह, कुँवर बेचैन, विज्ञान व्रत, राजेश रेड्डी, योगेन्द्र दत्त शर्मा, ज्ञान प्रकाश विवेक, देवेन्द्र आर्य, आलोक श्रीवास्तव, जहीर कुरेशी, नूर मोहम्मद 'नूर', कमलेश भट्ट, ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' जैसे अधिक परिचित नामों के अलावा ध्रुव गुप्ता, माधव कौशिक, सुल्तान अहमद, नित्यानंद तुषार, सुरेन्द्र सिंघल, सुरेन्द्र चतुर्वेदी हिंदी ग़ज़ल में अपनी धाराओं के साथ जाने गए हैं। बहुत नाम है जिनका अपना योगदान है। हिंदी ग़ज़ल ने प्रतिवाद की ताकत को बढ़ाया है। उसमें अभिव्यक्ति के सरोकार स्पष्ट होकर सामने आए हैं। ग़ज़ल में एकांतिक सुखानूभुति का विपय गौण हो गया है। विषय वैविध्यता उसमें आई है। हिंदी ग़ज़ल ने अपनी पहचान बनाई है।

हिंदी ग़ज़ल का परिदृश्य कुछ विवादों के वावजूद निराशाजनक नहीं है। अपनी सीमाओं, अंतर्विरोधों, द्वंद्वों, असहमतियों, संशयों के बावजूद हिंदी ग़ज़ल का भविष्य किसी भी प्रकार से धुंधला नज़र नहीं आता है। युवा ग़ज़लकार नए बिंबों, उपमाओं, प्रतीकों के सहारे ग़ज़ल कह रहे हैं। उनमें वर्तमान के प्रश्नों से बाबस्ता ग़ज़लों की बहुतायत है। नए यथार्थ की समझ उनमें नज़र आती है। शे'र अपने पुख्तापन के साथ जेहन में उतरता है।

हिंदी ग़ज़ल की विकास यात्रा चलती रहेगी। अब तक की यात्रा ने ये संभावना जगाई है।

जलता रहा चराग तमाम आँधियों के बीच
ये हौसला चराग का बस लाजबाव है

हिंदी ग़ज़ल समयगत चुनौतियों का सामना करते हुए उम्मीद का दीया जलाए रखेगी, ग़ज़ल में यह ताकत है। वह अपने तंग दामन बकौल ग़ालिब (छंद की सीमा) के बावजूद आवाम से गुफ्तगू करती रहेगी। ग़ज़ल का हौसला व जादू लाजबाब है।

संपर्क : के.आई-147
कवि नगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

उर्दू ग़ज़ल का स्वरूप : उद्भव एवं विकास

❑ आफ़ताब अहमद खान 'रवि'

ख़ुमार बन के दिलों में समाई है उर्दू
तुझे ग़ज़ल में मचलते हुए जवाँ देखा

हिंदी हमारे देश भारतवर्ष की सबसे समृद्ध तथा पूरे देश में किसी-न-किसी रूप में बोली जाने वाली भाषा है। 14 सितंबर 1949 को संविधान ने इसे देश की राजभाषा का दर्जा प्रदान किया। उर्दू भाषा, हिंदी की छोटी बहन है। इसका जन्म हिंदी की एक कोमल डाल के रूप में हुआ। यह इसी देश में पैदा हुई,पली और बड़ी हुई।

हिंदी के बग़ैर उर्दू भाषा, साहित्य और ख़ासकर ग़ज़ल जैसी लोकप्रिय विधा के बारे में कुछ कहना उसी तरह से है जैसे दूध और जल के बिना मक्खन और बर्फ़ की कल्पना करना। उर्दू की ख़ूबसूरत इमारत, हिंदी की मज़बूत नींव पर खड़ी है, जो हर झंझावात, आँधी, तूफान तथा तमाम मुश्किलों का सामना बड़ी विनम्रता से करती आई है। इस मीठी भाषा, मधुर ज़बान को प्यार करने वालों की कमी नहीं है। आइए सबसे पहले ज़िक्र करते हैं, अपनी राष्ट्रभाषा का।

भारतवर्ष हमेशा से विभिन्नताओं का मुल्क रहा है। यहाँ अनेक धर्मों, संस्कृतियों तथा भाषाओं ने जन्म लिया। कुछ समय बाद वे यहीं के होकर रह गए। यहाँ की आबोहवा से उन्हें प्रचुर जीवन शक्ति मिली। उनका विकास हुआ। ग्रीक, लैटिन, चीनी, परशियन की तरह संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। यह वेदों की भाषा कहलाती है। हिंदी का आविर्भाव संस्कृत, प्राकृत, पाली तथा अपभ्रंश के पड़ावों को तय करने के बाद हुआ। इसकी बहुत-सी बोलियाँ या उप भाषाएँ हैं, जो आपस में मिलती-जुलती हैं। ख़ास तौर पर अवधी, ब्रज, छत्तीसगढ़ी और खड़ी बोली। ब्रज भाषा काफ़ी मधुर मानी जाती है। हिंदी भाषा का सबसे नवीनतम, परिष्कृत तथा आसान रूप खड़ी बोली है जिसे हम बोलते हैं। उर्दू भाषा इसी पुरानी खड़ी बोली की उपज है। प्राचीनता की दृष्टि से देखें तो यह प्राकृत के काफ़ी नज़दीक है क्योंकि प्राकृत भाषा आम जनता की भाषा थी और संस्कृत से काफ़ी हद तक आसान थी। उर्दू दरअसल एक आर्यन भाषा है। यह सदियों की हिंदू-मुस्लिम एकता की प्रक्रिया स्वरूप जन्मी भाषा है। यह हमारी गंगा-यमुनी तहज़ीब की कृति है। यह हिंदी भाषा के गुलशन से लिया गया पौधा है जिसमें अरबी-फ़ारसी की खाद डाली गई और सभी भाषाओं का पानी। अमीर खुसरो ने इसे हिन्दवी के नाम से पुकारा। इसे और भी कई नाम अता किए, जैसे रेखता, गुजरी, दकनी, देहलवी, हिंदुस्तानी आदि। इसका नाम उर्दू किसने रखा—इस बारे में कुछ कह पाना कठिन है। उर्दू का शाब्दिक अर्थ है, सैनिकों का कैम्प। बावजूद इसके, यही नाम सबसे उपयुक्त समझा गया जो आज भी प्रचलित है।

जैसा कि मैंने अभी कहा था उर्दू ज़बान हिंदू मुस्लिम मेल-मिलाप का फल है। इस मुल्क में अनेक मुस्लिम शासक विशेषकर मुग़ल शासक आए जो फ़ारसी बोलते थे। उनके साथ उनका परिवार, दरबारी तथा फ़ौज भी आई। यहाँ पर हिंदी भाषा का प्रचलन था। हुकूमत करने, बाजारों में ख़रीदारी करने के साथ-साथ आपस में बातचीत, विचारों के आदान-प्रदान के लिए किसी सामान्य भाषा की ज़रूरत थी। यहाँ के लोगों पर अरबी-फारसी का असर पड़ा और उन पर हिंदी का। एक नई भाषा तथा माध्यम उभर कर सबके सामने आई और वह भाषा थी उर्दू—पुरानी उर्दू, अपरिपक्व उर्दू जो अमूमन दिल्ली तक केंद्रित थी। जब शासकों का क़ाफिला दक्षिण भारत पहुँचा तो वहाँ भी इसी प्रकार से उर्दू का उदय हुआ। दिल्ली और दक्षिण की उर्दू में बहुत ख़ास अंतर न था। 18 वीं सदी तक दिल्ली की उर्दू, अवधी और ब्रज भाषा के प्रभाव से काफ़ी हद तक आजाद हो चुकी थी। दिल्ली की अवाम में उर्दू के प्रति ख़ास रुचि पैदा हुई। उर्दू में ग़ालिब और मीर जैसे शाइर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पैदा हुए। जब दिल्ली उजड़ी तो शायर लखनऊ आए। यहाँ पर तत्कालीन नवाबों ने उर्दू और उर्दू के साहित्यकारों, शाइरों का तहेदिल से स्वागत किया। नवाब शुजाउद्दोला के शासनकाल में दिल्ली से हिजरत कर लखनऊ (अवध) आने वाले प्रमुख शाइरों के नाम हैं—सौदा, मीर, ख्वाज़ा हसन 'हसन', मीर हैदर अली 'हैराँ', मिर्जा फ़ाखिर 'मकी', मीर ज़ाहिक, मीर हसन, मीर कमालुद्दीन 'मिन्नत', जियाउद्दीन 'जिया' वगैरह। यहाँ आकर इन्हें इज़्ज़त, दौलत, शोहरत—सब कुछ मिली। इस तरह से उर्दू दक्षिण भारत की अहमदनगर, बीदर, बीजापुर, गुजरात और गोलकुंडा सल्तनतों में उन्नति करती रही। इधर लखनऊ के अतिरिक्त रामपुर की रियासत में भी उर्दू शाइरी परवान चढ़ती रही। कुल मिलाकर मुग़लों, निज़ामों, नवाबों, राजाओं ने उर्दू शाइरी और भाषा को अपनाया, सँवारा और तरक्कीयाफ्ता बनाया। ग़ज़ल उर्दू साहित्य की सबसे उत्कृष्ट विधा का नाम है। क़सीदा, रुबाई, मसनबी नज़्म मरसिया आदि अन्य काव्य प्रकार हैं। ग़ज़ल को जो प्रसिद्धि मिली, वह उर्दू साहित्य की किसी अन्य विधा को प्राप्त न हो सकी। इसका सबसे बड़ा कारण है—इसका शृंगार रस से ओत-प्रोत भाव पक्ष। ग़ज़ल का सीधा-सा अर्थ है अपने प्रिय या महबूब से बातें करना शिकवे-शिकायत करना, उसकी बेवफ़ाई, सितमगरी का इजहार करना। ग़ज़ल प्रेम और मोहब्बत की व्याख्या है। शृंगार रस के दोनों पक्षों (संयोग और वियोग) की इसमें मीमाँसा की जाती है। ग़ज़लगो स्वयं को प्रेमी मानकर अपने दिलबर के रूप, यौवन, लावण्य का अतिशयोक्तिपूर्ण बखान करता है और वफा का तलबगार होता है। कभी वह मजनूँ सौदाई बन जाता है और कभी मयकश। वह प्रियतम को पाने के लिए हर कुछ करने को तैयार रहता है। उसे बेवफा माशूक के हाथों मरने तक से गुरेज़ नहीं होती। ग़ज़ल में दर्द बयान होता है। प्रेम रस पान में सुखानुभूति होती है।

दिले नादाँ तुझे हुआ क्या है
आखिर इस दर्द की दवा क्या है
हम है मुश्ताक़ और वह बेज़ार
या इलाही, यह माजरा क्या है —ग़ालिब

महकी महकी है फिज़ा, बहकी हुई है यह सबा
चाँदनी की रात मेरा यार राहे बाम है।

—रवी

शृंगार रस, ग़ज़ल का मुख्य रस होता है। लेकिन अन्य भावनाओं, विषयों पर भी ग़ज़लें लिखी जाती हैं। देशभक्ति, दर्शन, सामाजिक सरोकार, राजनीति की विकृति वगैरह कोई भी विषय ग़ज़लों से अछूता नहीं रहा है। ग़ज़लगो साहित्यकार एक ओर जहाँ अपनी और समाज की भावनाओं, दशाओं को दर्शाता है वहीं भाषा की तरक्की के लिए प्रयत्नशील रहता है। वह भाषा के विभिन्न आकर्षक, मधुर तथा सुप्त शब्दों को भी प्रयोग में लाता है, उन्हें नई चमक और कशिश प्रदान करता है। ग़ज़ल में शब्दों के चयन का ख़ास ध्यान दिया जाता है ताकि काव्यात्मकता, लय, गति और माधुर्य में किसी तरह की कोई रुकावट न पड़े। शाइर जो कहना चाहता है वह पाठक या श्रोता तक पहुँच सके। शाइर की अनुभूति को वह महसूस कर सके। या इश्क मजाज़ी और इश्क हकीकी को समझ सके।

ग़ज़ल में कल्पना की बहुत बड़ी भूमिका होती है। ग़ज़ल कहने वाला शाइर विभिन्न प्रकार की कल्पनाओं के जरिए अपने प्रिय की सुंदरता की तस्वीर बनाता रहता है। यही कारण है कि वह उसकी उपमा शराब, गुलाब, चाँद, परी आदि से दिया करता है और उसके सौंदर्य की मोहक छवि को अपने शे'रों में ढालता रहता है। ग़ज़ल हमें आनंदमय संसार में ले जाती है। इसे आप दुखों, मुसीबतों, परेशानियों से पलायन भी कह सकते हैं। ग़ज़ल की पहली दो पंक्तियों को 'मतला' कहते हैं जिसका अर्थ होता है प्रकट होना। दो पंक्तियों को शे'र कहा जाता हैं अंतिम शे'र को 'मक़ता' कहा जाता है अर्थात समाप्त होना। इसी अंतिम शे'र में शाइर अपना शाइरी के लिए रखा नाम या 'तख़ल्लुस' प्रयोग करता है। वास्तव में यह उपनाम शाइर का ब्रॉंड होता है, ग़ज़लगो का पता होता है। इसी से उसकी पहचान होती है।

परंपरा के अनुसार ग़ज़ल के पहले शे'र, यानी मतला, की दोनों पंक्तियों का तुकांत होना आवश्यक है। बाद के हर शे'र की दूसरी पंक्ति तुकांत होनी चाहिए। तुकांत को 'क़ाफ़िया' कहते हैं। इससे गीतात्मकता और संगीतात्मकता में इज़ाफा होता है। कई बार ग़ज़ल के कई शे'रों के दोनों मिस्रे (पंक्ति) लगातार क़ाफिएबंद होते हैं लेकिन ऐसा कम ही देखने को मिलता है। ग़ज़ल का छंद हिंदी के दोहे के समान होता है।

जल उठे बाजार बस्ती बाम दर
बन गया इनसान पल में जानवर

—रवी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बावजूद इसके शे'र और दोहे में काफ़ी फ़र्क होता है। दोहा अपने आप में शेर की भाँति पूर्ण एवं अलग अस्तित्व रखने के साथ-साथ बिलकुल स्वतंत्र होता है। शे'र किसी ग़ज़ल का हिस्सा होता है। दोहे में दोनों पंक्तियाँ तुकांत होती हैं।

सरहाने मीर के आहिस्ता बोलो
इसी टुक रोते रोते सो गया है

—मीर

उर्दू ग़ज़लों (प्रारंभिक) पर संत, महात्माओं, सूफ़ियों का बहुत बड़ा प्रभाव है क्योंकि वे लोग अपनी प्रेमपूर्ण बातों को अधिकतर छोटे-छोटे दोहों में कहते थे। गा-गा कर। कबीरदास, नामदेव, नानक, संत रैदास, ख़्वाजा मुहनूद्दीन चिस्ती आदि ऐसे ही संत सूफ़ी थे। यह 14 वीं 15 वीं शताब्दी में हुए। दोहे का एक उदाहरण देखिए—

चारों ओर वह थाली फिरे
मोती उससे एक न गिरे

—अमीर खुसरो

ग़ज़लों में कला पक्ष गौण होता है क्योंकि इससे गति और भाव में विघ्न पड़ता है। मुख्य रूप में उपमा, रूपक, मानवीकरण और अतिशयोक्ति अलंकारों को इस्तेमाल किया जाता है। ग़ज़लों के भावपक्ष पर भी हिंदी काव्य का बहुत असर दिखाई देता है। प्रारंभिक उर्दू साहित्य और ग़ज़ल तो आधी हिंदी कुछ फारसी कुछ उर्दू के रूप में उदय हुई।

एक थाल मोती से भरा
सब के सर पर औंधा धरा

—अमीर खुसरो

इसी प्रकार 17 वीं शताब्दी के शाइर अफ़ज़ल ने अपनी कृतियों में ठेठ हिंदी का प्रयोग किया है। यह प्रारंभिक दौर की उर्दू थी।

ग़ज़ल में कवि का व्यक्तित्व हमेशा से झलकता रहा है। गति, गेयता, सरलता, मिठास, सौंदर्य वर्णन, सादगी, पाकीज़गी, कल्पनाशीलता, संगीतात्मकता, ज़बान की सफ़ाई, नफ़ासत, दिलकशी आदि ग़ज़ल की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन्हीं खूबियों की बिना पर ग़ज़ल हर भावुक हृदय पर हूकुमत कर रही है—

ख़ल्क़ की रौनक बना जैसे फ़लक पर आफ़ताब
अज़मते शीरीं ग़ज़ल उर्दू ज़बाँ की शान है

—रवि

शाइर अपनी शाइरी हर प्रकार के काव्य में करता है। कभी वह ग़ज़ल लिखता है कभी रुबाई, कभी गीत तो कभी कोई नज़्म। चुनान्चे काव्य साहित्य का एक प्रकार है। जो शाइर ग़ज़लें अधिक लिखता है। वह ग़ज़लों का शाइर बन जाता है। दक्षिण भारत के मुख्य कवि (ग़ज़लगो) इस प्रकार हैं—मो. कुली कुतुबशाह (1565-1612), अब्दुल्लाह कुतुबशाह (1626-1672), वली (1650-1707)। दिल्ली के प्रमुख ग़ज़लकार ग़ालिब, सौदा, जफ़र, दाग़, मोमिन, सोज, मीर, मसहफी हैं। इनमें से कई शाइर दिल्ली की बरबादी के बाद लखनऊ तथा अन्य स्थानों पर चले गए। इनकी ग़ज़लें दिल्ली और लखनऊ की भाषा से प्रभावित हैं। इन शाइरों के लखनऊ आने के बाद इनकी भाषा में सफ़ाई आई है। मसहफ़ी, जुरअत, इन्शा, रंगीन, जाफ़र, अली 'हसरत' आदि शाइर यद्यपि दिल्ली के हैं लेकिन उनकी शाइरी को ख्याति एवं प्रसिद्धि लखनऊ आने पर ही मिली। मुशाइरों के ज़रिए जहाँ उर्दू अदब, ख़ास कर ग़ज़लों को शोहरत मिली वहीं अवध में एक ख़ास संस्कृति—तहज़ीब की जड़ें मज़बूत हुईं। गंगाजुमनी तहज़ीब। लखनऊ उर्दू का महत्त्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहाँ पर उर्दू जबान को हीरे की तरह तराश कर सुडौल, चमकदार और आकर्षक बनाने का महत्त्वपूर्ण काम किया गया है। यहाँ अधिकतर ग़ज़लें शृंगार रस से ओतप्रोत लिखी गईं। लखनऊ और उत्तर-पूर्वी भारत के ग़ज़लगो शाइरों ने भी उर्दू अदब को शाइरी और ग़ज़लों का बेशकीमती ख़जाना प्रदान किया है। मुख्य शाइर हैं—असर लखनवी, मजाज़, फ़ैज़, जिगर मुरादाबादी, पं. आनंद नारायण मुल्ला, असगर गोंडवी, चकबस्त, कैफी आजमी, शकील बदायूँनी, खुमार बाराबंकवी, साहिर लुधयानवी, अल्लामा इकबाल, अल्लामा जमील मजहरी, जगन्नाथ आज़ाद वग़ैरह। इनके कलाम के कुछ नमूने हाजिर कर रहा हूँ जो इश्क़ मुहब्बत के जज़्बे से लबरेज़ हैं—

उम्र बर्क़ो शरार है दुनियाँ, कितनी नापायदार है दुनियाँ

—अमीर मीनाई

लो उठा जाता हूँ अब झाड़ के दामन अपना
फिर न कहना मेरा दीवाना जिगर है कि नहीं

—जिगर मुरादाबादी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दुनिया सनक गई है, मोहब्बत छुपाइए
तूफान आ चुका है सफीना बचाइए
यह कौन आधी रात को आया है मयकदे
तौबा, जनाब शेख हैं, तशरीफ लाइए

–खुमार बाराबंकवी

ए रहमते तमाम मेरी हर ख़ता मुआफ़
मैं इंतिहाए शौक़ में घबरा के पी गया
पीता बग़ैर अज़्न पे कब थी मेरी मजाल
दर परदा चश्मे यार की शह पाके पी गया

–जिगर मुरादाबादी

हमदम यही है रह गुजरे यार ख़ुश ख़राम
गुज़रे हैं लाख बार इसी रह गुज़र से हम

–मजाज़ बाराबंकवी

दामन की घटा याद न जुल्फों की घटा याद
अब कुछ भी नहीं सोज़े ग़मे दिल के सिवा याद

–जगन्नाथ आजाद

न जाने कितनी शम्मएँ गुल हुईं कितने बुझे तारे
तब एक ख़ुरशीद इतराता हुआ बालाए बाम आया

–पंडित आनंद नारायण मुल्ला

युग प्रगतिशील और आधुनिकता की तरफ बढ़ रहा था। ग़ज़लें भी इसके प्रभाव से बच न सकीं। 1935 में पेरिस में प्रगतिशील ग़ज़ल की नींव पड़ी। 1936 में लखनऊ में इस के लिए एक बड़ी कान्फेरेन्स बुलाई गई जिसमे ज़िंदगी की वास्तविकता, भूख, रोजी-रोटी, फिरकापरस्ती, सामाजिक, आर्थिक विषमताओं के विरुद्ध आवाज उठाई गई, परिवर्तन की हुंकार उद्घोषित की गई। इन प्रगतिशील ग़ज़लों पर मार्क्स और कम्युनिज़्म का असर जाहिर था। फैज, मजाज़, अली सरदार जाफरी,ताबाँ, आज़ाद, अहमद शाह एवं राजेन्द्र सिंह बेदी जैसे चोटी के फ़नकार प्रगतिशील ग़ज़ल के अलमबरदार बने।

बहुत मुश्किल है दुनिया का सँवरना
तेरी जुल्फों का पेचो खम नहीं है

–इसरारूल हक़ मजाज़

जो करते हुए गुलामों के ख़ूँ से गुलकारी
लहू से उनके है रंगीन एशिया सारा

–गुलाम रब्बानी ताबाँ

इस साहित्यिक क्रांति के बाद ग़ज़ल एक नए रूप और नए अंदाज़ में सामने आई। यह बीसवीं सदी के उत्तरार्ध का दौर था। ग़ज़लों में विचारों को विस्तार प्रदान किया गया। उनमें नवीनता, स्वच्छंदता ने करवटें बदलीं। दर्शन, प्रेम और भावनात्मक विषयों को पुनः स्थापित किया गया। कड़ुवाहट के बजाए मिठास खोली गई। नए शब्द और मुहावरे गढ़े गए। दर्द, माधुर्य, सादगी, गेयता को गले लगाया गया। हिंदी के अल्फ़ाजों का बड़े सलीक़े से प्रयोग किया गया।

आज का दौर यथार्थवादी ग़ज़लों का दौर है। संक्षेप में कहें तो नव्य ग़ज़लों का युग भाव एवं कला पक्ष की दृष्टि से विराट युग है। इस युग पर दिल्ली और लखनऊ–दोनों स्थानों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। सय्यद रियाज़ अहमद रियाज़, खैराबादी, असग़र हुसैन गोंडवी, हसरत मोहानी, मिर्ज़ा मुहादी अज़ीज लखनवी व सफ़ी लखनवी आदि प्रमुख ग़ज़लगो हैं।

यह बज़्में मय है याँ कोताहदस्ती में है महरूमी
जो बढ़कर खुद उठा ले हाथ में मीना उसी का है।

–शाद अजीमाबादी

ग़ज़लगोई का अतिनवीन दौर चल रहा है। इसमें हर चीज़ मौजूद है। हर तरह के भावों पर साफ सुथरी, इश्क मोहब्बत, वतन परस्ती, भ्रष्टाचार, अशांति, दंगे फसाद, अमन की चाहत, राजनीति पर ग़ज़लें लिखी, कही जा रही हैं। इस दौर के ग़ज़ल लिखने वालों में बशीर बद्र, राहत इंदौरी, जावेद अख्तर, गुलज़ार, निदा फ़ाज़ली, बेकल उत्साही, कुँवर महेन्द्र सिंह बेदी, प्रीती बाजपेई, जान आलिया तारिक बदायूँनी वगैरह हैं।

उर्दू ग़ज़लों में कुछ ऐसे शाइरों के नाम हैं जिन्हें ग़ज़ल और शाइरी का स्तंभ कहा जाता है। मिर्जा असदउल्ला खाँ गालिब उर्दू के महान ग़ज़लकार हैं। यह उर्दू शाइरी के नायक कहे जाते हैं। अली सिकंदर, जिगर मुरादाबादी, मो. मोमीन खाँ मोमिन, मो. तक़ी मीर, फ़ैज अहमद फ़ैज़ की हुस्न इश्क की छलकती नाजुक ख़याल ग़ज़लें हमारे जज़्बात को हमेशा सुरूर–सुकून बख्शती रहेंगी। मीर और ग़ालिब की ग़ज़लों में दर्द की शिद्दत और इश्क की ताज़गी पाई जाती है। मोमिन की रूमानी ग़ज़लों में हुस्न व मोहब्बत की गर्मी है।

आइए इन शाइरों के कुछ और शेरों पर नज़र डालें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मीर तक़ी मीर (1723-1810)

कभी जो आँख से चलते हैं आँसू
तो भर जाता है पानी सब ज़मी पर
मैं, मना मीर तुझको, करता न था हमेशा
खोई न जान तूने, दिल को लगा लगाकर

× × ×

देके दिल हम जो हो गए मजबूर
इसमें क्या अख्तियार रहता है

मिर्ज़ा असद उल्ला खाँ ग़ालिब (1797-1869)

क़ता कीजे नतअल्लुक मुझसे
कुछ नहीं है तो अदावत ही सही।

× × ×

कभी जो याद भी आता हूँ मैं तो कहते हैं
कि आज बज़्म में कुछ फ़ित्नओ फ़साद नहीं।

× × ×

हुई मुद्दत कि ग़ालिब मर गया, पर याद आता है
वह हर एक बात पर कहना कि यूँ होता तो क्या होता

अली सिकंदर, जिगर मुरादाबादी (1890-1960)

ओ मस्ते नाज़ हुस्न, मुझे कुछ ख़बर नही
तुझ पर निसार होते हैं किस किस अदा से हम

× × ×

ज़िंदगी आज भी दिलकश है उसी के दम से
हुस्न इक ख़्वाब सही इश्क एक अफ़साना सही

× × ×

भूल जाता हूँ मैं सितम उसके
वह कुछ इस सादगी से मिलता है

फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ (1911-1984)

कब ठहरेगा दर्द ऐ दिल, कब रात बसर होगी
सुनते थे वह आएँगे, सुनते थे सहर होगी

उर्दू साहित्य और ग़ज़लों पर शुरू से ही हिंदी साहि[त्य] का प्रभाव रहा है। भक्तिवाद से लेकर छायावाद, रहस्यवा[द] स्वच्छंदतावाद तथा वर्तमान यथार्थवाद—सब कुछ ग़ज़लों [में] पाया जाता है। उर्दू का आविर्भाव भारत में हुआ। इसके शब्[द] मुहावरे, स्वर, व्याकरण हिंदी जैसे हैं लेकिन इसके बावजू[द] उर्दू एक स्वतंत्र भाषा है। इसका साहित्य प्रचुर एवं अमर है। इसके साहित्य में हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई—सभी का अमूल[्य] योगदान है। फिल्मों के गीतकारों ने ग़ज़लें लिखकर इ[न्हें] जन-जन तक पहुँचाया है। ग़ज़ल गायकों ने ग़ज़लें गाक[र] श्रोताओं को रस विभोर किया है। यह सिलसिला आज भी जारी है। ईस्ट इंडिया कंपनी के समय अंग्रेज अफसरों ने उर्[दू] सीखी। 1704 में एम. टी. टैनिसन ने उर्दू शब्दकोश (लुगा[त]) की रचना की। ग्रियर्सन और गिल क्रिस्ट ने उर्दू का सिलसिलेवा[र] व्याकरण लिखा। 1848 में इंशा अल्ला खाँ ने इसका पुनर्लेखन किया। बाद में इसे मौलवी इमाम बख्श, मौलवी मो. हुसैन आजाद तथा फ़ैजुल्ला खाँ आदि के द्वारा लिखा गया।

दौर चाहे कोई भी रहा हो, उर्दू ग़ज़ल अपने आगाज़ से वर्तमान तक हमेशा मक़बूल रही है। उर्दू आज हिंदी के पीछे खड़ी आपके प्यार और हुकूमत की नज़्रें इनायत की मुन्तज़िर है। भारत की हर भाषा हम सबकी है और उर्दू ग़ज़ल हर दिल वाले की।

'प्रतिनिधि लघुकथाएँ' (वार्षिक)

में सहयोगाधार पर लघुकथाकारों से लघुकथाएँ आमंत्रित हैं

सानुरोध...

कुँवर प्रेमिल

संपादक, 'प्रतिनिधि लघुकथाएँ'

एम.आई.जी./8, विजयनगर, जबलपुर–482002 (म.प्र), मो.–09301822782

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिंदी ग़ज़ल के बदलते परिदृश्य और बिहार

❑ सिद्धेश्वर काश्यप

हिंदी ग़ज़ल की भाषिक संरचना उर्दू ग़ज़ल से भिन्न है। हिंदी भाषा अत्यंत समृद्ध, वैज्ञानिक और मात्रात्मक भाषा है। स्पष्ट है कि इसमें बहर के साथ मात्रात्मक समता की महत्ता है। उर्दू ग़ज़लों में मात्राओं के गिराने और उठाने की परंपरा बेजोड़ है जिसका लाभ तथाकथित हिंदी ग़ज़लकार अधानुकृति में लेने का उपक्रम करते हैं। हिंदी में मात्रा परिवर्तन से अर्थ में परिवर्तन हो जाता है; फलतः उर्दू ग़ज़ल का नियम इसमें कम ही लागू होता है। अब भी कुछ हिंदी ग़ज़ल विशेषज्ञ उर्दू ग़ज़ल की रागदरबारी में लीन हैं और दुष्यंत की अपेक्षा बशीद्र बद्र, निदा फाजली, बेकल उत्साही आदि को श्रेष्ठ गुरु स्वीकार करते हैं। कुछ ग़ज़लकार सफल हैं, पर अधिकांश विफल हैं। सफल ग़ज़लकारों में अश्वघोष, नीरज, रोहिताश्व अस्थाना, छंदराज, डॉ. कुँअर बेचैन, डॉ. अशोक गुलशन, लक्ष्मीशंकर बाजपेयी, डॉ. हरेराम समीप आदि प्रमुख हैं। बिहार के चर्चित ग़ज़लकारों में प्रेमकिरण, अनिरुद्ध सिंहा, सतीश राज पुष्करणा, नचिकेता, आर.पी. घायल, कुमार नयन, कैलाश झा किंकर, सिद्धेश्वर काश्यप, दिनेश तपन, आदि आज के समय के सच को अत्यंत सहज एवं सरल भाषा में उजागर करने में समर्थ हैं। समकालीन मानव जीवन की विद्रूपताओं पर चोट और भारतीयता एवं राष्ट्रीयता की प्रतिष्ठा ही इनकी रचनात्मकता का अभिप्रेत है।

विनय मिश्र जीवन के सच को उजागर करने वाले शाइर हैं और उनकी ग़ज़लों में मूल्यों के प्रति आस्था है—

कोई न दोस्ती न कोई दुश्मनी रही
गुमसुम सी ज़िंदगी थी मगर बोलती रही

× × ×

अन्याय की लंका तो यहाँ तन के खड़ी है
सपनों की मगर पंचवटी सूनी पड़ी है

देवेन्द्र आर्य सूफीयाना मिज़ाज़ के शाइर प्रतीत होते हैं—

कल का कौन ठिकाना प्यारे
कब पड़ जाए जाना प्यारे
काबा काशी, कब्र है दुनिया
दुनिया ही मयखाना प्यारे।

लेकिन इनकी ग़ज़लों में भी जीवन का यथार्थ व्यक्त है—

अपनी रोटी, अपनी इज्जत, अपने हाथ कमाने प्यारे।

केशव शरण लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीयता के क्षरण पर चोट करने वाले शाइर हैं। 'दर्द के खेत' में उनका प्रमुख ग़ज़ल संग्रह है। इनमें मानवीय जीवन के प्रति आस्था है—

बस इसी उम्मीद पर जीते रहे हैं हम
अब अँधेरे दूर होंगे रोशनी होगी

शेरजंग गर्ग वरिष्ठ और सफल हिंदी ग़ज़लकार हैं। वह जीवन के विविध संदर्भों को स्वर देते हैं। वह आज के आदमी के दोहरे चरित्र पर चोट करते हैं—

जिनके पैरों तले जमीन न हो
उनके सिर पर उसूल की छत है

नरेन्द्र बशिष्ठ आम आदमी और सामाजिक सरोकार के शाइर हैं। बालस्वरूप राही रोमांटिकता और मध्यवर्गीय जीवन के शाइर हैं। उनमें पीड़ा के आँसू हैं और खून की गर्म अकुलाहट भी। भवानीशंकर की ग़ज़लों में मानव के भविष्य के प्रति आस्था है—

रंक होगा न कोई और न राजा होगा
एक दिन वक्त का यह आम तकाजा होगा

सूर्यभानु गुप्त आज की विसंगतियों के प्रति सचेत हैं और उस पर चोट भी करते हैं—

दुःख के हर एक चौराहे पर सुख का एक बुत है खड़ा हुआ
बीते वक्त के मलवे में, एक मुल्क पड़ा है दबा हुआ

राम कुमार 'कृषक' श्रमिक एवं सर्वहारा के शाइर हैं। कृषि संस्कृति और सर्वहाराओं के संघर्ष को वाणी देते हैं वह। वह मानवीय मूल्यों के ह्रास पर चोट भी करते हैं—

जोतकर हर हाल ऊसर में हमें
दूसरों की फ़स्ल बन जाता है दिन।
रोटियों के वास्ते रोता कहीं
रोटियों के वास्ते गाता है दिन।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कही इंसानियत सचमुच न खोदे
मिली पशुओं से बेहतर जो विरासत।
खरीदी और बेची जा रही है
लगाकर बोलियाँ फिर फिर मोहब्बत।

डॉ. रामदरश मिश्र लोक जीवन के शाइर हैं और आधुनिक समाज के अजनवीपन एवं बिखराव नागरता एवं मूल्यहीनता को उजागर करते हैं–

दर्द दुनिया भर का सीने में लिए जाते हैं हम
ज़िंदगी जीने की मजबूरी जिए जाते हैं हम।

× × ×

रहा गाँव तुझको पुकारता, रहे हाथ जंगल थामते,
तेरा अपना शहर भी छूट गया, किसी के शहर की तलाश में।

इसी मन मिज़ाज़ के शाइर शिवओम् अंबर और रामावतार त्यागी भी हैं। विज्ञान व्रत छोटी बह्र के उस्ताद ग़ज़लकार हैं। इनकी ग़ज़लों की निजी पहचान है। सामाजिक सरोकार को इनकी ग़ज़लों में प्रमुखता प्राप्त है। अजय 'अज्ञात' भारतीयता और मानवीयता के शाइर हैं। वतन के नाम, जुस्तजू, तश्नगी उनके ग़ज़ल संग्रह हैं। अशोक 'अंजुम' में नकल की प्रवृत्ति और उर्दू शाइरी का अहं अधिक है। रोमांस और आधुनिक मूल्यों को स्वर देते देते अब हज़ल लिखते हैं जिसमें जीवन की सच्चाई कम, मसखरापन ज़्यादा है।

चाँद का अकसर छत पर आना
कितना अच्छा लगता है,
तुझसे घंटों तक बतियाना कितना

× × ×

अच्छा लगता है।
सारा मंजर बोल रहा है, तू जो हँसकर बोल रहा है।

बिहार के शायरों में संप्रति प्रेम किरण सर्वाधिक प्रतिष्ठित हैं। उनका मन मिज़ाज शुद्ध देशी है, उनमें उर्दू ग़ज़ल का बाँकपन और हिंदी ग़ज़ल की सच्चाई है–

जब भी जीवन में अँधेरा होगा,
उसकी यादों में उजाला होगा।
अपने ईमान पर चलने वाला,
भीड़ में सबसे अकेला होगा।

× × ×

कभी होता नहीं हिन्दू या मुस्लमां सूरज,
रोशनी सबके लिए लाता है यक़सा सूरज।

दिनेश तपन बिहार के प्रौढ़ शाइर हैं। अनुभव की सच्चाई और जीवन के यथार्थ का संगम है उनकी शाइरी–

ज़िंदगी है जब तलक जी ले मियां,
गर्दिशों में रहके गम पी ले मियां।
प्यार के बरअक्सं नफरत तपन,
लफ़्ज कितने देख जहरीले मियां।

कैलाश झा 'किंकर' की शायरी में ग़ज़ल और हज़ल की धूप छाँही है। किंकर जीवन की विकृतियों पर चुटकी लेते हैं, हँसाते हैं और इंक्लाब की प्रेरणा भी देते हैं–

आसिफ रोहतासवी की शाइरी उर्दू शाइरी की फितरत की है। रोमानियत और जीवन की सच्चाई है इनकी शाइरी में–

चाँद छत पर उतर आता है,
तेरी यादों को जगा जाता है।

× × ×

थाम दामन लिया अँधेरे का
रोशनी के बहुत सताये हैं।

गणेश राज की शाइरी में प्रौढ़ता है और ज़िंदगी प... सच्चाई के साथ व्यक्त होती है–

बँटा है मज्हबों में जातियों में,
मुकम्मल आदमी अब क्या मिलेगा।

× × ×

अँधेरा रास आता है नहीं पर,
उजालों का सफर देखा हुआ है।

शिवकुमार सुमन, अंजनी कुमार सुमन, नंदेश निर्म... कविता परवाना, रमण सिही, मृदुला झा, विजय प्रकाश, शिवनं... सलील, विकास, वासुदेव विधाता आदि अनेक शाइर ग़ज़... कहने में लीन हैं, पर हिंदी ग़ज़ल के मन-मिजाज से... अंधानुकृति की प्रमुखता है इनमें। श्री अनिरुद्ध सिंहा... परंपरा की अगली कड़ी ये प्रतीत होते हैं। सिंहा जी उर्दू ग़ज़... से अपने आपको जोड़ने का उपक्रम करते हैं; फलतः 'तपि... 'तड़प' 'तमाशा' लिखते हैं। इनमें ज़िंदगी की त्रासदी अधि... है, विद्रोह और इंक्लाब का स्वर कम है। यदि आप दुष्... की परंपरा को आगे बढ़ाते तो शायद आप कालजयी शा... की प्रतिष्ठा प्राप्त करते। छंदराज जी वरीय हिंदी शाइर... पर दर्शन का अभाव है और मूल्यों के प्रति आस्था भी... है। प्रगतिशीलता के नाम पर उछल कूद ही अधिक है।... भी बिहार में ग़ज़ल के भीष्म पितामह हैं आप।

संपर्क : भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिह...

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

समकालीन हिंदी ग़ज़ल में स्त्री विमर्श

❑ प्रो. वशिष्ठ अनूप

इक्कीसवीं सदी में साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति ही हिंदी ग़ज़ल में भी अनेक परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। अन्य बातों के साथ ही हिंदी के ग़ज़ल ने स्त्री समाज की स्थितियों पर भी गंभीरता से विचार किया है। उन्होंने इस बात को महसूस किया है कि सृष्टि के आरंभ से ही समाज के विकास में स्त्रियों की भूमिका पुरुषों से महत्त्वपूर्ण रही है और इसलिए एक समय में समाज मातृप्रधान था। आगे चलकर स्त्रियों की भूमिका घर के भीतर तक सीमित कर दी गयी और उनके बन्धनों को उनका आभूषण बनाकर पेश किया गया। उन्हें गुलाम बनाने के लिए अनेक प्रकार की साजिशें रची गयीं। कल्पना में उन्हें देवी और पूज्या बताया गया किन्तु व्यवहार में उन्हें भोग्या और दासी बना दिया गया। कभी उन्हें बाज़ार में बेचा गया और कभी दान की वस्तु बनाया गया। ऐसा नहीं था कि नारियों में प्रतिभाशक्ति या शक्ति की कमी थी, लेकिन जब भी वे पुरुषों के सामने चुनौती बनकर खड़ी हुई उन्हें भयभीत करके दबा दिया गया। गार्गी और याज्ञवल्क का शास्त्रार्थ इसका एक मात्र नहीं, सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। आगे चलकर सती प्रथा, बहुविवाह प्रथा और विधवाओं की समस्याएँ उसी गुलामी और असुरक्षा की भावना की परिणति थीं। भारतीय नवजागरण के नायकों ने नारी की शक्ति को पहचानकर नारी जागरण और मुक्ति की बात को स्वाधीनता-संघर्ष के साथ जोड़ा था। भारतेन्दु का 'नारी नर सम होहिं' का नारा इसी भाव से प्रेरित था।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद सबके साथ ही स्त्रियों की स्थिति में भी, खासकर शिक्षित स्त्रियों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। किंतु स्त्रियों की बहुसंख्यक आबादी फिर भी पूर्वदशा में बनी रही और बनी हुई है। अब भी उनके कदम-कदम पर वर्जनाएँ हैं और अब भी बहुत सारी स्त्रियाँ घरों की चहारदीवारी में ही जीवन गुजार देती हैं और बाहर के संसार से अपरिचित रहती हैं। बचपन में पिता, जवानी में पति और बुढ़ापे में पुत्र की गुलामी में रहना उनकी नियति बनी हुई है। शिक्षित औरतों को, उनमें भी कामकाजी औरतों को एक प्रकार की आज़ादी अवश्य मिली, किंतु घर से बाहर निकलते ही यौनादि एवं दूसरे शोषणों का शिकार होने लगीं। पूँजीवादी बाज़ारवाद ने उन्हें विज्ञापन की चीज बना दिया और अब तो बिना स्त्री देह की चमक के किसी विज्ञापन में प्रभाव ही नहीं पैदा होता है। महानगरों के उत्तर आधुनिक और भोगवादी समाज व संस्कृति में तमाम अच्छे घरों की लड़कियाँ भी कालगर्ल्स के रूप में वेश्यावृत्ति की ओर बढ़ रही हैं। हमारी अर्थवादी व्यवस्था और पुरुष प्रधान समाज ने इसे रोज़गार मानना आरंभ कर दिया है और उन्हें सेक्सवर्कर के नाम से संबोधित किया जा रहा है। अर्थवादी मानसिकता के कारण हर चीज में लाभ तलाशा जाने लगा है और दहेज जैसी समस्याएँ लगातार भयावह होती गयी हैं। हिंदी ग़ज़लकारों ने इन सारी स्थितियों को बहुत गंभीरता और सहानुभूति के साथ चित्रित किया है। पुरुष-प्रधान भारतीय समाज में नारी की स्थिति यह है–

हिंदुस्तानी औरत यानी
घर भर की खातिर कुर्बानी
गृहलक्ष्मी पद की व्याख्या है
चौका-चूल्हा-रोटी-पानी
क़त्ल हुआ कन्या-भ्रूणों का
तहज़ीबें दीखीं बेमानी

–शिवओम् अम्बर

इसको मिलेगा प्यार या स्टोव पिया से,
बाबुल तुम्हारी बिटिया जो घर छोड़ रही है।

–अशोक अंजुम

दिल में सौ दर्द पाले बहन-बेटियाँ,
घर में बाँटें उजाले बहन-बेटियाँ।
हो रहीं शादियों के बहाने बहुत,
भेड़ियों के हवाले बहन-बेटियाँ।

–ओमप्रकाश यती

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh,Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हजार चुप से घिरी हलचलों के घेरे में,
रुकी-रुकी सी हिचकती सी कोई साँस हो तुम।

—विजय बहादुर सिंह

कहीं तलाक कहीं अग्नि परीक्षाएँ हैं,
आज भी इन्द्र हैं, गौतम हैं, अहल्याएँ हैं।
प्यार की राह में दुष्यंत जिन्हें छोड़ गए,
भटकती फिर रहीं वन-वन शकुन्तलाएँ हैं।
ये ब्याह-शादियाँ हैं खेल गुड्डे-गुड़िया के
कहीं भी हाँक दो खूँटे से बँधी गायें हैं।

—वशिष्ठ अनूप

अच्छा दहेज दे न सका मैं बस इसलिए,
दुनिया में जितने ऐब थे बेटी में आ गये।

—तुफ़ैल चतुर्वेदी

आज़ादी, प्रगति, आधुनिकता और शिक्षा के बावजूद स्त्रियों की स्थिति अब भी नारकीय बनी हुई है। अब भी उनके कदम-कदम पर चुनौतियाँ हैं—

बच्चियाँ, लड़कियाँ, औरतें,
काँच की खिड़कियाँ औरतें।
कोख से ही सज़ा मिल रही,
की हैं क्या गलतियाँ औरतें।

—वशिष्ठ अनूप

औरत तुम्हारें पाँव की जूती की तरह है,
जब बोरियत महसूस हो घर से निकाल दो।

—अदम गोंडवी

हिंदी ग़ज़ल के श्रेष्ठ रचनाकार कमलेश भट्ट ने भी नारी के विविध रूपों का वर्णन करते हुए उसके साथ जुड़ी हुई मूलभूत समस्याओं का चित्रण किया है—

औरत है एक कतरा, औरत ही खुद नदी है,
देखो तो जिस्म, सोचो तो कायनात-सी है।
संगम दिखाई देता है उसमें ग़म-खुशी का,
आँखों में है समंदर, होंठों पे इक हँसी है।
आदम की एक पीढ़ी फिर ख़ाक हो गयी है,
दुनिया में जब भी कोई औरत कहीं जली है।

—कमलेश भट्ट कमल

गरीब परिवारों की लड़कियों की विवशताओं को बहुत मार्मिक एवं आक्रोशपूर्ण ढंग से इन पंक्तियों में व्यक्त किया गया है—

आठ बरस में ही पढ़ लेती है गुस्ताख नज़र की भाषा,
पर रहती खामोश गरीबी से भहराकर छोटी लड़की।
जिस दिन दुर्गा, काली, चंडी के मिथकों को समझेगी यह,
रख देगी उस दिन सत्ता की जड़ें हिलाकर छोटी लड़की।

—नचिकेता

औरत की समस्याओं, घुटन और दिनचर्या को थोड़ा गौरवान्वित रूप देते हुए महेश अनघ ने अपनी एक ग़ज़ल में बहुत सुंदर ढंग से व्यक्त किया है—

बहुत भली लगती हो, घर का बोझ उठाए तुम,
रेगिस्तानी अधरों पर मुस्कान बिछाए तुम।
आँखों में उपवास अहिंसा खादी की चूनर,
भारत माता जैसी लगती हो बिन खाए तुम।
दिन भर खटती रहीं स्वप्न की नहर खोदने में,
नरम हथेली पर सरसो का बीज बिठाए तुम।

बहुओं को सताने वालों को समझाते हुए उनके भीतर संवदेना और सहानूभूति पैदा करने की कोशिशा करते हुए एक कवि ने कहा है कि—

आई है छोड़कर वो बाबुल की देहरी को,
बेटी है यह तुम्हारी, इसको नहीं सताओ।
आँसू किसी नज़र के सैलाब बन न जाएँ,
मासूम है उसे तुम इतना नहीं रुलाओ।

—शंकर प्रसाद करगेती

अशोक अंजुम की कई ग़ज़लों में लड़कियों की समस्याओं को बहुत प्रामाणिक और मर्मस्पर्शी रूप में प्रस्तुत किया गया है—

जब से हुई सयानी बिटिया,
भूली राजा-रानी बिटिया।
जाना तुझे पराए घर को,
मत कर यूँ मनमानी बिटिया।

—अशोक अंजुम

पूँजीवादी मानसिकता और पैसे की संस्कृति के कारण दहेज की समस्या आज अपने चरम भयावह रूप में खड़ी है। इस समस्या के कारण लड़कियों के माँ-बाप और भाई-भिखारियों की स्थिति में पहुँच जा रहे हैं, वहीं बहुत सारी लड़कियाँ आँखों में मुरझाए सपने के लिए आजीवन कुँवारी रह जा रही हैं जिनकी शादियाँ हो रही हैं उनमें से भी बहुत सारी दुल्हनें आग, जहर, फाँसी और अन्य बर्बरताओं के हवाले हो जा रही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हैं। ग़ज़लों में इन स्थितियों की बड़ी मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है–

चाहे गिरवी हवेलियाँ रख दो,
उनके क़दमों में बेटियाँ रख दो।
लड़कियाँ कह रही हैं जाते समय,
साथ डोली के अर्थियाँ रख दो।

–सुरेन्द्र चतुर्वेदी

कब बनेगी दुल्हन बेटी सोचकर,
सोचने को और कुछ भाता नहीं।

–सुभाष चन्द्र कुशवाहा

औरतों की बदहाली, परतंत्रता, विवशता और दूसरी समस्याओं के अतिरिक्त उनकी मुक्तिकामी चेतना और संघर्षशील भावना का चित्रण भी हिंदी ग़ज़लों में दिखाई पड़ता है। जिससे भविष्य के प्रति आशा बँधती है–

ये अभावों से उलझती काम करती औरतें,
अब अँधेरे में मशालें बन जलेंगी औरतें।
मौन रहकर सहने या सुनने के दिन तो लद गए,
बात हक़, इंसाफ़ की खुलकर कहेंगी औरतें।

–बल्ली सिंह चीमा

मिथकीय प्रयोगों के माध्यम से पंकज कुमार राय ने इस युग की स्त्रियों की स्थिति को देखते हुए अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है–

वृन्दावन में राधा भटके जसुदा सिसके गली-गली,
बाँच रही खंडित रामायण सीता इस संसार की।

–पंकज कुमार राय

लड़कियों और स्त्रियों की ज़िंदगी कितनी मुश्किलों और काँटों-भरी है, उन्हें हर वक्त किन-किन अग्नि-परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है इसका चित्रण कवयित्रियों ने भी अपनी ग़ज़लों में प्रभावशाली ढंग से किया है। इसके अतिरिक्त नारी-समाज की समस्याओं और आशाओं-आकांक्षाओं को भी इन कवयित्रियों ने बड़े प्रामाणिक एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यक्त किया है–

थे पाँव जैसे मील का पत्थर गड़ा हुआ,
हम फिर भी अपने आप में मीलों चला किये।

–मधुरिमा सिंह

गर्म तपती दोपहर है लड़कियों की ज़िंदगी,
एक पथरीली डगर है लड़कियों की ज़िंदगी।
हर घड़ी हर पल सताए पत्थरों का डर जिसे,
वो चकता काँच घर है लड़कियों की ज़िंदगी।

–कीर्ति भागवत

और लोगों की तरह वह हँस नहीं पाती कभी,
एक लड़की टूटती, जुड़ती, सिसकती रात भर।

–वर्षा सिंह

एक मुद्दत से धैर्य की धरती,
किसी आकाश के दवाव में थी।

–प्रभा दीक्षित

बस थपेड़े हवाओं के खाते रहे,
सारे मौसम हमें ही सताते रहे।
मन में उड़ने की नाकाम कोशिश लिए,
पिंजरे में पड़े छटपटाते रहे।

–शशि जोशी

जानें किस घर में जाकर ये सुख-दुख सहें,
अपनी किस्मत से अंजान हैं लड़कियाँ।
गैरियत का सलूक इनसे मत कीजिए,
आपके घर में मेहमान हैं लड़कियाँ।

–सुमन दुबे

लेखबद्ध है सारा जीवन गेरु रची दीवारों में,
बँटा हुआ है संवेदन भी, नाते-रिश्तेदारों में।
नन्हें बच्चे, पसरे खेतों में, खरगोशों में लगते,
हो दूजे पल ही दिखते हैं बदले लक्कड़हारों में।

–सुश्री शरद सिंह

इस प्रकार समकालीन हिंदी ग़ज़लों में स्त्री-समुदाय की यथास्थिति, शोषण, दमन और वर्जनाओं के साथ ही उनकी परिवर्तनकामी आकांक्षाओं और प्रतिरोधी विचारों को भी बेहतर अभिव्यक्ति मिल रही है।

प्रोफेसर, हिंदी विभाग
बी.एच.यू., वाराणसी (उ.प्र.)
मो. 09415895812

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

कोमल संवेदनाओं का नाम है ग़ज़ल

❑ ओम रायजादा

इस सच्चाई से इनकार नहीं किया जा सकता कि आज के दौर में अगर काव्य-विधा के किसी एक रूप को निखार मिला है, तो वह निश्चय ही ग़ज़ल है और इस ग़ज़ल की अपनी एक विशेषता रही है कि इसका हर शे'र अपना एक अलग अर्थ रखता है। यानी कि, अगर एक ग़ज़ल में तीन, पाँच या सात शे'र हैं तो शे'र का अपना एक अलग महत्त्व होगा।

धूप है तो छाँव भी होगी जरूर,
हो नहीं सकता कि कुछ ऐसा न हो।

—यादराम शर्मा

शाइरी की असल बुनियाद एहसासो-फिक्र है, लेकिन आज का इनसान संवेदनाओं और कोमल भावनाओं से कोसो दूर हो गया है। सारे सामाजिक और मानव मूल्य तेज रफ्तार औलादे-आदम की ठोकरों में है और अपनी आखिरी साँसे गिन रहे हैं। सारे इंसानी रिश्ते बेमानी होकर किसी खंडहर की फसील के साए में घुटनों में मुँह दिए बैठे हैं। मजाहिब अपनी जगह लेकिन वो मजहबी इरादे हों या सियासी या साइसी इरादे, इरतेहसाल रोकने वाला आज कोई नहीं।

शांत पोखर के किनारे बैठता हूँ जब कभी
सोचता हूँ ज़िंदगी जीते रहेंगे कब तलक

—पारसनाथ

तहजीबों के रिश्ते टूटकर बिखर चुके हैं और यह बिखराव अब और शिद्दत अख़्तियार करता जा रहा है। बढ़ते हुए शहरों और भारी मशीनों के शोर में आदमी की आवाज किसी को सुनाई नहीं देती—हमारे दरमियान बड़े से बड़ा हादसा यूँ गुजर जाता है जैसे कुछ हुआ ही न हो। जंग, जलजला, कहत, सैलाब, भूख, बीमारियाँ, फिसादात—इन सबके के बारे में इनसान एक लम्हे के लिए ठहर कर सोचे, शायद इसकी भी मोहलत नहीं। ऐसे हालात में शाइरी बहुत मुश्किल हो गई है। इंसान इसी तरह फिक्रो—एहसास से दूर होता गया तो एक दिन शाइरी नामुमकिन हो जाएगी।

मान-सम्मान खो गया तो फिर नहीं मिलता
इसे सहेज के रक्खो किसी खजाने में

—राघवेन्द्र शंकर शुक्ल

नामुमकिन तो आज भी बहुत कुछ हो गया है। मिसाल के तौर पर आदमी की पहचान—अगर उसकी कोई पहचान रह भी गई है, तो बस उसके नाम से—अब महज नाम ही तो आदमी की पहचान है और वह भी इसलिए कि उसे रोजगार दफ़्तर में खुद को रजिस्टर कराना है, राशन के दफ़्तर में राशनकार्ड बनवाना है, इलाज के लिए अस्पताल में दाखिल होना है, हवाई जहाज या रेल सीट रिजर्व करानी है, वोट का हक हासिल करना है, चुनाव में उम्मीदवार बनना है—अगर ये न करना हो, तो नाम की जरूरत भी कहाँ बाकी रह जाती है?

रोज जीवन बीतता है रोटियों की खोज में
एक दिन इस खोज में जी से गुजर जाएँगे हम

—ओम रायजादा

लेकिन आदमी की पहचान क्या केवल उसके नाम ही से हो सकती है? इसका जबाब मेरे पास तो कम-से-कम नहीं है, हाँ इतना जरूर मानता हूँ कि बुद्ध, महावीर और गाँधी के नामों को न जानने वाले गिने चुने ही होंगे। इन महान व्यक्तियों की पहचान उनके नाम से, उनके सुकृत्यों-उपलब्धियों से है।

व्यर्थ की विरुदावली, लिखते रहे?
कुछ कही, कुछ अनकही लिखते रहें?

—पं. मुकेश चतुर्वेदी 'समीर'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आम तौर पर हर ग़ज़ल का अपना एक असरदार मूल्य रहता है। पढ़ने-सुनने वाले ग़ज़ल का भरपूर आनंद लेते नज़र आते हैं और ग़ज़ल की मकबूलियत का यही एक प्रमाण है।

हर लम्हा यादों ज़िंदगी की ऊबड़-खाबड़ सच्चाइयों, जेहनी, जज्बाती टकराव और ख्वाबों की खुशगवार व नाखुशगवार कैफियतों के दरमियान एक साथ सरगर्म-सफर नज़र आती ग़ज़ल।

बड़े बेफिक्र धुएँबाज हैं धड़ल्ले के
हैं खुशनसीब वही लोग इस मुहल्ले के

–डॉ. राजेन्द्र मिलन

किसी एक मुल्क की विरासत तो है नहीं खास कर उर्दू शाइरी जो पैदा तो दिल्ली में हुई, परवरिश हैदराबाद दक्कन में हुई और जवान लखनऊ में। ग़ज़ल रिवायत का एहतराम और पासदारी के साथ-साथ ताजगी भरे अलफाज और कैफियात की सार्थक एवं भावपूर्ण दुनिया का निर्माण करती है। वर्तमान हिंदी ग़ज़ल अपने विकास की ओर अग्रसर है और इसमें आगे बढ़ने, निखरने तथा परिपक्वता को पहुँचने की सँभावनाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही हैं।

आजादी-ए-वतन तो लुटेरों में बँट चुकी
लेकिन अवाम आज भी परछाइयों में गुम

–भगवानदास जैन

'मकता', जिसका शाब्दिक अर्थ कट जाना या समाप्त हो जाना है, ग़ज़ल का अंतिम शे'र होता है। यह जरूरी नहीं है कि इसमें कवि अपने नाम का प्रयोग ही करे।

ग़ज़ल साहित्य की वो विधा है जिसने अपनी बंदिश और खूबसूरती के कारण निरंतर लोकप्रियता के पायदानों को पार करते हुए अपनी छवि को मनभावन बनाए रखा है। प्रारंभिक दौर में ग़ज़ल जहाँ क्लिष्ट शब्दों के कारण अपनी एक विशिष्ट छवि बना पाने में नाकाम रही वहीं आज इस बुलंदी पर है जहाँ साहित्य की अन्य किसी विधा का पहुँच पाना शायद संभव नहीं।

बखूबी दिया तुमने साथ, बदलते हालात देखकर।
वक्त ने कर दिया मजबूर, किसी को क्या कहना॥

–इंजी. गजेन्द्र कर्ण

ग़ज़ल की लोकप्रियता का वास्तविक श्रेय किसे दिया जाए? यदि हम इस प्रश्न पर विचार करें तो निस्संदेह 'संगीत और गायकी' को ही उत्तर के रूप में सहज भाव से स्वीकार किया जा सकता है। ग़ज़ल को लोकप्रियता के 'माउण्ट एवरेस्ट' तक पहुँचाने का वास्तविक श्रेय गायकी को ही है। मुगलिया दौर में ग़ज़ल ने कोठों पर शवाब पाया और यही वह समय था जब सितार व तानपूरे की मादक तानों व पखावज की थापों पर ग़ज़ल ने थिरकना सीखा। तब से आज तक ग़ज़लों का सफर गाम-दर-गाम लोकप्रियता के मुकाम तक अग्रसर है।

कच्चे फलों से छीन ली जीने की आरजू।
मौसम का इंतजार किसी ने नहीं किया॥

–वृन्दावन राय 'सरल'

आज संगीत की हर सभा में ग़ज़ल को दिल से सुना जाता है और सराहा जाता है। यदि हम ग़ज़ल और गायकी को एक दूसरे का पूरक कहें तो शायद अनुचित न होगा। सात सुरों के आरोह-अवरोह के बीच ग़ज़ल का सौंदर्य एक ऐसा जादू जगाता है, जो रसज्ञ श्रोताओं के सिर चढ़कर बोलता प्रतीत होता है।

ग़ज़लों की दिनोदिन बढ़ती लोकप्रियता ने जहाँ एक ओर सैकड़ों ग़ज़लकारों को करोड़ों लोगों का चहेता बनाया है, वहीं दूसरी ओर अनेक कलाकार ऐसे भी हैं जो ग़ज़ल-गायन के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट छवि बना चुके हैं।

कुछ न पूछो माजरा अब किसलिए चुप साध ली
दे तो सकते थे जवाब 'उस' प्रश्न का माकूल हम

–डॉ. 'दरवेश' भारती

निजी और सामाजिक अनुभूतियाँ जब व्यापक और मानवीय एप्रोच और दृष्टि से युक्त अभिव्यक्ति पा जाती है तो उनकी ऊष्मा और प्रभाव से दामन बचाना मुश्किल हो जाता है। फिर ग़ज़ल जैसा छंद अपनी संक्षिप्तता, संप्रेषणीयता और सादगी के कारण लोगों के दिलों में घर कर जाए तो कैसा आश्चर्य।

हिंदी में ग़ज़लें बड़ी मात्रा में लिखी जा रही हैं और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक पूरी की पूरी पीढ़ी ग़ज़ल-लेखन में जुटी है। यह भी सच है कि वह उर्दू में लिखित ग़ज़लों को देवनागरी के माध्यम से ही पढ़ सकती है।

भाई को देखा अपने, दुश्मन की नज़र से
मुजरिम का तूने दिल से, पीछा कहाँ किया

–पं. मुकेश चतुर्वेदी 'समीर'

आज से करीब पचास, वर्ष पूर्व आजादी से पहले अंग्रेजों की कूटनीति और सियासतबाजी की वजह से मुल्क का बँटवारा हुआ। शताब्दियों से एक ही सभ्यता में साँस लेने वाले, एक ही भाषा को अपनाकर चलने वाले लोग अलग-अलग हो गए लेकिन हिंदुस्तान और पाकिस्तान की शायरी के रंग व मिजाज में रत्तीभर भी फर्क नहीं हुआ। आज भी दोनों मुल्कों का मिजाज, रहन-सहन, खान-पान, बोल-चाल और मौसम भी एक ही है। दोनों मुल्कों की शाइरी में इश्क की बेकली है तो महबूबा के मिलन की तड़प भी है। सियासतदानों पर नुक्ताचीनी है तो व्यवस्था के खिलाफ बगावत की आवाज है। गरीबी और तंगहाली के खिलाफ जेहाद का ऐलान है तो बढ़ती मशीनी सभ्यता के विरुद्ध आक्रोश भी है।

सौगात है जख्मों की, इंसान के हिस्से में
नादान जमाना है, सहना भी बड़ा मुश्किल

–ओमप्रकाश मिश्रा 'प्रकाश'

देवनागरी में लिखित उर्दू तो भारत में पर्याप्त लोकप्रिय और यदि यह कहा जाए कि हिंदी के बाद भारत में उर्दू ही दूसरी प्रमुख लोकप्रिय भाषा है तो किसी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं होगी। ये दोनों भाषाएँ इस देश में और अधिक ऊँचा स्थान पा सकती थीं, अगर भारतीयों ने अँग्रेजी के व्यापक मोहजाल का लोभ संवरण कर लिया होता। मगर मैं यह बात दावे के साथ कह सकता हूँ कि लिपिकीय अँग्रेजी भारत में कितनी ही फली-फूली रहे, कविता-शायरी की सबसे महत्त्वपूर्ण भाषाएँ हिंदी और उर्दू ही रहेंगी।

हमारे दौर में मानवीय रिश्ते तेजी से अपना अर्थ खो रहे हैं। मोहब्बतों, चाहतों और नातों का खोखलापन लगातार रिसते रहने वाला नासूर बन जाता है और दुनिया हुस्न और नूर से वंचित दिखाई देने लगती है। इसका लाजिमी नतीजा बेहिसी होता है और फिर कोई भी जलजला, कोई भी हादसा हमें झिंझोड़ने में नाकाम रहता है।

क्यों घिस रहे हो तलवे रंगीन पत्थरों पे
मिट्टी बनेगी मरहंम छालों की पांव में

–सतीस चन्द्र 'सतीस'

इधर हिंदी ग़ज़ल में फारसी के बहुत सारे शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है। यह कोई अपराध तो नहीं है बल्कि इससे भाषा समृद्ध ही होती है, किंतु ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हुए इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि वे सामान्यत बोलचाल के हों तथा हिंदी की प्रकृति के निकट हों। साथ ही इन शब्दों को इस तरह न बिगाड़ा जाए कि वे अपना वास्तविक अर्थ और रूप ही खो बैठें।

हिंदी ग़ज़लों में अमिधा, लक्षणा, व्यंजना तीन शब्द शक्तियों की शक्ति को ज़्यादा सफलता से आयातित कर रहे हैं। व्यंग्य आज के जीवन की अभिव्यक्ति का सशक्त मध्यम है।

फिर बिसाते बिछ रही हैं गाँव में हर शहर में
और हम मोहरे बनेंगे उनके हर इक दाँव में

–ओम रायजादा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ग़ज़लें

ग़ज़लें देश-विदेश से

परती पलार के पाठकों के लिए यहाँ प्रस्तुत है अंतर्राराष्ट्रीय स्तर के भारत, पाकिस्तान और अप्रवासी उर्दू शायरों की कुछ खास ग़ज़लें :

❑ **भाषांतरण : डॉ. तारीक असलम 'तस्नीम'**

जाएरा 'अदीब' (पाकिस्तान)

अब अपने सर पे छाँवों का मौसम नहीं रहा
हाँ अब फक्त दुआवों का वहम नहीं रहा
अब तो यहाँ भी मेहरो वफा खत्म हो गई
और गाँवों में भी गाँवों का मौसम नहीं रहा
इस जिंस की फजा है सरे शाम शहर में
खुशबू भरी हुई हवाओं का मौसम नहीं रहा
अब तो हैं हुस्न को जेवर की हाजतें
लगता है अब अदाओं का मौसम नहीं रहा
उजड़े हैं पेड़ मेहरो मुहब्बत के इस तरह
जज्बो नरम छाँवों का मौसम नहीं रहा
अब रेत पे घरौंदे बनाता नहीं कोई
अब दिल में कामनाओं का मौसम नहीं रहा
झूठी मुहब्बतों के सनम तोड़ दें 'अरीब'
दिल बुझ चुका, वफाओं का मौसम नहीं रहा

कौसर समरीन (पाकिस्तान)

(1)

हम तेरी बस्ती का रस्ता पूछते ही रह गए
इस कदर खोये के खुद को ढूँढते ही रह गए
वार वो भी कर जो तेरे पास बाकी रह गया
फिर न यह कहना मेरे खंजर उठते ही रह गए
वह अमीर ए शहर था तो सैकड़ों हमराह थे
अब तो उसके साथ बाकी चार-छह ही रह गए
एकता की एक रस्सी थाम लो, पैगाम था
जाने फिर क्यों लोग फिरकों में बँटे ही रह गए
शाम के बाजार में ओढ़ी थी चादर सोक की
बे रिदाई देखने के हौसले ही रह गए
शिर ख्वार कर्बला की प्यास जिसको याद है
उसकी आँखों के कटोरे तो भरे ही रह गए

(2)

खामोश फजा थी कहीं साया भी नहीं था
इस शहर में हम-सा कोई तन्हा भी नहीं था
ऊँची-सी हवेली में उतरता रहा शव भर
कुटिया में मिरी चाँद ने झाँका भी नहीं था
किस जुर्म में छिनी गईं मुझ से मेरी आँखें
उन में तो कोई ख्वाब बसाया भी नहीं था
हम जिस के हवाले से हुए शहर में बदनाम
उस सख्स को हमने कभी देखा भी नहीं था
मुंसिफ मेरा मुजरिम का तरफदार बनेगा
इस तो मैंने कभी सोचा भी नहीं था
समरीन वही शख्स हमें छोड़ चला है
जिसका के बिछड़ने का इरादा भी नहीं था

अब्बास दाना

जब दिलों में न दुश्मनी होगी
जाने वो कौन सी सदी होगी
मौत के लबों पे हँसी होगी
जब मज़ारों पे रोशनी होगी
बन के मेहमां तू जिस के घर ठहरे
उस के आँगन में चाँदनी होगी
एक दिन संगदिल भी रोएँगे
पत्थरों में भी ज़िंदगी होगी
देख कर ज़िंदगी की मजबूरी
मौत भी छुप कर रो रही होगी
होंगे तूफां उस के ही दिल में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जिसके होंठों पे खामोशी होगी
मुझ को गम की तलाश है दाना
गम मिलेगा तो शाइरी होगी

अमजद इस्लाम 'अमजद' (पाकिस्तान)

चेहरे पे मिरे जुल्फ को फैलाओ किसी दिन
क्या रोज गरजते हो, बरस जाओ किसी दिन
राजों की तरह उतरो मिरे दिल में किसी शब
दस्तक पे मिरे हाथ की खुल जाओ किसी दिन
पेड़ों की तरह हुस्न की बारिश में नहा लूँ
बादल की तरह झूम के घर आओ किसी दिन
खुशबू की तरह गुजरो मिरे दिल की गली से
फूलों की तरह मुझ पे बिखर जाओ किसी दिन
गुजरें जो मिरे घर से तो रुक जाएँ सितारे
इस तरह मेरी रात को चमकाओ किसी दिन
मैं अपनी हर इक सांस उसी रात को दे दूँ
सर रख के मिरे सीने पे सो जाओ किसी दिन

शमा चौधरी

बड़ी बेलौस होते हैं मुरव्वत करने वाले
बहुत मासूम होते हैं मुहब्बत करने वाले
रहे उल्फत में शोलों का समंदर पार करके
गिलों के साथ रहते हैं रफाकत करने वाले
लुटाते हैं ये मोती प्यार के दिल की ज़मीन पर
बरस जाते हैं सहरा में सखावत करने वाले
शफ्फाफो पाक हैं हर चंद शीशे की तरह से
चटख जाते हैं ये पल में शिकायत करने वाले
हदीस ए दिल का पैगामे वफा सब को सुनाएँ
नमाज़े इश्क में डूबे इबादत करने वाले

शाहीदा तस्नीम

बेसबब जब उदास होती हूँ
मैं तेरे आस पास होती हूँ
जाने क्यों तेरे पास रहती हूँ
जब भी जानां उदास होती हूँ
सोच कर तुझ को खुद से कहती हूँ
किसलिए दूर तुम से रहती हूँ
ज़िंदगी नाम है मोहब्बत का
मैं यही खुद से बात करती हूँ
आ के ले जाओ अपने आँगन में
अब तेरे बिन उदास रहती हूँ
मैं जमाने से क्यों डरूँ तस्नीम
मैं तो उनके बदन में रहती हूँ

नुसरत नसीम

जो नज़र से दिल में उतर गया, वह अजीब, कितना अजीब था
वही राजे दिल न समझ सका वह जो दिल के सबसे करीब था
उसे भूल कर न भुला सकी, उसे पा के भी मैं न पा सकी
वही मेरे ख्वाबों का हमसफर न बना, जो मेरा नसीब था
गया आज मुँह जो वह मोड़ कर, मेरे दिल का आईना तोड़ कर
किया मन्तसिर मेरी जात को, वह था संगदिल के हबीब था
मुझे बीच राह में छोड़ कर, नहीं कुछ खबर के किधर गया
मिरा हमसफर, मिरा चारागर मेरी नब्ज ए जां का तबीब था
मेरी हिरज़े जो तेरी चाह थी, तिरी चाह मेरी पनाह थी
मेरी रूह हो गई मुजतरिब, तेरे पास मेरा रकीब था

इम्तियाज अली 'गौहर' (ग्लासगो, स्कॉटलैंड)

जब कोई शख्स मुझे अपना बना लेता है
इश्क पत्थर में नया फूल खिला लेता है
चाट लेती हो किसी पेड़ को दिमक जैसे
गम भी इंसां को अंदर से यों खा लेता है
मेरे सूरज को यही बात बुरी लगती है
मेरा साया जो मेरा बोझ उठा लेता है
ऐसे दरवेश की हाजत है के जो वक्ते नमाज
अपने सज्दे से जमीं झुक के उठा लेता है
उस को रस्ते में मुसीबत नहीं आती यारों
घर से चलते हुए जो माँ की दुआ लेता है
मैं तो बादल हूँ हवाओं में भटकता गौहर
अपनी ही बूंदों से जो प्यास बुझा लेता है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अहमद अली बरकी आजमी

सब करो बस निगह नाज़ चुराने के सिवा
कुछ भी कह सकते हो तुम लौट के जाने के सिवा
मुन्हसिर तुम पे आओ के न आओ शबे हिज्र
और कर सकता हूँ क्या तुम को बुलाने के सिवा
मुझ से रूठे हो मनाऊँ तो मनाऊँ कैसे
क्या कोई काम नहीं और मनाने के सिवा
भूल जाऊँ मैं तुम्हें यह नहीं मेरे बस में
तुम ने कुछ भी न किया ख्वाब दिखाने के सिवा
तुम कहाँ खो गए कब से हूँ तुम्हारा मुश्ताक
है मैयसर मुझे सब कुछ तुम्हें पाने के सिवा
है दुआ मेरी बुझाने का हुनर भी आ जाए
तुम्हें आता नहीं कुछ और जलाने के सिवा
क्या मज़ा मिलता है बरकी की दिल आज़ारी में
क्या तुम्हें कुछ नहीं आता है सताने के सिवा

चाँदनी अदीम (पाकिस्तान)

फासले ऐसे भी होंगे यह कभी सोचा न था
सामने बैठा था मेरे और वह मेरा न था
वह के खुशबू की तरह फैला था मेरे चार सू
मैं उसको महसूस कर सकता था छू सकता न था
यह सभी विरानियाँ उसके जुदा होने से थीं
आँख धुँधलाई हुई थी शहर धुँधलाया न था
आज उसने दर्द भी अपने एलेहदा कर लिए
आज मैं रोया तो मेरे साथ वह रोया न था
आज लगता है तल्लुक मिट गया पूरी तरह
आज उसने देखकर भी मुझ को पहचाना न था
मैं तेरी सूरत लिए सारे ज़माने में फिरा
सारी दुनिया में मगर कोई तेरे जैसा न था
आज मिलने की खुशी में सिर्फ मैं जागा नहीं
तेरी आँखों से भी लगता है के तू सोया न था
याद करके और भी तकलीफ होती थी अदीम
भूल जाने के सिवा अब कोई भी चारा न था

परवीन शाकिर (पाकिस्तान)

फिर मेरे शहर से गुज़रा है वो बादल की तरह
दस्ते गुल फैला हुआ है मेरे आँचल की तरह
कह रहा है किसी मौसम की कहानी अब तक
जिस्म बरसात में भीगे हुए जंगल की तरह
ऊँची आवाज़ में उसने तो कभी बात न की
खफगियों में भी वो लहज़ा रहा कोयल की तरह
मिल के उस शख्स से मैं लाख खामोशी से चलूँ
बोल उठती है नज़र पाँव की छागल की तरह
पास जब तक वो रहे, दर्द थमा रहता है
फैलता जाता है फिर आँख के काजल की तरह
अब किसी तौर से घर जाने की सूरत ही नहीं
रास्ते मेरे लिए हो गए दलदल की तरह
जिस्म के तीरओ आसेबज़दा मंदिर में
दिल सरे शाम सुलग उठता है संदल की तरह

फ़ैज अहमद फ़ैज

इश्क मिन्नत कश ए करार[1] नहीं
हुस्न मजबूर ए इंतज़ार नहीं
तेरी रंजिश की इंतिहा[2] मालूम है
हसरतों का मेरी शुमार नहीं
अपनी नज़रें बखेर दे साकी
मय ब अंदाजा ए खुमार[3] नहीं
जेर ए लब है अभी तबस्सुम ए दोस्त
मुंतशिर[4] जलवा ए बहार नहीं
अपनी तकमील[5] कर रहा हूँ मैं
वरना तुझ से तो मुझ को प्यार नहीं
चारा ए इंतज़ार[6] कौन करे
तेरी नफरत भी उस्तवार[7] नहीं
फैज जिंदा रहें, वो हैं तो सही
क्या हुआ गर वफ़ाशेआर[8] नहीं

1. चैन का इच्छुक, 2. अंत, 3. नशा पूरा करने भर, 4. बिखरा हुआ, 5. पूर्ति, 6. प्रतीक्षा का समाधान, 7. स्थायी, 8. वफादार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. गौतम सचदेव (यू.के.)

(1)

दिन की किताब में है पल पल नया सबक़
रखता न याद कोई ज्योंही लगी पलक

किस रास्ते से आयें सपने ये बेझिझक
दिल में जगा न जाये भूली हुई कसक

इन्सान बन गया है हथियार बेधड़क
संसार से न मिटती घातक उठा-पटक

हँसता ग़रीब का मन दो-चार पल बहक
फिर कौर कंठ में ही जाता सदा अटक

झोंका था वह हवा का आया जो बन पुलक
यादों में है अभी तक उसकी बची महक

पलकों में आ गए वे ज्योंही लगी भनक
फूलों पे ओस बनकर चुपके गये टपक

अहसान की उमर क्यों होती नहीं अधिक
मर जाये एक पल में 'गौतम' का खा नमक

(2)

आदमी तुमसे बहुत हैं चीज़ क्या हो तुम गधे
मार खाएँ लोग भी अब तो हिलाकर दुम गधे

सिर्फ़ चौपाये नहीं हैं जानवर लद्दू यहाँ
बैल घोड़े ऊँट जैसे हैं कई मर्दुम[1] गधे

वे अमन के दूत हैं न शान्ति के देवता
हड्डियाँ तुडवाएँ जो चुपचाप रह गुमसुम गधे

1. मनुष्य, 2. गेहूँ।

परिचय

नाम–डॉ. गौतम सचदेव

जन्म स्थान–पंजाब के वारवर्टन नामक कस्बे में (जो अब पाकिस्तान में है)

शिक्षा–एम.ए., पी-एच.डी.

कृतियाँ–प्रेमचन्द : कहानी शिल्प (शोध प्रबन्ध), साढ़े सात दर्जन पिंजड़े (कहानी संग्रह), अटका हुआ पानी (कहानी संग्रह), सच्चा झूठ (व्यंग्य संग्रह), अधर का पुल (कविता संग्रह) एक और आत्म समर्पण (कविता संग्रह), सूरज की पंखुड़ियाँ (कविता संग्रह), बूँद बूँद आकाश (ग़ज़ल और ग्रीत संग्रह), गीतों भरे खिलौने (बाल गीत संग्रह) त्रिवेणी (ईश, केन और कठ उपनिषदों का काव्यानुवाद)

प्रकाशन–देश-विदेश की प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

सम्प्रति–लगभग 22 वर्षों तक दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन एवं शोध निर्देशन और कुछ समय तक क्रैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, लंदन में भी अध्यापन तथा बी.बी.सी. हिन्दी सेवा में दो दशकाधिक समय तक निर्माता एवं प्रसारक रहने के बाद अब स्वतन्त्र लेखन।

सम्पर्क–42 Head Stone lane, Harrow, Middlesex, HA 2, 6HG U.K.

ज़ुल्म सहकर औरतें ये किस लिये करती रहें
मर्द की पूजा लगाकर भाल पर कुंकुम गधे

देखकर इन्सानियत की शक्ल जैसी हो गई
जानवर की अक़्ल भी होने लगी है गुम गधे

लाद लीं चिन्ताएँ सबने ढेर सारी ख़्वाहिशें
क्यों नहीं भगवान देता आदमी को सुम-गधे

लोग चक्की में पिसें फिर भी न 'गौतम' उफ़ करें
आदमी हैं वे कि गल्ला दाल या गंदुम[2] गधे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज'

जन्म तिथि : 27.7.1952, अलीगढ़

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. डी.लिट. (संस्कृत) लेखन विधाएँ—ग़ज़ल, गीत, दोहे, हाइकु, लघु कथा कहानियाँ, शोध परक आलेख, समीक्षा, क्षणिक, निबंध इत्यादि।

संप्रति : रीडर, एम.ए. मोदी (पी.जी) कॉलेज, मोदीनगर (मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ)

प्रकाशन : 190 संकलनों में ग़ज़ल, गीत, दोहे, हाइकु, लघुकथा, आलेख, कहानियाँ आदि संकलित।

संपादन : 25 पुस्तकें संपादित, कई पत्रिकाओं में मुख्य संपादक

पता : सी/डी-30, पुराना कविनगर, गाजियाबाद (उ. प्र.)

फोन : 0120-2713239

मो. : 9313185603

(1)

तख़यील के दरिया में अफ़कार के मोती हैं।
फ़नकार का सरमाया किरदार के मोती हैं॥

जो आब किसी सूरत खोने को नहीं राज़ी।
वो वक़्ते-मुअज़्ज़म की दस्तार के मोती हैं॥

आँधी से तग़य्युर की टूटेंगे बहुत जल्दी।
पलकों पे सियासत की इज़हार के मोती हैं॥

महफ़ूज जमाने से रखने हैं बहस्सूरत।
झोली में रिफ़ाक़त की इक़रार के मोती हैं॥

जिस सम्त नज़र डालें उस सम्त नज़र आएँ।
ताबिंदा हक़ीकत से असरार के मोती हैं॥

मगरूर की चौखट पर मैं जिनको लुटा आई।
दुनिया से कहूँ क्यों वो इसरार के मोती हैं॥

वो 'राज़' अता मुझको फ़ुर्सत के करे लम्हे।
मुझ पर भी लुटाने को गुफ़्तार के मोती हैं॥

(2)

क़िरता से नदामत पर तहरीर लिखे आँसू।
पर सोज़े मुहब्बत को बरसात न दे आँसू॥

अगयार के हाथों से लुटने का नहीं कुछ ग़म।
अपनों के लुटे हैं जो आँखों में भरे आँसू॥

पलकों पे उभर आएँ जब तोड़ के हर बंदिश।
रूदादे-ग़मे-उल्फ़त उस वक़्त कहें आँसू॥

होंठों पे लगादे जो ताला ही ख़ामोशी का।
उस दिल की कशाकश का इज़हार करें आँसू॥

रोने पे अगर रोएँ तो इसमें अजब क्या है।
वो शख़्स हँसे उसके तो साथ हँसें आँसू॥

ख़्वाबों के दरीचे में मैं जिसको सजाए हूँ।
उस शोख़ के दामन पर दो-चार गिरें आँसू॥

है 'राज' दरख़्शिन्दा सूरज की तरह ये सच।
खुददार तबीअत की पलकों में सजें आँसू॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. नलिनी विभा 'नाज़ली' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. नलिनी विभा 'नाज़ली'
जन्मतिथि : 05.12.1954
जन्म स्थान : नंगल (पंजाब)
शिक्षा : एम.ए, एम. फिल, पी.-एच.डी. कंठ संगीत, व्याख्याता राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर (हि.प्र.)—177005
प्रकाशित कृतियाँ : तीन काव्य संग्रह (हिंदी में), दो उर्दू में प्रकाशित, 350 काव्य संकलनों में रचनाएँ, 100 से अधिक सम्मान (2 राष्ट्रीय स्तर पर उर्दू के लिए)
मो.-9418304634

(1)

इक ग़ज़ल आप गुनगुना दीजे
दश्ते-दिल में बहार ला दीजे

ज़ख़्म झेले जो उम्र भर दिल पर
वो बरंगे-ग़ज़ल दिखा दीजे

आदमियत का दे हमें जो सबक
वो ग़ज़ल फिर ज़रा सुना दीजे

बात हक़ की ग़ज़ल के पर्दे में
बेधड़क बज़्म में उठा दीजे

जिस से आए ग़ज़ल में रंगे-क़बूल
'नाज़ली' को वो मोजिज़ा दीजे

(2)

दरिन्दों के नगर में आ गए हैं
बहुत मुज़्तर हैं हम घबरा गए हैं

हवा में भर गया है ज़हरे-दहशत
ये बच्चे फूल-से कुम्हला गए हैं

ये ठेकेदार हैं जो मज़हबों के
हमें क्यों बाँटने पे आ गए हैं

ये दरबारों की बोली बोलते हैं
ग़रीबों का निवाला खा गए हैं

बँधी है गाय-सी खूँटी से जनता
सितमगर दोहने को आ गए हैं

सितम है 'नाज़ली' नफ़रत के शोले
तबाही चार सू फैला गए हैं

(3)

फ़रेबी सिलसिला फैला हुआ है
यहाँ हर गाम पर मक़र-ने-दग़ा है

अलग हैं कुछ दिखावे के मुखौटे
मगर जो असूल चेहरा है, जुदा है

पुलंदा झूठ का है ये सियासत
मगर सच का ग़िलाफ़ ओढ़ा हुआ है

मुहज़्ज़ब साँप होते हैं कुछ इन्सां
ये सच मैंने बहुत परखा हुआ है

वो है डूबा हुआ अय्याशियों में
दिखावे को जो माला जप रहा है

कुछ इतने 'नाज़ली' बरसे हैं पत्थर
कि रेज़ा-रेज़ा दिल का आईना है

(4)

खुद बाग़वान होके न गुलशन जलाएँ हम
बेटी बचाएँ, मुल्क की अज़्मत बचाएँ हम

अल्लाह की ही देन हैं बेटे या बेटियाँ
यकसानियत का हक़ चलो इन को दिलाएँ हम

चलता है ख़ानदान तो औरत के ही तुफ़ैल
कुदरत के इस निज़ाम को मत भूल जाएँ हम

देरीना जो वक़ार था औरत का मुल्क में
बेटी को माँ बहिन को वो इज़्ज़त दिलाएँ हम

दुल्हन ही हो दहेज तो घर घर बने बहिश्त
इख़्लास और वफ़ा से घरों को सजाएँ हम

दुख़्तरकुशी का पाप जो फैला है 'नाज़ली'
वक़्त आ गया है रोक अब इस पर लगाएँ हम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh-Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी
जन्म : 2.2.1955, इटावा जनपद (उ.प्र.)
शिक्षा : एम.ए. (अंग्रेजी, संस्कृत, हिंदी) साहित्याचार्य, संगीत प्रभाकर, डिप्लोमा जर्नलिज्म, एल.एल.बी. पी.-एच.डी., डी. लिट् हिंदी में प्रकाशित पुस्तकें—40, महाकाव्य विवेक-विजय, छह खंडकाव्य मृग तृष्णा (कहानी संग्रह), सर्पदंश (लघु कथाएँ) यजुर्वेद-रहस्य, वेदायन, मेरे गीत, तुम्हारे मीत, ज्योतिकलश, जियो देश के हित (बाल-गीत) तीन उपन्यास (धारावाहिक प्रकाशन), तीन ग़ज़ल संग्रह (पाँचगीत संग्रह एक जिल्द में), एवं अंग्रेजी में 12 काव्य संग्रह।
संपर्क : 24 आँचल कॉलोनी, श्यामगंज, बरेली-243005 (उ.प्र.)
फोन : (घर) 2470758 (0581)
मो. 9412603469, 9412145933,

(1)

सागर का पानी पीकर वो प्यासा है
किंतु यहाँ जलदानी हुआ उदासा है
मिलते ही हम ख़बर देखने को आए
देखा तो हमसे भी अच्छा खासा है
जालिम जून दिखाने आया जलवाँ जब
ऐसे में भी लगता पेड़ हरा-सा है
हमने उसको हर पल ऐसा ही देखा
तुमको लगता उसका रूप नया-सा है
सुलग रहा है चप्पा-चप्पा तुम कहते
ऐसा किस्सा 'श्वेता' यहाँ सुना-सा है

(2)

मेरी चाहत में यूँ उतर जाए
मैं जिधर जाऊँ वो उधर जाए
जिसकी पहचान रोशनी से नहीं
वो अँधेरों से बच किधर जाए
साजिशें घोलतीं ज़हर मीठा
जितनी जल्दी हों वो सँवर जाए
इसकी मासूमियत पे गौर करो
अपनी छाया से भी जो डर जाए
हम झुकेंगें न पाप के आगे
हो सजा या हमारा सर जाए
गैर के बाग दे सकेंगे क्या
छाँव पाने को अपने घर जाए
रेल पटरी पे फिर से आएगी
प्यार कुछ ऐसा जादू कर जाए
कच्चे धागों में सच्चे मोती हैं
'श्वेता' माला नहीं बिखर जाए

(3)

भंग बनकर ये सत्ता सुलाने लगी
चाहतों को जगाकर रुलाने लगी
प्यार लेकर किनारों पे बैठे रहे
स्वप्न गंगा हमें क्यों बुलाने लगी
बीत सावन गया रुत न मन से गई
पतझड़ों में भी हमको बुलाने लगी
चल रही है विषैली हवा हर तरफ
स्वप्न के हिम शिखर को घुलाने लगी
'श्वेता' वैराग्य की बात चलती रही
राग की छल चमक है डुलाने लगी।

(4)

बुराई कुछ भला करती नहीं है
और अच्छाई कभी मरती नहीं है
बनों उस धार से अविराम तुम भी
कि जो चट्टान से डरती नहीं है
कभी मत स्वप्न तोड़ो तुम किसी का
द्वेष दुर्भावना हरती नहीं है
जहाँ नादान है माँझी उसी की
कहीं नौका सहज तरती नहीं है
सिखाया विश्व को बन्धुत्व जिसने
कँही ऐसी कोई धरती नहीं है
कभी ऐसी ग़ज़ल 'श्वेता' न कहना
हृदय में भावशुभ भरती नहीं है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शोभा कुक्कल की ग़ज़लें

परिचय

नाम : शोभा कुक्कल
जन्म : 8 दिसंबर
शिक्षा : एम.ए., बी.एड.
प्रकाशन : काव्य संग्रह 'कतरा-कतरा लम्हा-लम्हा' काव्य संग्रह 'सफर शब्दों का' (प्रकाशनाधीन), देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित
संप्रति : सक्रिय सदस्य—'नारी अभिव्यक्ति मंच 'पहचान' एवं 'उर्दू दोस्त'। स्थानीय मंचों पर काव्य पाठ
विदेश यात्रा : अमेरिका, कैनेडा, लंदन, सिंगापुर, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड
संपर्क : 745 सैक्टर 15 फरीदाबाद-121007 (हरियाणा)
मो. : 09818919109

(1)

बातें करने में तो दुनिया में सभी हुशियार थे
साथ देते मुश्किलों में वह तो बस दो-चार थे

हमसे जो करते रहे वादे हमेशा बेशुमार
वक्त पड़ने पर मुकरने को सदा तैयार थे

ज़िंदगी ने हमको दी हैं नेमतें यूँ तो बहुत
उनका सदूउपयोग करने से हमीं लाचार थे।

लोग जो अपने फ़राइज़ से रहे ग़ाफ़िल सदा
माँगते फिर किसलिए अपने सभी अधिकार थे

देते रहते थे दुहाई जो हमेशा प्यार की
प्यार की राहों में वो बनकर खड़े दीवार थे

वक़्ते आख़िर कोई आता है किसी के काम कब
काम आए जो मिरे वो मेरे ही उपकार थे

है अजब दस्तूर मेरे देश में यह इन दिनों
घर में चोरी जो करें वो घर के पहरेदार थे

(2)

आख़िर आख़िर अपने दिल को राह पर लाना पड़ा
ये है दुनिया एक धोखा, खुद को समझाना पड़ा

ए चमन तेरी बहारों पर निछावर दिल मगर
हाय वो गुंचे जिन्हे बे वक़्त मुरझाना पड़ा

उन शहीदों को वतन वाले नमन करते रहें
जिनको सरहद पर वतन के काम आ जाना पड़ा

याद है अब तक तुम्हारी रुख़्सती का वो समां
रो रहा था दिल मगर होंठों को मुसकाना पड़ा

याद हैं फुर्सत के वो पल जो गुज़ारे साथ-साथ
गीत हमको उन पलों का खुद ही दोहराना पड़ा

चुन के कलियाँ हार जो मैंने पिरोया था कभी
साथ उन कलियों के मुझको भी बिखर जाना पड़ा

इक तुम्हारे दिल की दुनिया में समाने के लिए
जाने कितने मसअले थे जिनको सुलझाना पड़ा

(3)

तेरे आँगन में है जो पेड़ फूलों से लदा होगा
तेरे घर का जो रस्ता है बड़ा ही खुशनुमा होगा

गवारा कब मुझे होगा किसी एहसान का ढोना
है करजा इस जनम का इस जन्म ही में अदा होगा

न जाने कब मेरे भारत में वो सरकार आएगी
कि जिस सरकार के हाथों गरीबों का भला होगा

वो लमहे ज़िंदगी के जो तेरे हमराह गुज़रे हैं
उन्हीं याद से जीवन बड़ा खुश ज़ायका होगा

भलाई और नेकी हो जमाने में तेरे हाथों
भलाई जो करेगा उसका खुद भी तो भला होगा

जो दर्द-ए-दिल अता करता है सबको उससे पूछेंगे
दवाए दर्द-ए-दिल भी कोई आखिर बेचता होगा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुसुम 'ख़ुशबू' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : कुसुम 'ख़ुशबू'
जन्म तिथि : 17 जून, 1978
शिक्षा : बी.ए., बी.एड., कम्प्यूटर का डिप्लोमा
पता : कुसुम 'ख़ुशबू'
द्वारा श्री विजय कुमार
गली बंसत बिहार, निकट डॉ. पाल
अस्पताल धारीवाल-143519
ज़िला-गुरदासपुर (पंजाब)
मो. : 9988787726/9463714779

(1)

जाने किस बात की मुझको वो सज़ा देता है,
जहर देता है न वो मुझको दवा देता है।

ख़ार राहों के महक उट्ठें तिरी गुल बनकर,
जा तुझे आज कोई दिल से दुआ देता है।

मेरी नज़रों से न तू इनको छुपा पाएगा,
तेरा हँसना तिरे ज़ख्मों का पता देता है।

वो सलामत रहे परदेस में जाने वाला,
दीप मंदिर में कोई रोज़ जला देता है।

चोंच में तिनके दबाए हुए उड़ता पंछी,
कितने ख़ाबों के झरोकों को सजा देता है।

जी में आता है कि मैं उसको मसीहा कह दूँ,
फूल होंठों पे हंसी के जो खिला देता है।

मैं उम्मीदों के चराग़ों को जलाती तो हूँ,
कोई तूफ़ां उन्हें ह़र रोज़ बुझा देता है।

मौसम आया है बहारों का गुलिस्तानों में,
देखें अब कौन-सा ये जख़्म नया देता है।

उसकी रहमत पे कभी शक नहीं करना 'ख़ुशबू',
वो तो सहरा को भी गुलज़ार बना देता है।

(2)

किसी का नाम तन्हाई में मेरे लव पे आया था,
और उसके साथ मेरे दिल का गुञ्चा मुस्कराया था।

अगर ग़ैरों की क़िस्मत में लिखी थी रोशनी उसकी,
सितारा मेरी नज़रों में वो क्यों फिर झिलमिलाया था।

न था मालूम उस दम तेरी फ़ितरत बेवफ़ाई है,
तेरी तस्वीर को जब हमने आँखों से लगाया था।

चले हम उम्र भर लेकिन न आई सामने मंज़िल,
उफ़क़ को मान के मंज़िल क़दम हमने बढ़ाया था।

ये किसने छेड़ दी फिर बात बीते वक़्त की 'ख़ुशबू,
बड़ी मुश्किल से मेरा ज़ख़्मे दिल भरने को आया था।

(3)

जिसे तुम मिल गए उसकी बड़ी तक़दीर होती है,
अँधेरों में भी उसकी राह में तनवीर होती है।

खुदा के हाथ सब कुछ है न घबरा इम्तिहानों से,
दुआएँ कर, दुआओं में बड़ी तासीर होती है।

बहारें ख़ूबसूरत हैं, ख़जाएँ भी सुहानी हैं,
हर इक रुत उसके हाथों की बनी तसवीर होती है।

तुम्हारे प्यार से जीवन हमारा जुड़ गया ऐसे,
कि जैसे आरती गंगा के पावन तीर होती है।

न समझो बुझ गया दिल, हो गई रूख़्सत तमन्नाएँ,
यहाँ कुछ आँच बाक़ी है तभी तहरीर होती है।

वही होगा कि जो तक़दीर में लिक्खा हुआ होगा,
बड़ी बेवस, बड़ी लाचार हर तदवीर होती है।

मुझे उस वक़्त ऐ 'ख़ुशबू' कोई देखे अगर छुपकर,
मिरे हाथों में जब उसकी हसीं तस्वीर होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिबली 'सना' की ग़ज़लें

(1)

मैंने हर एक बाज़ी हारी है
ज़िंदगी इस तरह गुज़ारी है
छोड़ना सब को है जहाँ एक दिन
मौत से कब किसी की यारी है
एक जुगनू ने ये कहा हँसकर
मेरी सूरज से जंग जारी है
जल रहा है दिया मुहब्बत का
अब हवा तेरी ज़िम्मेदारी है
कौन बाँटेगा तेरा ग़म ए 'सना'
आज मतलब की दुनिया सारी है

(2)

फ़रेब खाकर सँभल रही है
हयात करवट बदल रही है
ये ज़िंदगी भी है रेत जैसी
जो मुट्ठिओं से फ़िसल रही है
है आरज़ुओं का जिस्म ज़ख्मी
कि हाथ तकदीर मल रही है
ये कौन मासूम-सी है बच्ची
जो मेरे अंदर मचल रही है
'सना' ये दुनिया है एक धोखा
कदम-कदम पर जो छल रही है

परिचय

नाम : शिबली 'सना'
जन्म तिथि : 12 जुलाई, 1979
जन्म स्थान : इटावा, उ.प्र.
शिक्षा : एम.ए. समाजशास्त्र

साहित्य सृजन : दर्जनाधिक पत्र-पत्रिकाओं में कहानी, कविता, लेख ग़ज़लों, नज़्मों का प्रकाशन।
प्रकाशित पुस्तक : ग़ज़ल संग्रह (खामोशी कुछ कहती है) का शीघ्र प्रकाशन
संप्रति : इण्टर कालेज इलाहाबाद में प्राइवेट टीचिंग
रुचियाँ : पठन-पाठन, संगीत, समाज सेवा
संपर्क : 18एच/37डी/1के, करामत की चौकी, नया रसूलपुर करैली, इलाहाबाद-211016 (उत्तर प्रदेश)
मो. : 09451643713/08948823107

परिचय

नाम : शैल बाला नरहरि
साहित्यिक नाम : शैलजा नरहरि
जन्म तिथि : 8.9.1948
जन्म स्थान : चन्दौसी (उ.प्र.)
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी) बी.एड.

प्रकाशन : स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में काव्य एवं समीक्षाओं का प्रकाशन
प्रसारण : आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल से
संप्रति : ग़ज़ल, दोहा एवं समीक्षा लेखन। आर.डी. नेशनल कॉलेज से सेवा निवृत्त प्राध्यापिका।
पता : श्रीपाल वन नं.-1, सी-विग/जी-दस, खारोडी नाका, विरार-401303 (महा.), **मो.** 9322125416

शैलजा नरहरि की ग़ज़लें

(1)

कैसे कैसे ख़याल आते रहे
रात भर ख़ुद को हम मनाते रहे
कोई आहट न कोई दस्तक थी
वो ग़ज़ल किस को हम सुनाते रहे
मेरे ख़्वाबों में एक दुनिया थी
अपनी चाहत से वो सजाते रहे
भूलना चाहते थे माज़ी को
हादसे आईना दिखाते रहे
कैसी रौनक़ थी कल के गुलशन में
फूल यादों में मुसकराते रहे

(2)

ज़िंदगी फिर नज़र नहीं आई
शाम फिर बेख़ुदी से घबराई
वो सुकूँ ले के मेरा लौट गया
उसको कहते थे मेरा शैदाई
झील थी दूर तक नुमाँयाँ जो
हमने देखी है उसकी गहराई
देखा देखा सा एक सपना था
जान लेवा सी एक तनहाई
रोशनी थी सभी की चाहत में
हो अँधेरों की क्यों पजीराई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ममता किरण की ग़ज़लें

(1)

घर तो क़ायम है मगर घर की वो तस्वीर नहीं
आज रिश्तों में मोहब्बत की वो तासीर नहीं

जैसे भारत का शहीदों ने था सपना देखा
ये जो भारत है ये उस ख्वाब की तावीर नहीं

एक रोटी को चुराने की मुकर्रर है सज़ा
मुल्क जो लूट लो उसकी कोई ताज़ीर नहीं

दिन-व-दिन बढ़ते ही जाते हैं यहाँ पर रावण
राम के हाथ में लगता है कोई तीर नहीं

कितने दिन राज करोगे जो इसे बाँटोगे
मुल्क सबका है कोई आपकी जागीर नहीं

कैद तन को तो है करना बहुत आसां लेकिन
मन को जो बाँध ले ऐसी कोई ज़ंजीर नहीं

दिल के आईने में दिखता है उसी का चेहरा
हमने माना कि खुदा की कोई तस्वीर नहीं

जुर्म है आज भी उल्फत की डगर पर चलना
दो कदम साथ चले प्यार की तकदीर नहीं

प्यार में कैद कोई पल में भी हो सकता है
उम्रभर उससे रिहा हो कोई तद्‌वीर नहीं

(2)

वो दीपक आस्था का जल रहा है
नदी में हौले-हौले चल रहा है

हुआ आभास चिड़ियों की चहक से
कि उसकी शाख पे 'फल' फल रहा है

कभी एक पेड़ सायादार था जो
वो ही अब तन्हा-तन्हा ढल रहा है

भरोसे इस तरह बदले हैं साहब
समय भी बेबसी को छल रहा है

परिचय

नाम : ममता किरण

पिछले 15 वर्षों से पत्रकारिता–राष्ट्रीय सहारा, जेवीजी टाइम्स, पंजाब केसरी, सिटी चैनल आदि से सम्बद्ध रहकर अव स्वतंत्र लेखन।

प्रतिष्ठित राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ एवम् बाल कहानियाँ प्रकाशित। ग़ज़ल दुष्यंत के बाद (भाग-3), परिचय राग, छन्द अन्न तथा 101 चर्चित कवयित्रियाँ सहित कई संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। कई पुरस्कार और सम्मान मिले।

संपर्क: 304, लक्ष्मी बाई नगर, नई दिल्ली-110023, **मो. :** 9891384919,
E-mail : mamtakiran9a@gmail.com

उमाश्री की ग़ज़ल

देशसेवा की राहें कड़ी हो गईं।
कुर्सियाँ आदमी से बड़ी हो गईं।

आगे वरदी के सच्चाई रोती रही,
चूड़ियाँ हाथ की हथकड़ी हो गईं।

आए बेरी पे पत्थर तो ऐसा लगा,
बेटियाँ मुफ़्लिसों की बड़ी हो गईं।

आज इससे दग़ा कल है उससे दग़ा,
कुर्सियाँ आजकल लोमड़ी हो गईं।

नौजवां देख टी.वी. पटाख़ा हुए,
लड़कियाँ आज की फुलझड़ी हो गईं।

ज़हर पीकर किसानों ने की ख़ुदकुशी,
अर्थियाँ क़र्ज़ की जब खड़ी हो गईं।

जबसे सत्ता ने, संसद में मुजरा किया,
सबकी नज़रें 'उमा' फुलझड़ी हो गईं।

**संपर्क : रेवा हॉस्पीटल के पास,
होशंगावाद-461001**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. मृदुला झा की ग़ज़लें

(1)

जब जी उदास होता है,
कविता के पास होता है।

तन की थकान मिटती है,
मन में उजास होता है।

उठती जभी कलम अपनी,
वह आस-पास होता है।

उनसे निगाह मिलते ही,
गम बदहवास होता है।

सारा जहांन अपना हो,
ऐसा प्रयास होता है।

मिलजुल रहें 'मृदुल' हम सब,
सबका विकास होता है।

(2)

झिल-मिल साँझ सकारे देखो,
आँगन औ चौवारे देखो।
× × ×
मिल-जुल विहरे हँसी-खुशी से,
मंदिर औ गुरुद्वारे देखो।

शिकवा है ना शिकायत कोई,
सब मिलते भिन्सारे देखो।

जन्म-मरण तो सबने देखा,
नाव चली नजधारे देखो।

हाय-हाय करते दिन बीते,
छूटे सब लश्कारे देखो।

परिचय

नाम : डॉ. मृदुला झा

जन्म तिथि : 05 दिसम्बर, 1948

जन्म स्थान : बनद्वार, बेगूसराय (बिहार)

शिक्षा : बी.एस.सी., डिप–इन-एड, एम.ए. द्वय. (गांधी विचार, समाजशास्त्र)

कृतकार्य : सेवानिवृत्त प्राचार्य, बिहार शिक्षा सेवा,

प्रकाशित पुस्तकें : (1) 'मेघा तुम उनसे जाकर कहना' (काव्य संग्रह-2003), (2) 'प्रतीक्षा' (काव्य संग्रह-2006), (3) 'बुधुआ का सपना' (कहानी संग्रह-2008), (4) 'हथेली पर कविता' (काव्य संग्रह-2008), 'झुमकी की उड़ान' (कहानी संग्रह-2010), (6) 'त्रिभंगिमा' (काव्य), (7) 'अनुभूतियों के इन्द्रधनुष' (यात्रा-प्रसंग)।

सम्पादित : स्मारिका विद्यापति स्मृति पर्व 2006, कौशिकी।

संपर्क : बेलन बाज़ार, मुंगेर-811201 (बिहार)

फोन नं. : 06344-2222244, **मोबाइल :** 9430589856

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. लीला मोदी की ग़ज़लें

(1)

मेरी यादों में खो गया होगा
खुद से बेगाना हो गया होगा

जब चढ़ा होगा याद का दरिया
घर वो दिल का डुबो गया होगा

ग़म का बादल मेरी ही तरह से
उसकी पलकें भीगो गया होगा

मेरी साँसों में उसकी खुशबू को
कोई झोका पिरो गया होगा

वो भी आया न लौटकर 'लीला'
वो भी रस्तों में खो गया होगा

(2)

हथेली मेरी देख ले पास आकर
मैं बैठूँगी कब तक यूँ मेहंदी रचाकर

जो पहली मुहब्बत की सौगात था
वहीं फूल जूड़े में रखा सजाकर

अँधेरे घनेरे तो डर कैसा मुझको
मैं रखती हूँ यादों के दीपक जलाकर

सुधामय अगर मेरा जीवन बना दो
कहूँगी मैं तुमको शरद का सुधाकर

तू मुझसे खफा है सुना था ये लेकिन
ये देखा है मैंने तेरे पास आकर

उसी ने तमाशा बनाया है मुंझको
जिसे भी रखा मैंने दिल में बसाकर

मैं ढलती हुई शाम के संग 'लीला'
दिया अपनी चौखट पे रख दूँ जलाकर

(3)

ख़ाली ख़ाली दामन देखा
सूना मन का आँगन देखा

तितली बुलबुल भँवरा गायब
अबके ऐसा सावन देखा

भूखा प्यासा जन जन देखा
ऐसा जालिम शासन देखा

मायूसी की धूल जमी है
धुँधला मन का दर्पण देखा

नैना ऐसे बरसै 'लीला'
पतझड़ में भी सावन देखा

(4)

देख ले चेहरा पागल मेरा
वह निकला है काजल मेरा

याद का बादल टूट के बरसा
तर है मन का आँचल मेरा

आज पपीहा पिव-पिव गाये
आज है मन भी घायल मेरा

तू क्या जाने बिछुड़ के तुझसे
कैसे बीता पल-पल मेरा

दूर निकल आई हूँ इतना
शहर हुआ है ओझल मेरा

पानी दे अब तालावों को
खेत भी कर दे जल थल मेरा

कुछ तो मैं नादां हूँ 'लीला'
कुछ है मन भी चंचल मेरा

संपर्क : 291, मोती स्मृति,
टिपटा कोटा-324006 (राज.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. मीना नक़वी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. मुनीर ज़हरा
तखल्लुस : मीना नक़वी
जन्म तिथि : 20 मई, 1955
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी व संस्कृत) बी.ए.एम.एस.
लेखन विधाएँ : ग़ज़ल, गीत, नज़्म, लेख, कहानी
प्रकाशित संग्रह : 'सायबान' (ग़ज़ल-संग्रह (उर्दू) दर्द पतझड़ का एवं किरचियाँ दर्द की—दोनों ग़ज़ल संग्रह हिंदी में
संप्रति : चिकित्सक। साहित्यिक, सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी
संपर्क : अग़वानपुर, जिला-मुरादाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : 0591-2511211, **मोबाइल :** 9319232517

(1)

धड़क रहा था जो दिल बनके ज़िंदगी की तरह
वो आजतक है मेरे साथ अजनबी की तरह

मैं उसको कैसे दूँ इल्ज़ाम बेवफ़ाई का
जो दुश्मनी को निभाता है दोस्ती की तरह

महक उठे मेरे जज़्बात के सभी गुन्चे
चमन में यादों के आया वो ताज़गी की तरह

ये और बात है अल्फ़ाज में न ढ़ल पाये
मगर वो रूह में उतरा है शायरी की तरह

किसी से मिलने को बेताब है नदी शायद
तड़प है मौजों के होंठो पे तश्नगी की तरह

वो चल सकेंगे न कुछ दूर तक भी ए ''मीना''
जो दिल लगाते हैं हर एक से दिल्लगी की तरह

(2)

जो अपनी ज़मीनों की हिफ़ाजत नहीं करते
इज़्ज़त के फ़लक[1] उनसे मुहब्बत नहीं करते

एहबाब[2] की नज़रों में भी उग आते हैं काँटें
अग़यार[3] के पत्थर भी रियायत नहीं करते

शब का हो बुरा वक़्त तो क्या चाँद-सितारे
जुगनू भी अँधेरों की वकालत नहीं करते

तालिब हैं वो हर एक से ईसारो-वफ़ा[4] के
गर बात हो अपनी तो मुरव्वत नहीं करते

ऐ 'मीना' उन्हें तेरी नहीं, तुझसे तलब है
तू चाहे उन्हें, वो तेरी चाहत नहीं करते

1. आसमान, 2. मित्र, 3. दुश्मन, 4. त्याग

(3)

चिराग़ों का ये उजियारा मुझे अच्छा नहीं लगता
किसी के घर में अँधियारा मुझे अच्छा नहीं लगता

मैं दिल के आँगनों में प्यार की रौनक़ की क़ायल हूँ
कोई वीरान गलियारा मुझे अच्छा नहीं लगता

अँधेरों और उजालों में बुलंदी पर रहे क़ायम
फ़लक से टूटता तारा मुझे अच्छा नहीं लगता

मैं टुकड़े-टुकड़े होकर ज़ात के हिस्सों में बिखरी हूँ
मगर अपनों का बटवारा मुझे अच्छा नहीं लगता

उम्मीदों के नगर हर रोज़ 'मीना' वो दिखाता है
हो मेरा ज़ह्न बंजारा मुझे अच्छा नहीं लगता

(4)

सफ़र को पाँव के चक्कर तलाश करने हैं
हमें खुद अपने मुक़द्दर तलाश करने हैं

लबों पे प्यास सजा के ख़याल ये रखना
कि बूँद में भी समंदर तलाश करने हैं

जो मंज़िलों की ज़मानत दें, राहबर भी बनें
हमें वो मील के पत्थर तलाश करने हैं

सजा के ज़ह्न में माज़ी की धुँधली तस्वीरें
जो खो गए हैं वो मंज़र तलाश करने हैं

जिन्हें ग़ज़ल से मुहब्बत अदब से उल्फ़त हो
ऐ 'मीना' ऐसे सुख़नवर तलाश करने हैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनु जसरोटिया की ग़ज़लें

परिचय

नाम : अनु जसरोटिया
जन्म स्थान : हिमाचल प्रदेश (कांगड़ा)
जन्म तिथि : 21 अगस्त, 1978
शिक्षा : एम.कॉम, एम. एस. (कम्पयूटर साइंस)
लेखन विधा : गीत, ग़ज़ल कविता आदि।
कृतियाँ : जियारत (ग़ज़ल संग्रह)
प्रकाशन : देश की प्रायः सभी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।
संप्रति : अध्यापन, रेडियो उद्‌घोषिका एवं लेखन।
संपर्क : इंदिरा कॉलोनी, कठुआ-184101 (जे.एण्ड के.)

(1)

ज़ख़्में-दिल ताज़ा हुए, लौ दे उठीं तन्हाइयाँ
फिर लहू का ज़ायक़ा चखने लगीं पुर्वाइयाँ
काम आती है जुनूं की रहनुमाई[1] इस जगह
चल नहीं सकतीं महब्बत में कभी दानाइयाँ
झूठ छुप सकता नहीं तुम लाख पर्दे डाल दो
झूम कर अंगड़ाई लेंगी एक दिन सच्चाइयाँ
आंच आने दी न हम ने उस की शुहरत पर कोई
सर झुका के सह गए बदनामियाँ, रुस्वाइयाँ
ऊँचा उठना हो जिन्हें उन के लिए जीने[2] बहुत
गिरने वालों के लिए मौजूद गहरी खाइयाँ
ऐसी भी कुछ हैं अभागिन लड़कियाँ इस शहर में
बज न पाईं जिन की शादी की कभी शहनाइयाँ
आ किसी दिन रूह में, दिल में समाने के लिए
याद करती हैं तुझे अब रूह की गहराइयाँ
नन्हें मुन्नों की जहाँ किलकारियाँ हों गूंजती
हम को तो लगती हैं प्यारी बस वही अंगनाइयाँ
अब नहीं बाक़ी कहीं अदूले-जहांगीरी[3] यहाँ
अब नहीं होतीं ग़रीबों की कहीं सुनवाइयाँ[4]
थक गई हैं अब निगाहें तेरा रस्ता देखते
छुट्टी ले के घर को आ जा मेरे सर के साइयां

1. नेतृत्व, 2. सीढ़ियाँ, 3. मुगल शहनशाह जहांगीर का इंसाफ़, 4. सुनने की क्रिया

(2)

मेरे ख़ाबों को बना देता है अक्सर ख़ुशनुमा
मेरे दिल में ज़ो बसा है एक मन्ज़र ख़ुशनुमा
ख़ुश्बुओं में तर-बतर हो और हो रंगीन भी
आओ भेजें एक ख़त हम उनको लिखकर ख़ुशनुमा
देखिए रखता है गर्दन कौन ख़ंजर के तले
आज उनके हाथ में है एक ख़ंजर ख़ुशनुमा
बे-यकिनों के पयामों पर यक़ीं करता है कौन
यूँ तो आते हैं पयाम उनके बराबर ख़ुशनुमा
कोई ग़ालिब का नहीं सानी जहाने शे'र में
यूँ तो मिल जाएँगें लाखों ही सुख़नवर ख़ुशनुमा
आने वाली नस्ल हम को याद करके दर्स ले
काम करने चाहिए दुनिया में रहकर ख़ुशनुमा
चाहे वो फुटपाथ पर ही क्यों न सोता हो कहीं
ज़िहन में रहता है हर इन्सां के इक घर ख़ुशनुमा
ऐ वतन सर पर, हिमालय का धरा है तेरे ताज
चूमता है पैर तेरे इक समंदर ख़ुशनुमा
इनके बदले में लूँ जन्नत भी न हरग़िज ऐ 'अनु'
मेरे भारत की है धरती और अंबर ख़ुशनुमा

(3)

इक उदासी चार जानिब छा रही है
बाग की हर इक कली मुरझा रही है
जिस को माना था ग़रीबों ने मसीहा
वो सियासत ही क़ियामत ढा रही है
आदमी किस खाई में जाकर गिरे अब
आदमी की क़द्र घटती जा रही है
नींद में गुम हैं उजालों मसीहा
जुल्मते शब अपने पर फैला रही है
आ गई है फिर बहारे-गुल चमन में
शबनमी मोती हवा बरसा रही है
मीरो-ग़ालिब की इनायत के तुफ़ैल
कुछ जहाँ में आज .उर्दू छा रही है
देख कर बेटे को फलते-फूलते
माँ की ममता दिल ही दिल में गा रही है
देखना तो उस हंसी की खुश लिबासी
गुलसितां की हर कली शरमा रही है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मीनाक्षी 'जिजीविषा' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मीनाक्षी 'जिजीविषा'
जन्म : 19 मई, हिसार (हरियाणा)
काव्य संग्रह : 'पलकों पर रखे स्वप्न-फूल', 'दिल के मौसम', 'समकालीन हिन्दी कविता की कृतियाँ'
संप्रति : भारतीय जीवन बीमा निगम, फरीदाबाद (हरियाणा) में सेवारत
सम्पर्क : 892 सेक्टर 10, हाउसिंग बोर्ड, फरीदाबाद (हरियाणा)
मो. : 09868097468, 09711603033

(1)

जिसको तलाशता है तू सारे जहान में
बैठा हुआ है 'वो' तेरे दिल के मकान में

कुछ और अब सुनाई नहीं दे रहा मुझे
पहनी है जब से आप की आवाज़ कान में

माहौल ऐसा प्रेम का ईजाद कीजिए
मंदिर की घंटियों की टनक हो अज़ान में

रहने लगे हैं आप जो मुझसे ख़फ़ा-ख़फ़ा
क्या आ गया है और कोई दरम्याँन में

इस बार छू ही लेगा परिंदा 'वो' आसमान
शामिल किया है हौसला उसने उड़ान में

होना है आज फैसला इक बे-गुनाह का
सच को गवाह रखना तू अपने बयान में

ऐसी चुभी है बात तेरी दिल में आज तक
रह जाए जैसे तीर उलझकर कमान में

ज़ख़्मी हुई हैं ऊँगलियाँ कैसे न पूछिए
रखे थे कुछ गुलाब अभी फूलदान में

कड़वा जो बतियाते थे हमेशा 'जिजीविषा'
करने लगे हैं बात वो मीठी ज़बान में

(2)

फिर आँखों से जल निकलेगा
बिन बरसे बादल निकलेगा

मुश्किल में बस होश न खोना
हर मुश्किल का हल निकलेगा

कोशिश कर कोशिश से तेरे
सहरा में भी जल निकलेगा

रूह का पंछी तोड़ के पिंजरा
आज नहीं तो कल निकलेगा

किस्मत साथ अगर दे तो
खोटा सिक्का चल निकलेगा

नेताओं पर यक़ीं हो कैसे?
क्या रस्सी से बल निकलेगा

क्या समझेगा इस दुनिया को
अश्कों में भी छल निकलेगा

काटो हँसकर दुःख की रातें
सूरज से अब कल निकलेगा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पं. गिरिमोहन गुरु की ग़ज़लें

(1)

गीत विज्ञापन दरों में छप रहे हैं
इस तरह साहित्य में हम खप रहे हैं

किसी दिन तो करेगी सम्मान दुनिया
उसी क्षण के लिए माला जप रहे हैं

मित्र ही न खोल दें पोलें हमारी
इसलिए हम डर रहे हैं कँप रहे हैं

गाँव हो या शहर सबने ही बजाया
कभी ढोलक तो कभी ढप रहे हैं

आँच देने की न कोशिश कीजिएगा
हम हमारी आग में ही तप रहे हैं

(2)

थे गर्भ में गुलाम की मुद्रा लिए हुए
पैदा हुए प्रणाम की मुद्रा लिए हुए

आदर्श की जब बात चली तो खड़े हुए
मंचों पर श्रीराम की मुद्रा लिए हुए

हर बार किया प्रश्न शराबी निगाह ने
क्यों जी रहे हो जाम की मुद्रा लिए हुए

फिल्मी गीत कंठ में हिलते रहे मगर
थे होंठ वेद साम की मुद्रा लिए हुए

कैसे कहें जीवन में नहीं आया है प्रभात
आया है मगर शाम की मुद्रा लिए हुए

(3)

बातें प्यारी प्यारी रख
लेकिन हृदय कटारी रख

घायल करना सीख जरा
आँखों को कजरारी रख

भार उठाएगा कब तक
सँग में एक प्रभारी रख

समय हो गया जाने का
बिस्तर बाँध तैयारी रख

आँख मूँद कर साथ करें
केवल उनसे यारी रख

ब्याह न ऐरों गैरों से
कविता-सुता कुँवारी रख

(4)

शीर्ष सूची में रहेगा
पाग बन कर जी

सूर्य खुद स्वागत करेगा
आग बनकर जी

शूल ही खुद फूल देंगे
बाग बनकर जी

जहर खुद आगे झुकेगा
नाग बन कर जी

टूट कर भी जुड़ सकेगा
ताग बनकर जी

मिलेगा अनुराग भी 'गुरु'
राग बनकर जी

परिचय
नाम : पं. गिरिमोहन गुरु
जन्म : 1 जुलाई, 1942
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी)
संप्रति : सेवानिवृत्त शिक्षक
प्रकाशन : अनेक पुस्तकें प्रकाशित
संप्रति : हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, होशंगाबाद-461001 (म.प्र.)
मो. : 9425189042

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. रामबहादुर चौधरी 'चंदन' की ग़ज़लें

(1)

शामो-सहर मैं खबर बेचता हूँ
डर को भी होके निडर बेचता हूँ

अपने ही मन की मुरादों की खातिर
अपने को आठो पहर बेचता हूँ

घर में समाया है बाजार ऐसे
पग-पग पे ज़िस्मो-जिग़र बेचता हूँ

पागल बना दे जो सारे जहाँ को
फ़ैशन का ऐसा हुनर बेचता हूँ

तूफान भर दे जो मुर्दा रगों में
चंचल समय की लहर बेचता हूँ

(2)

होता कुछ है, दिखता कुछ है
मायावी ये लगता कुछ है

दुर्योधन वाली आँखों को
जल भी थल-सा लखता कुछ है

दुनिया के बाज़ारों में तो
मतलब जैसा बिकता कुछ है

हो जाता है आखिर नंगा
जो फ़ैशन में छिपता कुछ है

अंधी आँखों भी खुल जातीं
शायर ऐसा लिखता कुछ है

संपर्क : फुलकिया, बरियारपुर, मुंगेर-811211 बिहार
मो.-9204636510

परिचय

नाम : भोला पंडित 'प्रणयी'
जन्म तिथि : 6 जनवरी, 1936
शिक्षा : साहित्य भूषण (हिंदी विद्यापीठ, देवघर, झारखंड)
प्रकशित पुस्तकें : उपन्यास-4, कथा-संग्रह-1, काव्य-संग्रह-4, ग़ज़ल संग्रह-1 खंडकाव्य-2, अध्यात्म दर्शन-1 **लेखन :** 1960 से कविता, कहानियाँ, उपन्यास, डायरियां संस्मरणादि। **संप्रति :** 2004 से 'संवदिया' साहित्यिक पत्रिका का संपादन प्रकाशन, **संपर्क :** संवदिया प्रकाशन जयप्रकाश नगर, वार्ड नं. 7 अररिया-1 (बिहार), **मो. :** 9931223187

भोला पंडित 'प्रणयी' की ग़ज़लें

(1)

भीड़ में भी रह के तू, खुद को अकेला देखना
अपनी आँखों के अँधेरों में उजाला देखना
जहाँ की बुस्अत तुम्हें है छिपा लेना चाहती
मगर तुम हर कदम पे, अपना मर्हला देखना
अपनी सोचों के ख़ला में रंग भरते हैं सभी
जब खजाने सिफर, तो होगा दिवाला देखना
खुद में इक दुनिया अलग है, जगमगाती ख्वाब में
गुफ़्तगू करती सबा, हरदिन सुनहला देखना
आईने को देखकर खुद को सजाता आम है
मादरे सरजमीं का अपना क़बाला देखना
देखना है 'प्रणयी' तुमको मुसव्विर की कलम
इस नुमाया जहाँ की, चित्रशाला देखना

(2)

तू छोटा है या बड़ा, इसका ख्याल न कर
जिंदगी कीमती है, कभी मलाल न कर
कभी रोटियाँ न सेंक मुकद्दर से अपनी
तू पहचान है खुद की, व्यर्थ का सवाल न कर।
तू तो रोशनी है, तुझसे कुछ छिपा भी है क्या
अमावस रात में, वक्त बेहाल न कर
अपने गुनाहों का खुद ही फैसला तू कर,
भ्रष्ट आचरण से खुद को मालामाल न कर।
अब गौहर के लिए अनल गहराइयों में न पैठ
बाजार दर पे हैं, अपने को कंगाल न कर
मानवता के मुखौटे लगा, तू अपने को न छुपा
'प्रणयी' बेदाग तू न है, इस कदर गाल न कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मधुर गंजमुरादाबादी की ग़ज़लें

(1)

लिखना है अगर तुझको तो तू इंक़लाब लिख
जितने सवाल पेश हैं सबका ज़वाब लिख

अब तक तो रहा लिखता शहीदों की दास्ताँ
अब मुल्क के मुरीदों का सारा हिसाब लिख

ये तीरगी में डूबी हुई सी ख़ामोशियाँ
टूटे सुरों का एक नया आफ़ताब लिख

नाकामियों से हारे हुए लोग जो मिलें
उनके लिए दुआ के लफ़्ज कामयाब लिख

दिल में जो कहीं गहरे उतर जाए, न निकले
आँखों को दे सुकून, महकता शबाब लिख

पढ़ करके जिसको आदमी 'इंसान' हो सही
इन्सानियत के नाम पर ऐसी किताब लिख

काँटे ग़मों के घेरे रहें लाख ऐ 'मधुर'
बेफ़िक्र हो जिगर पे तू खिलता गुलाब लिख

(2)

लोग आते रहे, लोग जाते रहे
जाने वाले बहुत याद आते रहे

एक भी हल नहीं कर सके आज तक
प्रश्न सारे हवा में उड़ाते रहे

माननीयों के भत्तों की क्या बात है
नित नई वृद्धि पर वृद्धि पाते रहे

रूप की दृष्टि का बाँकपन भा गया
चोट खाते रहे, मुसकराते रहे

दिल पे लिखने की कीमत नहीं जानते
नाम पत्थर पे अपना लिखाते रहे

फागुनी ये हवा कान में कह गई
भौंरे मेरी ग़ज़ल गुनगुनाते रहे

हम क़लम के सिपाही न चूके 'मधुर'
लिख के कर्तव्य अपना निभाते रहे

(3)

गाँव आया मुझे अपना घर मिला
महकती धरती, खुला अम्बर मिला

यहाँ जुड़ कर मिल गए अपने सभी
शहर में जो भी मिला कट कर मिला

थे बहुत साथी वहाँ कहने को बस
यहाँ बचपन का सुहृद, सहचर मिला

हवा, पानी, धूप हो या चाँदनी
शहर से सबकुछ यहाँ बेहतर मिला

नदी, जंगल, खेत, गलियारे मिले
आल्हा, कजरी, फाग औ' सोहर मिला

गले मिलते एक से 'होरी' 'हमीद'
भेद कहने को नहीं तिल भर मिला

रच गया माहौल मेहंदी की तरह
'मधुर' सबसे जब यहाँ जी भर मिला

परिचय

नाम : मदन मोहन शुक्ल
लेखकीय नाम : मधुर गंजमुरादाबादी
जन्मस्थान : गंजमुरादाबाद, उन्नाव (उ.प्र.)
जन्मतिथि : 1 फरवरी, 1941
शिक्षा : एम.ए. (समाजशास्त्र)
प्रकाशन : 1960 से देश के विभिन्न अंचलों से प्रकाशित हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। कई संकलन प्रकाश्य।
विधा : गीत, नवगीत, कविता, अतुकांत, ग़ज़ल, हास्य-व्यंग्य तथा बाल साहित्य का सृजन, आलेख, निबंध भी
सेवा : स्वास्थ्य शिक्षा अधिकारी
संप्रति : 2004 में अवकाश प्राप्ति, साहित्य सेवा
संपर्क : गंजमुरादाबाद, उन्नाव-207867 (उ.प्र.), **मो.** 09451376763

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. अमरेन्द्र की ग़ज़लें

परिचय

नाम : डॉ. अमरेन्द्र
जन्म : 5.5.1949, ग्रा.-रूपसा, जि.-भागलपुर
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी.-एच.डी.।
प्रकाशन : जनतंत्र का 'विक्रमशिला', सूरज के पार, पीर का पर्वत पुकारे, देहरी पर दीया, मन गोकुल का गाँव, द्वार के पार, काँटे कुछ कचनार–**हिंदी काव्य।** काव्य और कसौटी, भाषा और साहित्य, (आलोचना)–**हिंदी गद्य।** करिया झुम्मर खेलै छी, गेना (महाकाव्य), अंगदेव, ढोल बजै छै ढम्मक ढम, बुतरू के तुतरू, बाजै बीन, बजावै तीन, एक छड़ी पर अण्डा नाँचै (बालगीत), रेत रो राग (ग़ज़लें), ऋतुरंग, कुँइयाँ मँ काँटो–**अंगिका काव्य।** पंचगव्य (नाटक), जटायु (उपन्यास), अंगिका छंद-छौनी, अंगिका छंद-मौनी, ग़ज़ल रो पिंगल, अंगिका साहित्य रो इतिहास (आलोचना पुस्तकें), दुपल्लो (नाटक)–**अंगिका गद्य। हिंदी पुस्तक संपादन :** स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी, शब्द बनते बिंब, शताब्दी के साहित्यकार : कमला प्रसाद 'बेखबर', ग्यानूड़ी (सदाशिव सुगंध की प्रतिनिधि कहानियाँ), सुरंग में सूरज (कहानियाँ), गुरेश मोहन घोष 'सरल' : व्यक्तित्व और कृतित्व, नीली झील की आँखें (कहानियाँ) पुल, तूफान में फूल (जसवन्त सिंह विरदी की प्रतिनिधि कहानियाँ)। **अंगिका पुस्तक संपादन :** गीत-गंगा, समंदर साथ, आठ समंदर आँख, अंगिका कहानी। **संपर्क :** लाल खाँ दरगाह लेन, सराय, भागलपुर-812002 (बिहार) **दूरभाष :** 09939451323

(1)

हरेक बार मुझे ऐसा कुछ लगा जैसे
किसी ने कानों में चुपके से कुछ कहा जैसे
तुम्हारी याद क्या आई है इस अकेले में
सिरहाने मोगरे का फूल हो खिला जैसे
दुखों का आना-जाना ऐसे लगा है अब तो
ये ज़िंदगी हो मेरी उनका रास्ता जैसे
मैं बदहवास-सा बेचैन फिरा करता हूँ,
सभी के एक-से चेहरे हैं और पता जैसे
किसी की यादें अभी मन में आ रहीं ऐसे
रवां हो दूर की घाटी में काफिला जैसे
सभी की बातें खतम होती हैं मुझी पर आ
मैं हो गया हूँ-जहाँ भर का माजरा जैसे
सभी ने हाथों में पत्थर उठा लिए फौरन
जब भी अमरेन्द्र को ठोकर लगी, गिरा जैसे।

(2)

मिलने-जुलने का अभी और सिलसिला रखना
ये कायदा है मुहब्बत का, कायदा रखना
तुमसे छोड़ी नहीं जाती है जब-जफा रखना
मैं कैसे छोड़ता फिर अपनी ही वफा रखना
कितने गहरे हो-अभी इतना आजमाया करो
तुम्हारे वश में नहीं मुझको आजमा रखना
कभी तुम्हारा ही मन हो कि मुझसे आके मिलो
इसी से कहता हूँ-मिलने का रास्ता रखना
तुझे तो भीड़ में चलने की नहीं आदत है
तू अपनी राह सभी से जुदा-जुदा रखना
जहाँ में जिस्म का अब कारोबार होता है
बहुत बुरा हुआ, दिल का मुतालबा रखना
तुम्हें भुला के मेरे दोस्त मैं भी भूल गया
हसीन शायरी का हुस्नो-जायका रखना
वो हाल जिस्म के खूँ होने का सुनाएगा
तुम भी अमरेन्द्र अपने दिल का वाकया रखना।

(3)

वो शख्स दिख गया है फिर से आया गाँवों में
बड़ा ही खौफ है छाया हुआ हवाओं में
ये सुबह तुमको जो इतनी हसीन लगती है
मेरे लहू का ही है रंग इन शुआओं में
तुम्हें भले ही वो तारीफ अच्छी लगती हो
किसी का घुट रहा था दम भी वाह-वाहों में
परिंदे, पेड़ और पर्वत-सभी उबे से मिले
अजीब रिश्ता मिला सबकी आहों-आहों में
हवा के पंख से उड़ती हुई वो खुश चिड़िया
किसे बुलाती थी अपनी सधी सदाओं में
उसे मिलेगी कहो कैसे उसकी ही मंजिल
जो बेड़ियों को लगाए हुए है पाँवों में
मुझे क्यों आपकी बातों से शिकायत होती
यहाँ तो शोला बरसता है बीच छाँवों में
तू डूबने से कैसे बच गया फिर अमरेन्दर
दुबारा डूब के उस झील-सी निगाहों में।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हबीब अजमली की ग़ज़लें

परिचय

नाम : हबीब अहमद
साहित्यिक नाम : 'हबीब' अजमली
जन्म तिथि : 15, अक्टूबर, 1952
शिक्षा : स्नातक
प्रकाशन : विविध पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का अनवरत प्रकाशन
प्रसारण : आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से कविताएँ प्रसारित
संप्रति : प्राइमरी स्कूल अध्यापक
प्रकाशित कृतियाँ : 'तेरे ख़याल की वहदत' (ग़ज़ल-नज़्म का उर्दू संग्रह)
संपर्क : सादिया मंज़िल, 1174, सिरवारा रोड़, सिविल लाइंस, सुलतानपुर (उ.प्र.) **मोबाइल :** 09919738772

(1)

बरहेना हो न जाएँ तन हमारे
लपेटे रहते हैं वादे तुम्हारे
है चुप भी एक सदाए एहतेजाजी
कहाँ तक कोई बहरों को पुकारे
नेहाँ हैं इन चमकती बिजलियों में
घरों को फूँक देने के इशारे
हमारे सर पे अब भी आसमाँ है
ज़मीं है पाँव के नीचे हमारे
चलो कुछ हल तो निकला मसअलों का
पड़े थे सर्दखानों में बेचारे
मुनासिब है कि आँखें बंद कर लो
न देखे जाएँगे ऐसे नज़ारे
गले से हमने हिंदी को लगाया
हमीं ने गेसुए उर्दू सँवारे
सुनी उसने जो अश्कों की ज़बानी
थे कितने काम के टूटे सितारे
वो देखो आसमाँ झुकता जहाँ है
कोई बैठा है धरती के किनारे
ग़ज़ल में है 'हबीबे अजमली' की
हक़ीक़त आश्ना अशआर सारे

(2)

ये चीखते हुए कंकर किसी दबाव से
कराहती है ज़मीं अपने तन के घाव से
नदी में ज़ीस्त की तूफ़ाने आरज़ू है बहुत
दिल उतरे पार भी कैसे शिकस्ता नाव से
छुपाए दिल में कोई क्या पढ़ ही लेती है
ये गम शनास नज़र रुख़ के हाव भाव से
वो मेरे साथ मोहब्बत से पेश आए थे
मैं याद करता हूँ उनको इसी लगाव से
हमारे शहर में बरसा है किस क़दर पानी
सड़क पे काई ही काई जल भराव से
ग़ज़ल की अपनी जबाँ है मगर इशारों की
मैं बात खुल के नहीं कहता कोई ताव से
कोई ज़माने से भूखा ही उठ गया लेकिन
कहीं ज़ियाफ़ते अहबाब है पुलाव से
ये और बात की हालात हो गए रंगीं
'हबीब' वरना बहुत सादा थे स्वभाव से

(3)

सफ़र भी क्या अगर तलवे न देखें ख़ार की सूरत
हमारे आबले भी हैं किसी के प्यार की सूरत
रही बनती बिगड़ती यूँ हमेशा प्यार की सूरत
कभी एकरार की सूरत कभी इनकार की सूरत
तुम अपने घर में बैठे हो, हम अपने घर में बैठे हैं
कभी आपस में मिल-जुल कर भी हो इज़हार की सूरत
हमें अब ग़ैरियत से देखती है उनकी आँखें भी
कोई शै है दिलों के दरमियाँ दीवार की सूरत
दिया दीवाली का मद्धम है फीका रंग होली का
मनाएँ ईद क्या बदली हो जब त्योहार की सूरत
'हबीब' अब फसूले गुल भी है ख़िज़ाँ पोशी पे आमादा
चमन के फूल भी चुभते हैं दिल में ख़ार की सूरत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शम्मी शम्स वारसी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : शम्मी शम्स वारसी
जन्म : 7 मार्च, 1958 (आबू रोड)
प्रकाशित कृति : दो ग़ज़ल संग्रह
अन्य : देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशन एवं कई संकलनों व विशेषांक में रचनाएँ सम्मिलित।
संपर्क : छोटी मस्जिद के पास, आबू रोड-3070236 (राज.)
मोबाईल : 09351174583

(1)

अक्स अपना है न चेहरा है न शीशा अपना
कौन अपना है यहाँ ज़िस्म न साया अपना

ज़िंदगी क्या ये दिखाएँ तुझे चेहरा अपना
हम ग़लत करके चले आए हैं पर्चा अपना

सीख लेगी किसी शाहीं से जो लड़ना चिड़िया
तब तिरे नाम लिखेंगे जो है दुखड़ा अपना

अब तो धुँधला गए मंज़र भी यहाँ के सारे
अब बदलना ही पड़ेगा हमें चश्मा अपना

मैंने बचपन में सुनी थी ये कहानी यारों
इसको दोहराने से कटता है अँधेरा अपना

बेटियाँ बोझ समझती हैं यहाँ खुद को और
बोझ माँ-बाप को समझे है ये बेटा अपना

तेरे बदले भी लिए जाएँगे इक दिन बरतन
कोट से कहने लगा बात ये कुर्ता अपना

मेरी चप्पल को अँगूठे से बँधा देखा तो
सी लिया उसने भी 'ऐ शम्स' दुपट्टा अपना

(2)

बरकतों के मौसम की बदलियाँ अमानत हैं
बोझ इनको मत समझो बेटियाँ अमानत हैं

घर जलाने वाले को लाख मैंने समझाया
भाई, मत जलाओ ये साड़ियाँ अमानत हैं

फिर नक़ाबें नोचूँगा जा के रहनुमाओं की
रखना मेरी खातिर ये बेड़ियाँ अमानत हैं

आज इनको तुम रख लो, कल मुझे ये दे देना
दोस्त, मेरे होंठों की सिसकियाँ अमानत हैं

ताज-सी इमारत भी चाहे इनसे बनवा लो
हाँ मगर ये हाथों की ऊँगलियाँ अमानत हैं

दर-दुआ के खोलेंगी बाँट दो यतीमों में
बच गईं हैं जो घर में रोटियाँ अमानत हैं

जुगनू बन के रातों को रास्ता दिखाती हैं
'शम्स' इन बुज़ुर्गों की गालियाँ अमानत हैं

(3)

दहलीज़ का दिया यहाँ रोशन हवा में था
पर वो दमकता चाँद तो काली घटा में था

उनकी हथेलियों के जो गुँचे सुलग उठे
सूरज का कुछ लूह भी तो रंगे-हिना में था

मेरे बदन पे कुंद ये तलवार हो गई
नर्ग़े में मैं नहीं था, मैं माँ की दुआ में था

मुझसे बिछड़ते वक्त वो हँसने लगे बहुत
दुख तो उन्हें जरूर था लेकिन अदा में था

मेरी ज़ुबाँ की तल्ख़ी ज़माने की देन है
थोड़ा-सा ज़हर ये भी तो शामिल दवा में था

उसके लहू ने दाग़ की लकड़ी भी फेंक दी
बस्ती जलाने वाला वो मुज़रिम चिता में था

'ऐ शम्स' दुश्मनों से उलझकर पता चला
सोया मिरा ज़मीर तो उसकी रिदा में था

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शाम सुंदर नन्दा 'नूर' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : शाम सुंदर नन्दा 'नूर'
जन्म तारीख़ : 12.12.1950
जन्म स्थान : यमुना नगर (हरियाणा)
शिक्षा : बी.ए.
व्यवसाय : रेडीमेड गारमेन्ट्स
प्रकाशन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित
पता : 6, सिद्धार्थ कॉम्पलैक्स, मोनस्टी मार्किट, बेला रोड, दिल्ली-54
मो. : 09278840394

(1)

हर क़दम साथ मुझको तुम्हारा मिला
जैसे कश्ती को कोई किनारा मिला

हम सहारा बनें भी तो किस किस का अब
हमको जो भी मिला बेसहारा मिला

हो गया जान-ओ-दिल से मैं उस पर फ़िदा
मुझको मेहबूब का जो इशारा मिला

इक तिरे ही तसव्वुर में खोया रहूँ
तेरे सदक़े मुझे जग ये सारा मिला

आज इस्कूल जाता हुआ 'नूर' जी
एक बच्चा हमें प्यारा-प्यारा मिला

(2)

ज़ीस्त में ज़िंदादिली है ज़िंदगी के वास्ते
हमको जीना है सदा सब की ख़ुशी के वास्ते

ज़िंदगी जीने की ख़ातिर सिर्फ़ ख़ुशियाँ ही नहीं
ग़म भी हैं बेहद ज़रूरी आदमी के वास्ते

आप चाहें, हम न आएं, ऐसा हो सकता नहीं
दूर से आए हैं चल कर आप ही के वास्ते

लुत्फ़ जो खाने में आया चाट ली है उँगलियाँ
किसकी मेहनत रंग लाई चाशनी के वास्ते

गाँव के लोगों का पहनावा सदा सादा रहा
याद करते हैं उन्हें हम सादगी के वास्ते

(3)

है अज़ल ही से फक़िराना तबीयत अपनी
साथ रहती है फकीरों ही को सोहबत अपनी

हमने देखा है किसी लाभ की ख़ातिर अक्सर
दाँव पर लोग लगा देते हैं इज्जत अपनी

यूँ तो मिलते हैं हजारों ही बशर मिलने को
हर किसी से कहाँ मिलती है तबीयत अपनी

मेरे इज़हारे-मुहब्बत पे वो फरमाते हैं
तुमने देखी कभी आईने में सूरत अपनी

हम गलतफहमी नहीं रखते हैं कोई दिल में
हम को मालूम है ऐ 'नूर' हक़ीक़त अपनी

(4)

दुश्वार इतना आज मुझे अरज़े हाल है
कुछ कह सकूँ जबाँ से मेरी क्या मज़ाल है

मैं तो खुदा के फज़लोकरम से हूँ शाद काम
कहिए ज़नाब आपका क्या हाल चाल है

हर शै को है ज़वाल ज़हाने खराब में
लेकिन तुम्हारे गम की खलिश लाजवाब है

डूबा हुआ-सा रहता है तू किसकी याद में
ऐ दिल तेरे ख़याल में किसका ख़याल है

आ जाएगा करार दिले बेकरार को
ऐ 'नूर' उसकी एक नज़र का सवाल है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ख़ुर्शीद नवाब की ग़ज़लें

(1)

नेह वर मेरे करो उपकार जीवन में
सीख लो अब तो प्रिये, व्यवहार जीवन में
तुम हृदय की भावनाओं का यदि आदर करो
फिर बसा लें प्रेम का संसार जीवन में
रूष्ट होकर, धैर्य की मेरी परीक्षा कब तलक
हो, तनिक अपनत्व का आधार जीवन में
हम प्रणय के सूत्र में, बँधने का साहस जो करें
व्यक्त फिर करते रहें, आभार जीवन में
है, क्षणिक भंगुर ये जीवन, तो कटुता त्याग करें
एक दूजे का करें, सत्कार जीवन में
श्वास की इस शृंखला में, नाम केवल आपका
प्रेम की पाती में दो, उपहार जीवन में
जितना चाहो दूर मुझसे रहने का साहस करो
मैंने भी मानी नहीं है, हार जीवन में
सात जन्मों के लिए, हम हो चुके इक दूजे के
स्वप्न ये मेरा करो, साकार जीवन में
ढाई आखर में निहित, मनतव्य अपना कह दिया
नेह पाती, अब करो स्वीकार जीवन में
अब तो केवल प्रार्थना, करता हूँ ईश्वर से यही
तुम ही तुम मुझ को मिलो, हर बार जीवन में
स्वीकृति, नैनों से दे दी, तुमने जब खुर्शीद को
प्यार, केवल प्यार दो, अब प्यार जीवन में

(2)

दामन में, मेरें डाल के उल्झन निकल गया
शातिर, बढ़ा के आपसी अनबन निकल गया
मुझको नतीजा, मेरी शराफ़त का ये मिला
जिसको कहा था यार, वो दुश्मन निकल गया
मेरा सुकूँ ही, उसके हसद की वजह रही
शोलों के नज़्र कर के वो, दामन निकल गया
मुझ को किसी भी तौर जब वो, डस नहीं सका
गुस्से में वो फैलाए अपना फन निकल गया
ऐशो-तरब की साअतें, अब हों कहाँ नसीब
मस्ती के दिन गए, मेरा बचपन निकल गया

परिचय

नाम : खुर्शीद नवाब
शिक्षा : एम.ए. उर्दू बी.एड.
नाटक : 78 रंगमंचीय हिंदी, उर्दू नाटकों का लेखन, अभिनय, निर्देशन व प्रदर्शन
लोक भाषा : राजस्थानी भाषा के गीत व नाटकों का लेखन, अभिनय, निर्देशन तथा प्रदर्शन **रेडियो प्लेज :** आकाशवाणी हेतु 33 रेडियो नाटकों का लेखन, अभिनय, निर्देशन व प्रसारण **फिल्म :** 4 हिंदी फीचर एवं 1 इटालियन फिल्म में अभिनय **पद्य लेखन :** गीतों ग़ज़लों, कव्वालियों का लेखन, गायन व प्रदर्शन **प्रकाशन :** स्थानीय व राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में गीतों, ग़ज़लों नाटकों का प्रकाशन। ग़ज़लों, नाटकों व कहानी संग्रहों की पुस्तकों का प्रकाशन **पता :** 53, 54, वर्मा कॉलोनी (ओल्ड), सेक्टर 9, सवीना खेड़ा, उदयपुर-313002 (राज.) मो. -92144-65301

मेरे खुलूसो-प्यार की एवज़ में, बे-वफ़ा
हद से बढ़ा के, दिल की वो धड़कन निकल गया
खुर्शीद, अब वो कौन-सी है शै पर करें, गुरूर
सारी ज़वानी ढल गई, सावन निकल गया

(3)

सौहार्द्र, भाईचारे की चादर बिछा के देख
शत्रु को भी, गले से किसी दिन लगा के देख
श्रद्धा से, झुक ही जाएगा, मस्तक ये खुद-ब-खुद
हाथों से अपने, 'घड़' के तू, 'शंकर' बना के देख
उपकार के बदले में छलक आएंगे आँसू
भूखे, किसी ग़रीब को, भोजन खिला के देख
कितना सुकूँ मिलेगा तुझे पुण्य के बदले
अबला, किसी मजबूर की इज़्ज़त बचा के देख
लाखों दुआएं देंगे, तेरे घर के ये बुजुर्ग
चरणों में उनके, थोड़ा-सा खुद को झुका के देख
मजिस्द की अज़ाँ सुन के कर ले याद खुदा की
मन्दिर में आके, प्यार से, घंटी बजा के देख
टूटे दिलों को जोड़ना, खुर्शीद है ये–फ़न
बिछड़े हुए, दो प्रेमियों, को भी मिला के देख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कमल किशोर 'भावुक' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : कमल किशोर 'भावुक'
जन्म : 20 अगस्त, 1967 (रक्षाबन्धन) को सुरार, कानपुर (उ.प्र.) ननिहाल में।
पैतृक निवास : ग्राम-बबुरहा, पो.-कांथा, जिला-उन्नाव (उ.प्र)
शिक्षा : हाईस्कूल, साहित्य विशारद् (मध्यमा) समकक्ष इण्टरमीडिएट।
प्रकाशन : सन्नाटे में सरगम (ग़ज़ल संग्रह) परिचय-पत्रिका (अपने स्वयं के रचना-संसार पर विहंगम दृष्टि डालती लघु पत्रिका), आस्था की फसल (मुक्तक-संग्रह), हिंदी-जगत की लगभग सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं तथा विशेषांकों में रचनाओं का प्रकाशन, लगभग पचास समवेत् संकलनों, संदर्भ ग्रंथों में रचनात्मक उपस्थिति तथा दो दर्जन से अधिक प्रस्तावित साहित्यिक ग्रंथों में सृजनात्मक सहभागिता।
संपादन : देश की आराधना में...(राष्ट्रीय काव्य-संकलन) काव्याकाश (काव्य संकलन) आज की सच बात (साप्ताहिक)
संस्थापक/अध्यक्ष : शिवम् साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मंच
जीविकोपार्जन : प्राइवेट नौकरी, स्वतंत्र लेखन
संपर्क : 'भावुक-भवन', 545क/ई-59, प्रभातपुरम् (आलम नगर स्टेशन के सामने), राजाजीपुरम् लखनऊ-226 017 (उ.प्र.)
मो. : 09236999277

(1)

भला ये कौन कहता पीर के पत्थर नहीं गलते
ये आँसू हाँ! मगर हर एक दामन पर नहीं ढलते
कि मेरी मुफलिसी शायद मेरी सबसे बड़ी खामी
नहीं तो दोस्तों के आज ये तेवर नहीं खलते
कहीं कर्जा, कहीं सूखा, कहीं पर बाढ़ का पानी
किसानों की कथा से वक़्त के मंज़र नहीं टलते
सितारे रात के जूड़े के जलते फूल हों जैसे
'उजाले गंध के' सबको ये जीवन भर नहीं फलते
उन्हें कैसे बचाएगा कोई हमदर्द बनकर भी
समय की आहटों का शोर जो सुनकर नहीं चलते
मजारों पर कभी भावुक दिये जल भी गए माना
मगर चूल्हे शहीदों के यहाँ अक्सर नहीं जलते

(2)

वो परिंदा दम्भ पाले, है बड़े उल्लास में
दूसरों के पंख बाँधे उड़ रहा आकाश में
ख़ून के आँसू रूलाई जा रही है भावना
हादसे ही जन्म लेते आजकल विश्वास में
देखिए कब दिन फिरें दीपावली के, दोस्तो
तिमिर ने कब्जा जमाया ज्योति के आवास में
मोल हँसने का मुझे रो-रो अदा करना पड़ा
आँसुओं की जीवनी है, दर्द के इतिहास में
सिर्फ़ अपनी त्रासदी की क्या करें चर्चा यहाँ
जब सदी पूरी की पूरी जी रही संत्रास में
राजसी सुख त्यागने का तो तभी औचित्य है
जी सकें जब राम जैसी ज़िंदगी वनवास में
है तक़ाज़ा वक़्त का, कोई ग़ज़ल ऐसी कहो
प्राण फिर से भर सकें जो टूटते विश्वास में

(3)

ओ मन के मधुमास्! तुम्हारी चिंता है
शेष बचे विश्वास! तुम्हारी चिंता है
कभी निराशा इतना नहीं डिगा पाई
बुझे-बुझे उल्लास! तुम्हारी चिंता है
आँसू पी-पीकर भी क्वँारी रह जाती
ओ अनब्याही प्यास! तुम्हारी चिंता है
जिसे ग्रहण कर कड़आहट ने जन्म लिया
हास और परिहास! तुम्हारी चिंता है
जीवन-कविता गुँथी शृंखला साँसों की
अर्थहीन अनुप्रास! तुम्हारी चिंता है
वक़्त मुट्ठियों की बालू है, भूल गए
भटक रहे अहसास! तुम्हारी चिंता है
पानी पीकर अपनी भूख मिटा लेता
बच्चों के उपवास! तुम्हारी चिंता है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शमीम 'इटावी' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मु. शमीम अशरफ
उपनाम : शमीम 'इटावी'
जन्म तिथि : 1.9.1964
शिक्षा : एम.ए. (उर्दू), डिप्लोमा मैकेनिकल इन्जी.
सम्प्रति : बी.डी.ओ. । साहित्य साधना
संपर्क : 64, छिपैटी, इकदिल, जिला-इटावा-206126 (उ.
मो. : 09335991582

(1)

मैं टूटा इस कदर, कि दिल को अब चाहत, नहीं होती ।
मुझे जख्में मुहब्बत, पर कोई हैरत नहीं होती॥
कमाने से, किसी लम्हा, तुझे फुरसत नहीं होती ।
कभी तो सोच कि क्यों रिज़्क़ में बरकत नहीं होती॥
अगर मैं शीश 'ए' दिल में छुपाता ना तुझे तो फिर ।
नज़र के तीर सहने से तुझे फुरसत नहीं होती॥
बदल देते हैं, सारे रास्ते हम उस घड़ी अपने ।
कि जब भी तुझ से मिलने की कोई सूरत नहीं होती॥
तू जब होता है मेरे पास तो रोनक़ रहा करती ।
तेरे बिन कूचओ बाज़ार में रंगत नहीं होती॥
तिरी वो वेवफाई जो मेरे दिल पर गुज़रती है
बता देता तो, दुनिया में तेरी शौहरत नहीं होती
'शमीम'उल्फत का अब के,काफिला ठहरा उसी 'जा'पर
जहाँ पर अब कोई भी साजिशें नफ़रत नहीं होती

(2)

ये बादल यकीनन सितम ढ़ा रहे हैं
जो प्यासी ज़मी छोड़कर जा रहे हैं
बिगाड़ेगी क्या ग़म की धूप उनका यारो
दुआ के शजर जिन का साया रहे हैं
जो रखते हैं दिल अपना आईने जैसा
सुना है कि पत्थर से टकरा रहे हैं
खुदा उन किनारो, की करना हिफाज़त
जो दरिया की मौजों से टकरा रहे हैं
बनाया था जिनसे कभी आशियाना
वो तिनके हवा में उड़े जा रहे हैं
'शमीम' उन चराग़ों की करना हिफाज़त
सरे ज़हन जो नूर फैला रहे हैं

(3)

हिम्मत के जो परवाने हैं, हारा नहीं करते ।
मिट जाते हैं, शम्मा पर, किनारा नहीं करते॥
दरिया में उतर जाते हैं, जो ढूँढ़ने मोती ।
वो बैठना साहिल पे, गवारा नहीं करते॥
सच कहते हैं, करते हैं, सदा सच की हिमायत।
हम ताज़ सदाक़त का उतारा नहीं करते॥
गम बाँट, खुशी बाँट, मगर घर ना कोई बाँट।
घर कोई बटे, हम ये गवारा नहीं करते॥
वो कूच के कब हुक़्म से होते हैं परेशाँ।
जो पीठ से बिस्तर को उतारा नहीं करते॥
मतलब के लिए, तोड़ दे, जो वाद 'ए' उम्मीद।
हम ऐसे भरोसों का सहारा नहीं करते॥
दिखता था कभी ख़त में 'शमीम' उसका नज़ारा।
अब खत भी कोई अक्स उभारा नहीं करते॥

(4)

हमने इस दौर में, क्या-क्या ना तमाशा देखा
वक्त के कांधों पे रिश्तों का जनाजा देखा
वो सितमगर है, ना बदलेगा कभी अपना मिज़ाज
उसको देखा भी तो, बस कल के ही, जैसा देखा
आलमे, तश्नालबी, तेरा वही समझेगा
जिसने भी, प्यास में, इक बूँद को, दरिया देखा
वो बचा लेगा चरागों को, हवा की ज़द से
ज़ोर आँधी का कभी, जिसने कि बढ़ता देखा
गम के जंगल में भी लगता है, वो खुशहाल मुझे
जिसने खुशियों का अभी, काफिला आता देखा
ये तो हैरत है कि इस दौर में झूठों का 'शमीम'
हम ने लहराता, हुआ सच का, लबादा देखा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : धर्मेन्द्र कुमार गुप्त
साहित्यिक नाम : धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल'
जन्म तिथि : 7 जुलाई, 1964 (अंक पत्रों पर)
वास्तविक : 11 अक्टूबर, 1965
जन्म स्थान : वाराणसी
शिक्षा : एम.कॉम., बी.एड.
मुख्य विधा : ग़ज़ल (लगभग ढाई दशक से लेखन में सक्रिय) नई कविता, समीक्षा एवं निबंध लेखन में भी सक्रियता।
प्रकाशन : कविता संग्रह **'सन्नाटा जो चीर रहा हूँ'** प्रकाशित। विभिन्न संकलनों एवं राष्ट्रीय स्तर की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लगभग 300 रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी से प्रसारित।
संप्रति : अध्यापन, स्वतंत्र लेखन एवं 'समवेत साहित्यिक मंच' का संयोजन।
संपर्क : के. 3/10-ए, माँ शीतला भवन, गायघाट, वाराणसी-221001 **मो. :** 09336916989, 07275318940

(1)

तिमिर को खल रहा हूँ
निरंतर जल रहा हूँ

तपा हूँ धूप में मैं
तभी तो फल रहा हूँ

न भटका कोई जिसमें
मैं वो जंगल रहा हूँ

मैं फागुन की हवा-सा
बहुत चंचल रहा हूँ

रहा कब 'आज' 'साहिल'
हमेशा 'कल' रहा हूँ

(2)

शिखी-नर्तन कहाँ है
गगन में घन कहाँ है

हैं सब शृंगार-साधन
मगर दरपन कहाँ है

हैं दानव-देव अब भी
जलधि-मंथन कहाँ है

छुपा लूँ सत्य को मैं
ये मुझमें फन कहाँ है

जो है अनिवार्य 'साहिल'
वो परिवर्तन कहाँ है

(3)

गिर रहा हूँ, सँभल रहा हूँ मैं
वक़्त के साथ चल रहा हूँ मैं

एक चिनगी जो तूने बख़्शी थी
आज तक उससे जल रहा हूँ मैं

यूँ तो बहला रहा हूँ बच्चे को
दरअसल खुद बहल रहा हूँ मैं

आज खंडहर हुआ तो क्या ग़म है
कल तलक तो महल रहा हूँ मैं

आज आज़ाद नज़्म हूँ 'साहिल'
कल तलक तो ग़ज़ल रहा हूँ मैं

(4)

समय के साथ धुँधला हो गया हूँ
मगर अब भी मैं तेरा आईना हूँ

ख़लल कोई न डाले इस मिलन में
ज़माने बाद मैं ख़ुद से मिला हूँ

मेहरबानी है मेरे दोस्तों की
शहर में हूँ मगर मैं लापता हूँ

हैं कितने लोग गुज़रे होके मुझसे
गुज़र तू भी कि मैं इक रास्ता हूँ

बहुत कुछ पढ़ नहीं पाता हूँ 'साहिल'
मैं अपने-आप को जब बाँचता हूँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नज़र द्विवेदी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : नज़र द्विवेदी
पूरा नाम : बी.बी.डी. द्विवेदी
जन्म तिथि : 07 जुलाई, 1967, सीधी (म.प्र.)
प्रकाशन : स्तरीय साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं व संकलनों में ग़ज़ल, दोहे, कविताएँ व लघुकथाएँ प्रकाशित व अनेक संस्थाओं
पुरस्कृत, **संप्रति :** पंजाब नेशनल बैंक, मेडिकल कॉलेज
(म.प्र.) में कार्यरत **संपर्क :** पंजाब नेशनल बैंक, मेडिकल कॉ
रीवा-486001 (म.प्र.), **मो :** 09630689668, 0942543

(1)

सैलाब से निकलते हैं, लफ़्ज़ थरथराते,
अफ़साने ज़िंदगी के काग़ज़ पे जगमगाते।
नन्हे दीये हैं घर के, पर रोशनी है कितनी,
बच्चे हैं मुफ़लिसों के, बचपन से ही कमाते।
हमने सुकूने दिल की फ़रियाद की थी जिनसे,
अब वही रोज़ हमको ये ज़ख़्म दे के जाते।
हमको समंदरों से गर ख़ौफ़ ही जो होता,
साहिल पे आ के अब हम क्यूँ कश्तियाँ जलाते।
होता अजीब मंज़र जो इस तरह से होता,
सारा जहाँ हमें, हम दुनिया को आज़माते।
होते हैं हल मसाईल घर के घरों के अंदर,
क्यों फिर घरों के बाहर तूफ़ान हम उठाते।
हमको पता है उसकी मुश्किल भी कम नहीं है,
अब नाम लिख के उसका अश्कों से हम मिटाते,
इनको पता नहीं है तहज़ीब-ओ-तमद्दुन[1],
अपने गुरूर को वो खुद्दारियाँ बताते।
अशआर की जहाँ अब क़ीमत 'नज़र' नहीं है,
उस बज़्म में हम अपने अब शेर क्यूँ सुनाते।

1. परम्परा

(2)

जितना आज गंवाया है,
उससे बढ़कर पाया है।
एक वो महफूज़ रहेगा,
जिस पर माँ का साया है।
दुनिया दुश्मन है उसकी,
जिसने ऐब गिनाया है।
नाजुक से इन हाथों में,
बम किसने पकड़ाया है।
अपने तौर तरीकों से,
सबने ही समझाया है।
कहती है इसकी खुशबू,
घर में कोई आया है।

(3)

यूँ भी फ़र्ज़ निभाते हम,
एहसां करके भुलाते हम।
कमज़र्फों के आगे अपना,
कासा कब फैलाते हम।
झूठे और मक्कारों को,
शीशा भी दिखलाते हम।
बतलाओ तो चेहरे पर,
चेहरा कब चिपकाते हम।
गाँवों में शहरों जैसे,
तेवर कब दिखलाते हम।

(4)

पत्थर पर वो फूल खिला दे,
हैवां को इनसान बना दे।
उसकी रहमत का क्या कहना,
कैसे उसको कोई भुला दे।
हाथ पकड़ लेगा वो तेरा,
दिल से तू एक बार सदा दे।
सारी दुनिया उसके वश में,
जिसको चाहे खास बना दे।
तेरे ऊपर साया उसका,
खुशियों की सौगात लुटा दे।
चढ़ जाए जो 'नज़र' में उसकी
इक पल में ही शाह बना दे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. नईम 'साहिल' की ग़ज़लें

(1)

कोई रस घोल जाता है हमारे जब भी कानों में,
बहुत मशहूर हो जाते हैं हम भी नव जवानों में।

नज़र गहरी हो जैसे उनकी मौजूदा सियासत पर,
मिले हैं लोग अक्सर बहस करते चायखानों में।

चट्टानों के सरकने से हज़ारों लोग मरते हैं
मगर फिर भी हज़ारों काम करते हैं खदानों में

हमारे घर के आँगन तक उजाला क्यों नहीं आता
पसीना जबकि बहता है हमारा कारख़ानों में

पढ़ाया जाए उनको तो बदल सकती है हर सूरत
गरीबी में जो बच्चे काम करते हैं दुकानों में

अदा करना भी चाहें तो अदा वो कर नहीं सकते
बहुत मायूसियाँ हैं कर्ज़ को लेकर किसानों में

पुरानी छत टपकती है हर इक बरसात में 'साहिल'
न पूछो किस तरह से लोग रहते हैं मकानों में।

(2)

मर चुका है शब्द जब एहसास का,
मोल क्या समझे कोई विश्वास का।

आग वर्षों तक न बुझ पाई वहाँ,
एक तिनका क्या जला था घास का।

एक दिन आना है उसको लौटकर,
रास्ता भूला है जो आवास का।

ओज था उन सबकी वाणी में मगर,
भाव चेहरे पर रहा उपवास का।

ओस बनकर अब टपकता है लहू,
हाल मत पूछे कोई वातास का।

तोड़कर तटबंध उन्नत बह गए,
ज़िक्र आया जब कभी मधुमास का।

परिचय

नाम : सैयद अब्दुल नईम
साहित्यिक नाम : डॉ. नईम 'साहिल'
जन्मतिथि : 8 फरवरी, 1964 (इलाहाबाद)
शिक्षा : बी.कॉम., एम.बी.ई.एस.
प्रकाशन : 200 से अधिक रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं एवं काव्य संकलनों में प्रकाशित
संप्रति : चिकित्सक
संपर्क : साहिल क्लीनिक, 263, बख़्शी बाज़ार, मंसूर पार्क, इलाहाबाद-211003 (उ.प्र.)
मो. : 09305179240

जो भी 'साहिल' है यहाँ हाज़िर ज़वाब,
छोड़ता अवसर नहीं उपहास का।

(3)

आज भी हिंदोस्ताँ को है ज़रूरत प्यार की।
सुर्ख़ियाँ ये कह रही हैं आज के अखबार की।

देखता हूँ हर तरफ आतंक भ्रष्टाचार है,
किस दिशा में जा रही है नीतियाँ सरकार की।

मेरे हिलने से तुम्हारा घर नहीं रह पाएगा,
होश में आओ कि मैं बुनियाद हूँ दीवार की।

मीडिया का आज दुनिया पर बड़ा उपकार है,
छुप नहीं पाती कोई तसवीर हाहाकार की।

वो समझते ही नहीं ये देश का नुकसान है,
बात करते हैं हमेशा जो यहाँ संहार की।

ये सुना है न्याय उसको जल्द ही मिल जाएगा,
क्या ज़रूरत है उसे खंजर की औ' तलवार की।

जिसमें 'साहिल' हौसला तूफान से लड़ने का है,
आरज़ू है आज कश्ती को उसी पतवार की।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अखिलेश तिवारी की ग़ज़लें

(1)

ग़मों के नूर में लफ़्ज़ों को ढालने निकले
गुहरशनास समंदर खंगालने निकले

खुली फिज़ाओं के आदी हैं ख़्वाब के पंछी
इन्हें क़फ़स में कहाँ आप पालने निकले

सफ़र है दूर का और बेचराग़ दीवाने
तेरे ही ज़िक्र से रातें उजालने निकले

शराबखानों कभी महफ़िलों की जानिब हम
खुद अपने आप से टकराव टालने निकले

सियाह शब ने नई साजिशें रचीं शायद
हवा के हाथ कहाँ ख़ाक डालने निकले

(2)

लफ़्ज़ों में कहाँ ढलने थे उस बात के पहलू
बस चुप ने सँभाले हैं बयानात के पहलू

आती है लिए शाम तिलिस्मात के पहलू
हर वक़्त नहीं खुलते मेरी जात के पहलू

मिलते तो लगा रहता बिछड़ जाने का खटका
बिछड़े तो निकल आए मुलाक़ात के पहलू

पत्थर के शिगाफों से उबल आया है चश्मा
बेकार कहीं जाने थे जज्बात के पहलू

मत छान इसे राख है ये उजले दिनों की
डर है न उभर आएँ सियह रात के पहलू

खैर आप कहें जाएँ कि है खेल तो बस खेल
दुनिया तो तलाशेगी ही शह-मात के पहलू

सीखे तो कोई उनसे सुखन की ये अदा भी
रखना तो जवाबों में सवालात के पहलू

परिचय

नाम : अखिलेश तिवारी
जन्म स्थान : बीना, जिला-सागर, (म.प्र.)
जन्म तिथि : 27.5.1966
लेखन-प्रकाशन : देश की तमाम प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर ग़ज़लें प्रकाशित। ग़ज़लों के विभिन्न प्रतिनिधि समवेत संकलनों में ग़ज़लें शामिल। दूरदर्शन, जयपुर आकाशवाणी लखनऊ एवं जयपुर से समय-समय पर ग़ज़लों का प्रसारण। आकाशवाणी भुवनेश्वर में आयोजित सर्वभाषा कवि सम्मेलन-2009 में शामिल। ग़ज़लों का स्वतंत्र संकलन 'आसमाँ होने को था' शीघ्र प्रकाश्य
संप्रति : भारतीय रिजर्व बैंक, जयपुर में सेवारत
संपर्क : एम-69, रिज़र्व बैंक अधिकारी आवास, गांधी नगर, जयपुर-302015, **दूरभाष (आवास)** : 0141-2703109
मो.-9460434278

(4)

उड़ा के फिर वही गर्दो-गुबार पहले-सा
बुला रहा है सफर बार-बार पहले-सा

वो एक धुँध थी आखिर को छँट ही जानी थी
दिखाई देने लगा आर-पार पहले-सा

नदी ने राह समंदर की फिर वही पकड़ी
सदाएँ देता रहा रेगज़ार पहले-सा

कहीं ढलान मुक़द्दर न हो बुलंदी का
चढाई फिर न हो अपना उतार पहले-सा

सवाल क्यों न चरागे-सहर से कह देखें
जुनून अब भी है क्या बरकरार पहले-सा

तो क्या पलट के वही दिन फिर आने वाले हैं
कई दिनों से है दिल बेक़रार पहले-सा

सिमट के खुद भी अखिलेश मुत्मइन हूँ कि फिर
तलाश लेगा मुझे इंतिशार पहले-सा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शरीफ़ कुरेशी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : शरीफ़ कुरेशी
जन्म : 16 जून, 1950
शिक्षा : बी.ए.
पेशा : सेवानिवृत्त, उ.प्र. परिवहन निगम
सृजन : उर्दू अकादमी एवं फखरुद्दीन अली अहमद मेमोरियल सोसाइटी, लखनऊ द्वारा निम्न ग़ज़ल 'मजमूअ' कलाम
1. नक्शे दवाम (ग़ज़ल संग्रह), 2. इलहाम (ग़ज़ल संग्रह) 3. नदी किनारे प्यास (ग़ज़ल संग्रह), 4. आसार (ग़ज़ल संग्रह), 5. चाँद फिर निकला (ज़ेरे तरतीब) ग़ज़ल संग्रह
संपर्क : 1/91, भूसामंडी, फतेहगढ़-209601 (उ.प्र.)
मो.-9838956615, 9044674701

(1)

अजब मनमीत हैं मन छोड़ के धन छीन लेते हैं
कलाई थाम कर हाथों से कंगन छीन लेते हैं

इसी धरती पे ऐसे भी हैं दानी जो ग़रीबों को
नए कपड़े तो देते हैं मगर तन छीन लेते हैं

ये कलियाँ तोड़ने वाले ये ख़ुशबू बेचने वाले
इन्हें गुलशन नहीं मिलता तो गुलशन छीन लेते हैं

ये धन-दौलत के मतवाले, ये ऊँची कोठियों वाले
बड़े अय्याश हैं, बच्चों का बचपन छीन लेते हैं

बड़े बनकर भी लोगों को बहुत छोटे नज़र आना
कुछ ऐसे भी लुटेरे हैं, बड़ापन छीन लेते हैं

कभी नज़दीक जाकर तुम इन्हें दर्पन न दिखलाना
ये अंधे हैं मगर हाथों से दर्पन छीन लेते हैं

(2)

साज़े दिल टूट गया गीत सुनाऊँ कैसे
तेरी आवाज़ से आवाज़ मिलाऊँ कैसे

अब कहाँ जाऊँ कि रस्ता है न मंज़िल कोई
जो मुझी में है उसे ढूँढ़ के लाऊँ कैसे

वह भी दरिया है मगर प्यास बढ़ाने वाला
प्यास बुझती ही नहीं, प्यास बुझाऊँ कैसे

कौन था, किस की हथेली पे दिया रोशन था
किसके खेमे में लगी आग बताऊँ कैसे

सारे माहौल पे छाए हैं धुएँ के बादल
हर तरफ़ आग है दामन को बचाऊँ कैसे

(3)

हमें शाम जाने कहाँ हो गई है
ज़मीं झूम कर आस्माँ हो गई है

न पूछो गुज़रते हैं किन मरहलों से
मोहब्बत भी इक इम्तिहाँ हो गई है

तेरी याद से कौन ग़ाफ़िल है जानाँ
तेरी याद जानेजहाँ हो गई है

लगाई है बरसात ने आग कैसी
फ़ज़ा मंज़रों का धुआँ हो गई है

यह मिट्टी से उठती हुई सोंधी ख़ुशबू
किसी वे निशाँ का निशाँ हो गई है

(4)

रंग चाहत के नुमायाँ कुछ ज़्यादः हो गए
दिल की राहें खुल गईं बाज़ू कुशादः हो गए

उनसे मिलने जाएँगे या ख़ुद बुलाएँगे उन्हें
यह इरादः करते-करते बेइरादः हो गए

जिन किताबों में सुहानी बारिशों का ज़िक्र था
उन किताबों के सभी औराक़ सादः हो गए

ख़ून के रिश्ते भी पानी की तरह बेरंग थे
रंग बेरंगी के फिर गहरे ज़यादः हो गए

मयकदे से चल यहाँ अब क्या धरा है ऐ 'शरीफ़'
होश वाले तो ग़रीक़े जामो बादः हो गए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साहिल की ग़ज़लें

परिचय

नाम : साहिल
जन्मतिथि : 29.08.1946
जन्म स्थान : भाव नगर, (गुजरात)
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी साहित्य) एल. एल. (लेवर लॉज)
सर्जन : प्रायः 1962-63 से गुजराती में लेखन, हिन्दी, गुजराती में ग़ज़ल प्रकाशनाधीन
संप्रति : साहित्य साधना।
संपर्क : 'साहिल', मीसा-3/15, दयानंद नगर, राजकोट-3600..
मो. : 9428790069, 0281-2379455

(1)

तन्हाइयों को ओढ़ बहुत दूर तक गया
मैं दौड़ता रहा हूँ मेरा साया थक गया

दो-चार ही कदम चले थे साथ-साथ हम
क्या खूब ज़िंदगी का वीराना महक गया

मैं अपनी जंजीरों को अगर तोड़ ना सका
तेरे करीब तो पूरा जिंदा खिसक गया

अपना समझ के जिस की पनाहों में मैं गया
वो मुझ से अपनापन मेरा सारा झटक गया

इन वादियों में तो कोई बदलाव ही नहीं
ये भी नहीं कि गर्दिशे दौरा अटक गया

इस गुलसितां में इतना पीलापन कभी न था
क्या सर से तेरी मेहरबानी का फलक गया

'साहिल' रहा हूँ जागता मैं सारी ज़िंदगी
क्यों फिर भी ख़्वाब देखने का मुझ पे शक गया

(2)

कोहरों से हुई शनासाई
टूट गई पल में सारी आश्नाई

आसमानों की साफ तक़रीरें
ना समझ पाए मेरा दानाई

तेरी चारागीरी पे शक न सही
अब जरूरी है कुछ मसीहाई

खाई और कुओं ने मिलकर
काफिला की है क्या अगुवाई

बंदगी पर मेरी न जाने क्यों
मस्जिदों की दीवार मुस्काई

जो दिए इतने नजारे दिलकश
थोड़ा देता हमें भी बीनाई

दौर अब दिल के हाथ हैं 'साहिल'
अब नहीं काम की हैं चतुराई

(3)

किसे पता था अँधेरा तराज भी होगा
टटोलिए कोई पत्थर गुदाज भी होगा

भँवर के इस तरफ अपना जहाज है तो फिर
भँवर के उस तरफ कोई जहाज भी होगा

हैं खुश्क सांस उदासी में डूबता चेहरा
ये आदमी कभी क्या खुश-मिजाज भी होगा

मैं अपने घर पे ही जो साया छोड़ आया था
ख़बर नहीं थी वो इतना दराज भी होगा

किनारे तक हमें बिलकुल पता चला ही नहीं
छिछोले पानी में डूबना रिवाज भी होगा

सवाल बारहा उठता है मेरे मन में दोस्त
जो दर्द है तो फिर उसका इलाज भी होगा

अता नमाज़ करूँ और सोचूँ मैं 'साहिल'
खुदाया बंदगी का मोहताज भी होगा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुँवर 'कुसुमेश' की ग़ज़लें

परिचय

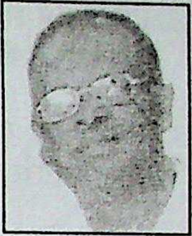

नाम : कुँवर 'कुसमेश'
जन्मतिथि : 03.02.1950
शिक्षा : एम.एम.सी. (गणित)
प्रकाशित कृतियाँ : 'अँधेरे भी उजाले भी' (ग़ज़ल संग्रह) 'पर्यावरणीय दोहे' (दोहा संग्रह), 'कुछ न हासिल हुआ' (ग़ज़ल संग्रह)
प्रकाशन/प्रसारण : आकाशवाणी लखनऊ से रचनाएँ प्रसारित। शताधिक संकलनों एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।
संपादन सहयोग : 'अविरल मंथन' त्रैमासिक एवं 'हरित वसुंधरा' त्रैमासिक में
संप्रति : भारतीय जीवन बीमा निगम के मंडल प्रबंधक के पद से सेवानिवृत्त। स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : 4/738, विकास नगर, लखनऊ-226022 (उ.प्र.)
मो. : 09415518546

(1)

माना कि भरोसा अभी टूटा तो नहीं है,
चर्चा न हो जिसकी कभी ऐसा तो नहीं है।
मुफ़लिस हूँ, फटेहाल हूँ भूखा हूँ जनम से,
जैसा हूँ, ज़मीर अपना ये बेचा तो नहीं है।
फिर भी बड़ा मुश्किल है उसे यार समझना,
उस चेहरा-ए-दिलदार पे चेहरा तो नहीं है।
इतना ही मिला है मुझे सच्चाई पे चलकर,
मालिक की तरफ से कोई ख़तरा तो नहीं है।
पढ़ने को पढ़े कोई 'कुँवर' शौक से मुझको,
किरदार मेरा आड़ा व तिरछा तो नहीं है।

(2)

इस तरफ़ बढ़ती हुई तश्नालबी भी खूब है,
उस तरफ़ बहती हुई गंगा नदी भी खूब है।
साँस चलती भी नहीं है, टूटती भी है नहीं,
अब पता चलने लगा, ये मुफ़लिसी भी खूब है।
कब खुदा को आ गया दुनिया बनाने का ख़याल,
सोचते रहते हैं अक्सर वो घड़ी भी खूब है।
तुझको रिन्दों से निभाने का हुनर तो आ गया,
खूब है मीना तेरी पाक़ीज़गी भी खूब है।
हो मुबारक आपको यारो दिखावे का चलन,
आँख में आँसू लिए लब पर हँसी भी खूब है।
हाथ में लाखों लकीरों का ज़खीरा है 'कुँवर',
आसमाँ वाले तेरी कारीगरी भी खूब है।

(3)

सामने लेकर खड़ी है ये सदी सौग़ात कुछ,
देखिए शायद सुधर जाएँगे अब हालात कुछ।
करवटें लेने लगे हैं दिल में फिर जज़्बात कुछ,
उस सदी की बात कुछ थी, इस सदी की बात कुछ।
जुल्मते-शब[1] में नज़र आती है आशा की किरण,
कुछ अँधेरा छँट रहा है, छँट रही है रात कुछ।
तुम न घबराना कभी इस दौर में भी दफ़अतन[2],
शादमानी[3] के तले मिल जाएँगे सदमात[4] कुछ।
राम क्या, रहमान क्या, गंगा का पावन नीर क्या,
सर पे इनके भी लगा करते है इल्ज़ामात कुछ।
हर बशर को साहिबे-किरदार बनना है 'कुँवर',
दौरे-हाज़िर में नज़र आते हैं इम्कानात[5] कुछ।

1. रात का अँधेरा, 2. अचानक, 3. खुशी, 4. दुख, 5. संभावनाएँ

(4)

फूल के नाम पे काँटे ही मिले हैं अब तक,
और हम हैं कि उम्मीदों पे टिके हैं अब तक।
दौरे-हाज़िर ने उसे क़ाबिले-कुर्सी माना,
हाथ जिस-जिस के गुनाहों में सने हैं अब तक।
लाख आँधी ने चराग़ों को बुझाना चाहा,
टिमटिमाते हुए कुछ फिर भी दिए हैं अब तक।
क्या कहूँ गर्दिशे-अय्याम[1] तुझे इसके सिवा,
तेरी चाहत के हँसी फूल खिले हैं अब तक।
चाहता हूँ कि कहूँ और भी अशआर 'कुँवर',
पर इसी शे'र में लिल्लाह फँसे हैं अब तक।

1. संकट के दिन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बृजभूषण चतुर्वेदी 'ब्रजेश' की ग़ज़लें

(1)

फोकट में ही दिल अपना मत भारी कर
दुनिया में रहना है दुनियादारी कर

लाख तुझे समझाया पर तू कब माना
यार बराबर वाले से ही यारी कर

इश्क लड़ाना अँगारों पर चलना है
बैठे-ठाले दिल को मत बीमारी कर

हिम्मत रख, दो हाथ दिए हैं मालिक ने
पेश किसी के आगे मत लाचारी कर

घर आया मेहमान खुदा से बढ़कर है
दुश्मन भी आए तो खातिरदारी कर

पैरों पर चलना भी मुश्किल हो जाए
सर पर अपने बोझ न इतना भारी कर

लोहा जब हो जाए अच्छी तरह गरम
तब ही उसके ऊपर चोट करारी कर

देख चुका दुनिया का मेला खूब 'ब्रजेश'
अब घर चलने की भी कुछ तैयारी कर

(2)

चार दिन ही जी मगर इनसान बनकर जी
लीक से हटकर अलग पहचान बनकर जी

एक सीमित दायरे में ही जिया तो क्या जिया
आसमां तक उठ अनंत उड़ान बनकर जी

कौन जाने कब कहाँ हो खत्म साँसों का सफर
इसलिए हर एक लम्हा शान बनकर जी

ज़िंदगी तो मुश्किलों से जूझने का नाम है
कंटकों में फूल की मुसकान बनकर जी

स्वार्थी मत बन स्वयं का पेट ही सब कुछ नहीं
दूसरों के लिए भी वरदान बनकर जी

व्यर्थ हैं कोठी औ बंगले, संगमरमर के महल
तू किसी के दिल में रह, मेहमान बनकर जी

लोग सदियों तक भूला पाएँ नहीं जिसको 'ब्रजेश'
प्यार की ऐसी कोई दास्तान बनकर जी

परिचय

नाम : बृजभूषण चतुर्वेदी 'ब्रजेश'
जन्म तिथि : 01 जनवरी, 1950
जन्म स्थान : मथुरा, (उ.प्र.)
शिक्षा : स्नातक **लेखन विधा :** गीत ग़ज़ल, दोहे, मुक्तक, मुकरियाँ **कृतियाँ :** क्यों सखि साजन (मुकरियाँ) सारा मूड खराब हो गया (हज़लें), ढाई आखर प्रेम के (दोहा संग्रह) एवं जय हो इस जनतंत्र की (ग़ज़ल)
प्रकाशन एवं प्रसारण : देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं एवं दो दर्जनाधिक काव्य सकलनों में रचनाएँ प्रकाशित तथा आकाशवाणी कोटा से प्रसारित।
संप्रति : सेवानिवृत्त शिक्षक
संपर्क : रघुनाथ जी के मंदिर के सामने, धाकड़पाड़ा, बारां (राज)
दूरभाष : 07453-699230 **मो. :** 9928447145

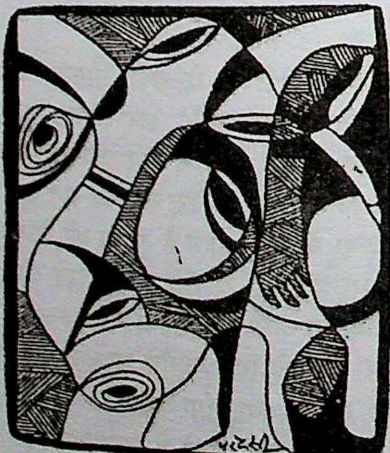

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आफ़ताब अहमद ख़ान 'रवि' की ग़ज़लें

(1)

रास्ता थोड़ा बचा है वस्ल की इस रात का
हो नहीं पाया मगर आग़ाज़[1] दिल की बात का।

सुबह-सादिक़[2] से भी पहले, वह जुदा हो जाएगा
मसअला फिर से शुरू होगा वही औक़ात[3] का।

इन फ़िज़ाओं में मज़ा उसके बिना बाक़ी नहीं
क्या करें फ़स्ले बहाराँ और हम बरसात का।

ख़ाक पत्थर का बना है यह क़बाए-माहताब[4]
है मिसाले हुस्ने जानाँ ख़सलतो आदात का।

उसके रुख़्सारों से गुन्चे और गुल बरसा किए
शुक्र है महबूब की उल्फ़त भरी सौग़ात का।

ख़ामशी सबसे भली है लग्जिशों[5] के दौर में
मुनक़ता[6] करिए फ़साना मुनहदिम[7] हालात का।

बह्र[8] में बोहरान[9] है, हैजान है, तूफ़ान है
मुन्तज़िर हूँ मैं, निज़ामे-अम्न[10] के लम्हात का।

इक कहानी मेरी सुनते-सुनते ही, वह सो गया
एक क़िस्सा उसने लेकिन कह दिया जज़्बात का।

बर्क़ रफ़्तारी[11] से चमका नूर उसका 'आफ़ताब'
याद है बस एक मन्ज़र, इश्क़ की शुरूआत का।

---

1. आरम्भ, 2. प्रातः काल, 3. समय, वक़्त, 4. चन्द्रमा का जिस्म, 5. दुर्दिन, 6. ख़त्म, 7. ध्वंस, 8. समंदर, 9. अशांति, 10. शांति-व्यवस्था, 11. बिजली की गति

(2)

अहवाल क्या बताऊँ, मैं उसकी दिलबरी का
वह हुस्न है चराग़ाँ, पैकर[1] है रोशनी का।

उस मशअले-जहाँ[2] का, कोई नहीं है हमसर
ज़ेबाइशे तसव्वुर[3], बाअस मेरी ख़ुशी का।

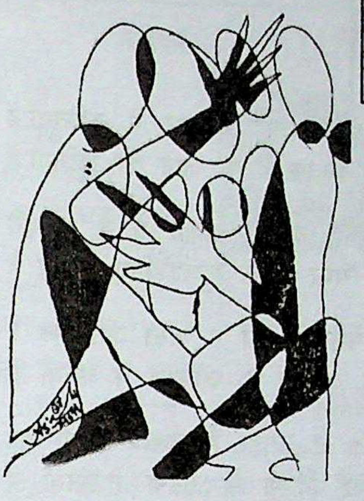

फ़ैजे-नज़र के सदक़े, आख़िर को उसने देखा
शायद उसे हुआ है, एहसास तश्नगी[4] का।

वाइज़[5] मेरी गली में तुझसा था कोई मयकश
दामन फटा हुआ था, आलम था बेख़ुदी का।

यह ख़्वाब दर हक़ीक़त, है आरज़ू हमारी
मैं दस्ते-पाक थामे, महशर में हूँ नबी का।

रहमो वफ़ा की उससे, उम्मीद राएगाँ[6] है
देखा बहुत है हमने, अंजाम आशक़ी का।

क़दमों पे सर झुकाकर, सबकुछ सनम से पाया
बदला बहुत मिला है, नाकरदा[7] बंदगी का।

होशो-हवास गुम हैं, बेचैन दिल है 'आफ़ताब'
आया ख़याल जबसे, उसकी सितमगरी का।

नक़्शे क़दम हैं शाहिद[8] हमराह वह था मेरे
ऐ काश, लौट आता, मालिक वह ज़िंदगी का।

---

1. जिस्म, 2. दुनियाँ की मशाल, 3. कल्पना का सौंदर्य, 4. प्यास अर्थात् इच्छा, 5. धर्मोपदेशक, 6. बेकार, व्यर्थ, 7. जो किया न गया हो, 8. गवाह

संपर्क : आन्ध्रा बैंक, 16, विधान सभा मार्ग, लखनऊ (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम' की ग़ज़लें

(1)

साहिल पे तमाशाई मझधार में कश्तियाँ हैं
जीने का सितम है मर जाने की खुशियाँ हैं

बातों में है बेरहमी आँखों में है मजबूरी
चेहरों पे मगर सबके खुशफहमिए दुनिया है

परवाजे मख्ययुल की ए दोस्त कोई हद है
काँधों पे जनाजा है, आकाश में परियाँ हैं

हर सिम्त से उमड़ा है सैलाब स्याही का
भटकी हुई किरणें हैं, सहमी रोशनियाँ हैं

पत्ता भी नहीं तन पर नंगी हैं समंदर-सी
फिर हम से कहीं सुंदर पेड़ों की टहनियाँ हैं

टपका न ज़रा भी खूँ, यूँ क़त्ल हुए सपने
'तस्नीम' बड़ी शातिर हालात की छुरियाँ हैं।

(2)

फिक्र की मारी हुई हर आँख नम
स्वार्थों की दौड़ में कोई नहीं कम

धज्जियाँ तहजीब की उड़ती रहें,
किसलिए नम खाईए, क्योंकर शरम

नदी तट पर अल्फ नंगे लेटिए
सभ्यता का पालकर मन में भ्रम

भक्त कोई भी कहीं सच्चा नहीं
काबा ओ काशी हो या दैरो हरम

रोंए-रोंए में घुसी अँग्रेजियत
कसम खाने के लिए अपना धरम

जा रहे 'तस्नीम' अंधी राह पर
रहनुमा ए मुल्क के बढ़ते कदम

(3)

घर था जहाँ कभी, सूअर का डेरा है
मरघट भी बिक गया न तेरा मेरा है

प्यास लबों पे, भूख पेट में, पाँव थके
रात अँधेरी, मीलों दूर सवेरा है

जंगल में मंगल है लेकिन शहरों की
गली-गली में चुप्पी और अँधेरा है

दिल और जुवां में फ़र्क़ इतना बढ़ा
बापू का हर बंदर बना सपेरा है

राहों में रोपे बबूल और पूछ रहे
घर मेरा काँटों से किसने घेरा है

मजबूरी के आसमान में उड़ने की
इच्छा यारों चिड़ियन रैन बसेरा है

(4)

यादों की बारात सजाने आए हैं
एक चिरागे ख़ून जलाने आए हैं

राज ए क़त्ल हो न जाए अफशां
नादानी औरों की बताने आए हैं

गली-गली में रोशनियाँ गुल कर वो
अंधियारे का खौफ़ दिखाने आए हैं

धक्के देने वाले हो कर शर्मिंदा
हर गिरने वाले को उठाने आए हैं

पैमाने इ़ज़्ज़त के नए बनाए और
औरों से तस्दीक कराने आए हैं

पत्ता-पत्ता करके गुलशन उजड़ गया
मुजरिम अब कब काँटे गिनवाने आए हैं

संपर्क : संपादक–कथा सागर (त्रैमासिक पत्रिका)
मोबाईल-8969974239/9576661480

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दीपक 'दानिश' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : दीपक दुबे
साहित्यिक : दीपक 'दानिश'
जन्मतिथि : 09.05.1962
जन्म स्थान : इलाहाबाद, (उ.प्र)
शिक्षा : एम.ए. (आधुनिक इतिहास), एम.बी.ए. (वित्त)
संप्रति : एन.टी.पी.सी. (लि.), कोरबा में व.प्र. (वित्त) के पद पर कार्यरत।
साहित्य-सेवा : हिंदी व उर्दू में काव्य-सृजन; रचनाएँ कई ख्यातिलब्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित। आकाशवाणी, ई.टी.वी. (उर्दू) तथा अखिल भारतीय व आंचलिक मंचों से हिंदी तथा उर्दू काव्य-पाठ।
संपर्क : सी-683, कावेरी बिहार, एन.टी.पी.सी. परिसर, जमनीपाली, जनपद-कोरबा-495450 (छ.ग.)
मोवाइल-09425283135

(1)

जब भी देकर गया दुआ कोई
याद आई मुझे बला कोई

दिल में जागी दुआओं की हसरत
आई पहलू में जब दवा कोई

अब कोई देखता नहीं मुड़कर
मुझसे हो जाए गर ख़ता कोई

इल्म होता है अब क़यामत का
तेज़ चलती है जब हवा कोई

एक नेमत है आज दुनिया में
हो जो आसान-सी क़ज़ा[1] कोई

जिसमें इसरार[2] हो ठहरने का
उसके जैसी नहीं सदा कोई

जबसे इनसान की हुई दुनिया
तब से बदली है क्या फ़िज़ा कोई

तब वो पहचान में नहीं आता
हो इबादत में जब झुका कोई

सुबह खिड़की पे गर न हों पंछी
काटता हूँ मैं फिर सज़ा कोई

शम्स, मांगों तो, रोज़ रखता है
दीद में एक नई ज़िया[3] कोई

उम्र एक बेहिसी[4] के जल्वों की
अब छुपाती नहीं हिना कोई

एक ज़माने की बात थी 'दानिश'
अब नहीं दूध का जला कोई

(2)

कहें कोई कि ये गुरबत का पैमाना नहीं होता
मेरे आँगन में गौरैयों का अब आना नहीं होता

नहीं मिलती अब उसकी रोशनी से आँच सेहत की
मगर सूरज को आहों से ये बतलाना नहीं होता

ज़मीं पर दाग़ ज़ख़्मों के, सज़ाओं की फ़िज़ा दिल में
उमसती शब में एहसासों का सो जाना नहीं होता

परिंदे जानते हैं सब मगर खुलकर नहीं कहते
किसी मौसम का अब क्यूँ वक़्त से आना नहीं होता

ख़बर बाक़ी है अब भी शहर में ऊँचे दरख़्तों की
मगर उस ओर उम्मीदों का अब जाना नहीं होता

न देते नाम गमलों के गुलों को हम बहारों का
किताबी दर्स गर बच्चों को समझाना नहीं होता

रवां है वक़्त अब हर ज़िंदगी का फ़र्ज़ में ऐसे
कि तूफ़ां हो कि ख़ामोशी, ठहर जाना नहीं होता

न होती गर ख़ुदी ख़ुदगर्ज़ियों की क़ैद में 'दानिश'
ख़फ़ा नदियों के सैलाबों का अफ़साना नहीं होता

1. मौत, 2. आग्रह, 3. आभा, रौशनी, 4. उदासीनता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh,Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. श्याम सखा 'श्याम' की ग़ज़लें

(1)

जानेमन इतनी तुम्हारी याद आती है कि बस
रूह मिलने के लिए फिर कसमसाती है कि बस

तेरी साँसें जब मिली थीं मेरी साँसों से सनम
वो घड़ी बिजली बनी सी कौंध जाती है कि बस

ये विरह का दुख सगा-सा हो गया है दोस्तो
शूल सी इसकी चुभन इतना सताती है कि बस

रास्तों की धूल ने मुझको सिखाए ये हुनर
आँधी तूफां बन के वो क्या-क्या उड़ाती है कि बस

देखता जब भी तुझे हूँ सुन मेरी तू गुलबदन
साँस थमती और धड़कन लड़खड़ाती है कि बस

कारसाजी उसकी का अब जिक्र भी मैं क्या करूँ
खुद ही देकर ज़ख़्म वो मरहम लगाती है कि बस

वक़्त की रफ्तार बेढब है सभी कहते यही
अपनों को भी यह पराए जो बनाती है कि बस

'श्याम' यूँ है बस गया मेरे जिहन में दोस्तो
नाम लेते ही जुबां मेरी लड़खड़ाती है कि बस

(2)

इतने नाजुक सवाल मत पूछो
क्यों हूँ बरबाद हाल मत पूछो

बात है गाँव की तबाही की
बाढ़ थी या अकाल मत पूछो

करो तदवीर अब निकलने की
किसने डाला था जाल मत पूछो

तेग का वार, गैर का था मगर
किसने छीनी थी ढाल मत पूछो

काम क्या आई घुप अँधेरों में
जुगनुओं की मशाल मत पूछो

वक़्त ने ज़िंदगी को बख़्शे हैं
कैसे-कैसे बबाल मत पूछो

तुम भला क्या शिकस्त दे पाते
थी ये अपनी की चाल मत पूछो

देखकर खुशगवार मौसम को
मन है कितना निहाल मत पूछो

तुम तो पहलू में थे मगर फिर भी
ग़म हुए क्यों बहाल मत पूछो

कैसे गुम हो गया शहर आकर
वो सितारों का थाल मत पूछो

'श्याम' से पूछ लो जमाने की
सिर्फ उसका ही हाल मत पूछो

**संपर्क : सम्पादक–मसि-काग
पुरी अस्पताल, सदर बाज़ार, करनाल–32001
मोबाइल–0941635901**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विपिन बिहारी 'सुमन' की ग़ज़लें

(1)

जब-जब भी महफ़िल में जाना होता है
मुझको अपना दर्द सुनाना होता है

लेकिन जब भी आ जाता हूँ सड़कों पर
यारो, मेरे साथ जमाना होता है

आम आदमी जैसा इक मैं भी तो हूँ
गीतों से यह भी समझाना होता है

सारी दुनिया ही घर होता है उसका
जिसका कहीं न ठौर-ठिकाना होता है

मेहनत तो करती मजदूर की मजबूरी
उसको तो बस भार उठाना होता है

मेरा तो उपयोग किया जाता है बस
जब मेहफिल में रंग जमाना होता है

काम तो करती जनता, नेता जी को तो
केवल अपना गाल बजाना होता है

और नाम क्या दे सकते इसको भाई
दीवाना ही तो दीवाना होता है

अफसाने में भी हो सकती है दोस्त ग़ज़ल
और ग़ज़ल में भी अफसाना होता है

(2)

सड़कों पर भी हो सकता है हर सपना साकार मियां
अपने पेट की खातिर लड़ने का है तू हकदार मियां

गाँधी बाबा के रस्ते पर चलकर ही पा लेंगे कुछ
ऐसी बातें कहने वाले भी तो हैं खूँखार मियां

रोब गांठना, जोरो जुल्म करना ही तो है काम इसका
लोहे की हो, चाँदी की है, है तो है तलवार मियां

एक तो रब की मार कहत की औ, दूजा बाज़ारों में
महँगाई से भी मारे है जनता को संसार मियां

सिर पर नंगा नाच करेगा, धूप के डंडे मारेगा
पोर-पोर दहकाएगा फिर मौसम थानेदार मियां

ना कोई है गोरा-काला, ना कोई ऊँचा-नीचा
सब को एक बनाए रखता रंगों का त्योहार मियां

देखभाल से ही रहता है दोस्त सुखी हर घर-परिवार
देख-रेख से ही फलते हैं गुल-गुलशन गुलजार मियां

नेता जी या उनके चमचों की खबरों के कारण ही
छपते-छपते बिना दाम के बंट जाता अखबार मियां

सुबह जागती थी जिनकी संगीत भरी आवाजों से
आज कहाँ हैं वो मधुवन में चिड़ियों की चहकार मियां

परिचय

नाम : विपिन बिहारी 'कपिल'
उपनाम : 'सुमन', 'नाज़ कश्मीरी'
जन्म तिथि : 3 अप्रैल, 1939
जन्म स्थान : मुजफ्फराबाद (पाकिस्तान अधिकृत जम्मू कश्मीर)
शिक्षा : स्नातक (बी.ए.)
प्रकाशन : 'शब्दों के साये' उर्दू ग़ज़ल संग्रह हिंदी में 'बीच युद्ध से' काव्य संग्रह-2003, 'सुमन रश्मियां' बालगीत संग्रह-2005, 'पेड़ हैं हम' ग़ज़ल संग्रह, गीत पहेलियाँ (बाल गीत), देश की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर रचनाएँ प्रकाशित। इनके अतिरिक्त कई संकलनों, स्मारिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित।
प्रसारण : दूरदर्शन, आकाशवाणी (लखनऊ, गोरखपुर, नजीबाबाद) ई.टी.वी., सहारा से भी रचनाओं का प्रसारण।
संप्रति : भारतीय स्टेट बैंक से सेवानिवृत्त अधिकारी, स्वतंत्र लेखन
दूरभाष : 0135-2787791, 09319011886
संपर्क : सुमन कुटी (गुलजार) 43/2, सुमनपुरी, सहस्रधारा मार्ग, अधोईवाला-2, देहरादून-248001 (उत्तराखंड)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रजी अहमद 'तन्हा' की ग़ज़लें

(1)

सच्ची ख़बर भी लिखता है अख़बार मत पढ़ो
हर सुबह-व-शाम डंसता है अख़बार मत पढ़ो

रस्मी बयान, रस्मी ख़बर, रस्मी इश्तेहार
हर सफहे पर निखरता है अख़बार मत पढ़ो

क़ातिल का ये मुरीद तो मक़तूल का वकील
दोनों से मेल रखता है अख़बार मत पढ़ो

ख़बरों के आगे-पीछे बहुत भागता नहीं
पहलू बचा के रखता है अख़बार मत पढ़ो

गिरवी पड़े हैं सारे क़लम उसकी मेज़ पर
ख़बरों में जो सुलगता है अख़बार मत पढ़ो

आज़ादी-ए-क़लम की दुहाई भी एक फ़रेब
'तन्हा' दुहाई देता है अख़बार मत पढ़ो

(2)

कोई साया नहीं है इस गली में
खुदारा लौट आओ इस गली में
यहाँ दम तोड़ देती है किरण भी
हवा क्यों आ गई है इस गली में
पता पूछेंगी बारुदी सुरंगें
बहुत अंदर न जाओ इस गली में
अजब माहौल है हर सू यहाँ पर
गले मिलती हैं गलियाँ इस गली में
अमावस के पुजारी बाँटते हैं
बताशे चाँदनी के इस गली में
दुआएँ सुनके फुलझड़ियों की 'तन्हा'
पटाख़े रो पड़े हैं इस गली में

संपर्क : संपादक–अबज़द (उर्दू त्रैमासिक)
इस्लामनगर, अररिया-854311 (बिहार)
फोन : 06453-2222749, मो.-9431280520

अमरकांत निगम की ग़ज़ल

कैसे बतलाऊँ तुम्हें मैं कि मोहब्बत क्या है
बद्दुआओं में गरीबों की, वो कुव्वत क्या है

ऐश का जरिया है बिगड़ैलों और पथभ्रष्टों का
बेसहारा किसी औरत की मुरव्वत क्या है

तंगहाली से, जलालत से जो गुजरती है
अमीरजादों के लिए, बेवा की अस्मत क्या है

तुम समझते हो मुझे चाहिए दौलत शोहरत
कैसे समझाएँ तुम्हें मेरी कि हसरत क्या है

हाथ में पत्थर भी औ, घर भी उनके शीशे के
कैसे बतलाऊँ उन्हें मुझको कि दहशत क्या है

वक्त से पहले सुधर जाएँ जो साहबजादे
रोशनी कोई नई, इसकी भी निसबत क्या है

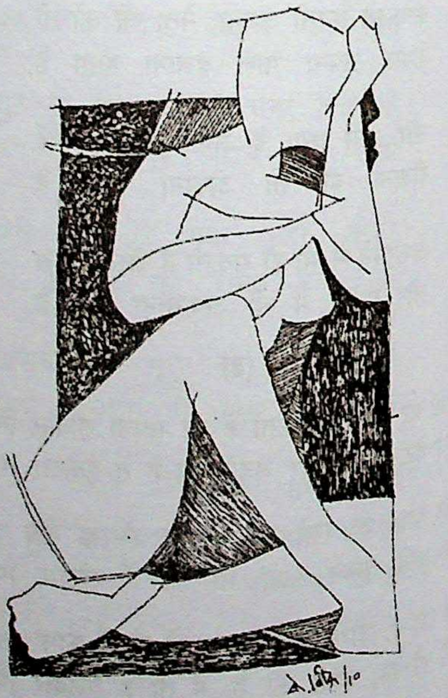

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सिद्धेश्वर काश्यप की ग़ज़लें

परिचय

नाम : सिद्धेश्वर काश्यप

प्रकाशन : राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में आलेख एवं रचनाओं का निरंतर प्रकाशन। राष्ट्रीय काव्य संकलनों—में रचनाएँ प्रकाशित। 'दलित क्रांति' (लघुनाटक), 'आदमखोर' (काव्य-संग्रह), 'रोशनी के हमक़दम' (ग़ज़ल संग्रह), हिंदी भाषा एवं पत्रकारिता पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित।

संपर्क : हिन्दी विभाग, भूपेन्द्र नारायण मंडल वि.वि., मधेपुरा (विहार)

(1)

जल रहे बाग देखिए साहब।
पल रहे नाग देखिए साहब।

सल्तनत आज एक खिलौना है
खेलते काग देखिए साहब।

आचरण बेचना करम उनका
लूट में फाग देखिए साहब।

आदमी ख़्वाब में मगर ज़िंदा
मुल्क पर दाग़ देखिए साहब।

आज इंक्लाब छेड़ता रह रह
बेसुरा राग देखिए साहब।

ये जमाना नया अभी लेकिन
आब में आग देखिए साहब।

(2)

महजबी बन गई ज़िंदगी।
अजनबी बन गई ज़िंदगी।

पर मिली तोहमत यार से
दर्द है बन गई ज़िंदगी।

किंतु सजदा नई धड़कनें
आशिकी बन गई ज़िंदगी।

है जमीं आज बन आसमां
बंदगी बन गई ज़िंदगी।

अंजुमन से नया ख़्वाब पा
रोशनी बन गई ज़िंदगी।

है फ़जल इश्क का हर क़दम
अब ग़ज़ल बन गई ज़िंदगी।

(3)

जालिमों पर नज़र रखना
मुल्क की हर ख़बर रखना।

बागवां हर क़दम रहबर
बाजुओं में असर रखना।

जाहिदों से अभी साज़िश
जंग यूँ मुंतजर रखना।

हर बहर अब उबलती है
जीस्त पर बेअसर रखना।

आबरू शान है माँ की
जान दे ताउमर रखना।

ये रहे शाद भी हर क़दम
बंदगी में सहर रखना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुरु मालव की ग़ज़लें

(1)

उनसे यूँ ज़ुदा होकर फिर क़रीब आने में
देर लगती है आखिर फासले मिटाने में

कितनी देर लगती है आसमां झुकाने में
लोग-बाग माहिर हैं उँगलियाँ उठाने में

किस तरह भला उसने ये जहाँ बना डाला
दम निकल गया मेरा अपना घर बनाने में

आजमाके तो देखूँ एक बार उसको भी
जो यकीन रखता हो सबको आजमाने में

तेरे सामने सारा रोम जल गया नीरो
तू लगा रहा केवल बांसुरी बजाने में

जीस्त के गिले-शिकवे दूर कीजिए वरना
उम्र वीत जाएगी रूठने-मनाने में।

मुश्किलों से घबरा कर राह में न रुक जाना
ये तो काम आती है हौसला बढ़ाने में

दिन सुहाने बचपन के रूठ जाएँगे इक दिन
इल्म ये कहाँ था 'पुरु' मुझको उस ज़माने में

(2)

हँसने-रोने के मुझे कितने बहाने आ गए
याद जब गुज़रे ज़मानों के फ़साने आ गए

तूने तो सौगंध ली थी भूल जाने की मुझे
फिर तेरे होंठों पे क्यूँ मेरे फ़साने आ गए

तीरगी ने कर दिया ओझल मेरा अपना वज़ूद
रोशनी में साए भी आँखें लड़ाने आ गए

परिचय

नाम : पुरु मालव
मूल नाम : पुरुषोत्तम प्रसाद ढोडरिया
शिक्षा : एम.ए., बी.एड.
संप्रति : शिक्षा विभाग राजस्थान में कार्यरत
पता : ग्राम व पोस्ट-दीगोद खालसा, तह.-छीपा बडौद, जिला-बारां-325221, (राजस्थान), **मो. :** 9928426490
E-mail : purumalav@gmail.com

कौन मुज़रिम है? खता क्या थी? ये सब जाने हैं पर
घूम-फिर के हम पे ही इल्ज़ाम लगाने आ गए

मेल-जोल अपना उन्हें अच्छा नहीं लगता ज़नाब
अक्सरन वो इसलिए हमको लड़ाने आ गए

नाज़ 'पुरु' करते थे कितना आपकी उल्फ़त पे हम
अच्छा है होश अपने जल्दी ही ठिकाने आ गए

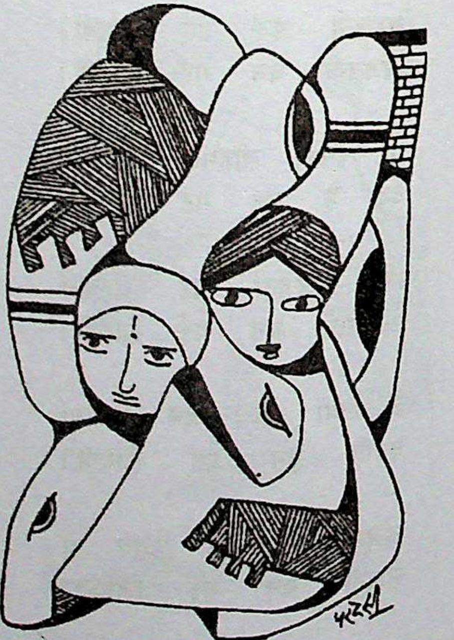

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पारसनाथ बुलचंदानी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : पारसनाथ बुलचँदानी
जन्म-तिथि : 04.02.1953
जन्म स्थान : गाजीपुर, (उ.प्र.)
शिक्षा : एम.ए.(राज. शास्त्र) एम.बी.ए. , डी.एल.एल, एल.एल.बी.
संप्रति : सेवानिवृत। बार के सदस्य।
रचनाएँ : दो कृति। दो ग़ज़ल संग्रह शीघ्र प्रकाशित।
संपर्क : 'गुरु प्रसाद', 1377/8, फरीदावाद,-121004 (हरि.)
मो. : 09211216883

(1)

कोई अपना बसा है आँखों में।
एक आलम जगा है आँखों में॥

सारा मंजर बदल गया यारों।
कैसा तूफ़ाँ उठा है आँखों में॥

अपने बच्चों से बाप ने पूछा।
थोड़ा पानी बचा है आँखों में॥

चँद आँसू नहीं जो रुक जाए।
एक दरिया बहा है आँखों में॥

ध्यान से पढ़ रहा हूँ मैं 'पारस'।
जाने क्या-क्या लिखा है आँखों में॥

(2)

दोस्त होने का हक़ अदा कीजे।
कम-से-कम आज तो वफ़ा कीजे॥

आज दुनिया उदास लगती है।
इसके हँसने की कुछ दुआ कीजे॥

हम बिना आपके भी जिंदा हैं।
आप गैरों के हैं, हुआ कीजे॥

चाँद को देखती है ये दुनिया।
आप जलते हैं तो जला कीजे॥

इक मसीहा ने क्यों कहा 'पारस'।
आप मेरी भी अब दवा कीजे॥

(3)

सर में अब वो जुनूं सवार नहीं।
हाथ में फूल है करार नहीं॥

मौत हूँ मैं जरूर आऊँगी।
क्या तुम्हें मेरा एतबार नहीं॥

फिर कहा है किसी मसीहा ने।
आदमी दर्द का मजार नहीं॥

मेरी आवाज़ में भी जादू है।
अब मैं टूटा हुआ सितार नहीं॥

चैन से जी रहा हूँ 'पारस' मैं।
अब किसी शय का इंतजार नहीं॥

(4)

लोग सब ख़्वाब देखते होंगे।
चाँद तारों को तोड़ते होंगे॥

जो जवाँ को हदों में रखते हैं।
वो ही सच बात बोलते होंगे॥

क्या ये दुनिया नज़र का धोखा है।
सोचने वाले सोचते होंगे॥

अक्स देखा तो डर गया कोई।
आईने कुछ तो बोलते होंगे॥

अब वो दीवाने कहाँ हैं 'पारस'।
सर जो पत्थर से फोड़ते होंगे॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिनेश 'तपन' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : दिनेश 'तपन'
पूरा नाम—दिनेश तिवारी
जन्मतिथि : 31.01.1940
जन्म स्थान : इटहरी, ईशीपुर, भागलपुर
शिक्षा : डी.पी. यादव, इन्टर स्तरीय विद्यालय घटवारी, मुँगेर से प्राचार्य पद से सेवानिवृत, **लेखन की विधा :** गीत, ग़ज़ल, लघुकथा, कहानी, उपन्यास आदि
प्रकाशित कृति : हम्में बबूल छी, की सखि साजन, हँसी बिहान की धूप, **सहयोगी प्रकाशन :** 'ग़ज़ल' : दुष्यंत के बाद' भाग-1, इक्कीसवीं सदी के ग़ज़लकार, आईना-ए-ग़ज़ल, बिहार के ग़ज़लकार आदि दर्जनाधिक पुस्तकों में रचनाएँ प्रकाशित
संपादन : अंगराग (अनियतकालीन), **संपर्क :** संपादक 'अंगराग', छोटा बजरंगवली स्थान, भीखनपुर, गुमटी नं.-2, भागलपुर-812001
मो. : 09431090390

(1)

हिम्मत और जोश में जरा उबाल चाहिए।
तारीकियों में इक अदद मशाल चाहिए॥
कॉलर पकड़ के अब सिखाइए उन्हें सबक।
हर काम के एवज में जिन्हें माल चाहिए॥
क्यों आज लोकतंत्र में इतनी हे भ्रष्टता।
हर एक की जुबां पे यह सवाल चाहिए॥
बैठे हैं कुर्सियों पे सभी लुटने वाले।
इसके लिए इक जोर का भूचाल चाहिए॥
पानी निकल गया है सर से चुप न बैठिए।
अब वक़्त है कि हर कहीं बवाल चाहिए॥
केवल भरोसे पर यकीं करना फिजूल है।
वाजिव हैं माँगें तो हमें तत्काल चाहिए॥
किसने कहा सूराख अर्श में नहीं होता।
पत्थर को जोर की 'तपन' उछाल चाहिए॥

(2)

कहीं भारत की मिट्टी में मुझे यारो दफन रखना
शहीदी इक तिरंगे का मेरे ऊपर कफन रखना
रहेंगे याद में हम तो हवाओं में फिजाओं में
हिफाजत से मगर महफूज तुम अपना चमन रखना
उठेंगे जुल्म के शोले फिजां दहशतज़दा होगी
लगेगी आग हर सू तब बुझाने का यतन रखना
अजी इस मुल्क के जांबाज तुम सब नौजवानों का
यही इक फर्ज़ बनता है सलामत यह वतन रखना
जहाँ लाजिम हों पर्देदारियाँ भारत की मिट्टी को
बेहुरमत हो रही अस्मत पे पर्दा दफ़्अतन रखना
गुजरती हैं जहाँ सदियाँ तो तहजीबें बदलती हैं
बुलंदी पर रहे भारत यही जज्बा 'तपन' रखना

(3)

यादों में दिलरूबा की मैं याद ढूँढ़ता हूँ।
उल्फत की बेवफ़ा में बुनियाद ढूँढ़ता हूँ॥
मुझको भुला के जिसने, खुशियाँ बटोर ली हैं।
उसके जहन में बैठा, जल्लाद ढूँढ़ता हूँ॥
रूठे को मना लेना, आसां तो नहीं होता।
कब तक वो मानते हैं, मीयाद ढूँढ़ता हूँ॥
आता है कौन देखें, दिल का नया शिकारी।
शिद्दत से अब तो कोई, सैय्याद ढूँढ़ता हूँ॥
फिरता है 'तपन' कैसे अपनी जुबां से कोई।
लोगों में इसी शै की रूदाद ढूँढता हूँ॥

(4)

तिश्नगी जब थी बढ़ी हालात का सौदा हुआ
एक दोशीजा से पहली रात का सौदा हुआ
नोचकर पाँखें ख़ला में जब उन्होंने फेंक दीं
तब सितमगर से वहाँ हर बात का सौदा हुआ
आजमाने के लिए फूंका नशेमन आप ही
ज़िंदगी से फिर तो मुश्किलात का सौदा हुआ
हैं सियासत में अगरचे जुल्म की ही खेतियाँ
एक तन्हा के लिए बारात का सौदा हुआ
थी तपिश इतनी कि धरती औ गगन जलते रहे
बेमुरौव्वत मौसमी बरसात का सौदा हुआ
वक्त की वो थी नज़ाकत अब समझ लीजे 'तपन'
एक डोली के लिए बारात का सौदा हुआ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उदय कुमार 'सुमन' की ग़ज़लें

(1)

कोई तो बताए ये सब क्या हो रहा है,
चोरों की चौकसी में शहर सो रहा है।

तन्हाई का मंजर है, पैकर है गुनाहों का,
हर सिम्त नपुंसक नारों का शोर हो रहा है।

सड़क पर हजूम है ख़ूनी शरारों का, पर,
एक फितना, खुर्शीदे आलम हो रहा है।

सदाकत पर क्यों ख़ूनी दहशत का साया है,
बेखता वे गुनाहों का सर कलम हो रहा है।

उल्लुओं के घरों में धूप का उजाला है,
चाँद भी चाँदनी से बेवफ़ा हो रहा है।

क्यों सत्यानाशी कौओं की सरदारी में,
'रुचिका'-सी कन्याओं का क़त्ल हो रहा है।

(2)

अंधों को भी ज़ख़्म दिखाना पड़ता है कभी-कभी
बहरों को भी गीत सुनाना पड़ता है कभी-कभी।

दुश्वारियाँ जब बेहद बढ़ जाती हैं इंसान की
तो जिंदा लाश भी बन जाना पड़ता है कभी-कभी।

छलियों के शब्द जाल में फँसकर मोरध्वज को
खुद बेटा काटकर खिलाना पड़ता है कभी-कभी।

प्रतिबद्ध होकर नरपुंगव भीष्म गंगा पुत्र की तरह
शरशैय्या पर भी सो जाना पड़ता है कभी-कभी।

बिगड़ते रिश्तों के तौर-तरीकों से आहत होकर
अपनों में अजनबी बन जाना पड़ता है कभी-कभी।

भटके उन्मादित लोगों के हाथों ईसा की तरह
निर्दोष को सूली पर चढ़ जाना पड़ता है कभी-कभी।

'सुमन' सती साध्वी नारी को भी लाँछित होकर
अहिल्या-सी शिला बन जाना पड़ता है कभी-कभी।

(3)

अपने फन को जरा ज्यूँ भी आजमाकर देखिए
खंज़र की जगह हाथ में कलम तो उठाकर देखिए।

बेशक तुम्हें लूटा है अपनों ने शकुनि चालों से
हो सके तो कभी दुश्मन को अपना बनाकर देखिए।

बँट गया ईमान रिश्ते-नाते बँट गए, पर मन में
उगी नफ़रत की दीवार को धक्का लगाकर देखिए।

वतन की मिट्टी हो गई है लाल जिन रक्तिम हवाओं से
अब उन हवाओं पर वर्के इन्कलाब तो गिराकर देखिए।

वतन की परजीवी लताओं को आतिश लगाकर
सितम पसंदों को जेल की चक्की पिसाकर देखिए।

(4)

एक चिरन्तन-सी प्यास का नाम है ज़िंदगी
किरदार की खूबसूरत किताब है ज़िंदगी।

खूब मौज मस्ती से भरी मादक शराब का
एक नूरानी सा छलकता जाम है ज़िंदगी।

किसी स्कूली बच्चे को धरोहर में मिली
इल्मों हुनर की संभ्रांत किताब है ज़िंदगी।

काँच की काया पर टिका प्यारो-वफ़ा का
एक पारदर्शी खुला आसमान है ज़िंदगी।

माँ-बाप, बहिन-भाई के पावन रिश्तों की
बेहद खूबसूरत ग़ज़ल का नाम है ज़िंदगी।

बेबस, कर्जदार सी मौत की मुट्ठी में दबी
किसी अल्हड़ दोशीजा का नाम है ज़िंदगी।

**संपर्क : सुमन सेवा सदन, पी.ओ.-राय सिंह नगर,
जिला-श्रीगंगानगर (राज.), मो.-94136-17838**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजीव राय की ग़ज़लें

(1)

उसने कुछ तो खोया होगा
जब दुनिया को पाया होगा

वो हरदम हँसता रहता है
कितना दर्द छुपाया होगा

जान हमारी लेकर शायद
ज़ालिम भी पछताया होगा

यूँ ही आग नहीं लगती है
चिंगारी वो लाया होगा

सूरज-सा बनने से पहले
हर इल्ज़ाम निभाया होगा

दीपक ने बुझने से पहले
कितना शोर मचाया होगा

(2) क़ता

वो मेरा हाल सरे आम पूछता है मगर
मेरी मुश्किल में मेरे पास क्यों नहीं होता

वो मेरे ज़ख़्म देखता है चारागर की तरह
मेरी हालत पे वो उदास क्यों नहीं होता

(3)

जीवन की इस डगर में हर हाल में चलना है
हर मोड़ के मुताबिक ख़ुद को भी बदलना है

ये बात दिले नादाँ क्योंकर न समझ पाया
दौलत की इजाज़त से हर शाख़ को हिलना है

इतरा रहे हैं तारे छोटा-सा चाँद लेकर
आएगा अभी सूरज बेकार मचलना है

दरिया बताए कैसे साहिल के पुजारी को
जब तक मिले सागर हर हाल में बहना है

परिचय

नाम : राजीव राय
जन्म तिथि : 07 जनवरी, 1956 (लखनऊ)
शिक्षा : स्नातक (लखनऊ विश्वविद्यालय)
कृतियाँ : 1. 'सफल कैसे हों' (उ.प्र. हिंदी संस्थान द्वारा पुरस्कृत), 2. 'जज़्बात' (ग़ज़ल संग्रह) उ.प्र. राज्य कर्मचारी संस्थान द्वारा पुरस्कृत
अन्य : आडियो कैसेट 'तूने अब तक समय गंवाया' टी सीरीज़ (स्वरचित भजन) 'ग़ज़ल दुष्यंत के बाद' भाग-3 (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली) में ग़ज़लें संकलित। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन एवं आकाशवाणी लखनऊ से काव्य पाठ।
संप्रति : निजी व्यवसाय
संपर्क : 17/263, इंदिरा नगर, लखनऊ-226016 (उ.प्र.)
मो. : 09415066371

क्यों हार रहे हो तुम जीवन की उलझनों से
कहते हैं जिसे जीवन, गिरना है, सँभलना है

रहता नहीं है बस में अपना ही दिल हमारा
दुनिया को बताते हैं क्या-क्या उसे करना है

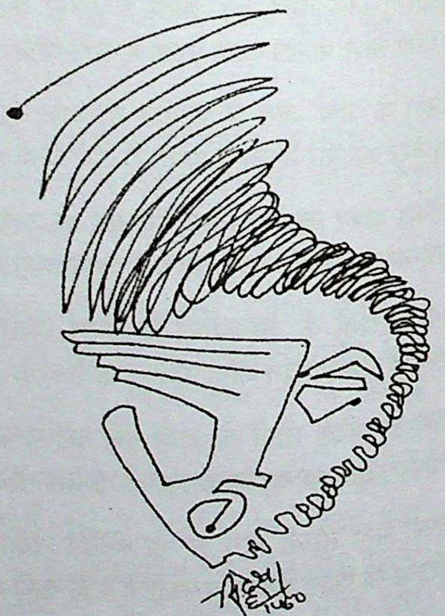

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लें

परिचय

नाम : वशिष्ठ अनूप
जन्म तिथि : 1 जनवरी, 1962
जन्म स्थान : सहड़ौली (दुबेपुरा) गाँव में
शिक्षा : पी-एच.डी., डी.लिट्।
कृतियाँ : 'स्वप्न के बाद' (1984), 'बंजारे नयन', 'रोशनी ख़तरे में है', 'रौशनी की कोपलें' ग़ज़ल-संग्रह। हिंदी की जनवादी कविता : जगदीश गुप्त का काव्य-संसार, हिंदी ग़ज़ल का स्वरूप और महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर, हिंदी ग़ज़ल की प्रवृतियाँ, हिंदी गीत का विकास और प्रमुख गीतकार, गीत का आकाश, हिंदी साहित्य का अभिनव इतिहास, हिंदी भाषा-साहित्य एवं पत्रकारिता का इतिहास, 'अँधेरे में' : एक पुनर्विचार, 'असाध्यवीणा' की साधना सहित 20 पुस्तकों का लेखन व संपादन।
प्रकाशन एवं प्रसारण : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में गीत ग़ज़ल, कविता, कहानी और सीमक्षाएँ प्रकाशित कुछ ग़ज़लें और गीत फिल्मों, टेलीफिल्मों और धारावाहिकों में। कुछ कविताओं का कई भाषाओं में अनवुाद।
संपर्क : प्रोफेसर, हिंदी विभाग, काशी हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी-221005, **मो. :** 09415895812
ई-मेल : vanoopbhu09@gmail.com

(1)

अँधेरा था घटना लेकिन कई दीपक भी जल निकले
लड़े जो ब्यूह में घुसकर वही होकर सफल निकले

तपाया धूप ने जितना चमक चेहरे की बढ़ आई
चुनौती से जो टकराए वही होकर सबल निकले

गए भीतर तो वे मासूम थे बकरी के बच्चे-से
मगर कुछ देर में वे शेर-सा चेहरा बदल निकले

सभी कहते थे वह प्यारा सरोवर सूख जाएगा
मगर देखा कि फिर उसमें कई सुन्दर कमल निकले

बहुत मायूस सन्नाटा था इक चिड़िया तभी बोली
मेरे युग के सवालों का कहीं इससे ही हल निकले

मुझे लगता है शायद इस फ़ज़ा में ही कमी है कुछ
नहीं तो कैसे मुमकिन है कि जो निकले सजल निकले

इसी उम्मीद में नज़रें टिकी हैं उसकी राहों पर
किसी दिन फिर इसी रस्ते मेरी जान ग़ज़लें निकले

(2)

क़सीदे हुक्मराँ की शान में पढ़ना नहीं संभव
नगीने ताज़ में अल्फाज के जड़ना नहीं संभव

कला की साँस घुट जाती है महलों की नुमाइश में
बिना खेतों व जंगल से मिले बढ़ना नहीं संभव

पढ़ो कि किस तरह गतिशील रथ इतिहास का होता
कहानी लम्पटों के इश्क की पढ़ना नहीं संभव

भुलाकर भेद मजलूमों को अपने साथ करना है
बिना एका के तो दुश्मन से अब लड़ना नहीं संभव

ये रिश्ते स्वार्थ के ज्यादा टिकाऊ हो नहीं सकते
मलाई पाउडर के दूध में पड़ना नहीं संभव

(3)

हमारे दर पे इक घायल कबूतर आके बैठा है
ख़यालों में वही मनहूस मंज़र आके बैठा है

ये पंडित कहते साढ़े सात वर्षों की समस्या है
जनम से ही हमारे घर शनीचर आके बैठा है

ग़रीबों के मुकद्दर किस कलम से कौन लिखता है
खटें दिन-रात पर घर में दलिद्दर आके बैठा है

हमेशा लेने वाले की जगह नीची ही होती है
नदी के पाँव के नीचे समंदर आके बैठा है

ये डाकू-चोर अक्सर रात में ही लूटते हैं पर
यहाँ तो दिन में ही थाने का अफसर आके बैठा है

जिन्होंने हौसले के साथ बढकर दस्तकें दी हैं
उन्हीं के द्वार पर अक्सर मुकद्दर आके बैठा है

मुझे वह हर शहर हर गाँव में दिख जाता है अक्सर
कोई चुपचाप मेरे दिल के भीतर आके बैठा है

❑

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

मीर की ग़ज़लें

❑ आफ़ताब अहमद ख़ान 'रवी'

'मुझको शाइर न कहो मीर, कि साहब मैंने
दर्द ग़म कितने किए जमा, तो दीवान किया।'

उर्दू शाइरी के वट वृक्ष मीर। दर्द भरी ग़ज़लों के अज़ीम, उस्ताद शाइर मीर, जिनका नाम उनकी मृत्यु के दो सौ साल बाद भी पूरी आबो ताब के साथ जिंदा है। मीर की शाइरी उर्दू साहित्य की नींव और बुनियाद है। उसमें पुरानेपन और नएपन का संगम है। पुराने भी हैं और नए भी। उनकी ग़ज़लों में आज भी वही ताज़गी है जो पहले थी। मीर की शाइरी में हुस्न की कशिश है, इश्क़ और मुहब्बत की तपिश है। उसमें कर्ब, पीड़ा, इज़्तिराब की ख़लिश है। कहीं तो उनके अशआर मयकशी, ज़िंदगी, रंगीनी, दिलकशी में डूबे हुए हैं और कहीं वियोग, जुनून और ग़म के आँसुओं में नहाये हुए हैं–

आँखों में जी है मेरा, इधर यार देखना
आशिक़ का अपने आख़री दीदार देखना।
सय्याद दिल है दाग़े जुदाई से रश्के बाग़
तुझको भी हो नसीब ये गुलज़ार देखना।

मीर की ज़िंदगी ग़म और परेशानियों का अफ़साना है जो हक़ीक़त बनकर उनके जीवन की खुशियों को तार-तार करता रहा–

शाम से कुछ बुझा-सा रहता हूँ
दिल हुआ है चराग़ मुफ़लिस का।
ताब किसको जो हाले मीर सुने
हाल कुछ और ही है मजलिस का।

आइए सुनें मीर के व्यक्तित्व और कृतित्व का थोड़ा सा हाल

मीर का पूरा नाम मो. तक़ी था। शायरी के लिए आपने अपना तख़ल्लुस (उपनाम) मीर रखा। आपका जन्म 1723 ई. के लगभग आगरे में हुआ था। मीर के पिता का नाम मोहम्मद अली था। कहा जाता है कि मो. अली साहब सूफ़ी दर्शन से बड़े प्रभावित थे तथा बहुत नेक और अच्छे व्यक्ति थे। जब मीर केवल ग्यारह साल के ही थे कि उनके वालिद का देहांत हो गया। मीर के लिए यह घटना बहुत दुखदायी थी। यहीं से आपका दुर्भाग्य प्रारंभ हुआ जो जीवन पर्यंत आपके पीछे परछाहीं बनकर दौड़ता रहा। छोटी उम्र में माता-पिता की मृत्यु किसी के लिए भी असहनीय होती है। मीर दुनिया से विरक्त रहने लगे। फिर भी जीने और पेट भरने के लिए रोज़ी तलाशते हुए आप दिल्ली आए। दिल्ली शहर उर्दू भाषा का प्रसिद्ध केन्द्र रहा है। यहाँ पर राज दरबार, अमीर तथा संभ्रांत परिवार के प्रतिष्ठित, शिक्षित लोग शे'रों-सुखन के क़द्रदान तथा शौक़ीन थे। मुशाइरों की महफिलें आरास्ता होती थीं, शम्मा रौशन होती थी, शाइर अपना कलाम बड़े फ़ख़्र और इज़्ज़त से सुनाते थे। श्रोता अथवा सामअीन सभी उनकी ग़ज़लों से रू-ब-रू होते थे। मीर साहब दिल्ली आए और फ़ारसी के एक प्रसिद्ध शाइर सिराजुद्दीन अली खाँ 'आरज़ू' से मिले। आरज़ू ने मीर को शाइरी के गुर सिखाए। चूँकि मीर को शाइरी से बेहद लगाव था, इसलिए उन्होंने जल्द ही ग़ज़ल कहने की तरकीबें ज़हन में उतार लीं। मीर के एक सौतेले भाई थे, जो उन्हें हमेशा परेशान करते रहते थे। दिल्ली में ही अमीर समसामुद्दौला ने मीर का साथ दिया और उन्हें तीस रुपया महीने का वज़ीफ़ा मन्ज़ूर किया। लेकिन दुर्भाग्य ने मीर का पीछा न छोड़ा। अमीर समसामुद्दौला, नादिर शाह के साथ जंग में मारे गए। मीर का वज़ीफ़ा भी बंद हो गया।

नादिशाह की लूटमार और क़त्ल ग़ारत से दिल्ली की बादशाहत और अमीरी बरबाद हो गई। दिल्ली लुट गई। जनता पामाल हो गई। ख़ून से धरती नहाती रही। मीर आगरा चले गए। कुछ समय बाद वह फिर दिल्ली आए। दिल्ली वीरान थी। अहमदशाह अब्दाली 20 वर्ष तक दिल्ली को लूटता रहा, रौंदता रहा। उसके आतंक से लोगों का जीना मुश्किल था। चारों तरफ अशांति, आंतरिक कलह, भुखमरी, षड्यंत्र तथा नफ़रत का साम्राज्य था। एक बात और जो क़ाबिले ज़िक्र

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है, वह यह कि मीर साहब खुद तलवार लेकर जंगों में शामिल होते थे। लड़ते थे। लेकिन हार के बावजूद हिम्मत नहीं हारते थे। वह दुबले-पतले होते हुए भी अत्यंत साहसी तथा वीर थे। मीर की ग़ज़लों में भी तलवार का वर्णन बहुत कसरत से आया है। दूसरी बात यह कि मीर शिया मुस्लिम संप्रदाय से संबंध रखते थे। उनकी शाइरी में शिया दृष्टिकोण की पुष्टि होती है–

सुनते हैं लैला के ख़ेमे को सियाह
उसमें मजनूँ का मगर मातम रहा

उक्त शे'र में ख़ेमा, सियाह, मातम शब्द शिया मान्यताओं से संबंधित हैं। इसी प्रकार के सैकड़ों शे'र मीर की ग़ज़लों में दिखाई पड़ते हैं। मीर की आर्थिक स्थिति हमेशा चिंताजनक रही। रोटी के लाले थे। कभी किसी अमीर की नौकरी करते, कभी कोई राजा या नवाब उनकी मदद करता। उनकी मदद करने वालों में अमीर रिआयत खाँ, नवाब बहादुर जावेद खाँ, दीवान महानारायण, राजा नागरमल, वकील राजा जुगल किशोर आदि प्रमुख हैं। अब्दाली की लूट-खसोट तथा अत्याचार और लड़ाइयों के कारण राजा-अमीर या तो मारे गए या दर-दर की ठोकरें खाने पर मजबूर हो गए। अशांति, बर्बरता, भुखमरी, मुफ़लिसी के आलम में मीर वीरान दिल्ली को छोड़कर, अलविदा कहकर लखनऊ चले आए।

लखनऊ, जिसे अवध भी कहा जाता है, पर नवाब आसिफ़ुददौला की हुकूमत थी। अँग्रेजों का आधिपत्य होने के बावजूद लखनऊ में साहित्य, अदब, कला एवं शाइरी की गोमती (नदी) बह रही थी। गंगो-जमन तहज़ीब परवान चढ़ रही थी। मुशाइरे अपने उरूज पर थे। 'मीर' भी नवाब आसिफ़ुदौला की छत्रछाया में ग़ज़लें तथा मसनवी लिखने लगे। नवाब जहाँ सुखन के परस्तार थे वहीं बड़े दानी, दाता व मददगार भी थे। मीर को लखनऊ में सुकून मिला। सन् 1810 में यहीं पर यह ग़म गिरफ्तार शाइर हमेशा के लिए सो गया। मीर के नाम पर 'मीर तक़ी मीर मार्ग' को बतलाता हुआ शिला लेख आज भी मौजूद है लखनऊ में–

मर चले बेक़रार होकर हम
अब तो तेरे तईं क़रार हुआ।
वह जो ख़ंजर बकफ़ नज़र आया
मीर सौ जान से निसार हुआ।

मीर के व्यक्तित्व के बारे में भी बहुत तरह की बातें मशहूर हैं। वह बहुत कम बोलते थे। उनका स्वभाव अत्यंत संकोची तथा अंतर्मुखी था। ज़्यादातर घर में ही रहते और लोगों से बहुत कम मेल जोल रखते। मीर बड़े चरित्रवान तथा धार्मिक प्रवृत्ति के इनसान थे। ऐसा कहा जाता है कि वह बहुत खुद्दार, तथा तुनकमिज़ाज थे। ज़रा-सी बात पर नाराज़ हो जाते थे। वह अपनी ग़म की दुनिया में मस्त और खुश थे। उन्हें अपनी खुद्दारी पर नाज़ था। वह दया के पात्र बनना पसंद नहीं करते थे। यही वजह थी कि वह नवाबों आदि के द्वारा दी जाने वाली सहायता को भी अक्सर अस्वीकार कर देते थे।

उसी का दम भरा करते रहेंगे
बदन में अपने जब तक नीम जाँ है।

ग़ज़लें-इश्क, मोहब्बत, वफ़ा जफ़ा, ग़म और खुशी का दर्पन होती हैं। इसमें व्यक्ति की शख़्सियत का कुछ अंश मौजूद रहता है। शाइर इस आइने को तामीर करता है। पाठक को इसके अंदर से अपनी सूरत झाँकती नज़र आनी चाहिए। श्रोता को अपने दिल की आवाज मूर्त रूप में दिखाई पड़नी चाहिए। मीर ने भी प्रेम किया, एक तरफा, आधा अधूरा, डरा-सहमा, खंडित। लेकिन वह अपने प्रिये को हमेशा अपने ख़्वाबों में बसाए रखते थे। उसे अपनी ज़िंदगी का एक हिस्सा समझते थे। दुखी रहते थे मीर–

जिगर के ज़ख़्म शायद हैं नमक बंद
मज़ा कुछ आसुओं का है सलोना।
वसीयत मीर ने मुझको यही की
कि सब होना मगर आशिक़ न होना।

× × ×

या रब उस महबूब को फिर, इक नज़र देखेंगे हम
अपनी आँखों से डसे याँ जलवागर देखेंगे हम।
राह तकते तकते अपनी आँख भी पथरा गई
ये न जाना था कि सख़्ती इस क़दर देखेंगे हम।

× × ×

जान के साथ ही आख़िर, मर्ज़े इश्क़ गया
जी भला टुक न हुआ हमने दवा क्या-क्या की।

यह सब था मीर की ज़िंदगी और उसको गहराई तक प्रभावित करने वाले हादसों का संक्षिप्त वर्णन। अब सुनिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बात उनके कृतित्व की, ग़ज़लों की। मीर ग़ज़लों के शाइर थे। उनकी ग़ज़लों के छः संग्रह हैं जिन्हें 'दीवाने मीर' कहा जाता है। मीर ग़म, दुख, पीड़ा के अनुवादक थे, तर्जुमान थे। वह सबसे अलग थे। उनकी शायरी मे न तो 'ग़ालिब' की विशदता, क्लिष्टता थी, न 'जिगर' की मस्ती थी और न 'इक़बाल' का फलसफ़ा था। उसमें वास्तविकता थी, एहसास थे, रंज था, कर्ब था और सरलता थी। उनके कलाम में आकर्षण था, दिलकशी थी, भावुकता थी, नज़ाकत थी, नफ़ासत थी, लताफ़त थी, असर था, तासीर थी, सुंदरता थी, ताज़गी थी, टीस थी और उच्च आदर्श ख़याल थे। मीर की ग़ज़लों में शृंगार के दोनों पक्षों, संयोग और वियोग का वर्णन बड़ी विविधता से मिलता है–

किस दिल से तेरा तीरे निगह पार न गुज़रा
किस जान को ये मर्ग का पैग़ाम न आया।
नै ख़ून हो आँखों से बहा टुक न हुआ दाग़
अपना तो ये दिल मीर किसू काम न आया।

हुस्न और इश्क़ के बारे में मीर के विचार बिलकुल स्पष्ट थे। वह चाँद और फूलों के मानिन्द खूबसूरत है और सूरज की तरह दुनिया को रौशन कर ज़िंदगी देने वाला भी है। वह जफ़ागर है और कयामत बरपा करने वाला भी है। दोस्त भी है दुश्मन जाँ भी–

गुल हो, महताब हो, आइना हो, खुरशीद हो मीर
अपना महबूब वही है जो, अदा रखता हो।

× × ×

ऐ दोस्त कोई मुझसा, रुसबा न हुआ होगा
दुश्मन के भी दुश्मन पर ऐसा न हुआ होगा।

× × ×

मह की तुझसे तवक़्क़ो थी, सितमगर निकला
मोम समझे थे तेरे दिल को सो पत्थर निकला।
जीते जी आह तेरे कूचे से कोई न फिरा
जो सितम दीदा रहा जाके सो मर कर निकला।

× × ×

जिगर ख़ूँ किया चश्मे नम कर गया
गया दिल सो हम पर सितम कर गया।
न इक बार वादा वफ़ा कर सका
बहुत बार क़ौलो क़सम कर गया।

पूर्व में मैंने अपने कई आलेखों में इस बात को स्पष्ट किया है कि ग़ज़लों में शराब, साक़ी, मयख़ाना, मयनोशी, शीशा जाम, सुरूर आदि का वर्णन हमेशा से किया जाता है। प्रिय की आँखों को मदिरा के मानिंद मदिर बताकर शाइर ग़ज़लों की रूमानियत में वृद्धि करता है। यह महज़ एक परंपरा है। इस प्रकार के वर्णन को बुरा नहीं समझा जाता। मैंने पूरी उम्र में कभी शराब छुई नहीं बावजूद इसके मैं अक्सर अपनी ग़ज़लों में शराब/मय पर एक-आध शे'र ज़रूर लिखता हूँ ताकि उसमें रूमानियत तथा दिलकशी आ सके। मीर साहब सूफ़ी व्यक्ति थे। उनकी पाकदामनी पर कभी कोई उँगली नहीं उठा सका। वह शराब से कोसों दूर रहे। फिर भी उनकी ग़जलों में मदिरा पान का ज़िक्र आता रहा है। शराब यानी मुहब्बत का नशा, शराब यानी खुदा को पाने की धुन–

देर तक काबे में थे शब बे होश
पी गए मीर जी शराब बहुत।

× × ×

'मीर' को है क्या जवानी में सलाह
तब तो सारे मयकदे का पीर है।

'मीर' अपनी हक़ीकी ज़िंदगी में एक सच्चे आशिक़ और प्रेमी थे। वह इश्क़ को जीवन का अटूट अंग मानते थे। इश्क़ उन्हें जीने का रास्ता दिखलाता था। वह प्रीत की रीति और गहराई को समझते थे। वह इश्क़ के विषाद को जानते थे। कभी वह खुश होते थे, कभी पछताते थे, कभी दूसरों को ख़बरदार करते थे–

दिल गया मुफ़्त और दुख पाया
होके आशिक़ बहुत मैं पछताया।

× × ×

जिस आँख से दिया था उसने फरेब दिल को
उस आँख को जो देखा अब आशना नहीं है।

× × ×

चश्म रहती है पुर आब बहुत
दिल को मेरे है इज़तिराब बहुत।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देखिए रफ़्ता-रफ़्ता क्या होवे
ताबे दिल कम है पेचो ताब बहुत।

× × ×

बात कहते जी का जाना हो गया
मरना आशिक़ का बहाना हो गया।
माह उसको कहके सारे शहर में
मुझको मुश्किल मुँह दिखाना हो गया।

× × ×

हमें फ़रहाद मजनूँ जिस से चाहो
तुम आकर पूछ लो शहरे वफ़ा से

× × ×

सरापा ही अदाओ नाज़ है यार
क़यामत आती है उसकी अदा में

मीर का दिल अपनी मुहब्बत की ज्यादती को बरदाश्त नहीं कर सका। ऐसा कहा जाता है कि वह इसी वजह से मजनून हो गए थे। उन्हें न अपनी फ़िक्र थी और न अपनी दीवानगी की ख़बर :

फिरता है मीर, तू जो, फाड़े हुए गरीबाँ
किस-किस सितम ज़दे ने दामाने यार खींचा

× × ×

घर में जी लगता नहीं उस बिन तो हम होकर उदास
दूर जाते हैं निकल हिजराँ से घबराए हुए।

× × ×

दिल मुझे उस गली में ले जाकर
और भी ख़ाक में मिला आया
अब तो जाते हैं बुतकदे से मीर
फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया

× × ×

लगा न दिल को कहीं, क्या सुना नहीं तूने
जो कुछ के मीर का इस आशक़ी ने हाल किया।

आपकी ग़ज़लों पर गहराई से नज़र डालने पर मीर का ग़म और दर्द आसानी से समझ में आ जाता है। यही वजह है कि मीर को ग़मों का शाइर कहते हैं। उनकी ग़ज़लों को उनकी ज़िंदगी का मरसिया कहा जाता है। मरसिया गम की कथा होती है जो ख़ासकर हजरत इमाम हुसैन तथा उनके परिवार की शहादत पर लिखे जाते हैं। मीर के अधिकांश कलाम में दुख की अधिकता है। अन्य शाइरों की तरह मीर ने ज़िंदगी तथा जीवन पर भी कुछ बहुत लिखा है। वैसे तो शाइर मुहब्बत और ज़िंदगी में कोई ख़ास फर्क़ नहीं करता। ज़िंदगी में अगर दुख हैं तो भी वह हँसकर प्रिय का तोहफ़ा समझ कर क़ुबूल करता है। ज़िंदगी सब की है और किसी की भी नहीं–

जो सर को गुरूर आज है याँ ताज वरी का
कल उसपे यही शोर है फिर नौहा गरी का।
टुक मीर जिगर, सोख़्ता की जल्द ख़बर ले
क्या यार भरोसा है चराग़े सहरी का।

मीर की भाषा पुरानी उर्दू है जिसमें आगरा, दिल्ली और लखनऊ का रंग मिलता है। अब उनकी पुरानी तर्ज़ की भाषा के बहुत से शब्द या तो बोले नहीं जाते या उनका सिर्फ़ किसी ख़ास क्षेत्र में ही प्रयोग होता है। इस आलेख में ऊपर दिए गए कुछ अशआर में मीर की भाषा की प्राचीनता के दर्शन होते हैं। इस सब के बावजूद मीर की जबान में मिठास तथा सरलता मौजूद है जो भावनाओं को आसानी से दूसरों तक पहुँचाने में पूरी तरह सक्षम है। मीर–'सौदा', दर्द तथा मिर्ज़ा जान जानाँ के सम सामयिक थे। उनकी शाइरी को सभी इज्ज़त देते थे। मीर अपनी मिसाल ख़ुद थे। वह फरमाते हैं–

बुलबुल ग़ज़ल सराई आगे हमारे मत कर
सब हमसे सीखते हैं अंदाज़ गुफ़्तगू का।

संपर्क : आन्ध्रा बैंक, 16, विधान सभा मार्ग, लखनऊ, (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

हमारे वतन की शान : फ़ानी बदायूँनी

❑ डॉ. रामबहादुर 'व्यथित'

फ़ानी हमारे वतन की शान हैं। फ़ानी बदायूँनी ने ग़म को लोरियाँ ग़ाकर दिल के पालने में सुलाया है, दुलराया है, उसे प्यार किया है। फ़ानी ने दर्द को अपने दिल की सीप में मोती की मानिन्द छिपाकर रखा है, उसका श्रृंगार किया है, उसे इस करीने से आँसुओं की लड़ियों में पिरोया है कि एक-एक लड़ी फूलों का गजरा बनकर कभी हैदराबाद तो कभी अकबराबाद में, कभी दिल्ली तो कभी लखनऊ में अपनी नायाब खुशबू बिखेरती रही। उनके कद्रदां, फ़ानी के कलाम को सुनकर झूमते रहे, उन्हें अपनी पलकों पर बिठाते रहे, उन्हें 'गोल्ड मैडल' से नवाजते रहे। मगर अफसोस! फ़ानी को अपनी सरजमी से कभी प्यार-दुलार और सत्कार नहीं मिला, यथोचित सम्मान और सत्कार नसीब नहीं हुआ। कभी वक़्त के थपेड़े उन्हें झकझोरते रहे, तो कभी कर्जदार उनके सब्र का इम्तेहान लेते रहे। मगर जलती रही एक शमा--खून-ए-जिगर से भीगी हुई, निराशा के सघन अंधकार को चीरती हुई, जदीद ग़ज़ल को नए आयाम देती हुई शमा...जिसे वक्त की आँधियाँ कभी मद्धम नहीं कर सकीं, दर्द का तूफान जिसे अपने आग़ोश में नहीं समेट सका, आग का दरिया जिसकी लौ के सामने फ़ीका पड़ गया।

वह शमा आज भी जल रही है। उर्दू अदब के पैरोकार आज भी उस शमा की रोशनी से मालामाल हो रहे हैं। आज का यह सेमिनार उस धधकती हुई शमा का शानदार अभिनंदन है, खूँ से रंगी हुई उस क़लम का भावभीना वंदन है। फ़ानी के दिल में लगी आग की तपिश कैसे बयान की जा सकती है, वे फरमाते हैं--

बहला न दिल, न तीरगी-ए-शाम ए-ग़म गई
यह जानता तो आग लगाता न घर को मैं

× × ×

अजल जो आए तो अपना भी काम हो जाए
तमाम उम्र का किस्सा तमाम हो जाए।

जदीद् ग़ज़ल में फानी ने उर्दू की किलासिकी शाइरी की आबरू को कायम रखा और उर्दू ग़ज़ल में क़ाबिले क़द्र इजाफे किए। वक़ौल डॉ. ख्वाज़ा अहमद फारूखी--''ग़मे इश्क़ और ग़मे रोजगार ने मिलकर इनके दिल को आतिशकदा बना दिया था। आग के ये धधकते शोले जुबाने शे'र से निकलते है।'' फ़ानी फरमाते हैं--

मआले सोज़े ग़म हाय ज़िंदगानी देखते जाओ
भड़क उठी है शमे जिंदगानी देखते जाओ
सुने जाते न थे तुमसे मेरे दिन-रात के शिकवे
कफ़न सरकाओं मेरी बेजुबानी देखते जाओ

फ़ानी का शीश-ए-दिल चोट खाते-खाते चकनाचूर हो चुका था। उर्दू ग़ज़ल की तारीख में ऐसे टूटे हुए दिल की तस्वीर मिलना मुश्किल है। फ़ानी ने ग़ज़ल का दामन ग़म की दौलत से भर दिया। लोगों ने इनकी ग़ज़ल पर कुनूतियत का फतबा सादे किया। आपकी ग़ज़ल उस उरयानियत से पाक है जिसके लिए दाग़ और उनका स्कूल बदनाम है। फ़ानी फरमाते हैं--

खुशी से रंज का बदला यहाँ नहीं मिलता
वो मिल गए तो मुझे आसमां नहीं मिलता

× × ×

दुनिया मेरी बला जाने महँगी है या सस्ती है
मौत मिले तो मुफ़्त न लूँ, हस्ती की क्या हस्ती है

मौत को फ़ानी ने बहुत नज़दीक से देखा था। ज़िंदगी को तमाम शोअरा हज़रत ने अपने-अपने नज़रिए से देखा है, लेकिन फ़ानी के अशआर आब-ए-ज़र से लिखने लायक हैं। उर्दू ग़ज़ल में इसकी नज़ीर मुश्किल है--

एक मुअम्मा है समझने का न समझाने का
ज़िंदगी काहे को है, ख्वाब है दीवाने का

× × ×

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ज़िंदगी जब्र है और जब्र के आसार नहीं
हाय इस क़ैद को ज़ंजीर भी दरकार नहीं

फ़ानी की शायरी में कहीं हिंदी के महाकवि जयशंकर प्रसाद का खंडकाव्य 'आँसू' छलकता दिखाई देता है तो कहीं 'निराला' का दर्द टीसता हुआ दिखाई देता है। अप्रैल, 1939 में उन्होंने हैदराबाद की नुमाइंदगी करते हुए आगरा के आल इंडिया मुशायरे में ये अशआर पढ़े—

हर नफ़स उम्रे गुज़िश्ता की है मैय्यत फ़ानी
ज़िंदगी नाम है मर-मर के जिए जाने का
× × ×
उठ गए दुनिया से फ़ानी अहले ज़ौक
एक हम मरने को जिंदा रह गए

ग़ज़ल सुनते ही महफिल झूम उठी। फ़ानी की शोहरत की धूम शहजादा मोअज्जम शाह के कानों में पहुँची। अंजाम यह हुआ कि फ़ानी बदायूँनी निजाम हैदराबाद के दरबार की शोभा बन गए। फ़ानी शहजादे के कलाम पर इस्लाह देने लगे। शहज़ादे से फ़ानी की इतनी कुरबत दरबारियों को खटकने लगी। फ़ानी के खिलाफ साजिश रची गई। नतीज़ा यह निकला कि फ़ानी का वजीफा बंद हो गया और उनका तबादला हैदराबाद से नानडेर कर दिया गया। तबादला मनसूख़ कराने की सारी कोशिशें नाकाम हो गईं।

मुसलसल बीमारी, कर्ज का बोझ और दोस्तों की बेरूखी ने फ़ानी को झकझोर दिया। अगस्त, 1940 में फ़ानी की बेग़म उन्हें दाँगे जुदाई दे गईं। फानी तंग हाल थे। यह फ़ानी की खुद्दारी थी कि ऐसी दर्दनाक घड़ी में भी उन्होंने दोस्तों की मदद कुबूल नहीं की। आखिरकार दोस्तों ने फ़ानी के दीवान खरीदकर क़फ़न दफ़न का इंतजाम किया।

8 सितंबर, 1940 को महाराजा सर किशन प्रसाद 'शाद' इस दुनियाँ से कूंच कर गए। माली परेशानियाँ बढ़ती जा रही थीं। जनवरी सन् 1941 में नबाव हमीदुल्ला खाँ के जश्ने साल गिरह पर आल इंडिया मुशायरे का एहतिमाम किया गया। फ़ानी के कलाम में दर्द की चाशनी साफ झलक रही थी, उन्होंने कहा—

तू कहाँ थी ऐ अजल ऐ नामुरादों की मुराद
मरने वाले राह तेरी, उम्र भर देखा किए

मिर्ज़ा ग़ालिब की तरह फ़ानी का कलाम ज़्यादा पेचीदा नहीं है, लेकिन फारसी तरक़ीबो को सलीक़े के साथ इस्तेमाल किया गया है। उनकी ग़ज़ल में दर्द-ओ-सोज भी है और रिन्दियों-मस्ती भी है। फ़ानी के ग़म में हमको एक रूहानी सुकून और सरूर-ए-सरमदी मिलता है। क्रीटिक फ़ानी को 'एयासियात का इमाम' कहते हैं, क्योंकि ज़िंदगी की नामुरादियों की जो तस्वीर फ़ानी के कलाम में मिलती है, वह कहीं और नहीं, 'दर्द' 'मीर' और 'फ़ानी' का एक-एक मिसरा पेशे खिदमत है। 'दर्द' फरमाते हैं—

'हम तो इस जीने के हाथों मर चलें
मीर तकी मीर का मिसरा अर्ज है—हमने मर-मर
के जिंदगानी की

फ़ानी बदायूँनी बहुत आगे निकल जाते हैं। उनका अंदाज देखिए—

'ज़िंदगी नाम है मर-मर के जिए जाने का'

फ़ानी की मक़ते मोमिन के मक़तों की तरह उर्दू अदब में एक कामयाब इजाफा हैं। फ़ानी के मक़तों से उनके फ़न और ज़हन को समझने में बड़ी मदद मिलती है। सच तो यह है कि फ़ानी ने ग़ज़ल के मक़तों में अपनी जिंदगानी का Ideal का पेश किया है। मसलन,

मैंने फ़ानी डूबते देखी है नब्जे कायनात
जब मिज़ाजे यार कुछ बरहम नज़र आया मुझे
× × ×
हम न थे कल की बात है फ़ानी
हम न होंगे वो दिन भी दूर नहीं

उम्र भर के आख़िरी लम्हें बड़ी हसरत और बेक़सी में गुजरे और हैदराबाद में 27 अगस्त, 1941 को फ़ानी सुपुर्दे-ख़ाक कर दिए गए। मुंशी मनमोहन लाल माथुर और रशीद अहदम सिद्धीकी जैसे आलिमों से आपके दोस्ताना तालुक़्कात थे। जब मुंशी जी से कोई फ़ानी का ज़िक्र छेड़ देता था, तो उनकी आँखों में आँसू छलक आते थे। वे कहा करते थे—''फ़ानी जैसे ग़ज़लगो शाइर और इनसान सदियों के उलट-फेर के बाद ही पैदा हो सकेंगे।''

हिंदुस्तान के अज़ीम शाइर ज़नाब फिराक़ गोरखपुरी की राय इन तमाम वाक़यात पर सनद है—

''फ़ानी में ज़राफत व वजला संजी इतनी थी कि उनकी बातें उनकी शख्सियत मन को मोह लेती है और जी को लुभा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेती है। उनके आँसुओं में नश्तर की तरह मौज, हाय, तबस्सुम थरथराती, डूबती और उछलती है।...उन्होंने ग़म को एक नई चमकार दी, उसे बहुत नर्म और लचकदार उँगलियों से रचाया और निखारा, उसे नई लोरियाँ सुनाईं, उसे अपनी आवाज़ के एक खास लोच से सुलाया और जगाया।''

''ज़िंदगी-ए-ग़म को फ़ानी ने नए आदाब से सँवारा, नए तक़ल्लुफात से निखारा, ग़म के अंदर नई रोकथाम, नई थरथरी पैदा की, नई चुटकियाँ, नई गुदगुदियाँ, नई लरजिशें, नई सिहरन-उनके हाथों से ग़म की दुखी हुई रगों को मिली।''

(''यादे फ़ानी'' करॉची)

मशहूर और मारूफ शाइर जिगर मुरादाबादी फरमाते हैं–''मरहूम की ज़िंदगी की तमाम खुसूसियात उनके कलाम में बदरज-ए-अलम पाई जाती है। मीर का सोजो गुदाज, ग़ालिब की फिक्रो-नज़र और मोमिन के अंदाज का बांकपन उर्दू ग़ज़ल का सरमाये इफ्तिखार है। इन तीनों का इम्तज़ाज फ़ानी के कलाम की बहुत बड़ी खुसूसियत है।''

दर्द ओ ग़म की डूबी दुनिया के हालात नुमाया करने में फ़ानी को जो किलासिकी हैसियत हासिल हुई, जिसकी बिना पर उन्हें उस दौर में **'शाइरे जदीदी'** और **'इमामे एयासियात'** कहा गया। बहरसूरत उनके कलाम को उनके ज़माने में भी बुलंद मुकाम हासिल रहा और आज भी फ़ानी अपने कलाम की रोशनी में बाकी है। आखिर में फ़ानी के इस शे'र के साथ में रूखसत चाहूँगा–

हमें अभी तिरे अशआर याद हैं फ़ानी
तिरा निशां न रहा और बेनिशां न हुआ

संपर्क : उप प्रधानाचार्य, हा.सि. इस्लामियां इन्टर कालेज, बदायूँ (उ.प्र.)

पूर्वोत्तर पर समय प्रकाशन से प्रकाशित एवं चर्चित पुस्तकें

पूर्वोत्तर भारत और अलगाववाद / चन्द्र भूषण 200/-
लोहित किनारे (पुरस्कृत) / चन्द्र भूषण 200/-
Terrorism and separetion in north-east india / Chandra Bhushan 675/-
Assam : Its heritage and culture / Chandra Bhushan 675/-
अरुन्धती / मणिकुन्तला भट्टाचार्य, दिनकर कुमार (अनु.) 300/-
रेडियो साहित्य और पत्रकारिता / डॉ. अकेला भाई 295/-
पगडंडियाँ पहाड़ की / डॉ. अकेला भाइ 125/-
जननी मेरी / दिलीप बोरा, दिनकर कुमार (अनु.) 250/-
प्रतिनिधि कहानियाँ / कुल सैकिया, दिनकर कुमार (अनु.) 150/-
श्रेष्ठ असमिया कहानियाँ / दिनकर कुमार (अनु.) 250/-

समय प्रकाशन
आई–1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002
फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 011–23270889
ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देवेन्द्र कुमार पाठक 'महरूम' की ग़ज़लें

(1)

गाँव रहा अब गाँव कहाँ है।
नेह-छोह की छाँव कहाँ है॥
छूट गया जिसका घर-आँगन।
उसका ठिकाना-ठाँव कहाँ है॥
मिल-जुलकर सुख-दुख सहने का।
चिर-परिचित सहभाव कहाँ है॥
द्वेष-दगा, छल-छद्म छोड़कर।
दिल का सहज जुड़ाव कहाँ है॥
दिल जब बँटे, बँटे तब चूल्हे।
रिश्तों में अपनाव कहाँ है॥
बदल दे रंग-ए-ख़ूं खुदगर्ज़ी।
परहित का सद्भाव कहाँ है॥
खुद को ख़ोज रहा हूँ 'महरूम'।
भटकन है, ठहराव कहाँ है॥

(2)

क्या खूब है लिबास तन-बदल दिखाई दे।
अब ऐसा कुछ पहन जिससे मन दिखाई दे॥
ग़मगीन ग्वाल-गोपियाँ, बदहाल गउएँ हैं।
हर रोज़ उजड़ता हुआ मधुवन दिखाई दे॥
जिस भक्त को पाहन में भी भगवान दिखे हैं।
उस भक्त के दिल में मुझे पाहन दिखाई दे॥
हरियाते जेठ में भी हैं दिल्ली के गॉर्डन।
सावन में विंध्य में नहीं सावन दिखाई दे॥
'महरूम' गाँव को दिखे है ख़्वाब में शहर।
मुझको शहर में गाँव, घर-आँगन दिखाई दे॥

नरेश महाजन 'निरगुन' की ग़ज़लें

(1)

सिमटा हूँ तो सिमटा पत्थर होने तक,
और जो बिखरा, बिखरा ज़र्रे-ज़र्रे तक।

मैं जन्मों से घर का रास्ता भूला था,
छोड़ गया कोई रहबर दरवाज़े तक।

सोचोगे तो देर बहुत हो जाएगी,
कट जाएँगे जंगल साधू होने तक।

जीवन का हर पहलू देखा है हमने,
मख़मल के बिस्तर से लेकर नेज़े तक।

अपने घर को फैलाने की ख़ातिर हम,
ले आए हैं पीपल को भी गमले तक।

फ़स्ले नीचीं ऊँचे क़र्ज़ किसानों पर,
भूल गए हैं बैसाखी के मेले तक।

पशमीने के पैराहन में भूले हम,
कुछ बच्चों के पास नहीं हैं कपड़े तक।

सोच हमारी हिंदोस्तानी इस दर्जा,
मैख़ाने से लेकर मुर्ग़ीख़ाने तक।

दुख जिस में यूँ घटता बढ़ता रहता है,
वो पैमाना सर से लेकर घुटने तक।

परबत हो तो आना तूफ़ाँ के आगे,
कट जाएँगे वरना पुर्ज़े-पुर्ज़े तक।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ओम रायजादा की ग़ज़लें

परिचय

नाम : ओम रायजादा
जन्म : 26 अगस्त, 1950
संप्रति : अध्यापन
प्रकाशित : प्रतिदान (खंड काव्य), 'परछाइयां' (हिंदी ग़ज़लें), आदमी के लिए (हिंदी ग़ज़ल), 'टोपियां' (हिंदी ग़ज़लें)
प्रकाशनाधीन ग्रंथ : ओम रायजादा की ग़ज़लें
संपादन : 20 वर्ष से ऋचा (अनियतकालीन)
संपादित कृतियाँ : सूखे बादल, मैला आकाश, बंजारा सूरज, जलती धरती, आठवें दशक के श्रेष्ठ कवि, कहीं धूप कहीं छाया।
संपर्क : शक्तिनगर, पूर्वी सन्त नगर, सावरकर वार्ड, कटनी, (म.प्र.)

(1)

फिर से अंधेरे जो छाये हुए हैं।
ये यारो हमारे बुलाये हुए हैं॥

भटका हुआ है कहीं पर सबेरा।
ये काँटे हमारे बिछाए हुए हैं॥

मजबूरियां आदमी की यही हैं।
अपनी ही लाशें उठाए हुए हैं॥

दुख-दर्द वापस कब जाएँगे ये।
मेहमान कब से ये आए हुए हैं॥

आदत हमारी नई तो नहीं ओम।
मुद्दत से सर को झुकाए हुए हैं॥

(2)

फिर मसीहे यहाँ पर हद कर गए।
जुल्म उनके पार सरहद कर गए॥

जब सुना ऊँचाई पर है रोशनी।
कर्महीनों के यहाँ कद मर गए॥

उग आए हैं यहाँ कुछ बेशरम।
कौन कहता है कि बरगद मर गए॥

सिरफिरों की भीड़ फिर जुड़ने लगी।
पाप के अब घड़े शायद भर गए॥

'ओम' हाँको उन्हें लेकर लाठियाँ।
जो समझकर घास संसद चर गए॥

(3)

हाथ में दुष्यंत का दीवान है।
सरफरोशी अब मेरा ईमान है॥

रोशनी की बात अब करिए नहीं।
किस कुएँ में देश का अरमान है॥

हो गई बांदी हरम में आपके।
सभ्यता की बस यही पहचान है॥

खाल जो इनसानियत की ओढ़ ले।
क्या वही सबसे बड़ा इन्सान है॥

जुल्म अब चुपचाप सहते जाइए।
कल हुआ जारी यही फरमान है॥

घूमता है सड़क पर कंकाल जो।
क्या वही इस देश की पहचान है॥

जान को लेकर हथेली पर चलो।
'ओम' का अब तो यही ऐलान है॥

(4)

हमको अब एक जतन करना है।
भूख को गहरे दफन करना है॥

ये सियासत का राज है यारो।
सुबह और शाम नमन करना है॥

अपने ही आप लोग मर जाएँ।
उनको अब इतना दमन करना है॥

चाह कर भी न उन्हें भूलें हम।
सबको अब उनकी शरण करना है॥

ढांकने हैं हमें ये जिस्म यहाँ।
सारा आकाश क़फ़न करना है॥

हम तो चिंगारी एक ले आए।
दिलों की आग सघन करना है॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुंदन सिंह सजल की ग़ज़लें

परिचय

नाम : कुंदन सिंह सजल
जन्म तिथि : 10 दिसंबर, 1938
शिक्षा : एम.ए., बी.एड., प्रभाकर, सा. सुधाकर, **प्रकाशन :** एक गीत संकलन 'सुधियों के तीर' तथा एक ग़ज़ल संकलन 'ग़म बहुत सारे' प्रकाशित। सभी प्रांतों की स्तरीय साहित्यिक पत्रिकाओं में रचनाएँ निरंतर प्रकाशित। **सेवाकाल :** सन् 1960 से राजस्थान शिक्षा विभाग में अध्यापक पद से सेवा शुरू कर सन् 1996 में प्रधानाध्यापक पद से सेवानिवृत्त।, **स्थाई पता :** उदय निवास, रायपुर (पाटन), सीकर–332718 (राज.) **मो. :** 9462602928

(1)

पत्थर से भी यारी रख।
सबसे दुनियादारी रख॥
सूरज-सा सबके घर में।
आना जाना जारी रख॥
बरसें नहीं, सिर्फ गरजें।
कुछ बादल सरकारी रख॥
अँधे होकर जय बोले।
ऐसे ही दरबारी रख॥
बाहर से मासूम सही।
अंदर से हुशियारी रख॥
सब में शामिल होकर भी।
अपनी रंगत न्यारी रख॥
कर्जदार हो जा लेकिन।
कुछ के पास उधारी रख॥
हर असत्य के कचरे पर।
तू सच की चिंगारी रख॥
प्रतिमा को भी पुजवा दे।
परखे हुए पुजारी रख॥
साथ निभाने मौसम का।
तू अपनी तैय्यारी रख॥

(2)

पहले तन की बातें कर।
फिर चंदन की बातें कर॥
जनमत की फिर सोचेंगे।
पहले जन की बातें कर॥
जो जीवन उत्सर्ग रहा।
उस जीवन की बातें कर॥
आश्रम, डांस चेलियों की।
फिर संतन की बातें कर॥
पाँच सितारा सुविधा में।
मत निर्धन की बातें कर॥
भ्राताओं को परख तभी।
राम लखन की बातें कर॥
जो गिरधर के नाम बिकी।
उस जोगन की बातें कर॥
हों जब हरे खेत, जंगल।
तब सावन की बातें कर॥
मुजरा सुन, मत कोठे पर।
राम भजन की बातें कर॥
ढोलक, चंग, फाग, रसिया।
फिर फागुन की बातें कर॥
पहले काजल देख सजल।
फिर चितवन की बातें कर॥

(3)

गड़े झंडे उखाड़ देता है।
वक़्त सबको पछाड़ देता है॥
रब जो देने पै उतर आता है।
छान छप्पर ही फाड़ देता है॥
जीत का ताज बाँधने वाला।
पताका अपनी गाड़ देता है॥
गुरु तो सिर्फ गुरु होता है।
बिना गलती लताड़ देता है॥
छुपाएँ लाख हम गुनाहों को।
वक़्त इक दिन उखाड़ देता है॥
हौंसले जो बुलंद रखते हैं।
रस्ता उनको पहाड़ देता है॥
उसको कोई नहीं बसा सकता।
जिसको मालिक उजाड़ देता है॥
आदमी अपनी एक गलती से।
बात बनती बिगाड़ देता है॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भगवती प्रसाद द्विवेदी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : भगवती प्रसाद द्विवेदी

जन्मतिथि : 1 जुलाई, 1955

जन्म स्थान : बलिया (उत्तरप्रदेश) के दलछपरा गाँव में।

शिक्षा : एम.एस.सी. (रसायन विज्ञान)

प्रकाशित कृतियाँ : 'चीरहरण', 'अस्तित्वबोध', 'फीलगुड तथा अन्य कहानियाँ' (कहानी-संग्रह), 'भविष्य का वर्तमान', 'थाती' (लघुकथा-संग्रह), 'भिखारी ठाकुर : भोजपुरी के भारतेन्दु', 'महेन्दर मिसिर : भोजपुरी गीतकार' (आलोचना), 'भारतीय जनजातियाँ : कल, आज और कल' (शोध), 'ठेंगा' (भोजपुरी कहानी-संग्रह) 'जौ-जौ आगर' (भोजपुरी कविता-संग्रह), दो भोजपुरी उपन्यास ('दरद के डहर', 'साँच के आँच') तथा बाल-साहित्य की सत्तर (70) पुस्तकें। चुनिंदा बावन बाल कहानियों का संग्रह, 'मेरी प्रिय बाल कहानियाँ' विशेष रूप से उल्लेखनीय।

संप्रति : भारत संचार निगम की सेवा से संबद्ध।

संपर्क : कमरा नं.-264, टेलीफोन भवन, आर, ब्लॉक, पोस्ट बॉक्स-115, पटना-800 001 (बिहार)

मो. : 09430600958

(1)

ग़ज़ल कहें या गीत लिखें,
कलम सदा निर्भीक लिखें।

मुँहदुब्बर की जीभ बनें,
कुटिल चाल भयभीत लिखें।

सिसकी महल-अटारी की,
मड़ई का संगीत लिखें।

कुदरत से गलबात करें,
अंकवारी-भर प्रीत लिखें।

होरी-धनिया चहक उठें,
नेह-पगे नवगीत लिखें।

(2)

ग्लोबल आदमखोर हुआ,
अंधियारा मुंहजोर हुआ।

वाप-मतारी चूल्हे में,
बुतरू अब अँखफोर हुआ।

कौआ-गिद्ध-चिल्होर मगन,
मनई ही कमजोर हुआ।

यह अंधेरगर्दी कब तक,
गली-गली में शोर हुआ।

भीतर की चिरई चिहुंकी,
सद-बद लहंग-पटोर हुआ।

(3)

चोला गिरगिट जैसा है,
दिल ना जाने कैसा है।

मछली गटके, राम भजे,
साधू बगुला ऐसा है।

'बेडसीन' चौरस्ते पर,
फैशन ऐसा-वैसा है।

कैसा अजब अंधेर नगर,
चौपट राजा भैंसा है।

घायल कुदरत, मन सर्जन,
जन जैसा का तैसा है।

(4)

बोकर आम बबूल उगाया,
टहनी-टहनी दर्द समाया।

रखवालों ने निगला सूरज,
हमें गया उलटा लटकाया।

भूख पेट की उन्हें बताई,
ज़ख्म पीठ को गया खिलाया।

कंधे पर ले अरथी अपनी,
मरघट में खुद को भटकाया।

क़ैद कसाईबाड़े में हो,
नित जीना, नित मरना आया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आलेख

इकबाल : जीवन के रंग-काव्य की तरंग

❑ डॉ. शिवनन्दन कपूर

सन् 1899 का समय। स्यालकोट में 'अंजुमन इस्लाम' का सालाना जलसा था। मंच पर 24 साल का नौजवान शाइर शाइरी पढ़ रहा था। शीर्षक था, 'नालये यतीम'। गले की मिठास, झूम कर पढ़ने के अंदाज़ ने लोगों को झुमा दिया। लोग उसे बार-बार सुनने की आवाज़ लगाने लगे। लोगों के दिल भर आए। शाइर को नामवरी मिली। यतीमख़ाने के लिए चंदा भी इकट्ठा होने लगा। उसके एक शे'र पर मशहूर शाइर मिर्ज़ा अरशद गोरगानी भी झूम उठे। शाइर थे मोहम्मद इक़बाल।

इक़बाल का रिश्ता कश्मीर से अटूट था। उनके पूर्वज सप्रू गोत्र के कश्मीरी ब्राह्मण थे। ढाई सौ साल पहले वे इस्लाम अपना चुके थे। फिर वे स्यालकोट में बस गए। वहीं सन् 1875 में इक़बाल का जन्म हुआ। पिता शेख़ नूर मोहम्मद 'सरल', फारसी-अरबी के विद्वान् थे। वे सूफी सिद्धांतों से प्रभावित थे। उनके असर से इक़बाल भी फारसीदां तथा दार्शनिक हुए। स्कॉच मिशन इण्टर कॉलेज से उन्होंने प्रथम श्रेणी में इंटर पास किया। फिर लाहौर आए। बी.ए. तथा एम.ए. में भी प्रथम श्रेणी पाई। फिर दर्शन के अध्यापक सर टामस अर्नाल्ड की मदद से इंग्लैंड गए।

लाहौर के शासकीय महाविद्यालय में अध्यापन करते हुए वे 1905 में शोध-कार्य हेतु इंग्लैंड गए। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से डॉक्टर मैकटेगर्ट के निर्देशन में शोध किया। विषय था, 'पूर्वी और पाश्चात्य दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन।' जर्मनी के म्यूनिख़ विश्वविद्यालय से 'ईरानी दर्शन' पर 1908 में डॉक्टरेट की। इसके साथ ही बैरिस्टरी की भी उपाधि लेकर लाहौर आए। दो सालों तक लाहौर कॉलेज में पढ़ाया। फिर उसे छोड़ कर, वकालत करने लगे।

उनके विचार यूरोप में ही राष्ट्रीय से 'पान इस्लामी' (विश्व इस्लामवादी) हो गए थे। अँग्रेजों के विरोध के कारण उन्हें कॉलेज छोड़ना पड़ा था। 1926 में वे 'कौंसिल ऑफ स्टेट' के सदस्य चुने गए। 1928 में उन्होंने मद्रास, मैसूर और हैदराबाद की सभाओं में 'धर्म तथा विचार का पुनर्निर्माण' विषय पर भाषण दिए। सन् 1930 में वे मुस्लिम लीग के सदस्य और प्रयाग के अधिवेशन में सभापति भी हुए। वहीं उन्होंने पाकिस्तान के स्वप्न की प्रारंभिक योजना प्रस्तुत की थी। बाद में अस्वस्थता-वश वे राजनीति से अलग हो गए थे।

1934 में आवाज बैठने से वकालत को धक्का लगा। भोपाल राज्य उन्हें पाँच सौ रुपए मासिक वृत्ति देता रहा। गुर्दे का रोग भी परेशान किए था। 1935 में अर्धांगिनी के अवसान से और आघात लगा। दमे और मोतियाबिंद से जूझते 1 अप्रैल, 1938 में वे संसार से विदा हो गए। जब तक जिये सुख से जिये। न कृपणता की, न मदद से हाथ सिकोड़ा।

रचनाएँ : उनकी रचनाओं को उर्दू, फारसी और अँग्रेजी के अनुसार, अधोलिखित रूप से बाँटा जा सकता है—

उर्दू किताबें : 1 इल्मुल इफ़्तसाद (अर्थशास्त्र विषयक), 2. फ़लसफ-ए-ईरान (शोध-प्रबंध), 3. बांगे-दरा, (पहला उर्दू काव्य संकलन) 4. जर्बे कलीम, 5. बाले ज़िब्रील 6. अरमुग़ाने हिज़ाज़ (उर्दू और फारसी काव्य-संकलन), 7. खुतवाते-इक़बाल 8. मकतूबाते-इक़बाल (पत्र)

फारसी रचनाएँ : 1. मसनवी असरारे खुदी और रमूज़े खुदी/पयामे मशरिक़ (दीवान), 3. जावेदनामा (काव्य-संकलन) 4. पस चे बायद कद्र ऐ अक़वाये शर्क़ (फारसी काव्य-संकलन), 5. ए ज़बूरे अज़म (काव्य-संकलन) 6. मुसाफिर

अंग्रेज़ी ग्रंथ : 1. लेक्चर्स ऑन रिकंस्ट्रक्शंस ऑफ रिलीजस थाट इन इस्लाम 2. डेवलपमेंट ऑफ मेटाफिजिक्स इन पर्शियन।

तीन काव्य-युग

इक़बाल के काव्य काल-क्रम से इस प्रकार विभाजित हैं—1899 से 1905, 1905 से 1908, तथा 1908 से अंत तक। वे छोटी उम्र से ही शाइरी करने लगे थे। अध्यापक मौलवी मीर हसन उनके प्रेरक और सुधारक थे। मिर्ज़ा अरशद

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गोरगानी के शिष्य हुए। दाग़ से भी बज़रिये ख़त सुधार कराते रहे। उनकी मौत पर उन्होंने मर्सिया भी लिखा। शुरू की शाइरी भावुकता भरी थी। अंजुमने हिमायते इस्लाम' में नज़्में पढ़ते। 'नालये यतीम', 'फ़रियादे उम्मत', 'शिकवा' आदि उसी युग की कृतियाँ हैं। दाग़ के असर से उनमें सरसता और कोमलता है। उस वक़्त उन्होंने ग़ज़लें ही लिखीं। बाद में हाली के सुधारवाद से प्रभावित हो अलग रास्ता अपनाया। 1899 में लिखी 'हिमाला' से वे बहुत मशहूर हुए। इस युग में प्रकृति-सौंदर्य, जीवन-संघर्ष तथा हिंदू-मुस्लिम एकता पर लिखते रहे। दर्शन तथा वेदांत के असर में भी आए। 'नया शिवाला' और 'हिंदोस्तां हमारा' राष्ट्रीय कतिवाएँ हैं। 'आफ़ताब' में वेदों की सूर्योपासना की झलक है। श्री राम तथा श्री रामतीर्थ पर भी दो कविताएँ लिखी थीं। इस काल में वे राष्ट्रीयता को धर्म से अधिक महत्त्व देते रहे।

उनका दूसरा काव्य-काल 1905 से 1908 का है। यूरोप-प्रवास के समय राष्ट्रों की परस्पर कलह ने उन्हें खिन्न किया। देश-भक्ति की अपेक्षा मानव-एकता से प्रभावित हो उन्होंने 25 नज़्में तथा ग़ज़लें लिखीं। दर्शन के अध्ययन से कविता कुछ प्रभावित हुई। उसमें 'खुदी' या 'अहं' का विचार भी है। दर्शन का शृंगार रूपसी के भारी अलंकार-सा बोझिल हो गया।

यूरोप से लौटने पर तीसरा काव्य-युग प्रारंभ हुआ। इस काल की कविता की व्याख्या देश-प्रेमियों, साम्य-वादियों ने अपने ढंग से कर, उन्हें सांप्रदायिक तथा फासिस्ट कहा। विश्व-इस्लामवाद का भाव संसार के मुसलमानों तक पहुँचाने के लिए उन्होंने फारसी में शाइरी शुरू की। वहीं 'शिकवा' लिख, खुदा से इसलाम का सितारा बुलंद न करने का गिला किया। भारत लौटने पर ये भावनाएँ और व्यापक हुईं। मुसलमानों में तफ़रक़ा उन्हें साल रहा था–

फ़िर्क़ाबंदी है कहीं, और कहीं जाते हैं
क्या ज़माने में पनपने की यही बातें हैं?

–जवाबे-शिकवा

काव्य के रंग, राष्ट्रीयता : इकबाल की शाइरी में सुरधनु से सजल, सरस, सतरंगी छटा है। कभी वे सांप्रदायिक एकता तथा राष्ट्रीयता के भाव से, 'सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्तां हमारा' गाते रहे। यह ग़ज़ल अब भी जिंदा है। इससे उन्हें नामवरी मिली। इसी प्रकार 'नया शिवाला' में नए विचार, प्रगति तथा परिवर्तन की छाया के साथ कबीर का रंग है–

सच कह दूँ ऐ बिरहमन! गर तू बुरा न माने
तेरे सनमकदों के बुत हो गए पुराने

इस्लामी धर्म-उपदेशक पर भी उनकी वैसी ही वक्र दृष्टि पड़ी-

अपनों से बैर रखना तूने बुतों से सीखा
जंगों-जदल सिखाया वाइज़ को भी खुदा ने।

आगे तो उनकी भावना सारे हद पार कर जाती है। वे कबीर के समान ही कहते हैं–

पत्थर की मूरतों में समझा है तू खुदा है।

उनकी निगाह में 'ख़ाके वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है'

तथा

आ ग़ैरियत के पर्दे इक बार फिर उठा दें
बिछड़ों को फिर मिला दें, नक़्शे दुई मिटा दें
सूनी पड़ी हुई है मुद्दत से दिल की बस्ती
आ इक नया शिवाला इस देश में बसा दें।

काश, हमारा पड़ोसी देश इसे अपना पाता। फिर खून की जगह शीर की नदी फिर बहती। ये मकां शिहाब में न झुलसते। और इन पंक्तियों से किसको गुरेज़ होगा? यह तो हर हिंदुस्तानी के दिल की आवाज़ है, चाहत रही है-

दुनिया के तीरथों से ऊँचा हो अपना तीरथ
दामने आस्मां से इसका कलश मिला दे।

'नया शिवाला' में प्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग और भाषा की सादगी दर्शनीय है।

प्रकृति-चित्रण : उनकी कविता में प्रकृति के भी कोमल कांत चित्र हैं। उसके रम्य खंड नेत्रों के समक्ष साकार हो उठते हैं। देखिए–

जुगनू की रोशनी है काशानए चमन में।
या शमअ जल रही है फूलों की अंजुमन में॥
आया है आसमां से उड़ कर कोई सितारा।
या जान पड़ गई है महताब की किरन में॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकृति के सामान्य जीव जुगनू के अलावा हरियाली, चमकती बूंदों में फूल की खूबसूरती को भी उन्होंने निखारा है—

आग़ोश में ज़मी के सोया हुआ हो सब्ज़ा
पड़ पड़ के पहाड़ियों में पानी चमक रहा हो।
पानी को छू रही हो झुक झुक के गुल की टहनी
जैसे हसीन कोई आईना देखता हो।
मेहंदी लगाए सूरज जब शाम की दुल्हन को
सुर्ख़ी लिए सुनहरी हर फूल की क़बा हो।

—एक आरजू

'भारतीय आत्मा' माखनलाल चतुर्वेदी जी ने 'कोकिल बोलो तो' में 'क्रांति-बीज' बोने वाली कोकिल को बोलने के लिए प्रेरित किया था। वह वसंत-दूतिका है। प्रकृति के साथ परिवेश में भी परिवर्तन लाती है। आवर्तक की सूचक है। इसीलिए इक़बाल भी बुलबुल के परंपरागत पक्षी का चित्रण न कर, जागरण की संदेश-वाहिका कोकिल का आह्वान करते हैं—

पिछले पहर की कोयल, वह सुबह की मुअज़्ज़िन।

अपनी 'रात और शाइर' में उन्होंने 'चश्मे गिरदाब' या 'भंवर की आँख' को दरिया की तह में सुलाया है किनारे से टकरा कर, रात के सन्नाटे में, बेचैन लहर भी भावुक प्रेमिका-सी, तट की बाहों में समा जाती है—

दरिया की तह में चश्में गिरदाब सो गई है
साहिल से लग के मौजे बेताब सो गई है।

अस्त होते सूर्य का एक रम्य चित्र है। सूरज रोशनी की चादर समेटता ऐसे सरकता जा रहा है, जैसे कोई किसी का आंचल खींचता जा रहा हो। मुझे वाल्मीकि का एक प्रकृति-वर्णन स्मरण हो रहा है, उसमें शरद की समता स्त्री से है। तट से जल सिमटता जा रहा है। सलिल के सिमटने की क्रिया कवि को ऐसी प्रतीत हो रही है, जैसे रूपांगना जघन से हौले-हौले वसन सरका रही हो। इक़बाल का रंग भी कुछ ऐसा ही है—

पच्छिम को जा रहा हो कुछ इस अदा से सूरज
जैसे कोई किसी के दामन को खींचता हो।

आध्यात्मिकता : महादेवी जी ने प्रिय से अद्वैतता स्थापित करते, 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ' शीर्षक कविता में लिखा था—

तार भी आघात भी झंकार की गति भी,
पात्र भी, मधु भी, मधुप भी, मधुर विस्मृति भी,
अधर भी हूँ, और स्मिति की चाँदनी भी हूँ;

इक़बाल की अधोलिखित पंक्तियों में हमें वही एकात्म, वही भाव मिलता है। कविता युग-व्यापी भावों वाली होती है—

आईना अपनी हक़ीक़त से हो ऐ दहक़ां ज़रा
दाना तू, खेती भी तू, बारां भी तू, हासिल भी तू।
आह किसकी जुस्तजू आवारा रखती है तुझे,
रात तू, रहबर भी तू, मंज़िल भी तू।
काँपता है दिल तेरा अंदेशए तूफ़ाँ से क्या?
नाखुदा तू, बह्र तू, कश्ती भी तू, साहिल भी तू।

हास्य-व्यंग्य : इक़बाल ने हास्य-व्यंग्य के रंगीन छींटे भी उछाले हैं। अपनी नग्नता पर कलुषित जनों की छींटाकशी पर कश्मीरी कवयित्री लल्ल या लल्लेश्वरी ने कहा था, 'किससे पर्दा करूँ। मुझे कोई मर्द तो नज़र नहीं आता।' इक़बाल ने आज के हालात पर लिखा—

वाज़ में फर्मा दिया कल आपने ये साफ-साफ,
पर्दा आख़िर किससे हो जब मर्द ही ज़न हो गए।

नई सभ्यता का विरोध करते उन्होंने कहा—

उठा कर फेंक दो बाहर गली में
नई तहज़ीब के अण्डे हैं गन्दे।

आज की राजनीति उन्हें रास नहीं आई। वे कह बैठे—

इलेक्शन मिम्बरी, कौंसिल, सदारत
बनाए खूब आज़ादी के फंदे।

जमहूरियत या प्रजातंत्र के संबध में उन्होंने जो फरमाया, वह आज भी क़ायम है। चुनाव के बाद आज भी लोग ख़रीदे जाते हैं। योग्यता नहीं संख्या-बल, धन-बल, बाहु-बल, छल-बल से उछल रहा है—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जमहूरियत इक तर्ज़े-हुकूमत है कि जिस में
बंदों को गिना करते हैं तौला नहीं करते
–जमहूरियत

विदेशी सामान के मोह पर भी उन्होंने रंदा कसा। अभी तक कपड़े ही बाहर से आते रहे। यही हालत रही तो गुस्ल कराने वाले काबुल से आएँगे। क़फ़न जापान से आया करेगा–

अपनी गफ़लत की यही हालत अगर क़ायम रही
आएँगे गुस्साल काबुल से, क़फ़न जापान से

विविध रंग : घर-फूँक तमाशा, आडम्बर या ऐश्वर्य-प्रदर्शन से उन्हें चिढ़ थी–

शिक़वा न बेश-कम का, तक़दीर का गिला है
राजी हूँ मैं उसी में, जिसमें तेरी रज़ा हो।

कवि तुलसी ने लिखा था, 'होइहै उहै जो राम रचि राखा। का करि तर्क बढ़ावइ साखा।' इक़बाल की ये भाग्यवादी पंक्तियाँ आज भी लोग दोहराते हैं–

मुद्दई लाख बुरा चाहे, तो क्या होता है?
वही होता है जो मंज़ूरे खुदा होता है।

व्यक्ति को महत्त्व देते, ये प्रेरणा-प्रद पंक्तियाँ भी प्रचलित रहीं–

खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तक़दीर से पहले
खुदा बंदे से खुद पूछे बता तेरी रज़ा क्या है?

कुछ अंशों को छोड़ कर, उनकी शाइरी मानवता का संदेश लिए वैविध्यपूर्ण है।

संपर्क : विट्ठल नगर, खण्डवा-450-001 (म.प्र.)

रचनाकारों से अनुरोध

1. 'परती पलार' आपकी अपनी पत्रिका है, आपके परिवार की पत्रिका है। आप अपने सगे-सम्बन्धियों एवं इष्ट-मित्रों को भी इस पत्रिका को पढ़ने और इसकी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करें क्योंकि इस पत्रिका की दीर्घजीविता का दायित्व आप पर भी तो है।
2. 'परती पलार' के सदस्य रचनाकारों की रचनाओं के प्रकाशन को प्राथमिकता हमारा दायित्व है और हम यथासाध्य अपने इस दायित्व का निर्वहन भी कर रहे हैं। अतः किसी रचना के तुरंत प्रकाशन का दबाव देकर कृपया हमारी समस्या न बढ़ायें।
3. आप कृपया अपने पासपोर्ट साईज के स्वच्छ एवं रंगीन फोटोग्राफ तथा अति संक्षिप्त परिचय के साथ ही एक समय में कृपया सिर्फ एक रचना ही हमें भेजें और उक्त रचना के प्रकाशन के पश्चात् ही कोई दूसरी रचना भेजें। शोधपरक आलेख, रोचक एवं संदेशपरक स्तरीय कहानी, लघुकथा, दोहा, ग़ज़ल और गीत जैसी रचनाएं हमारी प्राथमिकताओं में आती हैं किन्तु रचना स्वरचित एवं अप्रकाशित तथा अप्रसारित का प्रमाण पत्र युक्त होनी चाहिए। कृपया लंबी रचनाएं न भेजें। एक ही पृष्ठ पर या पन्ने पर एक से अधिक लघु-कथा या काव्य रचनाएं कदापि न भेजें।
4. 'परती पलार' में प्रकाशनार्थ प्रेषित रचना अन्य किसी पत्रिका को कृपया तब तक न भेजें जब तक कि रचना की अस्वीकृति सम्बन्धी सूचना आपको नहीं मिल जाती।

प्रधान सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हारुन रशीद 'गाफिल' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : हारुन रशीद
उपनाम : गाफिल
शिक्षा : एम.ए., एल.एल.बी., बी. लिब., पी.एच.डी. (जारी)
जन्म : 05.05.1965
संप्रति : अधिवक्ता, पत्रकार, उद्घोषक एवं स्वतंत्र लेखन। **पता** : फ़ैज़ नगर, एन.एच-57, गैमारी अररिया-854311, (बिहार), **मो.** : 09430264552

(1)

दुख के काँटे चुभे हैं पाँव में
कैसे जाँऊ मैं अपने गाँव में

जाने क्या बात कह दिया उसने?
ज़हर घुलने लगा हवाओं में

जबसे बस्ती उजाड़ दी तू ने
लोग बसने लगे गुफाओं में

दिल को छू जाएँ गर मेरी ग़ज़लें
याद रखना मुझे दुआओं में

किससे बातें करोगे ऐ 'गाफिल'?
लोग तो बँट गए दिशाओं में

(2)

हवाओं को मैंने कहानी सुना दी
बड़े शौक से अपनी दुनियां लुटा दी

जिसे पहली फुरसत में मैंने दुआ दी
उसी ने मुझे सबसे पहले सज़ा दी

अगर साथ चलने की हिम्मत नहीं थी
तो फिर क्यों मुहब्बत की आँधी चला दी

मुझे खुद से मिलने का जब शौक उभरा
तो कमरे में तस्वीर उनकी लगा दी

जो पूछा किसी ने कि कैसी है दुनियां?
ग़ज़ल मैंने 'गाफिल' की उनको सुना दी

(3)

साज़े-उल्फत पे गीत गा न सके
जख्मे-दिल भी उन्हें दिखा न सके

राहे-उल्फत थी खार-दार बहुत
खुद को काँटों पे हम चला न सके

शायरी जिनके वास्ते की थी
आज तक उनको कुछ सुना न सके

हमने क्यों उनको पा के छोड़ दिया
राज यह आज तक बता न सके

दिल की दुनियां जला दी पल भर में
आपका खत मगर जला न सके

हम तो पलकें बिछाए बैठे थे
आप ही हसबे वादा आ न सके

तुझसे 'गाफिल' रहे मगर फिर भी
जिंदगी हम तुझे भूला न सके

(4)

आप जीने की नई राह दिखाते क्यों हैं
दिल के सोये हुए जज़्बात जगाते क्यों हैं

हर एक हाल में हँसने की कसम खाई थी
गम की राहों में अब अश्क बहाते क्यों हैं

दस्ते-हालात से बच सकना बहुत मुश्किल है
आप रो-रो कर दिल अपना जलाते क्यों हैं

न हो शऊरे-वफा जब तो ज़िंदगी क्या है
ये हक़ीक़त है मगर आप भुलाते क्यों हैं

हम तो 'गाफिल' हैं तेरी याद भुला बैठे थे
याद बीते हुए लम्हों की दिलाते क्यों हैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एहसान क़ासमी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मो. एहसानुल इसलाम
साहित्यिक नाम : एहसान क़ासमी
जन्म : 22 फरवरी, 1954
जन्म स्थान : नूरी नगर, खजांची हाट, पूर्णियाँ
शिक्षा : बी.ए. अर्थशास्त्र (प्रतिष्ठा)
काव्य कृतियाँ : प्रथम कहानी–'पहला पत्थर' 1974 में अन्य कहानियाँ/ड्रामें/कविताएँ/ग़ज़लें उर्दू की विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित, रेणु माटी के कथाकार' कथा संग्रह में 'नमक हराम' शीर्षक कहानी शामिल।
संप्रति : शाखा-प्रबन्धक, उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक।

(1)

किसी ने छेड़ दिया था लहक रही है हवा
कि जैसे कोई शराबी बहक रही है हवा

अभी तो रात ने आँचल ज़रा समेटा है
किरण की डाल पे बैठी चहक रही है हवा

किसी के पाँव तले थी वह शबनमी आहट
कि गुल के संग चटक कर महक रही है हवा

कभी निगाह चुरा ले, कभी मिला के हँसे
कोई यह सोच न बैठे सनक रही है हवा

जुनून-ए-जज़बए मस्ती में ज़ुल्फ़ बिखराये
मेरे खयाल की पगली भटक रही है हवा

कहाँ से आए यह छींटे मेरी तरफ एहसाँ
नहा के देख वह ज़ुल्फ़ें झटक रही है हवा

(2)

ठंडक, गर्मी, नर्मी, शबनम
मोती, आँसू, पानी शबनम

भीगी ज़ुल्फें, झिलमिल काया
चंचल पग, दीवानी शबनम

सूरज साजन,चन्दा बाबुल
दुलहन है लाफ़ानी शबनम

सब्ज़ा-सब्ज़ा बिखरी निखरी
रातों की नादानी शबनम

भारी पल्लू, लंबा घूंघट
ऊँचा घर सेठानी शबनम

साड़ी सादा, सादा चश्मा
भोली-सी उस्तानी शबनम

जंगल-जंगल धोनी मारे
जोगन बन मस्तानी शबनम

कैसी तेरी चाहत एहसाँ
करती है मनमानी शबनम

(3)

धरती ने फिर खोली जुल्फ़ें
आंगन में इतराई शाम

पत्ता, डाली, गुलशन, जंगल
परबत, सहरा, वादी शाम

अल्ला जाने छेड़ा किसने
सड़कों पर मदमाई शाम

आमों के पेड़ों के पीछे
गाओं की शरमाई शाम

खेले हैं सागर से होली
साहिल पर इठलाई शाम

नागन जैसे रक्साँ कोई
लहराई, बलखाई शाम

जाने किस साँवल की धुन में
जमना तट पर आई शाम

अंधेरे के नीज़े, तीरे
हिरनी-सी घबराई शाम

एहसाँ जैसे दिन हैं तेरे
लम्हा-लम्हा ढलती शाम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funded by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अशोक आलोक की ग़ज़लें

परिचय

नाम : अशोक आलोक
जन्मतिथि : 20.01.1959
शिक्षा : एम.एस.सी. (गणित)
पुस्तकें : 'आईने के सामने', 'लिबास' (ग़ज़ल संग्रह)
साहित्यिक उपलब्धियाँ : स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में गीत, ग़ज़ल दोहे, कविता, समीक्षा आदि प्रकाशित एवं आकाशवाणी एवं दूरदर्शन द्वारा प्रसारित। अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।
संप्रति : बैंक कर्मी।
संपर्क : इलाहाबाद बैंक, जमालपुर, मुंगेर-811214 (बिहार)
मो. 9430926599

(1)

मैं कोई पत्थर नहीं जो आईना तोड़ा करूँ
झूठ की बुनियाद पर सच का घड़ा फोड़ा करूँ

लोग चाहें या न चाहें बेबसों को इस कदर
मेरी फितरत है नहीं मँझधार में छोड़ा करूँ

तेज आँधी में यकीनन आशियाना है मेरा
बाद में मुमकिन नहीं कि हौसला थोड़ा करूँ

खुशनुमां एहसास का मंज़र लिए है ज़िंदगी
डोर रिश्तों की न टूटे इस कदर जोड़ा करूँ

चाँदनी ख़ामोशियों की धुँध में लिपटी रही
इस नए हालात से कैसे नज़र मोड़ा करूँ

(2)

फूलों की बस्तियों में ज़ख़्मों के सिलसिले
काँटों से चुभ रहे हैं खुशियों के सिलसिले

संकल्प नया लेकर आयी नई सुबह
ऊँची उड़ान में हैं पंखों के सिलसिले

कितने हसीन मंज़र आँखों के सामने
जाएँ नहीं गुजर ये यादों के सिलसिले

एहसास की जमीं पर है चाँदनी बिछी
होठों पे सज रहे हैं गीतों के सिलसिले

हर शख़्स के दिलों की हर बात नई है
आँखों में झाँकते हैं सपनों के सिलसिले

(3)

मेरे हालात पर कोई तरस खाए भी क्यों
दिखाने भीगती आँखें भला आए भी क्यों।

समझता है नहीं कोई नहीं मैं हूँ बुरा
मैं अच्छा हूँ कोई दिल को ये समझाए भी क्यों।

किसी अनजान रिश्ते से सफ़र में बारहा
मिला है जो बदन पर ज़ख़्म सहलाए भी क्यों।

समय के साथ चलिए है मुनासिब या नहीं
समझता सब जुबां पर सच मगर लाए भी क्यों।

किसी नादान बच्चे की तरह है दिल मेरा
हक़ीक़त में शराफत क्या है बतलाए भी क्यों।

(4)

अनकही अपनी कहानी रह गई
रेत की दीवार जैसी ढह गई

रात की तन्हाइयों में क्या हुआ
मौन आँखों की जवानी कह गई

ज़ख़्म अनचाहे सफ़र में मिल गया
ज़िंदगी सब कुछ मगर क्यों सह गई

स्वप्न रेगिस्तान बनकर झाँकता
जिस्म के अंदर नदी थी बह गई

क्या कहें कैसे भटकती ज़िंदगी
बेखुदी में हाथ किसका गह गई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मिथिलेश 'गहमरी' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मिथिलेश 'गहमरी'
जन्म : 05-09-70
जन्म स्थान : जिला गाजीपुर (उ.प्र.)
प्रकाशन : 'धूप की चादर' (ग़ज़ल संग्रह)
शीघ्र प्रकाश्य : 'रेत पर नाव' (भोजपुरी ग़ज़ल संग्रह)
संपर्क : गहमर, जिला-गाजीपुर-232327 (उ.प्र.)
मो. 09451936687

(1)

कभी भी आईने को टूटने का डर नहीं होता
जहाँ वालों के हाथों में अगर पत्थर नहीं होता
अगर तुम घर से निकलो तो बुज़ुर्गों की दुआ ले लो
मेरे भाई, कोई भी हादसा कहकर नहीं होता
खुशी के वास्ते उस घर का हर कोना तरसता है
कि जिस घर में कभी माँ-बाप का आदर नहीं होता
बना लो मोम का, शीशे का, चाहे संगमरमर का
मुहब्बत के बिना कोई मुकम्मल घर नहीं होता
लगाने आग निकले हो मगर इतना समझ लेना
कोई मज़हब हो, वह इनसान से बढ़कर नहीं होता
हुनर देवत्व का, व्यक्तित्व में होना ज़रूरी है
महज विषपान करने से कोई शंकर नहीं होता

(2)

कल तक थी जो समुन्दर, बाबा
रीती है वह गागर, बाबा
रात चली कुछ ऐसी आँधी
घर का उजड़ा छप्पर, बाबा
तन को कैसे ढँक पाएगी
फटी-पुरानी चादर, बाबा
झील की टूट गई खामोशी
किसने फेंका कंकर, बाबा
ताक में डँसने को बैठे हैं
गुलदानों में विषधर, बाबा
जो बाहर से मोम सरीखा
वह अंदर से पत्थर, बाबा
इनसानों की बस्ती अब तो
मरघट से भी बढ़कर बाबा
आओ, दिल का बोझ उठाएँ
सुख-दुख बाँटें, मिलकर, बाबा

(3)

चमन में लोग जो आए थे बाग़वाँ बनकर
गिरा रहे हैं दरख़्तों को आँधियाँ बनकर
हवाओं रख लो मुझे प्यार की किताबों में
खिला हूँ शाख पे गुलशन की दास्ताँ बनकर
उन्हीं को मिलती है दुनिया में मोतियों की चमक
जो झेलते हैं समुन्दर को सीपियाँ बनकर
चमन में लोग उसे ढूँढ़ते हुए आए
जो खो गया है सितारों में क़हक़शाँ बनकर
हमेशा एक ही औरत घरों में रहती है
कहीं बहन, कहीं पत्नी, कहीं पे माँ बनकर

(4)

कोई सूरज, न कोई तारा है
अब चिराग़ों का ही सहारा है
लोग अँधेरों से प्यार करने लगे
इस क़दर रौशनी ने मारा है
हर जगह आग है तअस्सुब की
अब वफ़ा का कहाँ गुज़ारा है
प्यास नदियों की क्या बुझाएगा
जब समुंदर का जल ही खारा है
नाव, तूफ़ाँ से लड़ रही है, मगर
छूटता जा रहा किनारा है
वो भी करते हैं आत्मा की बात
जिनका ईमान पारा-पारा है
प्यार-मिल्लत है फ़र्श पर ज़ख़्मी
अर्श पर एकता का नारा है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परिचय

नाम : डॉ. अशोक गोयल 'अशोक'
जन्म तिथि : 30 अगस्त, 1953
शिक्षा : बी.एम.सी., बी.ए.एम.एस.
पैशा : डॉक्टर
पता : 27, गढा काम्पलेक्स, ज्योति टॉकीज रोड, गुना-473001 (म.प्र)
मो. : 09977883222, (07542) 252170

डॉ. अशोक गोयल 'अशोक' की ग़ज़लें

(1)

खुद को तलाश कर के परेशान हो गए,
हम आज अपने घर में ही मेहमान हो गए।
सूरत बदलने से तो बदलता नहीं कोई,
तुम ये समझ रहे हो कि इनसान हो गए।
हम तो समझ रहे थे हमीं दर्दमंद हैं,
देखा जहाँ का दर्द तो हैरान हो गए।
उसकी अता है ये उसी का रंग रूप है,
हम आज उसके दर पे ही दरबान हो गए।
मिलना हुआ जो खुद से तो ये वाक़या हुआ,
हम आज अपने आप से अंजान हो गए।
इनसानियत से जिनका कोई वास्त नहीं,
नज़रों में वो ज़माने की इनसान हो गए।

(2)

पत्थर हुए हैं हम, कि मुहब्बत नहीं रही,
अब हम में आदमी की-सी फ़ितरत नहीं रही।
अच्छा हुआ जो वक़्त पे,हम खुद से मिल लिए,
दुनिया को अब हमारी, ज़रूरत नहीं रही।
बच्चे जवाँ हुए तो, कई वाक़ये हुए,
घर में हमारे कोई रिवायत नहीं रही।
इक रंग हो गई है ज़माने की ये फ़ज़ा,
सच कहने की किसी में भी हिम्मत नहीं रही।
कोई उसूल है न कोई फ़र्ज़ ही रहा,
हम पर रवायतों की अमानत नहीं रही।

हितेश कुमार शर्मा की ग़ज़लें

(1)

ख़ून होते देखिए इंसाफ का, और कुछ मत बोलिए कानून है,
मुद्दई हैं आप मुंसिफ तो नहीं, मत जुबां को खोलिए कानून है।

गर ज़िरह ज़्यादा करेंगे आप तो, जुर्म से पहले सज़ा हो जाएगी,
पक्ष कितना भी बहुत मजबूत हो, पर न ज़्यादा तोलिए कानून है।

आप जितने भी गवाह लाए थे सब, आपके विपरीत जाकर मिल गए,
बिक गए हैं सभी साक्षी आपके, और बदजन हो लिए कानून है।

मशवरा है आपको मेरा मियां, और अनुभव भी यही अब तक रहा,
आँख के आँसू सभी पी जाइए, पर न रोते डोलिए, कानून है।

राम के वनवास चौदह वर्ष-सा, चल रहा है जो मुकदमा आपका,
जब तलक रावण मरेगा तब तलक, कुछ न होगा झेलिए, कानून है।

लग रहा है यह तमाशा न्याय का, ज़िंदगी में खत्म तो होगा नहीं,
उम्र जो भी शेष है दुलराइए, पर जहर मत घोलिए कानून है।

अपनी कोशिश में कमी मत लाइए, बैठना थकना कभी मत ना हितेश,
एक दिन तो सत्य की होगी विजय, हाथ सबने धो लिए, कानून है।

(2)

न्याय कितना हो गया है आज बौना देखिए,
हाथ में धृतराष्ट्र के जैसे खिलौना देखिए।

जानते हैं आप भी यह कत्ल है किसने किया,
साक्ष्यों के बीच में कातिल का खोना देखिए।

एक व्यभिचारी, बलात्कारी बचाने के लिए,
दुःखी महिला से जिरह का–ढंग घिनौना देखिए।

झूठ दस बोले थे मुजरिम ने किए सौ आपने,
आईने में पाप का चेहरा सलोना देखिए।

इक मुकदमा उम्र भर के वास्ते काफी हुआ,
देर से इंसाफ का होना न होना देखिए।

खैर ज़्यादा दिन चलेगा पाँव से अपने नहीं,
यह जो रिश्वत से हुआ उत्पन्न छौना देखिए।

आज मुर्दा न्याय को भी दफ़न कर दें चल हितेश,
इसलिए शमशान का एकांत कोना देखिए।

**सम्पर्क : गणपति काम्प्लैक्स, सिविल लाइन्स,
बिजनौर–246701 (उ.प्र.)**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महावीर उत्तरांचली की ग़ज़लें

(1)

रात अभी और गहराएगी,
ग़म की बदली जो छाएगी।

इज़्ज़त बेचेगी गुरबत,
बच्चों की भूख मिटाएगी।

'साहिर' ने जिसका जिक्र किया,
वो सुबह कभी ना आएगी।

बस क़त्ल यहाँ होंगे मुफलिस,
आह तलक कुचली जाएगी।

ख़ामोश 'महावीर' रहो तुम,
बात न समझी जाएगी।

(2)

कोई मेरे भीतर है अय्यार-सा,
ख़ुदी को मैं पाऊँ गुनहगार-सा।

हुए सारे ही रिश्ते तक़सीम जब,
गिरा बीच आँगन मैं दीवार-सा।

अदा क़ातिलाना, नज़र उफ् तौबा!
मिरा दिल हुआ है गिरफ़्तार-सा।

'महावीर' रूठे वो, तो दे मज़ा,
छलक आवे आँखों में कुछ प्यार-सा।

(3)

काश! होता मज़ा कहानी में,
दिल मिरा बुझ गया जवानी में।

फूल खिलते न अब चमेली पर,
बात वो है न रात रानी में।

उनकी उल्फ़त में ये मिला हमको,
ज़ख़्म पाए हैं बस निशानी में।

आओ दिखलाएँ एक अनहोनी,
आग लगती है कैसे पानी में।

तुम रहे पाक साफ़ दिल हरदम,
मैं रहा सिर्फ़ बदगुमानी में।

(4)

यूँ जहाँ तक बने चुप ही मैं रहता हूँ,
कुछ जो कहना पड़े तो ग़ज़ल कहता हूँ।

जो भी कहना हो काग़ज़ पे करके रक़म,
फिर कलम रखके ख़ामोश हो रहता हूँ।

ढूँढ़ते हो कहाँ मुझको ऐ दोस्तो!
आबशारे-ग़ज़ल बनके मैं बहता हूँ।

दोस्तो! जिन दिनों ज़िंदगी थी ग़ज़ल,
खुश था मैं उन दिनों, अब नहीं रहता हूँ।

संपर्क : बी-4/79, पर्यटन बिहार, वसुंधरा इंक्लेव
दिल्ली-110096, मो.9818150516

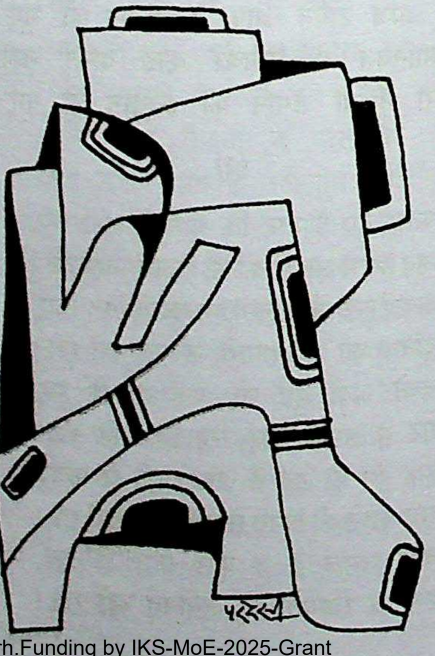

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिवशरण बंधु की ग़ज़लें

(1)

दम घुट रहा है दोस्त तनावों के दरमियाँ,
कैसे जिएगा कोई अभावों के दरमियाँ।

कैसे कहेंगे आप कि बुझने न पाएँगे,
आएँगे जब चराग़ हवाओं के दरमियाँ।

होगा वही जनाव सियासत में कामयाव,
बोलेगा जो भी झूठ सभाओं के दरमियाँ।

क्या बात है कि आज भी दौरे-जदीद में,
इंसान खो रहा है ख़ुदाओं के दरमियाँ।

इतने बरस के बाद भी किस हाल में है मुल्क,
जाकर तो देख लीजिए गाँवों के दरमियाँ।

(2)

बोलो कि मेरे ख़्वाब की तावीर कहाँ है,
जो हमने बनाई थी वो तस्वीर कहाँ है।

वादल हूँ, हवा हूँ मैं परिंदा हूँ वक़्त का,
बाँधे जो मेरे पाँव वो ज़ंजीर कहाँ है।

आपस का मेलजोल, बुजुर्गों का एहतराम,
तहज़ीबो-तमद्दुन की वो जागीर कहाँ है।

देखे तो कोई ग़ौर से हिंदोस्तान को,
मिसमार ही मिसमार है तामीर कहाँ है।

खिलते थे जहाँ झील में अम्नो-अमाँ के फूल,
कहते थे जिसे जन्नते कश्मीर कहाँ है।

(3)

सारी बस्ती गूँगी, जंगल बहरा है,
दहशत का भी हर इक जानिब पहरा है।

हमको है मालूम, उतर कर देखा है,
इस दरिया में पानी कितना गहरा है।

कौन करे पहचान भरम की दुनिया में,
किसका नकली, किसका असली चेहरा है।

जिसकी खोज ज़माने भर से जारी है,
इत्तफ़ाक़ से इसी शहर में ठहरा है।

उनके आगे ताज़ा-ताज़ा हरियाली,
अपने आगे सूखा-सूखा सहरा है।

(4)

कीचड़ है, गंदगी है, धुवाँ है, अज़ाब है,
कुछ भी नहीं है ठीक यहाँ सब खराव है।

घर से निकल के देखा उजाला कहीं न था,
कहते थे आसमान में इक आफ़ताब है।

मौसम की तरहा जो भी बदलता है पैरहन,
हर मोड़ पे वो खुश है, वही कामयाब है।

इनसानियत के ख़ून की जिसमें हो पैरवी,
वो कौन-सा वरक़ है, वो कैसी किताब है।

हम भी तुम्हारी बात करेंगे तभी तलक,
जब तक तुम्हारे कोट में ताज़ा गुलाब है।

संपर्क : हथगाम-फतेहपुर-212652 (उ.प्र.)
मो. 09415166683

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेहमूद 'हमसर' अब्बासी की ग़ज़लें

परिचय

नाम : मेहमूद खान अब्बासी
उपनाम : मेहमूद 'हमसर' अब्बासी
जन्मतिथि : 27.7.1950
जन्मस्थान : आबू रोड (राज.) **शिक्षा :** मैट्रिक (नीमच, म.प्र.), **प्रकाशन :** अनेक पत्र-पत्रिकाओं एवं सहयोगी संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित दुष्यंत के बाद ग़ज़ल भाग-3, दीदार-रिवाईती ग़ज़लें।, **संप्रति :** रेलवे से सेवानिवृत
संपर्क : राणा वास, गाँधी नगर, आबू रोड (राज.)-307026
मो. : 9829786598

(1)

किस्सा सुनाएँगी कभी अजमत का वादियाँ,
खुद रोशनी ये देंगी नशेमन को बिजलियाँ।
घायल करेंगे नेज़े ये बेकारियों के रोज़,
खा जाएँगी ये दीमकें इक रोज़ डिग्रियाँ।
फैले हैं हादिसे तो पतंगों की तरह से,
गिन-गिन के थक गईं इन्हें मेरी ये उँगलियाँ।
अख़्लाक को रवां रखो यारों इसी तरह,
मिटने लगेंगी देखना ये दिल की दूरियाँ।
कोई अज़ब नहीं ये फसादात शहर के,
लड़ने लगी हैं अब तो ये संसद में कुर्सियाँ।
भूखे जहेज़ के ऐ परस्तार एक दिन,
खा जाएँगी तुम्हें किसी अबला की सिसकियाँ।
शोहरत पे नाज़ करना यूँ 'हमसर तू' छोड़ दे,
अच्छे भले शज़र को गिराए हैं आधियाँ।

(2)

नाव तू पतवार हूँ मैं,
साथ है तो पार हूँ मैं।
डिग्रियाँ कब काम आईं,
बेहुनर-बेकार हूँ मैं।
गीत उल्फत के सुनाऊँ,
दोस्तों फनकार हूँ मैं।
रौनकें लाऊँ कहाँ से,
इक लुटा बाज़ार हूँ मैं।
मैं न आया तेरे दर तक,
देख ले खुद्दार हूँ मैं।
साफगोई शै बुरी है,
इसलिए बेकार हूँ मैं।
है कलम हाथों में लेकिन,
तीर हूँ तलवार हूँ मैं।
देख ले इकबार 'हमसर',
प्यार का इज़हार हूँ मैं।

(3)

लोग जाने कहाँ से आते हैं,
आग बस्ती में जो लगाते हैं।
ज़िंदगी इस तरह बिताते हैं,
ज़ख्म खाते हैं, भूल जाते हैं।
शर्म कैसी मियाँ ये मेहनत में,
लोग रिक्शा भी तो चलाते हैं।
उनकी खुशबू ये कह गई मुझसे,
सर्द झोंके मुझे सताते हैं।
उनको काँटों से डर नहीं लगता,
फूल गुलदाँ में जो सजाते हैं।
उनकी दरिया से दोस्ती कैसी,
नाव तूफां में जो चलाते हैं।
ली है माँ-बाप की दुआ 'हमसर',
हर मुसीबत में वो बचाते हैं।

(4)

हक ये अपना यहाँ जताने को,
अच्छा गढ़ते हैं ये फ़साने को।
फिर जला देगा कोई दंगों में,
लोग डरते हैं घर बनाने को।
टूट जाता है काँच की सूरत,
किसने बोला था दिल लगाने को।
दोनों हाथों से ये लुटाते हैं,
उम्र लगती है धन क़माने को।
प्यार अखलाक हो गए गायब,
आग लग जाए इस ज़माने को।
चाल चल दी है सोचकर उसने,
रास्ते से हमें हटाने को।
मुझको 'हमसर' ख़बर तो है इतनी,
फिर मुसीबत है कोई आने को।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कैलाश झा 'किंकर' की ग़ज़लें

(1)

दब रही आवाज़ है
राज़ बिलकुल राज़ है।
अब हमें क्या देखना
ताज है तो ताज है।
पाँव पर गिरता है क्यों
अर्श है सरताज है।
फूल अंगारे हुए
तल्ख हर अंदाज़ है।
और आगे और जा
बस तुम्हीं पर नाज है।

(2)

सोचने की बात है
क्यों मिली सौग़ात है।
सुख न मिलता दुख बिना
दिन के पहले रात है।
क्यों तुम्हारी आँख में
अश्क की बरसात है।
जीतने के जोश में
घात है प्रतिघात है।
शांत भी होने तो दें
घोर झंझावात है।

(3)

दिल की बात जुबां पर आई
बाहर आई है सच्चाई।
जर-ज़मीन-जोरू के कारण
लड़ता रहता भाई-भाई।
आज पिता को बेबश देखा
जब बेटों ने की रूसवाई।
चाल-चलन सब बदल गए हैं
जब से आई है तरुणाई।

परिचय

नाम : कैलाश झा 'किंकर'
जन्म तिथि : 12 जनवरी, 1962
शिक्षा : एम.ए. (इतिहास) एल.एल.बी।
जन्म स्थल : पर्रा, बेगूसराय
पैतृक निवास : हरिपुर, अलौली, खगड़िया–848203
प्रकाशित कृति : हिंदी में तीन कविता संग्रह, दो ग़ज़ल संग्रह, एक हास्य-व्यंग्य और अंगिका में दो काव्य संग्रह
संपादित कृति : कई पत्रिकाओं एवं पुस्तकों का संपादन
गतिविधियाँ : अनेक पत्रिकाओं एवं साहित्यिक संगठनों से संबद्ध
विशेष : रचनाएँ देश के शताधिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित एवं आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से प्रसारित। पंजाबी भाषा में अनूदित /प्रकाशित।
सम्मान/पुरस्कार : बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, दिल्ली, हरियाणा, म.प्र. आदि प्रदेशों की साहित्यिक संस्थाओं के द्वारा सम्मानित/पुरस्कृत
संपर्क : क्रांति भवन, चित्रगुप्त नगर,खगड़िया–851204,
मो. : 09430042712, 06244–225413,

जाओ जाओ समझ गए हम
तुम भी लगते हो हरजाई।

(4)

घड़ी दो घड़ी की मुलाकात में
मुहब्बत हुई बात ही बात में
न आगे न पीछे ज़रा सोचती
बहे जा रही सिर्फ जज़बात में
चली तोड़ बंधन पुराने सभी
उमड़ती नदी जैसे बरसात में
न इक़रार है अब न इनकार है
उलझती ही जाती सवालात में
नहीं चैन मिलता है दिन में कभी
नहीं नींद आती उसे रात में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अक्षय गोजा की ग़ज़लें

परिचय

नाम : अक्षय गोजा
जन्म : 23 दिसंबर, 1941 जोधपुर
शिक्षा : एम.ए. अंग्रेजी साहित्य
प्रकाशन : काव्य कृतियाँ 'ठहाके मार कर हँसो', 'नए जनमों की बात करें' (ग़ज़ल) 'आप ही तो मेरे गुरु हैं', 'अपने-अपने चेहरे', 'हर पल महाभारत', 'भविष्य मेरी आँखों में', 'खुशबू अंतहीन', 'तो अब चिंता क्या है', 'आत्म-विजय की ओर', 'क्षितिजों की सरहदें' (ग़ज़ल), 'सदियों का सपना', 'विष में अमृत' (ग़ज़ल), 'टुकड़े-टुकड़े चाँद', 'बूंद बिन सागर' (ग़ज़ल), 'अक्षय शांति की खोज' (सं. शिशुपाल सिंह 'नारसरा'), 'बीच डगरिया' (गीत), 'सागर में रेगिस्तान' (ग़ज़ल) तथा 'खुशमिज़ाज लड़की' (कहानी संग्रह)। 474 कविताएँ 211 पत्र-पत्रिकाओं तथा 320 ग़ज़लें 126 पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।) 'साहित्यमंजरी' पत्रिका का अक्षय गोजा पर केंद्रित अंक-8 तथा 'गुफ्तगू' पत्रिका का अक्षय गोजा पर परिशिष्टांक जून, 2007
समवेत काव्य संग्रह : 56 काव्य संग्रहों में रचनाएँ सम्मिलित
परिचय-ग्रंथ : सत्रह ग्रंथों में परिचय सम्मिलित।
पत्रकारिता : 'यू. एन. आई.' 'नेशनल हेरल्ड' तथा 'राजस्थान पत्रिका' के संवाददाता रहे। 'जलते दीप' दैनिक तथा 'अभयदूत' सप्ताहिक का संपादन किया। हिंदी-अंग्रेजी की 'दि मिरर' 'वूमन्स एरा', 'नवभारत टाइम्स', 'मुक्ता' आदि पत्र-पत्रिकाओं में फीचर प्रकाशित। 'अलीजा की डायरी', (हास्य-व्यंग स्तम्भ) का लेखन। **प्रसारण :** आकाशवाणी के जोधपुर केंद्र से कविताएँ, कहानियाँ तथा वार्ताएँ प्रसारित
संपर्क-सूत्र : चाँद पोल गेट के पास, जोधपुर-342001
मो. : 9351289217, 0291-2790127,

(1)

इंसान की उपलब्धियाँ यूँ कम नहीं
ये भी कि संहारक बना, खुद, यम नहीं

उन दूर नक्षत्रों में जाकर खुश हुए
पर पास गंदी बस्तियों का ग़म नहीं

दुनिया बड़ी अब हो रही छोटी बहुत
लेकिन हदें भीतर की होतीं कम नहीं

यूँ दायरा समृद्धि का बढ़ ही रहा
पर भूख का होता कभी भी कम नहीं

आगे सितारों के जहाँ तो खोजते
कैसे स्वयं को खोज लें ये दम नहीं

(2)

फूल जैसी ताज़गी अच्छी लगे
भौंरे की दीवानगी अच्छी लगे

चाँदनी की सेज कोमल सुख-भरी
धूप की मर्दानगी अच्छी लगे

लक्ष-उन्मुखता प्रकृति-व्यवहार की
ये ग्रहों की बानगी अच्छी लगे

चित्रकारी शाम के आकाश की
सुबह की वो सादगी अच्छी लगे

रोशनी ही रोशनी ब्रह्मांड में
साँस की आवारगी अच्छी लगे

(3)

जब दिल खुश हो लब मुसकाए
चाँद उगे तो शब मुसकाए

भूल गए दुख के साये में
पहले हम थे कब मुसकाए

कोई हँसता कोई रोता
घर में सुख तो सब मुसकाए

हर ओर सफलता मिलती हो
तो आकाश ग़ज़ब मुसकाए

जब-जब होती है जय सच की
हर इक कण में रब मुसकाए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किशन स्वरूप की ग़ज़लें

परिचय

नाम : किशन स्वरूप।
जन्म : 30 दिसंबर, 1942, अलीगढ़ (उ.प्र.) जनपद के भानऊँ नामक ग्राम में
शिक्षा : बी.एस.सी. इंजीनियरिंग
लेखन : गीत, ग़ज़ल, कविता एवं व्यंग्य।
कृतियाँ : विभिन्न विधा की 15 पुस्तकें प्रकाशित।
संप्रति : सेवानिवृत्त, स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : 108/3, मंगल पांडे नगर, मेरठ (उ.प्र.)
मो. : 09837003216, 0121-2603523

(1)

कभी तू हो या ख़ुशबू हो तो ये दर बोलता है
तू आए तो मुँडेरों पर कबूतर बोलता है

कभी महसूस होता है कि मैं हूँ और बस मैं हूँ
बड़ी तनहाइयों के दरमियाँ डर बोलता है

सफर में रास्ते हैं, काफ़िले हैं, मंज़िलें भी हैं
मगर हर राहजन के लफ्ज़ रहबर बोलता है

अज़ाँ के साथ जब भी आरती के स्वर सुनाई दें
मुझे लगता यही अल्लाह, ईश्वर बोलता है

बड़ा ग़मगीन रहता है मिलन की चाह में यारों
सदा दरिया की चाहत में समंदर बोलता है

मुझे सुध-बुध नहीं रहती तुम्हें जब याद करता हूँ
मिरे सर पर तिरा जादू जो चढ़कर बोलता है

मुझे तौफ़ीक दी उसने कि मैं हमदम बनूँ सबका
मगर कैसी ये फितरत है तवंगर बोलता है

(2)

मेरी तनहाई मुझे ढूंढ रही है खुद ही
दश्त में अपनी सदा मैंने सुनी है खुद ही

ज़ख़्म इतने हैं कि गिनना भी बहुत मुश्किल है
दर्द ने राह निकलने की चुनी है खुद ही

आपसे मिल के मुझे यूँ ही भला लगता है
मेरी नज़रों ने यही बात कही है खुद ही

हर ग़लत काम के आगाज़ से रोका है मुझे
मैंने आवाज़ें-आना जब भी सुनी है खुद ही

आज से कल का सफ़र उम्र घटा देता है
वक़्त ने मुझसे यही बात कही है खुद ही

मुझ को बदनाम किया है मेरी खुद्दारी ने
लोग समझेंगे मेरी बात सही है खुद ही

जंग होती है तो महसूस हुआ है मुझको
इस तरफ मैं हूँ उधर मेरी खुदी है, खुद ही

इन उजालों को सहेजूँ या अँधेरों को 'स्वरूप'
ज़िंदगी रात और दिन मिल के बनी है खुद ही

(3)

बचपन से अब तक की यादें बोल उठीं
सन्नाटे की सब आवाज़ें बोल उठीं

भाई से जब बात उठीं बँटवारे की
घर के आँगन में दीवारें बोल उठीं

मुद्दत बाद अचानक उनसे भेंट हुई
आलिंगन को फैली बाहें बोल उठीं

वो जब मुझसे रुख़्सत होकर चला गया
पीछा करती हुई निगाहें बोल उठीं

प्यार मोहब्बत रंजिश बैर नहीं छुपते
ख़ामोशी में चुप अफ़वाहें बोल उठीं

उसने जब अहसान जताया कुछ देकर
मैं चुप था उसकी सौग़ातें बोल उठीं

टूटा-फूटा एक खिलौना काफ़ी है
चेहरे पर आई मुसकानें बोल उठीं

अब तक चुप था, कब तक चुप है, बोल जरा
ऐ! 'स्वरूप' अब तेरी ग़ज़लें बोल उठीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंजनी कुमार 'सुमन' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : अंजनी कुमार 'सुमन'
जन्म : 26 जनवरी, 1984
शिक्षा : स्नातकोत्तर (प्राचीन इतिहास)
प्रकाशन : ग़ज़ल संग्रह 'ग़ज़ल : दुष्यंत के बाद 'भाग-3' सहित कई स्तरीय पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित
प्रसारण : आकाशवाणी भागलपुर द्वारा नियमित कविता पाठ
संपादन सहयोग : प्रबंध संपादक, 'साहित्य प्रहरी', प्रबंध संपादक, 'अंग प्रहरी'
संप्रति : अध्ययन एवं स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : बाग नौलक्खा, सफियासराय, मुंगेर-811214 (बिहार)
दूरभाष : 06344-24408

(1)

कभी तो आओगे लौट कर तुम पुराने सपने हजार लेके,
तुम्हारे वादे पे जी रहा हूँ मैं चंद साँसें उधार लेके।

अजब-सी उठती है कशमकश अब मैं जब भी दर्पण में देखता हूँ,
ये चेहरा अब भी वही है लेकिन चले गए हो निखार लेके।

ये दिल का सौदा कठिन बहुत है बहुत है उलझे उलझ में इसके,
मेरा तो सौदा है सीधा-सीधा करार खोया करार लेके॥

मिली मुहब्बत तो प्यार देंगे बेकार कर्जे में क्यों पड़ेंगे,
जो दिल की दुनियां के बादशाह हैं वो क्या करेंगे उधार लेके॥

तू उसकी चौखट पे क्यों गया था रहम की थोड़ी-सी भीख लेने,
सजाई कितनों ने अपनी दुनिया जो सिर्फ माँ का दुलार लेके॥

(2)

हर बात में पोशीदगी अच्छी नहीं लगती,
जद्दोजहद की ज़िंदगी अच्छी नहीं लगती।

करने चले ठोकर लगी तो फिर समझ गए,
इस दौर को नेकी-बदी अच्छी नहीं लगती।

मेरी खुशी पे जल गए शायद वो इस कदर,
मनहूस को जैसे हँसी अच्छी नहीं लगती।

पहले तो कई रात अकेले भी रह गए,
अब एक पल भी बेरूखी अच्छी नहीं लगती।

इस नाम पे कुछ तीलियाँ साहब ने फेंक दीं,
शहरों में इतनी झोंपड़ी अच्छी नहीं लगती।

(3)

अकेला हूँ मगर मैं आपकी यादों में जीता हूँ,
कभी कसमों में जीता हूँ कभी वादों में जीता हूँ।

नहीं जीता तो बस जंजीर या दीवार के अंदर,
मैं तेरे प्रेम के बांधे हुए धागों में जीता हूँ।

अभी फिलहाल वो बसने लगा दिल के बहुत अंदर,
कहाँ तो कह रहा था वो कि मैं आँखों में जीता हूँ।

मुसीबत से बचाने को तुम्हें पिंजरा तो हासिल है,
मैं छोटी-सी खुली चिड़ियाँ कई बाजों में जीता हूँ।

किसी भी भीड़ में यूँ देर तक ढूँढा नहीं जाता,
यही पहचान है मेरी कि अपवादों में जीता हूँ।

(4)

जरूरी ये नहीं कि हर किसी का साथ मिल जाए,
जहाँ जाता हो मेरा दिल वहाँ औरों का दिल जाए।

अदावत हर जगह होती पड़ोसी में जमीं खातिर,
मुनासिब ये नहीं सबको बनाया कारगिल जाए।

चला है धमकियाँ देने कुल्हाड़ी हाथ में लेकर,
चलो इस नाम पर ही बरगदों के पाँव हिल जाए।

दवा दिल की करोगे इसलिए दिल की कही मैंने,
नहीं सोचा था ये सुनकर तेरे भी होंठ सिल जाए।

रहा दस्तूर जो ऐसा कहाँ की ये शराफत है,
जिसे मिलता रहा हरदम उसे हर बार मिल जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विपिन जैन की ग़ज़लें

(1)

ये रस्ते भटकाव भरे
राहगीर कैसे गुजरे
भीतर का पानी सूखा
सूख गए सब पेड़ हरे
वादा किया समंदर का
दिए आपने दो क़तरे
मस्ती में रह, तुझको क्या
कोई जिए या कोई मरे
एक अकेली जान हूँ मैं
आगे-पीछे सौ खतरे
उतनी ज़्यादा गर्द मिली
हम जितने गहरे उतरे
फूल काग़ज़ी हैं तो क्या
बने प्लास्टिक के भँवरे
हम नाचीज़ उसे समझे
पर उसके कितने नखरे
यह सवाल-सा जीवन भी
हर सवाल से लगा परे

(2)

मिला है जो जीवन बिताना तो है
भले दर्द हो मुस्कुराना तो है
बनाया जो कुदरत ने रिश्ता यही
वो रिश्ता भी आखिर निभाना तो है
सफर ज़िंदगी का कटे किस तरह
किसी को तो अपना बनाना तो है
कभी सारी बातें लगी व्यर्थ की
लगे फिर कि गुलशन सजाना तो है
कोई अपना हमदर्द चाहे न हो
हमें दर्द अपना सुनाना तो है
मुरादें न हों अपनी पूरी भले
तेरे सजदे में सर झुकाना तो है
सदा सुन के भी चाहे आए न वो
हमें उसको फिर-फिर बुलाना तो है
जो जलकर उजाला तो देगा मगर
उसे दिन ढले डूब जाना तो है
'विपिन' क्या करें बेदिली का गिला
हमारा उसे दिल दुखाना तो है

(3)

बैठ अकेले ख़्वाब न बुन
तू जीने का रस्ता चुन
क्यूं खुशियों के बीच सदा
सुनता रहा मातमी धुन
युद्ध शिखंडी जीत गया
ठगा देखता है अर्जुन
इन घुटती आवाज़ों में
सदा किसी के दिल की सुन
मन को निर्मल कर दे जो
है ऐसा कोई साबुन
रंग धुले सब जीवन के
क्या बसंत, कैसा फागुन
जिसको अपना मान लिया
क्या देखूँ उसके अवगुन

(4)

ज़िंदगी भी शै कोई बेकार हो जैसे
खुद से होती हुई बेजार हो जैसे
हमने अपने दिन गुजारे हैं इस तरह अक्सर
खुद से ही चलती रही तकरार हो जैसे
रोशनी हो या हवा उन तक नहीं जाती
हर तरफ कोई घनी दीवार हो जैसे
तू मिला मुझको मगर तू मिल नहीं पाया
अक्स तेरा आईने के पार हो जैसे
उम्र भर सजदा किया तूने रकीबों का
शाह के आगे झुका फनकार हो जैसे
चलता है दुनिया का कारोबार कुछ ऐसे
ये दुनिया एक बड़ा-सा बाजार हो जैसे

संपर्क : के.आई.-147, कवि नगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

केशव शरण की ग़ज़लें

(1)

उसको बाँहों में कस नहीं पाता
मैं बहारों का रस नहीं पाता

क्या मसीहा सुई लगाएगा
जो मरीजा की नस नहीं पाता

इस पहर कुछ है उस पहर कुछ है
ज़िंदगी जस की तस नहीं पाता

मेरा दिल हो गया हसीनों का
इस पे मैं अपना बस नहीं पाता

मन फटा है ये हर किसी से यूँ
मैं इसे फिर से लस नहीं पाता

आँसुओं की ये जो सुनामी है
.ख्वाब आँखों में बस नहीं पाता

सिर्फ़ रूसवाइयाँ मिला करतीं
प्यार दुनिया में जस नहीं पाता

(2)

सुहानी शाम बोलो क्या करूँ मैं
है खाली जाम बोलो क्या करूँ मैं

रूबाई में मसाइल ढालने हैं
उमर खय्याम बोलो क्या करूँ मैं

कभी का हो चुका मुझसे जुदा जो
लिया वो नाम बोलो क्या करूँ मैं

निकम्मा इश्क़ ने मुझको किया है
मगर तुम काम बोलो क्या करूँ मैं

मनाही, दर्द, दुश्मन प्यार में भी
कई आयाम बोलो क्या करूँ मैं

उसे छींटों से मैंने क्या बचाया
हुआ बदनाम बोलो क्या करूँ मैं

लिखा है एक मक़तल का ठिकाना
मिला पैग़ाम बोलो क्या करूँ मैं

परिचय

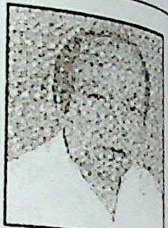

नाम : केशव शरण
जन्मतिथि : 23 अगस्त, 1960, वाराणसी।
प्रकाशित कृतियाँ : 'तालाब के पानी में लड़की (कविता संग्रह), 'जिधर खुला व्योम होता है' (कविता संग्रह), कड़ी धूप में' (हाइकु संग्रह), 'दर्द के खेत में (ग़ज़ल संग्रह)
संप्रति : सरकारी सेवा, वाराणसी, **संपर्क :** एस. 2/564, सिकरौल, वाराणसी-2 (उ.प्र.), **मो. :** 9415295137

(3)

रक़ीबखाना तलाशता हूँ
मैं दोस्ताना तलाशता हूँ

कहीं किसी में अभी बचा हो
गया ज़माना तलाशता हूँ

निकल पड़ा हूँ उठाए तंबू
नया ठिकाना तलाशता हूँ

कहाँ दबाए हैं मेरे पुरखे
गड़ा खज़ाना तलाशता हूँ

ग़ज़ब दरिंदा है तीर अंतिम
सही निशाना तलाशता हूँ

(4)

गुलों पे पत्थर ग़लत नहीं है
तुम्हारा उत्तर ग़लत नहीं है

कुसूर काग़ज़ की नाव का है
अगर समुंदर ग़लत नहीं है

कोई इलाक़ा जहान में हो
कहीं सिकंदर ग़लत नहीं है

तहों में दिल के पहुँच गया है
यहाँ भी खंजर ग़लत नहीं है

चिराग़ भी तो था रास्ते में
हवा ही अक्सर ग़लत नहीं है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. मोहन तिवारी 'आनंद' की ग़ज़लें

(1)

दोस्ती को यूँ रे मत बदनाम कर।
उससे डर, कुछ अच्छे-अच्छे काम कर॥

ज़िंदगी उसकी नियामत हैं समझ।
छोड़ ऊहापोह कुछ आराम कर॥

मंजिलें आसान हो जाऐंगी तब।
सोच ले परिणाम की, पतवार पहले थाम कर॥

आसमाँ से नहीं टपके हैं कभी सुख और दुःख।
अपनी करनी सुख व दुःख के नाम कर॥

क्यों नहीं तू छोड़ पाता अपनी ज़िद।
इस हठीलेपन को सीताराम कर॥

सौंप दी सारे जहाँ की फ़िकर मोहन।
मस्त होकर घूमता हूँ सारा उसके नाम कर॥

(2)

मत बहको तुम ये भूलभुलइयाँ है दुनिया,
जीवन की बस चइयाँ—मइयाँ है दुनिया।

नदिया की धारा में बहते, बहते-बहते,
बन जाती ये गोल बटइयाँ है दुनिया।

कौन किसे पहचाने आपाधापी में,
इक दूजे की नौनकनइयाँ है दुनिया।

थाली में चँदा दिखला मन बहलाते,
आशाओं की चाँद-तरइयाँ है दुनिया।

मुश्किल है इज्जत का गलियों में चलना,
रुआब दिखाने बनती सइयाँ है दुनिया।

फूँक-फूँक कर कदम बढ़ाना तुम 'मोहन',
मगर-मच्छ की ताल-तलइयाँ है दुनिया।

(3)

जुबाँ पे तीर के साये कहें किससे,
हो गए अपने पराये कहें किससे?
वो वादे करके साथ लाये थे,
संग विश्वास में खाये कहें किससे?

हमने खुशियों के बीज बोये थे,
दुःखों के बाग उग आए कहें किससे?

घरौंदा सोच के बसाया था,
दर्द आँगन में ही पाये कहें किससे?

जैसी चाहत की कब मिला मोहन,
करी नेकी बदी पाये कहें किससे?

(4)

जो दिखा सो लिख दिया, लंबी कहानी बन गई,
ज़िंदगी सरपट सफर-सी, आनी-जानी बन गई।

खौफ़ अपनों से बना रहता है क्या कर जाएँ कब,
अब तो उनकी गालियाँ भी संतवाणी बन गई।

घर की इज्ज़त माँ की ममता ने सिखाया है हमें,
चलना सच्ची राह आदत खानदानी बन गई।

सालता भी अब नहीं है उनका रूखा बोलना,
उनकी गलती अल्टी-पल्टी सब नादानी बन गई।

दिख रही है खोदती खुद के लिए खाई स्वयं,
क्या हुआ क्यों आज कल पागल जवानी बन गई।

दो कदम आगे बढ़ाएँ चार पीछे जाएँ पड़,
यूँ फटे हालात वाली ज़िंदगानी बन गई।

गदिर्शों में देखकर वो मुस्कुरा कर चल दिए,
थम गई थी सोच 'आनंद' फिर रवानी बन गई।

संपर्क : सुंदरम बंगला, 50 महावलीनगर कोलार रोड भोपाल, (मध्य प्रदेश), मो. 09827244327

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फरमान अली 'फरमान' की ग़ज़लें

(1)

चाहतें बढ़ती रहें इतना संवर कर चलना।
कत्ल और कोई न हो, ध्यान में रखकर चलना॥

बुझ न जाए कहीं ऐ दोस्त चरागे उल्फत[1]।
बादे सर-सर में ज़रा रूख को बदल कर चलना॥

अहदे बारूद में जीने की अदा तो सीखें।
फिर तो आसान है सर अपना उठा कर चलना॥

आग की राहों से ए दोस्त गुज़रना होगा।
दिल का मकसद है अगर आवे रवाँ[2] पर चलना॥

पूछते क्या हो तुम उस जूते की क़ीमत 'फरमान'।
जिसकी तक़दीर हो बातिल के ही सर पर चलना॥

1. मुहब्बत का चराग, 2. बहता पानी

(2)

गुनाहों के आगे, सवाबों के पीछे।
कटी उम्र सारी हिजाबों के पीछे॥
फसाना हक़ीक़त, हकीक़त फसाना।
लिए आस फिरता हूँ ख्वाबों के पीछे॥
पहुँच है ज़माने की तारों से आगे।
ये हम हैं कि हैं हम नकाबों के पीछे॥
अजब कशमकश में जिए जा रहा हूँ।
सवालों के आगे, जवाबों के पीछे॥
रखें जारी कोशिश, बुलन्द हौसला भी।
कि मिलते हैं काँटे गुलाबों के पीछे॥
उन्हें खूब आता है फन लूटने का।
मेरा 'मैं' है डर से हिसाबों के पीछे॥
छलावे में रूतबा है शद्दादियत[1] का।
एरम[2] से भी आगे, इताबों[3] के पीछे॥
न दे दुश्मनों को भी रब ऐसी क़िस्मत।
कि मंज़िल है जिसकी सराबों[4] के पीछे॥
ग़ज़ल में जो 'फरमान' दम फूँकता है।
नहीं जिसका सानी किताबों के पीछे॥

1. शद्दातवाद, 2. बनावटी जन्नत 3. कहर, 4. मृगतृष्णा

(3)

मग़रिब दिखा रहा जो काम बस यही है।
मशरिक की दिल्लगी का अंजाम बस यही है॥
रग पर कबूतरों के निश्तर चला के बोले।
देहशतगरो तुम्हारा इनाम बस यही है॥
एक शख्स सुर्खियों से जाने कहाँ हुआ गुम?
अखबार लिख रहा था गुलफाम बस यही है॥
बेरंग हो गई है तस्वीर दोस्ती की।
शीशा दिखा के बोले, इलज़ाम बस यही है॥
छेड़ो न यूँ खुदारा, फितरत की आबरू को।
यज़दां का इस जहाँ में पैग़ाम बस यही है॥
साक़ी पिला दे इतनी खुद को न ढूंढ़ पाऊँ।
मुद्दत से आरजू थी, यक जाम, बस यही है॥
शहरे गुनाह में है उनकी नज़र में 'फरमान'।
कब जाने क्या वह कह दें बदनाम बस यही है॥

(4)

जहाँ भी हो मकां शीशे का पत्थर जाग उठता है।
जुनूं की तोड़ कर दीवार कंकड़ जाग उठता है॥
क़यामतखेज़ मंज़र और फिर अहले क़लम खामूश।
ज़माने ने ये देखा है, सुखनवर जाग उठता है॥
तरक्की याफ्ता तहज़ीब की ये देन है शायद।
लहू पीने की ख्वाहिश हो तो खंजर जाग उठता है॥
हरा हो जाने दे हमदम ज़रा कुछ और ज़ख्मों को।
सितम जब हद से बढ़ जाता है, मेहशर जाग उठता है॥
टपकता है लहू आँखों से जब खुफ्ता तमन्ना का।
मेरे इस दिल में सपनों का समुन्दर जाग उठता है॥
अदाएं यार जैसी कुछ अदा भी हुक्मरां में हो।
हरीफे तख्त के दिल में सिकंदर जाग उठता है॥
मोहब्बत की हो अब जलवागरी 'फरमान' दुनिया में।
कि आपस की अदावत से सितमगर जाग उठता है॥

फरमान. अली 'फरमान', लिपिक
मदरसा इस्लामिया यतीम खाना
अररिया–854311

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सेवाराम गुप्ता 'प्रत्यूष' की ग़ज़लें

परिचय

नाम : सेवाराम गुप्ता 'प्रत्यूष'
जन्मतिथि : 24 अक्तूबर, 1936
प्रकाशन : 1. 'हम भारत के बाल' (बाल साहित्य) 2. 'दर्द पल रहे हैं।' 3. 'दिल की पीड़ा' (गुज. ग़ज़लें) 4. काव्य संगम (गीत-ग़ज़लें 5. गीत, ग़ज़ल, दोहे कविता, छंद देश की विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित।
संपर्क : सी/686 शारदा, सदन अर्बुदा नगर, ओढव, अहमदाबाद–382415

(1)

शादी भी व्यापार हो गई,
सौदा जीवित नार हो गई।

रोज नई हो जाय ज़िंदगी,
जैसे वह अखबार हो गई।

जूता पट्टी तोड़फोड़ भी,
संसद नर्काग़ार हो गई।

चलना दुभर हाय ज़िंदगी,
तू खांडे की धार हो गई।

सोना मुश्किल यार हो गया,
जब से आँखें चार हो गईं।

खुशियों से भर जाये ज़िंदगी,
तब लगता त्योहार हो गई।

मँहगाई 'प्रत्यूष' नित बढ़े,
जनता सब लाचार हो गई।

(2)

जग के खेल निराले देखे,
सच के मुँह पर ताले देखे।

जिनमें स्वार्थ भरा है केवल,
ऐसे ही घरवाले देखे।

जो वलिदान वतन पर होते,
ऐसे कम मतवाले देखे।

कोई पाप नहीं बाकी पर,
पावन बनने वाले देखे।

घर की खातिर निशदिन खटते,
ऐसे कुछ घरवाले देखे।

भोले-भाले दिखने वाले,
करते करतब काले देखे।

हैं 'प्रत्यूष' दुरंगी दुनिया,
सबके रंग निराले देखे।

(3)

इन्सान बन रहा है हैवान देखिए,
कौड़ी के मोल बिकता ईमान देखिए।

अच्छे चलन घरों से हैं ले रहे विदा,
बनती बुराइयाँ हैं मेहमान देखिए।

इन्सान की ये फितरत कितनी अजीब है,
करके भी पाप बनता अनजान देखिए।

आतंकवाद बढ़ता जिस गति से जा रहा,
हो जाएगी ये बस्ती वीरान देखिए।

कहने को छू लिया है इन्सां ने आसमाँ,
पर कर रहा जमीं को वीरान देखिए।

मंदिर की मसज़िदों की तू भीड़ पर न जा,
सच्ची न धर्म की यह पहचान देखिए।

इन्सान खो रहा है इन्सानियत लगे,
'प्रत्यूष' का है सच ही अनुमान देखिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिवशंकर मिश्र की ग़ज़लें

परिचय

नाम : शिवशंकर मिश्र

जन्मतिथि : 18 दिसंबर, 1944

जन्मस्थान : सोरपनिया (पूर्वी चम्पारण)

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. (अंगरेजी साहित्य)

कृतियाँ : 'बीच का पहाड़, एक नया दिनमान', 'लड़ाई बाजार' (कविता) 'सीढ़ियों का भँवर', 'आदमी हँसेगा जब' (गीत-प्रगीत) 'शब्द चलते हैं; (ग़ज़ल)। तीन नाटक एवं दो आलोचना।

संप्रति : स्वतंत्र लेखन

संपर्क : 327/बी. कडरू, राँची।

मो. : 09430116631

(1)

पुरवा की सिहरन-सी छू-छू जाती तेरी याद,
साँझ-सवेरे जाने कितनी आती तेरी याद।

गुम हो जाती, ग़ायब रहती कितने-कितने रोज़,
दिल से लग जाती है जब भी आती तेरी याद।

कब-कब के सपने सिरहाने आ लग जाते आप,
अक्सर सूने में आकर भरमाती तेरी याद।

मौसम बिछड़े, मौके निकले, दिल भी टूटा, चूर,
अब भी कानों में क़समें दुहराती तेरी याद।

जब भी ढलती रात, अँधेरा गहराता चुपचाप,
दीपक की लौ जैसी जलती जाती तेरी याद।

चिनगारी है, लाल सुरख़ होती जाती है सिर्फ़,
राख धनक उठती है जब सुलगाती तेरी याद।

डूब छूरे-सी जाती 'मिशरा' दिल में एक पुकार,
ज़ंजीरों में बिजली-सी थर्राती तेरी याद।

(2)

न आता हाथ में तो हाथ से फिर फिसलता क्यों है,
न जाने आज तक दिल जिस्म में यह उछलता क्यों है।

जिसे देखा न जिस से बात की एक दफ़ा भी लेकिन,
उसी का प्यार मेरे दिल में इतना मचलता क्यों है।

जगा जो हर घड़ी दिल में वही क्यों पड़ा-सोया है,
जो सोया है सुकूँ से, करवटें यों बदलता क्यों है।

कहीं जाता नहीं जो, ले न जाता किसी भी जानिब,
वही हर राह मेरी काटकर फिर निकलता क्यों है।

न जाने क्या हुआ मुझ को, न जाने हुआ क्या ऐसा,
सँभल जाता है दिल 'मिशरा', मगर यह सँभलता क्यों है।

(3)

क्यों जाने जी लगता नहीं, क्यों जाने तो मन उदास है,
मैं अब भी उसको ढूँढ़ता, वह अब भी मेरे पास है।

है बात गो कि अजीब-सी, पर बात है बिलकुल सही,
यह जो अँधेरा है इसी में रूह का भी उजास है।

होता है ऐसा भी कभी, अच्छी नहीं लगती खुशी,
जो चीज़ दिल को चहिए, वह आँसुओं के पास है।

उसका मेरा संबंध जो, ज्यों गीत में लय-छंद हो,
उसके बिना मैं कुछ नहीं, वो खुद में इतना खास है।

जो जैसा मेरा हाल है, मुझ को न कोई मलाल है,
अब तो मेरे हर जाम में शामिल उसी की प्यास है।

चाहे मुझे वो बिसार दे, चाहे वो मुझ को मार दे,
मैं भी उसे अब क्या कहूँ, उससे मेरी बू-बास है।

जिस में न कुछ बचता कभी, जिस में न कुछ घटता कभी,
अब क्या बताऊँ 'मिशरा' यह कैसा ग़जब एहसास है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रमेश 'प्रसून' की ग़ज़लें

(1)

आँख थी सूनी हवेली की तरह,
आ बसी है तू नवेली की तरह।

लौट आई घूम कर किस चाह में,
पीर फिर गूँगी-अकेली की तरह।

क्या कहूँ, किससे कहूँ, कैसे कहूँ,
बात उलझी है पहेली की तरह।

तू मिली जब जिस तरह मर्जी तेरी,
मैं मिला था सिर्फ़ बेली की तरह।

एक अँगड़ाई से उसकी दूसरी,
मिल रही खुलकर सहेली की तरह।

स्वाद उसकी बात में आने लगा,
एक मीठी-सी गंडेली की तरह।

खिल उठे हैं फूल अब अहसास के,
याद महकी है चमेली की तरह।

(2)

हर किसी के पास अपनी ही कई परछाइयाँ हैं,
जो न पीछा छोड़ती हैं इसलिए रुसवाइयाँ हैं।

उस समंदर का किनारा ही हमें उथला मिला था,
कह रहा है जो कि मुझमें तो बड़ी गहराइयाँ हैं।

आसमाँ के हैं बहुत नीचे बहुत नीचे अभी भी,
हम जिन्हें समझे हुए बैठे कि ये ऊँचाइयाँ हैं।

नाम चेहरा देखकर ही जानते जनतंत्र को जो,
क्यों न उनको दीखती है पैर में जो घाइयां हैं।

आ खड़ा है रास्ते के आज वह उस मोड़ पर ही,
जिसके आगे बस कुएँ हैं और पीछे खाइयाँ हैं।

ज़िंदगी को इस नज़रिए से भी तो देखा करो कुछ,
चाँद-तारे, फूल इसमें रंग है रानाइयाँ हैं।

परिचय

नाम : रमेश चन्द्र गोयल 'प्रसून'
जन्मतिथि : 25 दिसंबर, 1949
शिक्षा : एम.ए. (अर्थशास्त्र)
संप्रति : पश्चिमांचल विद्युत वितरण निगम लि. से सेवानिवृत्त
सामूहिक संकलन : 'शब्द नहीं हैं हम', 'कविता नहीं कुरुक्षेत्र', 'बीसवीं शताब्दी, हिंदी की नवीनतम ग़ज़लें', नवीनतम हिंदी कहानियाँ', 'जीवन भारत देशहित' आदि में सम्मिलित प्रकाशन।
स्वतंत्र संग्रह : 'इस शहर में' ग़ज़ल संग्रह (2010 ई.)
सृजन एवं प्रकाशन : कथा-लघुकथा, गीत-नवगीत-बालगीत, छंदमुक्त, दोहे, जनकछंद, माहिया, क्षणिकाएँ, हाइकू, भजन एवं हिंदी ग़ज़ल आदि देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित
संपादन : मुख्य संपादक, 'बुलंदप्रभा' हिंदी त्रैमासिक
संपर्क सूत्र : रमेश प्रसून, 4/75 सिविल लाइन्स, टेलीफोन केंद्र के पीछे, बुलंदशहर—203001 (उ.प्र.)
मो. : 09259269007

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मो. कैसर आलम 'सिद्दिकी' की ग़ज़लें

(1)

मेरे हालात तो ऐसे नहीं हैं,
कहा ना! आप हैं जैसे, नहीं हैं।
मेरे अतराफ छाई गर्दिशें हैं,
मगर हैरानकुन ठेहरे नहीं हैं।
कभी ताबीर ख्वाबों का निकलता?
हक़ीक़त आशना कहते नहीं हैं।
बड़े अंदाज़ से मिलते थे कभी,
वही अशखास अब मिलते नहीं हैं।
मैं मतलाशी हूँ सिद्दिकी कहाँ है,
गए हैं मैक़दा पीते नहीं हैं।

(2)

शाएरे इनकलाब मैं नहीं हूँ,
मसअलौं का जवाब मैं नहीं हूँ।
फिर भी नादान लोग पूछते हैं,
रहनुमां तो जनाब मैं नहीं हूँ।
कैसे-कैसे जुबाँ बयान करते हैं,
बाअसे इंतखाब मैं नहीं हूँ।
लीडरी की दुकाँ चलाते हैं सभी,
बिक सके वह सुराब मैं नहीं हूँ।
कत्ल होता रहे दिलासों से भरे,
हौसलौं का मुआब मैं नहीं हूँ।
किता करले ज़माने से तआल्लुक,
ग़म में पीता शराब मैं नहीं हूँ।
राहे सिद्दिकी पर चलो साथियों,
मशविरा है अज़ाब मैं नहीं हूँ।

(3)

हरे रंग के पत्थर पर लिख कर तूने मदद माँगी थी,
नए रंग के पत्थर पर लिखकर मैंने ठुकरा दी थी।
तुम थे मेरे इतने विश्वासी वरदान दिया था तुमको,
छोड़ के सब वर्णन तूने राह भुला दी थी।
आकाश तुम्हारी मुट्ठी में पाताल पे पाँव तेरे,
बनकर अंतरयामी लोगों को स्वर्ग नरक दिखला दी थी।
ऐ मानव के दुश्मन हिंसा के पुजारी बन तूने,
सोए हुए लोगों में तूने इक आग-सी लगा दी थी।
स्वांग तुम्हारा किरतन-भजन उपदेश, नशे की गोली,
जोड़-तोड़ के चक्कर से राजसिंहासन हथिया ली थी।
बाँट के बंदर क्या देता वही अनपढ़ को तुम देते,
भेद-भाव दिखला कर अपनी आसन जमा ली थी।
मैं हूँ वह जो देता सब कुछ लेता कुछ भी नहीं,
जोगी बनकर आए थे फिर क्यों कब्र खुदवा दी थी।

(4)

तकदीस का सवाल लबे बाम रह गया,
इनसान था कि मोरदे इलज़ाम रह गया।
सोचों के दायरे में वह महदूद हो गया,
ताबीर बन सकी न जो इबहाम रह गया।
दाऐम हयाते आरज़ुए कारज़ार में,
पलती रही निगारिशें आलाम रह गया।
उम्मीदों बीम रंजो अलम दरमियाँ रहा,
आखिर को दोनों जाते रहे नाम रह गया।
सिद्दिकी का कलाम वजाहत तलब सही,
जीने की आरज़ू में वह गुमनाम रह गया।

(5)

रास्ते बदलकर भी दूर जा सकी न वह,
ग़ैरते अना थी जिसे मिटा सकी न वह।
शर्मसार थी लेकिन बावजूद उसके भी,
आग जब लगी दामन में बुझा सकी न वह।
जिस्म मरमरी, गेसुए दराज़ उसकी,
चश्मे नरगसी बाहों में समा सकी न वह।
दर्द दिल सुना लेती, आशियाँ सजा लेती,
पास आ सकी न वह घर सजा सकी न वह।
और कौन 'सिद्दिकी' दिल फेरिबियाँ समझे,
दौरे मुफलिसी गुज़री मुसकुरा सकी ना वह।

संपर्क : लहटोरा, बागनगर
अररिया-854325 (बिहार)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नज़्म सुभाष की ग़ज़लें

(1)

अन्धे कुएँ बंद दरवाजे जिंदा रहना मुश्किल है,
जिसने थामा हाथ मेरा वही तो मेरा कातिल है।
तुमने किसको भेज दिया है जीवन के युद्ध स्थल में,
एक मिनट भी नहीं टिकेगा वो तो बेहद बुजदिल है।
जिसे सौंपकर आए हो अपराधों की तुम फाईल,
क्या तुमको मालूम नहीं था वो भी उसमें शामिल है।
कोशिश करके देख रहा हूँ मगर यकीं अब नहीं रहा,
एक हमीं क्या लाइन में हैं यहाँ तो पूरी महफ़िल है।
मंत्री सन्त्री की जन्त्री में वोट बैंक का जोड़-घटाव,
देश की हालत नाजुक है मगर उन्हें सब हासिल है।
न्याय, सत्य के पन्नों को आग लगा दी है हमने,
आखिर इनके दम पर अब कहाँ मिल रही मंजिल है।

(2)

भारत कितना चमक रहा है सिर्फ चुनावी नारों में,
भूखे लाखों लोग मर रहे पढ़ा रोज़ अख़बारों में।
नून, तेल, लकड़ी की खातिर आशाएँ तक गिरवी हैं,
भाव पूछते डर लगता है आग लगी बाजारों में।
ख़ून, खराबा, चीख़ें, मातम बदहवास-सा मंज़र है,
कैसे साँस ले सके इंसां इन भुतही दीवारों में।
देश की खातिर जान दिए जो उन्हें जानता कौन यहाँ,
मेले नहीं, हाँ मकड़ी जाले दिखते रहे मजारों में।
दारू, मुर्गा, क़त्ल, डकैती हैं चुनाव परधानी के,
मनरेगा से बने लखपति जो थे कल बटमारों में।
क्रांति बीज की बात करो मत दौर वो कब का बीत चुका,
आखिर कब तक धार रखोगे जंग लगे औजारों में।
तुझे समझते नही 'नज़्म' पर नाम पे तेरे झगड़े हैं,
ईश्वर कुछ तो अक्ल बाँट दे धर्म के ठेकेदारों में।

संपर्क : एस.के.डी. प्लाजा, ई. ब्लाक
सब्जी मंडी राजाजीपुरम
लखनऊ 226017
मो.नं.–9235792904

पारसनाथ की ग़ज़लें

(1)

चलो अब हम देखें बेमानी के तेवर।
जहाँ चींखती है ये ज़िंदगी हमारी॥

जीने की मजबूरी और मरने की पीड़ा।
मुफ़लिसी में तब्दील ये मानींदगी हमारी॥

बेगुनाहों के तन पे गुनाहों के चादर।
ओढ़ाए हमें कोई ये बदनसीं हमारी॥

टुकड़ों में बँट गई ये अंतहीन सड़कें।
सवालों में बँट गई ये बस्ती हमारी॥

अपने ही लोगों ने लूटा है हमको।
बेरोजगारी में लूटी ये गरीबी हमारी॥

तूफ़ानी थपेड़ों से 'पारस' खेलते रहे हम।
जहाँ दीवानगी से है अब आशिकी हमारी॥

(2)

जल गए बाज़ार बस्ती आशियाने जल गए,
ग़म न जाने क्या कहा अफ़साने जल गए।

ज़िंदगी की राहें, बेरूखी बेमतलब डँस लिए,
आदमी के बेमुरौअत आशिकाने जाल गए।

शोषित, पीड़ित, अधिकारों से वंचित ज़िंदगी,
अनुभवों की तल्खियाँ सामियाने जल गए।

भीखमंगे लोग़ों के बीच चाहत अधूरी रह गई,
चाहने वालों के सारे आबो-दाने जल गए।

रिश्तों में छेद क्यों हो गया है दोस्तों,
इन रिश्तों को क्या कहें पारस ठिकाने जल गए।

संपर्क : ग्राम-बिहजादी,
सहदेई बुज़ुर्ग, वैशाली-844509

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अशोक सिंह की ग़ज़लें

(1)

तुम गर साथ दो तो हवाओं का रूख मोड़ दें,
इतिहास में एक नया अध्याय और जोड़ दें।

बहुत करते रहे फरियाद उसके दर पे जा-जाके हम,
आओ अब उसके दर पे जाना ही छोड़ दें।

दूर तलक चलते रहे उनके पीछे-पीछे हाथ उठाए,
आओ अब अपना रास्ता ही हम मोड़ दें।

बहुत डालते रहे उनके काले कारनामे पर पर्दा,
आओ मिलकर अब उनका भांडा ही फोड़ दें।

बहुत रूसवा हुए उसकी गली में जाके हम,
कसम उठाओ अब उधर जाना ही छोड़ दें।

होगा नहीं दस्तकों का किवाड़ों पर कुछ असर,
आओ मिलकर अब दरवाज़ा ही तोड़ दें।

(2)

बोलना आसाँ है कुछ करके दिखाओ तो जानें,
बाँध के सर पे क़फ़न, सामने आओ तो जानें।

बने बनाये रास्ते पर चले जा रहे हो,
खुद रास्ता एक नया बनाओ तो जानें।

मिट्टी में फसल उगाना कोई नई बात नहीं,
फसल पत्थर पर उगाओ तो जानें।

पथराव में भीड़ से पत्थर चलाना कोई बहादुरी नहीं,
सबसे पहले एक पत्थर उठाओ तो जानें।

कब तक चलते रहोगे आखिर अँगुली पकड़कर,
छोड़कर अँगुली खुद चलकर आओ तो जानें।

द्वापर में बुलाया उसको सतयुग में बुलाया,
कलियुग में कोई उसको बुलाओ तो जानें।

मुहब्बत में जाँ लुटाने की बात करते हो यारो,
सरहदे वतन पे सर अपना कटाओ तो जानें।

(3)

नींव की इन्हें फिकर नहीं, दरो-दीवार की बातें करते हैं,
घर में कोहराम मचा है, संसार की बातें करते हैं।

कैसे समझाएँ कोई उन्हें, मजहब की परिभाषा,
हर वक्त जो सिर्फ तकरार की बातें करते हैं।

सुना है कल मुहब्बत के उसूल पे चर्चा करेंगे वो,
हर वक्त जो फक़त तोप तलवार की बातें करते हैं।

फ़र्ज अदायगी की उम्मीद न करो उनसे यारो,
ये वे लोग हैं जो सिर्फ अधिकार की बातें करते हैं।

वो फरियाद कुबूल क्या करेंगे तुम्हारी,
हर बार जो सिर्फ इनकार की बातें करते हैं।

उन्हें वक्त के सरकने का एहसास क्या होगा,
हर पल जो फकत बेकार की बातें करते है।

कैसे समझाए कोई उन्हें पूर्णिमा-अमावस्या का राज,
हर घड़ी जो सिर्फ चाँद के दीदार की बातें करते हैं।

घुंघरू बंधे पाँवों की दास्तान भला वो क्या जाने,
हर वक्त जो फकत झनकार की बातें करते हैं।

(4)

हँसने वाला गमों से चूर निकला,
जिसको सजा मिली, वही बेकसूर निकला।

सत्य की राह दिखाई जिसने जमाने को,
वही इस राह में मजबूर निकला।

ईंट-ईंट जोड़कर जिसने बसाया यह शहर,
ढूँढ़ा तो घर उसी का शहर से दूर निकला।

हमदर्दी जता रहा था जो कल मेरी मजबूरी पर,
आज करीब से देखा तो बड़ा मगरूर निकला।

नाजायज कहते रहे कल तलक जिसे हम,
जमाने से पूछकर देखा तो वही दस्तूर निकला।

संपर्क : जनमत शोध संस्थान
दुमका-814101 (झारखण्ड)
मो. 9431339804

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विकास की ग़ज़लें

परिचय

नाम : विकास

जन्म स्थान : मुंगेर (बिहार)

जन्मतिथि : 31.12.1978

शिक्षा : बी.ए., एल.एल.बी.

प्रकाशन : पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित

संप्रति : विधि व्यवसाय

संपर्क : द्वारा श्री अनिरुद्ध सिन्हा, गुलजार पोखर, मुंगेर-811201 (बिहार)

मो. : 9934224359

(1)

प्रदूषित करके गंगा जो अपने पाप धोते है,
वही बेबस किसी मासूम के बिस्तर पे सोते हैं।

नहीं मंदिर में जाते हैं नहीं मस्जिद में जाते हैं,
यहाँ पूजा है पैसों की रहीमो-राम रोते हैं।

भरम तुम ये नहीं करना सितम से टूट जाएँगे,
तुम्हारी यातनाओं को कभी कांधों में ढ़ोते हैं।

हमारी ये जमीं अच्छी हमारा आसमां अच्छा,
अगर होती है बारिश तो जमीं पर बीज बोते हैं।

वफ़ा को रश्क होता है किसी माँ की वफ़ाई पर,
मगर बेटे सहारे की नहीं बुनियाद होते हैं।

(2)

भूख है, ईमान है, जज़्बात भी,
हम अकेले हैं नहीं, हालात भी।

रेत पर कश्ती न कोई छोड़िए,
है समुंदर की कोई औक़ात भी।

बूढ़ी माँ से एक बेटी ने कहा,
आएगी मेरी कभी बारात भी।

हम पराजित हो गए यह सोचकर,
भोर आगे है तो पीछे रात भी।

हर घड़ी हो मुसकराहट क्या पता,
ज़िंदगी की आँख में बरसात भी।

(3)

नाकामियों के साथ मैं चलता नहीं कभी,
सूरज हमारी आँख में ढ़लता नहीं कभी।

वाक़िफ न खुद से हो सका शायद इसीलिए,
चेहरे का दाग़ इस तरह छलता नहीं कभी।

बाबूजी अगर साथ यूँ होते नहीं मेरे,
सपना दिलों के बीच में पलता नहीं कभी।

वेटा कोई गुनाह का दामन जो थाम ले,
घर का चराग बन के भी जलता नहीं कभी।

पहने हो जूते पाँव में पर इसके बावजूद,
फिसलन का हादसा तो टलता नहीं कभी।

(4)

दोस्तों से वफ़ा कीजिए,
साथ कुछ तो चला कीजिए।

रंग उड़ते नहीं फूल के,
खुशबुओं से पता कीजिए।

चन्द तिनकें बिखर जाएँगे,
यूँ न ऐसे हवा कीजिए।

छोड़िए मौत का जिक्र भी,
ज़िंदगी की दुआ कीजिए।

है ये मुमकिन अभी दोस्तों,
पत्थरों की सुना कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुरुषोत्तम 'यक़ीन' की ग़ज़लें

(1)

हम अँधेरे में चरागों को जला देते हैं
हम पे इल्जाम है हम आग लगा देते हैं
कल को खुर्शीद भी निकलेगा, सहर भी होगी
शब के सौदागरों! हम इतना जता देते हैं
क्या ये कम है कि वो गुलशन पे गिरा कर बिजली
देख कर खाके-चमन आँसू बहा देते हैं
बीहड़ों में से गुज़रते हैं मुसलसल जो कदम
चलते-चलते वो वहाँ राह बना देते हैं
जहाँ हुए मील के पत्थर ये बजा है लेकिन
चलने वालों को ये मंजिल का पता देते हैं
अधखिले फूलों को रस्ते पे बिछा कर वो यूँ
जाने किस जुर्म की कलियों को सजा देते हैं
अब गुनहगार वो ठहराएँ तो ठहराएँ मुझे
मेरे अशआर शरारों को हवा देते हैं
इक-इक जुगनू इकट्ठा किया करते हैं 'यकीन'
रोशनी कर के रहेंगे ये बता देते हैं

(2)

मेरी प्यास वो यूँ बुझाने चले हैं
समुंदर का पानी पिलाने चले हैं
उन्हें कैसे महबूब अपना समझ लें
निवाला जो मुँह का छुडाने चले हैं
जिन्हें ज़िंदगी ने निरंतर रुलाया
वो दिवाने जग को हँसाने चले हैं
मज़ाहिब के हल यूँ दिलों पे चला कर
वो अब फ़स्ल कैसी उगाने चले हैं
उजड़ ही गई हम गरीबों की बस्ती
नगर खूबसूरत बनाने चले हैं
परिंदों के पर नोच कर अब दरिंदे
उड़ानों के सपने दिखाने चले हैं
ज़माने ने अकसर भुलाया है उन को
ज़माने के जिन से फ़साने चले हैं
हुए बदगुमाँ क्यूँ 'यक़ीन' आज इतने
हमें वो हमीं से लड़ाने चले हैं

परिचय

नाम : पुरुषोत्तम 'यक़ीन', **जन्मतिथि :** 21 जून, 1957, **शिक्षा :** बी.एस.सी., एम.ए. (उर्दू) , आयुर्वेद रत्न, साहित्य रत्न, बी.जे. एम.सी., **प्रकाशन :** 'हम चलें कुछ और चलने', 'झूठ बोलूँगा नहीं', 'रात अभी बाकी है', 'चेहरे सब तमतमाये हुए हैं', 'सूरज से ठनी है मेरी', **संपर्क :** 4-पी. 46, तलवण्डी, कोटा (राजस्थान)

अरविन्द अवस्थी की ग़ज़लें

(1)

आ रही है साँस पर, एहसास सँकरे हो गए हैं।
दम बहुत आवाज़ में, पर कान बहरे हो गए हैं॥
कल खिले थे फूल बगिया में, निहायत ही सुगंधित।
आज मुरझाए हुए, गुमनाम गजरे हो गए हैं॥
जो रहे अवगुंठनों में, लाज से रक्तिम उन्हीं के।
पंख फैलाए हुए सुर्खाब नखरे हो गए हैं॥
रात हो या दिन अभागे, नींद में गाफिल हुए।
एक दो की क्या कहें, मदहोश सगरे हो गए हैं॥
हाथ में जल ले कभी, संकल्प करते थे वही।
आदमीयत के लिए दुर्दांत खतरे हो गए हैं॥

(2)

किस पर एतबार करूँ, कौन अपना होगा।
इसीलिए सबको सँभालकर रखना होगा॥
बंद आँखों से देखे ख़्वाब झूठे हो सकते।
खुली आँखों से जो देखा तो सच सपना होगा॥
बुराई देखकर मुँह फेरना मत सीखो यारों।
कलेजा कड़ा करके सामने कहना होगा॥
सलामती चाहते हो मुल्क में अमन की अगर।
जो बहुत पीछे हैं साथ में रखना होगा॥
डगर प्यार की आसान नहीं ध्यान रहे।
किया इरादा तो तलवार पर चलना होगा॥

संपर्क : श्रीधर पाण्डेय सदन, बेलखरिया का पुरा, मीरजापुर-231001 (उ.प्र.), मो. 9161686444

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

महेन्द्र कुमार सिंह 'नीलम' की ग़ज़लें

(1)

हम भोले हैं, नादां भी हैं, यह कैसे तुमने मान लिया,
हम बड़े हौसले वाले हैं, चलते दिल में तूफान लिए

हम उस माटी के पुतले हैं, परहेज जंग से करते हैं
हम सत्य अहिंसा, अमन चैन का चलते हैं ईमान लिए

हम शोला हैं या शबनम हैं यह वक्त तुम्हें बतलाएगा
हम बादल-बिजली-सा दिल में चलते हैं अरमान लिए

जब भी गर्दिश में मेरी माँ मुझको आवाज़ लगाती है
तब जान हथेली पर रखकर चलते उसका फरमान लिए

जब जब मेरी हुंकार सुने, बादल गरजे सागर मचले
हम इंकलाब का जोश भरा चलते होठों पर गान लिए

(2)

माहौल खुशनुमा हो जाए, दिल से हर दिल को बहलाएँ
तुम ग़ज़ल पढ़ो, हम गीत पढ़ें, तुम भी गाओ हम भी गाएँ

कुछ बात इस तरह से कर लें, चेहरे की उदासी गायब हो
कुछ तुम भी कहो, कुछ हम भी कहें, महफ़िल में रंग जमा जाएँ

नफ़रत की आग बुझा डाले, हर जुल्म को दरिया में डालें
तुम करम करो, हम दया करें, वस यही राह अब अपनाएँ

खुशबू तो सबको प्यारी है, गुलशन की हो या आँगन की
जो दिल में मुहब्बत भर देती, उस खुशबू को हम फैलाएँ

इस ग़म की दुनियाँ में यारों, हँसना भी बहुत ज़रूरी है
हँसने वाला ज़िंदादिल है, यह राज सभी को बतलाएँ

परिचय

नाम : महेन्द्र कुमार सिंह 'नीलम'
जन्म : 25 अगस्त 1932
मूल निवास : मियाँपुरा, कोयला घाट, जनपद गाजीपुर (उ.प्र.)
शिक्षा : एम.ए., आर.डी.एस. (लंदन)
लेखन विधा : गीत, ग़ज़ल, नाटक, कविता एवं कहानी
कृतियाँ : 'माटी जागल', 'लागे न अचरा में दाग' (दोनों भोजपुरी नाटक) 'धूल धुआँ', 'कुछ आग कुछ पानी', 'याद करोगे', 'रूप-रस-गंध' (सभी हिंदी गीत संग्रह) 'जियरा बोले', 'सनेसा', जोगियार जोग' तक जइहें हार' (सभी भोजपुरी गीत संग्रह)
प्रकाशन : देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन
संप्रति : अध्यापन कार्य से सेवा निवृत्त। डी.रे. का पेंटिंग स्कूल वाराणसी में कला प्रशिक्षण एवं स्वतंत्र लेखन।
संपर्क : एन-10/79 एफ, दक्षिणी ककरमत्ता, न्यू कॉलोनी, वाराणसी-221004 (उ.प्र.), दूरभाष-0542-2317961
मो. : 9415811529

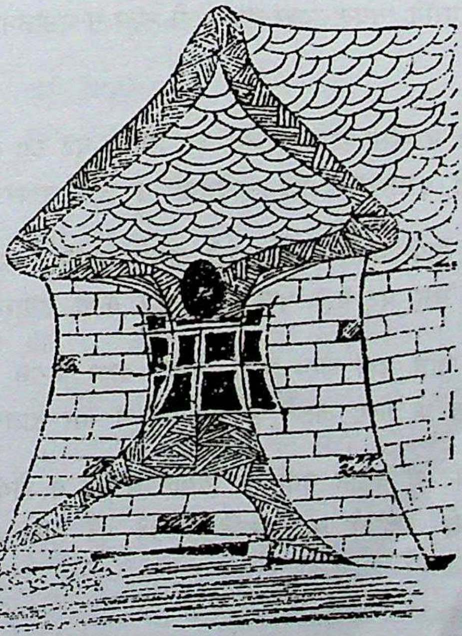

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राज राघव की ग़ज़लें

परिचय

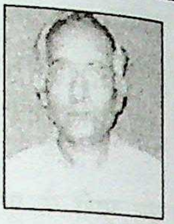

नाम : राज मोहन सिंह

उपनाम : राज राघव

जन्म तिथि : 08 मई, 1947

जन्म स्थान : अररिया (बिहार)

शिक्षा : स्नातक

लेखन विधा : कविता, कहानी, व्यंग्य, आलोचना आदि।

प्रकाशन : लगभग तीन दर्जनाधिक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

संप्रति : कोषागर लेखापाल के पद से सेवा-निवृत्ति पश्चात् समाज सेवा एवं स्वतंत्र लेखन।

संपर्क : आश्रम रोड, वार्ड नं.-10, अररिया-854311 (बिहार)
दूरभाष-06453-222610,
मो. : 09431653112

(1)

उड़ेंगी जब किरचियाँ तो घायल तुम्हें भी करेंगी यारो
शीशे के गर हों मकां तो तुम कभी पत्थर न उछालना।

ज़ख़्म किसी को भी लगे पर दर्द हमारे सीने में होगा
बात-बे-बात पर तुम फिर कभी यूँ खंजर न उछलना।

हादसे यदि हुए कभी तो घर तेरा भी खाक़ हो जाएगा,
फिज़ां में तुम कभी ऐसा कोई महशर न उछालना।

आहें उनकी नींद उड़ा ले जाएगी, चैन हराम कर देगी,
निज स्वार्थ की आग में किसी गरीब का घर न उछालना।

आंगन यदि बँटा तो यह कमजोरियों का सबब बनेगा,
अपने गाँव घर में कभी ऐसा कोई मंज़र न उछालना।

बहुत थक गए हैं हम हर दिन बुरी खबरें पढ़ते-पढ़ते,
अख़बारों में अब कभी तो कोई अच्छी ख़बर उछालना।

इंसानियत सहम कर गुम न हो जाए कहीं अँधेरों में,
यहाँ की बस्तियों में तुम कभी ऐसा कोई डर न उछालना

नंगे खड़े दिखें सभी जहाँ इस सियासत के हम्माम में
बेमौत मरोगे 'राघव' उधर कभी टेढ़ी नज़र न उछालना।

(2)

मुसीबत में फँसा हो कोई जब, दम उसका घुट रहा हो
फर्ज़ है इंसानियत का मुसीबतों से उसे उबारना

पर्दे में छिपी बदसूरती भी बड़ी अच्छी लगती है हमें
लेकिन सच पर पड़ा पर्दा तुम जरूर कभी उघारना

शैतान जान नहीं लेता कभी, परेशां बहुत करता है
हिफाजत के लिए जरूरी है उसे जां से मार डालना

बात यदि यूँ बढ़ती गयी तो बिगाड़ में देर न होगी,
छोड़ो भी अब तो यारो कहीं के गड़े मुर्दे उखाड़ना

सच है कि अंत में जीत सदा सच की ही होती है
पर उस जीत से पहले सहनी होती है थोड़ी प्रताड़ना

लाख जुगत भिड़ा लो पर यूँ ही सफल नहीं हो पाओगे
सफलता के लिए जरूरी हैं कड़े परिश्रम और साधना

खुदा ने बख्शा है जितना सीखें उसी में जीना, खुश रहना
रूठ जाएगी किस्मत और अधिक की करेंगे यदि कामना

माना कि बेशुमार दौलतें सहूलियतें लिखीं नसीब में तुम्हारे
बड़ा सुकूँ देगा भूखों की थाली में दो रोटी कभी डालना

ज़िंदगी का अंगना तुम्हारा खुशियों से भरा सदा रहेगा
बड़े-बुजुर्गों की हर बात सदा सिर-आँखों पे थामना

बड़ी ताक़त होती है भैया उनकी आहों में, कराहों में
बसी हो कहीं भी, गरीबों की बस्ती न कभी उजाड़ना

मुसीबतों में तुम्हारे साथ सदा खड़े रहेंगे तुम्हारे अपने
उन पर अपनी नफ़रतों का अंधड़ न कभी उतारना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'दरवेश' भारती की ग़ज़लें

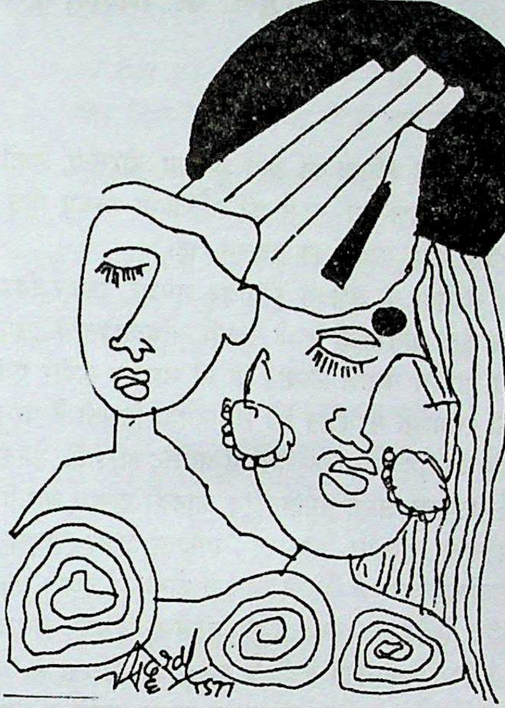

(1)

सामने जो कहा नहीं होता
तुमसे कोई गिला नहीं होता

जो ख़फ़ा है, ख़फ़ा नहीं होता
हमने गर सच कहा नहीं होता

ज़िक्र उनका चला नहीं होता
ज़ख़्म दिल का हरा नहीं होता

वो दिखाएँ ज़रा-सी हिम्मत तो
देखिए, क्या से क्या नहीं होता

घर में जो एकता नहीं होती
घर ये हर्गिज़ बचा नहीं होता

जानता किस तरह कि क्या है गुरूर
वो जो उठकर गिरा नहीं होता

नाव क्यों उसके हाथों सौंपी थी
नाखुदा तो खुदा नहीं होता

तप नहीं पाता दुख की आँच में जो
खुद से वो आश्ना नहीं होता

प्रेम खुद-सा करे न जो सबसे
फिर वो 'दरवेश'-सा नहीं होता

(2)

दर्दे-दिल हमको बताएँ तो सही
राज़दार अपना बनाएँ तो सही

वो भी बढ़ आएँगे फिर चार क़दम
दो क़दम आप उठाएँ तो सही

देखना, कैसे है झुकती दुनिया
आप भी खुद को झुकाएँ तो सही

देता मुफ़लिस है दुआएँ क्या-क्या
उसको सीने से लगाएँ तो सही

प्यार ही प्यार मयस्सर हो उन्हें
प्यार वो अपना लुटाएँ तो सही

कैसे पिघलेगा न हर पत्थर-दिल
साज़े-दिल आप बजाएँ तो सही

मुस्कराहट के खिलें फूल-ही-फूल
प्यार की पौध लगाएँ तो सही

एक-इक रग हो उठेगी झंकृत
गीत इक आप भी गाएँ तो सही

स्रोत सुख-चैन का हैं जब 'दरवेश'
प्यास प्यासों की बुझाएँ तो सही

संपर्क : डी-38, निहाल बिहार
नांगलोई, नई दिल्ली-110041
मो. 9268798930, 9015764740

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

हिंदी ग़ज़ल के विलक्षण ध्वजवाहक : अशोक 'अंजुम'

❑ डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

हिंदी में प्रयोगवादी कविता की अति शुष्कता, नीरसता, शब्दों की काट-छाँट तराश एवं भदेस की प्रतिक्रिया स्वरूप गीत, नवगीत, दोहा एवं ग़ज़ल का प्रचलन बढ़ा।

नई कविता के सशक्त हस्ताक्षर शमशेर बहादुर सिंह एवं दुष्यंत जैसी प्रतिभाओं ने भी अपनी अभिव्यक्ति के लिए ग़ज़ल का माध्यम तलाश किया। यों तो महात्मा कबीर एवं खुसरो की रचनाओं में ग़ज़ल की संभावनाएँ मिलती हैं परंतु हिंदी ग़ज़ल की यह परंपरा कालांतर में भारतेंदु हरिश्चंद्र, उनके पिता गिरिधर दास, लाला भगवानदीन, जानकी वल्लभ शास्त्री, आनंद परमानंद, बलवीर सिंह 'रंग', रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', विकल साकेती व नीरज जैसे कवियों से होती हुई दुष्यंत तक आ पहुँची। दुष्यंत के समय में ही चंद्रसेन 'विराट', माधव मधुकर आदि अनेक कवि हिंदी में ग़ज़ल की साधना में रत थे, परंतु दुष्यंत के आकस्मिक निधन के कारण 'सारिका' तथा अन्य पत्रिकाओं के माध्यम से उन्हें अपेक्षाकृत अधिक सिद्धि एवं प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

दुष्यंत के समकालीन एवं परवर्ती ग़ज़लकारों की सूची बहुत लंबी है। हाँ, इन दिनों उनमें से एक युवा कवि भाई अशोक 'अंजुम' अपनी ग़ज़लों का जादू सब पर बिखेर रहे हैं। चूँकि वे मूल रूप से हास्य-व्यंग्य के कवि एवं मर्मज्ञ भी हैं अतः उनकी लेखनी से निःसृत ग़ज़लें समकालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपताओं एवं विकृतियों के बीच जी रहे आम आदमी की व्यथा-कथा को उकेरने में काफ़ी कामयाब हुई हैं। वे धुआंधार लेखन के पर्याय भी हैं। आप कोई भी पत्रिका अथवा संकलन उठाकर देखिए, उसमें भाई अशोक 'अंजुम' अपनी पूरी निष्ठा के साथ उपस्थित मिलेंगे।

उनकी हिंदी ग़ज़लों की अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। 'मेरी प्रिय ग़ज़लें', 'अशोक अंजुम की प्रतिनिधि ग़ज़लें', 'तुम्हारे लिए ग़ज़ल', 'मुस्कानें हैं ऊपर-ऊपर', 'जाल के अंदर जाल मियाँ', 'लोकप्रिय हिंदी ग़ज़लें', 'हास्य एवं व्यंग्य ग़ज़लें' आदि पुस्तकें प्रकाशित एवं चर्चित हो चुकी हैं।

वस्तुतः ग़ज़ल का मूलस्वर प्रेम ही है। भाई अशोक अंजुम की ग़ज़लों में भी प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं यथा विरह, मिलन, चलन आदि के स्वर प्रस्फुटित हुए हैं। किसी की मदभरी मुस्कान का प्रभाव कवि मन पर क्या पड़ता है, स्वयं देखिए–

उसने कल मुस्कुरा के देखा था,
रात भर आए ख्वाब फूलों के।

प्रेम कितनी जल्दी फैलता है, रुसवा होता है, कवि की इन पंक्तियों में देखिए–

तौबा-तौबा राम दुहाई अच्छा नहीं हुआ।
घर की बात गली में आई अच्छा नहीं हुआ॥
कितने पंछी गिरे जमीं पर उड़ना भूल गए।
तुमने छत पर ली अँगड़ाई अच्छा नहीं हुआ॥

कहा जाता है कि 'ढाई आखर प्रेम को, पढ़े सो पंडित होय।' परंतु आजकल पंडिताई में भी छल-कपट एवं दूषित राजनीति के बीज घुस गए हैं। परिणाम कवि के शब्दों में देखिए–

बस संबंध निभाने भर को लिखना हो तो मत लिखना।
सचमुच दिल से हूक उठे तो प्यार भरा इक खत लिखना॥

× × ×

प्यार के नाम पे दिखावा था,
ये नशा यूँ उतर नहीं जाता।

× × ×

कारीगरी प्यार की 'अंजुम' ऐसी भी देखी हमने,
इसको खंजर याद रहा ना उसको मौका याद रहा।

वास्तव में प्रेम का रिश्ता अनूठा और प्रतीकात्मक होता है। उसे कोई भी भाषा व्यक्त नहीं कर सकती है। कवि के शब्दों में–

तेरा-मेरा रिश्ता क्या?
तू ने अब तक सोचा क्या!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कागज़ भीगा अश्कों से,
इससे जियादा लिखता क्या?

प्रेम और ग़ज़ल एक ही सिक्के के दो पहलू भी हैं। ग़ज़ल के समान कभी-कभी ग़ज़लकार का तन-मन भी ग़ज़लमय हो जाता है। उदाहरणार्थ—

उतरी है दिल में चाँद-सितारे लिए ग़ज़ल।
जब भी कही है हमने तुम्हारे लिए ग़ज़ल॥

सच्चा प्रेम तो अपने प्रेम पात्र के लिए समर्पण एवं त्याग भरे शब्दों में यही कह सकता है—

वक़्त जीवन में ऐसा न आए कभी,
ख़त किसी के भी कोई जलाए कभी।

जिसकी खातिर मैं लिखता रहा उम्रभर,
वो भी मेरी ग़ज़ल गुनगुनाए कभी।

इधर ग़ज़ल प्रेम की संकीर्ण परिधि से बाहर आकर दुनिया-जहान की व्यथा-कथा को भी वाणी दे रही है। साहिर लुधियानवी के शब्दों में—

प्यार से भी ज़रूरी कई काम हैं
प्यार सब कुछ नहीं ज़िंदगी के लिए

आजकल देश के सामने सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभर रहा है—राजनीतिक प्रदूषण। कवि अशोक 'अंजुम' चूँकि एक सशक्त व्यंग्यकार भी हैं, अतः व्यंग्य के माध्यम से उन्होंने इस समस्या पर कटाक्ष करते हुए कहा है—

ये राजनीति भी तो तवाइफ़ से कम नहीं,
पकड़ा है उसका हाथ इधर छोड़ रही है।

अपनी ग़ज़ल कृति 'जाल के अंदर जाल मियाँ' में कवि अशोक अंजुम ने प्रतीकात्मक ढंग से तथाकथित कर्णधारों पर तीव्र कटाक्ष एवं आम आदमी के प्रति संवेदना व्यक्त करते हुए कहा है—

ऊपर वाले बड़े मजे खींच रहे हैं माल मियाँ,
लेकिन हमको नहीं मयस्सर हर दिन रोटी-दाल मियाँ।
राजनीति की खोल के गठरी जादूगर ने दिखलाए,
जाल के अंदर, जाल के अंदर, जाल के अंदर जाल मियाँ।

लगे हाथों चुनावी राजनीति पर भी कवि की एक व्यंग्य परक टिप्पणी ग़ज़ल के शे'र के माध्यम से देखिए—

आ गया मतदान का मौसम रे पंछी जाग जा,
फिर शिकारी वायदों के ले के दाने चल पड़े।

आजकल धर्म को लेकर राजनीति करने वालों की भी कमी नहीं है। कई सांप्रदायिक नगरों में हिंदू, मुसलमान भाई आपस में बड़े प्रेम से रहते हैं किंतु कुछ तथाकथित लोग आकर लोगों को अलगाव और दंगों की आग में झोंक देते हैं। ऐसे लोगों के बारे में कवि की एक सार्थक टिप्पणी देखिए—

मंदिर-मस्ज़िद इधर-उधर हैं
बीच में जल्लादों के घर हैं।

धार्मिक उन्माद एवं नैतिक व सामाजिक मूल्यों के अवमूल्यन में ऐसे बहुरूपियों का भी बड़ा योगदान है जो सदा स्वार्थ की रोटियाँ सेंकते रहते हैं। इसके साथ ही अब गेरुए रंग के साथ सफेद रंग की वेश-भूषा भी इन तथाकथित साधुओं ने अपना ली है। उनके लिए ईमान जैसे शब्द अव्यवहारिक हो गए हैं। परिणामस्वरूप चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा है। ईमान का सूरज कुछ लोगों की मुट्ठियों में कैद होकर रह गया है। इन्हीं भावों को व्याख्यायित करते हुए कवि के दो शे'र देखिए—

हर तरफ ही घना अँधेरा है,
मुट्ठियों में दबा सवेरा है।
अपना ईमान तू यहीं रख जा,
उस तरफ साधुओं का डेरा है।

वृक्षों की लगातार कटाव से उत्पन्न पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या से आम आदमी नहीं, अपितु पशु-पक्षी भी आहत हुए हैं। कवि के शब्दों में—

जब से डाली कटी नीम की आना जाना भूल गई,
सदमा खाकर इक दीवानी बुलबुल गाना भूल गई।

इतना ही नहीं कवि मानव को सावधान करते हुए कहता है—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुम तैश में आकर जो इन्हें काट रहे हो,
जब सिर पे धूप होगी शजर याद आएँगे।

यायावरी के बारे में भी कवि का निम्नलिखित सशक्त शे'र हमें सावधान करता है कि हम जब भी भ्रमण पर हों, पूरे मन से सफ़र पर रहें। यदि मन अन्यत्र लगा रहेगा, तो यायावरी का उद्देश्य पूरा नहीं होगा--

अनमने जो सफ़र में रहो,
इससे अच्छा है घर में रहो।

कवि अशोक अंजुम ने सामाजिक विसंगतियों, विद्रूपताओं एवं विकृतियों की चक्की में पिस रहे आम आदमी की व्यथा-कथा को अपनी ग़ज़लों के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है। कवि ने यह संदेह भी व्यक्त किया है--

रोशनी बे-असर न हो जाए,
जग अँधेरों का घर न हो जाए।
झूठ निकला है जाल को लेकर,
हम पे उसकी नज़र न हो जाए।

कवि इन असमानताओं और अव्यवस्थाओं के अँधेरे को मिटाने के लिए लोगों का आह्वान करते हुए कहता है--

मैं चला हूँ अँधेरा मिटाने,
दोस्त मेरे मुझे हौसला दो।

वस्तुतः आज के इस विषम परिवेश को सुधारने, सँवारने के लिए एक नए परिवर्तन, एक नए इंकलाब की आवश्यकता है, एक सामाजिक क्रांति की आवश्यकता है। कवि के शब्दों में--

सूरत हमारे देश की सबने खराब की,
अब फिर से जरूरत है हमें इंकलाब की।

परंतु इस क्रांति की अगुवाई कौन करेगा? यह एक विचारणीय प्रश्न है। आज एक ऐसे ही मसीहा की तलाश है जो गुरु गोविंद सिंह द्वारा छाँटे गए 'पंच प्यारों' की कसौटी पर खरा उतर सके। कवि के शब्दों में--

दुनिया को नई राह दिखाने के वास्ते,
सूली पे चढ़े कौन ज़माने के वास्ते।

कवि भविष्य के प्रति आस्थावान है। उसे विश्वास है कि एक नन्हे से बीज में विशाल वट-वृक्ष का जीवन सन्निहित रहता है। कोशिश करने से भला क्या नहीं संभव होता। उदाहरणार्थ--

वो इक दिन घना पेड़ बनकर ही उभरा,
यूँ रंग लायी मिट्टी में दाने की कोशिश।

समग्र विश्व की समस्याएँ मानव जन्य समस्याएँ हैं। महात्मा बुद्ध यदि अपने प्यार भरे तर्कों से दुर्दांत डाकू अंगुलिमाल को पानी-पानी कर सकते थे, तो हम आतंकवाद एवं उसके जनक को भला सही मार्ग पर लाकर उसमें सकारात्मक सोच को क्यों नहीं जाग्रत कर सकते। इस संबंध में कवि का जीवन दर्शन देखिए--

प्यार से सुलझाइए हल गुत्थियाँ हो जाएँगी,
जब तलक संसार है ये फलसफा ज़ारी रहे।

इसी प्रकार कवि ने जीवन और मृत्यु को रूपक के माध्यम से व्यक्त करते हुए एक नई दार्शनिक चेतना प्रदान की है। देखें--

ज़िंदगी और मौत का रिश्ता तो बस इतना-सा है,
भेड़ कोई शेर की ज्यों मेहरबानी में रहे।

कवि समाज का दृष्टा ही नहीं, अपितु सृष्टा भी होता है। वह जीवन की समस्त अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने की विलक्षण क्षमता रखता है।

आज हर दूसरा या तीसरा कवि ग़ज़ल कह रहा है। परंतु क्या वे सच्चे अर्थों में ग़ज़ले हैं। ग़ज़लें लिखना, रचना या कहना सरल नहीं है। कवि प्रतिभा से संपन्न व्यक्ति अपने को यथार्थ के सामाजिक धरातल से जोड़कर ही ग़ज़ल लिख सकता है। ग़ज़ल केवल कल्पना की परी नहीं अपितु यथार्थ की परिचारिका भी है। एक श्रेष्ठ ग़ज़ल-गो बनने के लिए पूरी-पूरी ज़िंदगी ही गलानी पड़ती है। इस संदर्भ में कवि की आत्मस्वीकृति देखिए--

हमसे पूछो किस तरह हमने गलाई ज़िंदगी,
लोग कहते हैं ग़ज़ल कहना बहुत आसान है।

किसी कवि अथवा शायर के जीवन की व्यथा-कथा अथवा दास्ताँ उससे न पूछकर उसके कृतित्व में टटोलनी चाहिए। कवि के शब्दों में--

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुम मुझसे मेरी दास्ताँ क्या पूछते हो दोस्त,
शे'रों में ही ढूँढो किसी शायर की कहानी।

कवि अशोक अंजुम को विश्वास है कि उसकी कविता, उसके दोहे, उसके गीत और उसकी ग़ज़लें कालजयी बनकर सदियों तक लोगों के दिलों में रची-बसी रहेंगी। अपने कृतित्व से कवि को यह अपेक्षा है कि–

मेरी कविता, मेरे दोहे, गीत मेरे और ग़ज़ल,
मैं रहूँ या ना रहूँ, मेरा कहा जिंदा रहे।

यद्यपि भाई अशोक अंजुम अभी सदाबहार नवयुवक कवि और शाइर हैं। उन्हें सौ-सौ बसंतों तक पुष्पित और पल्लवित रहने का अधिकार है, फिर भी कवि आश्वस्त है कि साहित्य के क्षेत्र में इसके द्वारा निर्मित पगडंडी एवं पगचिह्न परवर्ती पीढ़ी को नई प्रेरणा एवं नई दिशा प्रदान करते रहेंगे। कवि के शब्दों में–

मैं ऐसे निशाँ छोड़कर जा रहा हूँ,
जहाँ वाले मेरी कहानी कहेंगे।

इस प्रकार भाई अशोक अंजुम की हिंदी ग़ज़ल विषयक रचना यात्रा से गुजरते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि ग़ज़ल पर उनकी मजबूत पकड़ है। रदीफ़ एवं काफ़िया के प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं। उनकी ग़ज़लों में सर्वथा हिंदीपन मिलता है, हिंदी छंदों का प्रयोग मिलता है। उनकी ग़ज़लों के कथ्य का कैनवास बहुत व्यापक है, जिसमें कहीं तो प्रेम, शृंगार एवं सौंदर्य के आकर्षक चित्र मिलते हैं तो कहीं सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विसंगतियों, विकृतियों एवं विद्रूपताओं के बीच जी रहे लघुमानव की व्यथा-कथा के यथार्थ एवं खुरदरे चित्र भी मिलते हैं। चूँकि कवि स्वयं एक सशक्त हास्य-व्यंग्यकार हैं अतः उसने ग़ज़लों के माध्यम से आज के सामाजिक यथार्थ पर करारे प्रहार किए हैं। कवि की ग़ज़लों में नए बिंबों, प्रतीकों एवं टटकी उपमाओं के साथ-साथ भारतीय परिवेश से ग्रसित मिथकों का सफल प्रयोग मिलता है। कवि का अन्दाज़े बयाँ सबसे अलग और साफ-सुथरा है। सारांशतः कवि के ग़ज़ल संसार में कथ्य एवं शिल्प एक-दूसरे के पूरक बनकर उभरे हैं। कवि की भाषा आम आदमी की बोलचाल की भाषा है,

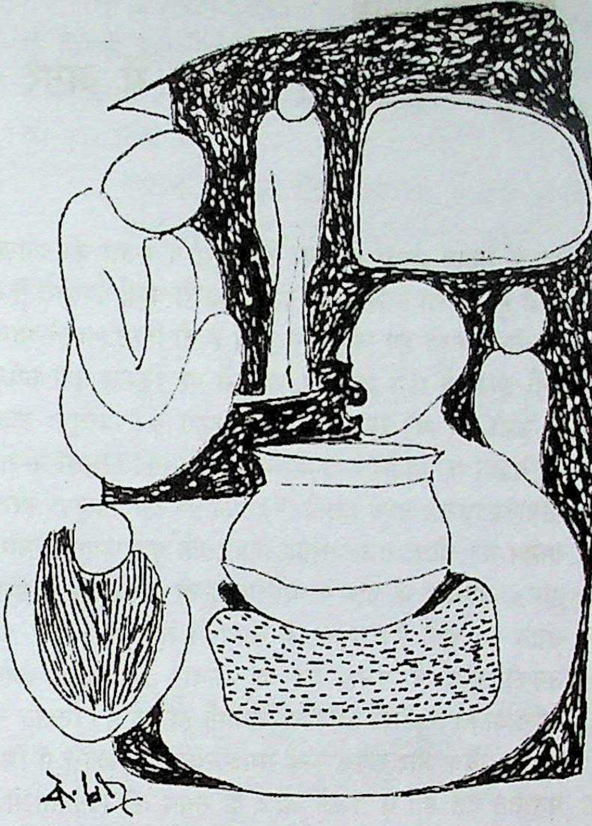

जिसे देखकर एवं पढ़कर यह स्पष्ट हो जाता है कि हिंदी और उर्दू आपस में सगी बहनों के समान हिली-मिली हैं। किसी को किसी से कोई परहेज़ नहीं है। इतनी कम उम्र में गागर में सागर भरने की सामर्थ्य रखने वाले इतने श्रेष्ठ 'अशआर' कह पाना सचमुच कवि की विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है।

भाई अशोक अंजुम शतायु होकर हिंदी ग़ज़ल की ध्वजा को पूरी आन, बान, शान के साथ ऊँचे और बहुत ऊँचे तक लहराते रहें, अपनी उपलब्धियों पर हँसते-मुस्कुराते रहें, इसी में हिंदी ग़ज़ल संसार का हित सन्निहित है।

संपर्क : निकट बावन चुंगी चौराहा
हरदोई-241001 (उ.प्र.)
फोन : 05852-232392

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

आपस में अगर अपनी मुहब्बत बनी रहे

❑ डॉ. वरुण कुमार तिवारी

उर्दू के महान शायर फ़िराक गोरखपुरी ने ग़ज़ल की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'जब कोई शिकारी कुत्तों के साथ हिरन का पीछा करते हुए जंगल में जाता है तो हिरन भागते-भागते ऐसी झाड़ी में फँस जाता है, जहाँ से वह निकल नहीं सकता है, उसी दर्द भरे स्वर को ग़ज़ल कहते हैं।' वस्तुतः ग़ज़ल उर्दू-काव्य का सर्वश्रेष्ठ काव्य-रूप है जिसकी असली कसौटी भावोत्पादकता मानी जाती है। *'किसे नहीं मालूम'* **हरेराम समीप** का चौथा ग़ज़ल संग्रह है। इसके पूर्व 'हवा से भीगते हुए', 'आँधियों के दौर में' एवं 'कुछ तो बोलो' उनके ग़ज़ल संग्रह आ चुके हैं। ग़ज़ल के सफर में यहाँ तक आते-आते उनकी सोच ने ग़ज़ल को वह ऊँचाई दी है कि उनकी अभिव्यक्ति बहुअर्थी और बहुआयामी हो गई है। नितांत नए प्रतीक, बिंब और रूपक इन्हें समकालीन ग़ज़लकारों में भिन्न पहचान देते हैं। ये ग़ज़लें आज के समय की विद्रूपताओं से सीधा संवाद करके आम आदमी के दुःखों के कारणों की पड़ताल करती हैं तथा शोषक चरित्रों पर प्रहार करती हैं। न दुरूहता, न चकाचौंध और न अनोखापन, फिर भी एक निजता, एक साफगोई, एक नया अंदाज 'समीप' की ग़ज़लों को विशिष्टता प्रदान करती है।

कवि समय के सत्य को दो टूक शब्दों में व्यक्त कर देता है, तमाम समाजार्थिक असंगतियों को उजागर कर देता है जिनके कारण उन्हें सताया जाता है, उनकी भर्त्सना की जाती है, उन्हें सजा दी जाती है। लेकिन ग़ज़लकार को पछतावा नहीं है। उन्हें खुशी है, संतोष है कि अपना स्वाभिमान बचाकर रखा है, भले ही उनके पंखों को कतर दिया गया हो लेकिन उनका स्वत्व बचा हुआ है और उनका संघर्ष जारी है—

कटे है पंख, तो भीतर उड़ान जिंदा है
मेरी जमीन, मेरा आसमान जिंदा है
मिली है रोज सजा मुझको सत्य कहने की
मगर मैं खुश हूँ, मेरा स्वाभिमान जिंदा है

आज नैतिकता नाम की कोई चीज नहीं रही। सुविधावादी स्वार्थी लोगों के कारण समाज कितना विकृत बन गया है, फिर भी सुविधावादी को तो अपनी स्वार्थ-सिद्धि से मतलब है—

बस मुनाफे के लिए, लोग इस बाजार में
बेचते ईमान अपना, भाव गिरते देखकर
पीठ गर्दन, फिर नज़र झुकती गई, झुकती गई
दिन ब दिन गिरता गया ईमान रुपए देखकर

शिष्टता का मुलम्मा लगाकर, अन्याय, अनाचार, असंगतियों को देखकर भी चुप रह जाना और अपने मतलब से मतलब रखना ग़ज़लकार के स्वभाव में नहीं है। उनके पास स्पष्टता के नाखून हैं जो हर तरह के नकाब नोचकर सत्य को उद्घाटित करने में माहिर हैं—

यहाँ पे कौन है कातिल, किसे नहीं मालूम
सभी ये कह रहे भाई, मुझे नहीं मालूम

× × ×

सैकड़ों अपराध करके देश को लूटा तो क्या
राजनेता आ रहे हैं मुस्करा के सामने

× × ×

देश सेवा कभी रही होगी
अब सियासत दुकानदारी है

समझौतावादी लोग संघर्ष नहीं करते, चुप रहते हैं। ऐसे 'दुनियादार' लोगों पर निशाना साधते हुए 'समीप' कहते हैं—

तमाचा मार लो, बटुआ छुड़ा लो, कुछ भी कर डालो
ये दुनियादार हैं, इनको कभी गुस्सा नहीं आता

'जीओ और जीने दो' की नीति से अलग अमीर लोग अपनी शानो-शौकत की ज़िंदगी जीते हैं और तंगहाल-बेहाल जीने के लिए निरंतर संघर्ष करते लोगों के प्रति उनके भीतर कोई संवेदना नहीं होती। उनकी इस संवेदनहीनता का उल्लेख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करते हुए 'समीप' ने अपनी गहन अनुभूति का परिचय दिया है–

अमीरों में सिवा खुदगर्जियों के और क्या मिलता
कि सूखे पेड़ पर यारों, कभी पत्ता नहीं आता

आज की इस रंग बदलती, दुनिया में असली और नकली की पहचान मिट गई है। चेहरे ओझल हो गए हैं और मुखौटे तब्दील हो गए हैं चेहरों में–

कैसा समझा था उसे और वो कैसा निकला
जिसको माना था मसीहा, वही झूठा निकला

× × ×

काम जिनके अमीर जैसे हैं
देखने में कबीर जैसे हैं

× × ×

वो मेरे दोस्त बनकर रह रहे थे
कहाँ पहचानता था हमलवरों को

× × ×

झूठ को सच के यहाँ आराम करते देखकर
अब कोई ताज्जुब नहीं ऐसे अजूबे देखकर

सत्य की नियति में दुःख के सिवाय और क्या है? सत्य देता है रुदन, वह भी अरण्य रोदन। ग़ज़लगो 'समीप' हृदय की गहराई से इस स्थिति को स्वीकार करते हैं–

उल्टी-सीधी इस दुनिया में, मुझे शराफत ले डूबी
मुझको यारो मेरी ही, ये सच की आदत ले डूबी

× × ×

हम मुश्किल की धूप में चलते रहे 'समीप'
लेकिन किसी दरख्त ने साया नहीं दिया

× × ×

हर वक्त पूछता है, मेरा ये हौसला
अब और कितने होंगे, धीरज के इम्तिहान

उपभोक्तावादी संस्कृति में परिवार बिखर रहा है। एक दूसरे के प्रति अंतरंगता नहीं है। माता-पिता के प्रति संवेदना नहीं है। सब अपने-अपने धुन में हैं। 'समीप' ने इसे रेखांकित किया है–

तेज धुन पर थिरक रहा परिवार
दर्द से चीखती है माँ बीमार

रेल के डिब्बे में यात्रियों के द्वारा फेंके गए कचड़े, फलों के छिलके बुहारते गरीब बच्चों को देखकर यात्रीगण कहते हैं कि बच्चा अपने पैरों पर खड़ा है; 'समीप' ने इस विडंबना को स्वर दिया है–

देखकर रेल के डिब्बे बुहारता बचपन
लोग कह देते हैं पांवों पे खड़ा है तो सही

कवि को इस नई पौध की चिंता है–

जीवन इस नई पौध की सुरक्षा में नहीं है
इस बात की चर्चा कहीं दुनिया में नहीं है

नितांत भौतिकवादी वैयक्तिक सोच के कारण लोग कितने बदल गए हैं। कहीं आत्मीयता नहीं, सद्भावना नहीं। अपने दिल की आवाज भी नहीं सुनते हम। हम जीना ही भूल गए हैं। 'समीप' की ग़ज़ल में अपने समय की गति व नियति की अनुगूँज भरपूर है–

जिन लोगों में होती थी मुहब्बत की उमंगें
वो लोग भी अब दिल की सदा भूल गए हैं
ऐ ज़िंदगी, इल्जाम तुम्हें दें भी, तो क्या दें
हमलोग ही जीने की अदा भूल गए हैं

कवि की चिंता में बाजारीकरण भी है–

कितना मीठा बोल रहा है
कोई व्यापारी लगता है

× × ×

अब ज़्यादा खतरा है उससे
आया है वह भेष बदलकर

'समीप' शब्दों के शस्त्र लेकर जीवन के कुरुक्षेत्र में उतरते हैं और तमाम विसंगतियों के विरुद्ध लोगो में चेतना जगाते हैं। फलस्वरूप कई लोग नाराज हो जाते हैं लेकिन जिनकी पीड़ा को अभिव्यक्ति मिलती है, वैसे लोगों को सुकून मिलता है और ग़ज़लकार सही अर्थ में इसे ही जीवन समझते हैं–

किसी से दोस्ती, ना दुश्मनी है
बताओ, ये भी कोई ज़िंदगी है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यहाँ दुष्यंत का शे'र उल्लेखनीय है–

मेरे दिल पे हाथ रक्खो, मेरी बेबसी को समझो
मैं इधर से बन रहा हूँ, मैं इधर से ढह रहा हूँ

मानवीय मूल्यों के क्षरण, उच्चादर्शों के पतन, राजनीतिक दांव-पेंच, आर्थिक-वैषम्य एवं लोगों की असंगता, दूरी एवं आत्मलीनता को गहराई से महसूस करने के बावजूद 'समीप' की आशावादिता प्रशंसनीय है–

कहीं आगे सफर अच्छे भी होंगे
नए रस्ते कहीं खुलते भी होंगे

× × ×

आपस में अगर अपनी मुहब्बत बनी रहे
इस खौफनाक दौर में हिम्मत बनी रहे

स्पष्ट है कि 'समीप' आस्थावादी ग़ज़लकार हैं। इन ग़ज़लों में एक तरफ संकटापन्न स्थितियों का दहशतपूर्ण और चिंतनीय वर्णन है तो दूसरी ओर आशा की किरणें भी दिखलाई गई हैं। कवि आम आदमी की परेशानियों, बेचैनियों एवं अभावों से साझा करते हैं, उन्हें हौसला देते हैं और उनके लिए एक बेहतर दुनिया तलाशते हैं–

धरती नई तलाश, नया आसमाँ तलाश
अब वक्त आ गया है, तू अपना जहाँ तलाश

यहाँ दुष्यंत का शेर याद आता है–

हो गई पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

इस प्रकार आज के समय की जितनी भी समस्याएँ हैं, चाहे सामाजिक विसंगतियाँ हों, आर्थिक असमानताएँ हों, राजनीतिक स्वार्थधता हो, अपसंस्कृति का दुष्प्रभाव हो, इन ग़ज़लों में सभी का सशक्त, सटीक चित्रण है, साथ ही समाधान के रास्ते भी दिखलाए गए हैं। सभी ग़ज़लें उद्देश्यपूर्ण एवं समय की माँग के अनुरूप हैं। वस्तुतः 'समीप' की समस्त काव्यगत अनुभूतियाँ 'किसे नहीं मालूम' (ग़ज़ल संगह) में परिव्याप्त हैं। भाषा, भाव, ग़ज़ल-शिल्प, शब्द प्रयोग तथा अनुमान अभिव्यंजना शैली ने हरेराम 'समीप' को दुष्यंत कुमार की परंपरा के ग़ज़लकार के रूप में प्रस्तुत किया है। कुल मिलाकर यह संग्रह पठनीयता और प्रभावोत्पादकता से पूर्ण एक सार्थक हस्तक्षेप है।

संपर्क : भा. स्टेट बैंक कालोनी, वीरपुर-854340 (बिहार)

समीक्षित कृति : किसे नहीं मालूम (ग़ज़ल संग्रह) कवि : हरेराम 'समीप'
प्रकाशक : पुस्तक बैंक, 398, सेक्टर-8 फरीदाबाद-121006 (हरियाणा)

'परती पलार' का सदस्यता शुल्क

वार्षिक : ₹150
त्रैवार्षिक : ₹ 400
पंचवार्षिक : ₹ 600
आजीवन : ₹ 1500
केवल मनीआर्डर द्वारा ही स्वीकार्य।
सहयोग प्रार्थनीय।

–संपादक

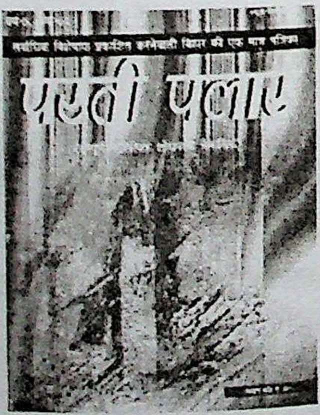

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

ज़िंदगी के आगोश में मचलती ग़ज़लें

❑ डॉ. वरुण कुमार तिवारी

ग़ज़ल एक ऐसी सशक्त विधा है जिसके माध्यम से जीवन और जगत के विविध पक्षों को प्रभावशाली ढंग से दर्शाया जा सकता है। इसी ग़ज़ल के जिस्म में आमजन की अनुभूतियों का रक्त प्रवाहित कर तथा समय सापेक्ष सत्य का प्राण फूँककर रचना कर्म करने वाले ग़ज़लकार **नरेश शांडिल्य** अपनी लेखन क्षमता के लिए लोकप्रिय हैं। दोहा और नाट्य गीत के साथ-साथ ग़ज़ल जैसी पारंपरिक काव्य-विधाओं को समय-साक्षी बनाने में उन्होंने काव्य-कला का सुंदर परिचय दिया है।

नरेश शांडिल्य का संकलन *'मैं सदियों की प्यास'* में सत्तर ग़ज़लें संकलित हैं। संकलन के संबंध में फ्लैप पर प्रोफेसर सादिक़, उर्दू विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय की टिप्पणी है–"नरेश शांडिल्य ग़ज़ल-विधा और उसकी नजाकतों से खूब वाक़िफ़ हैं। वह न केवल विभिन्न बहरों और रदीफ़-काफ़ियों का अच्छा ज्ञान रखता है बल्कि शब्दों का भी मिज़ाज आश्ना है। वह अपने जज़्बात और अहसासात को अश्आर के पेराए में अभिव्यक्त करने का गुर जानता है। उसकी ग़ज़लों में व्यक्ति, समाज और समय हाथ में हाथ लिए साथ-साथ चलते नज़र आते हैं।" संकलन के फ्लैप पर दूसरे वरिष्ठ साहित्यकार आचार्य निशांतकेतु (अध्यक्ष, सुलभ साहित्य अकादमी) ने लिखा है–"प्रस्तुत संग्रह की ग़ज़लों में ज़माने की धड़कन को अपनी धड़कन के साथ पकड़ने की भरपूर कोशिश की गई है। अपनी इन ग़ज़लों के माध्यम से नरेश शांडिल्य ने यक़ीनन 'मैं' से 'हम' तक का खूबसूरत सफर तय किया है।"

वस्तुतः संकलन की ग़ज़लों को पढ़ने के बाद यक़ीन हो जाता है कि सादगी, साफगोई, अर्थ गांभीर्य, मार्मिकता तथा संप्रेषणीयता के कारण शायर नरेश से हिंदी ग़ज़ल मनचाही उम्मीदें बाँध सकती है।

नरेश शांडिल्य की ग़ज़लें उनके जीवनानुभवों के साथ गहरी आत्मलोचनपरक दृष्टि का परिचय देती हैं। इन ग़ज़लों को पढ़ते हुए ऐसा एहसास होता है कि ग़ज़लकार ने ज़िंदगी को जिया नहीं, बल्कि उसके एक-एक लम्हे को महसूस किया है और उसका भरपूर लुत्फ़ उठाया है

ये चार काग़ज, ये लफ्ज ढाई
है उम्र भर की यही कमाई

ग़ज़लों में संघर्षशील आमजन की पीड़ा को अभिव्यक्ति मिली है। शोषण, गरीबी, महँगाई, ऊँच-नीच का भेद एवं सामाजिक असामानता की विसंगतियों को शाइर ने निम्नांकित ग़ज़लों में इतनी सादगी से प्रस्तुत किया है कि मानो ये उनकी ज़िंदगी का हिस्सा ही हों–

इन्सानों के घर के ऊपर
हैवानों का सर लगता है
× × ×
पापा दफ्तर, उलझन गुस्सा
अम्मा चूल्हा, बरतन, पानी
× × ×
एक रोटी सौ झमेले
औ गीला चून सारा
× × ×
क्या-क्या काम न वो करता
फिर भी पेट कहाँ भरता
× × ×
औंधे दीये, धू-धू आँतें
ऐसी भी दीवाली देखी

सांप्रतिक समाज में व्याप्त व्यक्तिगत जीवन के अंतर्विरोध, वर्ग-वैषम्य, वर्ण-वैषम्य, रेत होती संवेदना, खोखले हो रहे संबंध, टूटते-बिखरते नैतिक मूल्यादर्श इत्यादि जीवन के कटु यथार्थ को ग़ज़लकार ने विभिन्न कोणों से देखने-परखने की भरपूर कोशिश की है–

आदमी में अब आदमी है कहाँ
उसके भीतर की खुदी अब है कहाँ
× × ×

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

झूठा हर अंदाजा निकला
राजा भी एक पियादा निकला

× × ×

रिश्ते-नाते पलड़ों पर हैं
बाजारों-सा घर लगता है

× × ×

जिसको जपते आए निस दिन
मंत्र नहीं वो नारा निकला

× × ×

कब दिन-रातों का यूँ कहना होगा
कब तक मेरा जीवन दुर्घटना होगा

समय की नब्ज पर कलम की उँगली रखकर दूसरों की धड़कनों से प्रतिसंवेदित होना इस शाइर का अहम् खुसुसियत है–

पीकर जहर हरेक न सुकरात बन सका
इक-सा नहीं है इसका असर, सोच लीजिए

× × ×

बोझ खुदा का लिए-लिए अब तक
यूँ जिए भी तो क्या जिए अब तक

× × ×

है चमक चेहरे पे, बेशक
गर्दिशों में है सितारा
दर्द इतने दर्द, तोबा
ये कहाँ पर ला के मारा

सर्वविदित है कि ग़ज़ल के लोकप्रिय शायर दुष्यंत कुमार ने ग़ज़लों में आम आदमी की पीड़ा, उनके आर्थिक-सामाजिक विषमताओं को स्वर दिया। दुष्यंत कुमार की ग़ज़ल में गौरतलब बात यह है कि उन्होंने मुश्किल से मुश्किल चीजों को बड़ी सादगी से पेश किया। इसलिए उनकी ग़ज़लें जनता की जुबान चढ़ गई। फिर तो हिंदी ग़ज़लों में आम आदमी की पीड़ा अभिव्यक्त करने की परंपरा-सी चल पड़ी और हिंदी ग़ज़ल प्रणय-संवेदनाओं से प्रायः दूर होती गई। जबकि चाँद-सितारे, नदी-पर्वत-सागर के साथ-साथ प्रणय संवेदना भी जीवन-जगत का अनिवार्य हिस्सा है। प्रसन्नता की बात है कि नरेश-शांडिल्य ने कुछ ग़ज़लों में प्यार-मुहब्बत का जिक्र करते हुए उस एहसास को जगाया है–

आँखों में पतझड़ है लेकिन
साँसों में मधुमास लिए हूँ

ये आँखें, ये रौशन मंजर, तुम बिन सब बेमानी है
तुझ बिन सारा नूर-नज़ारा, मेरे बस की बात नहीं

मांसलता तथा फ़लसफ़ा के दो तटों के बीच भाव-सरिता की स्नेहिल सलिल-धार को ग़ज़ल की उर्मियों से सहज तरंगायित करने की क्षमता ग़ज़लों में है–

है वक्त मेहरबान जो करना है कर अभी
मालूम किसे कल यूँ खुदा शाद हो न हो
उल्फ़त के मेरी आज तो चर्चे हैं हर तरफ
कल वक्त के होंठों पे ये रुदाद हो न हो

जीवन में जीवट और जिजीविषा तथा नई आशा और अभिलाषा का जो संचार करे, वस्तुतः वही सच्चा साहित्य है। इस निकष पर इस शाइर की ग़ज़लें खरी उतरती हैं–

वो हार भला मान ले तक़दीर से कैसे
जिस दिल में भी तदवीर की उम्मीद बची है
ये पाँव जो हारे हैं यही पाएँगे मंजिल
राँझे में अभी हीर की उम्मीद बची है

× × ×

आरोही, अब और विकल्प नहीं कोई
उघड़े रस्सों को फिर से बँटना होगा

इस शाइर के कलाम की सबसे बड़ी खूबी यह है कि पहले वे बहुत सावधानी से तथ्यों का चयन करते हैं, फिर उन तथ्यों को अत्यंत कुशलतापूर्वक सादा जबान और आमफहम अशआर में ढाल देते हैं। यही उनकी कामयाबी का राज है। यही कमाल है जो उनके श्रोता के दिलों को न केवल छू लेते हैं बल्कि उन्हें आसानी से याद भी हो जाते हैं। यही एक सफल ग़ज़लगो होने की पहली शर्त है। निष्कर्षतः नरेश शांडिल्य की ग़ज़लों में ग़ज़ल की तमाम खूबसूरती नुमायाँ है।

संपर्क : भा. स्टेट बैंक कॉलोनी, वीरपुर-854340 (बिहार)

समीक्षित कृति : मैं सदियों की प्यास (ग़ज़ल संग्रह), ग़ज़लकार : नरेश शांडिल्य
प्रकाशक : किताब घर प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

सबकी ज़िंदगी से रू-ब-रू कराती ग़ज़लें

❑ प्रेमकुमारी कटियार

जब कोई उर्दू की प्रमुख विधा ग़ज़ल पर लेखनी उठाता है तब इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि हिंदी और उर्दू सहोदरा हैं। वर्तमान संदर्भ में इन दोनों बहनों में बड़ा कौन है इसकी पड़ताल या विश्लेषण करने की जरूरत नही है, क्योंकि अनेक मुस्लिम कवियों ने धर्म-अध्यात्म और नीति परक रचनाएँ विभिन्न छंदों में की हैं फिर खुसरो, रहीम और रसखान को तो कोई भूल ही नहीं सकता। ये इस्लामी कवि हृदय से भाषा धर्म और समाज की दृष्टि से अत्यंत उदार रहे हैं। अरबी से निकलकर ग़ज़ल अब उर्दू के घर तक आयी है और अब हिंदी के प्रति मैत्री भाव की पोषक बन चुकी है। वैसे स्वतंत्रता के पूर्व भी अनेक हिंदुओं ने उर्दू शायरी को अपनाकर ग़ज़लें कहीं जिनमें गिरधर दास, बद्री नारायण उपाध्याय, प्रेमघन, रघुपति सहाय, फिराक गोरखपुरी, रामप्रसाद बिस्मिल, बृजनारायण चकबस्त आदि-आदि। वैसे स्वतंत्रता के बाद जिन कवियों ने श्रेष्ठ ग़ज़लें कहीं उनमें नारायण मुल्ला, कृष्णबिहारी 'नूर' बलवीर सिंह 'रंग', जगन्नाथ आजाद आदि शामिल हैं। रुद्र काशिकेय, बनारसी के नाम से भी ग़ज़लें कहते थे। नरेश कुमार शाद, दुष्यंत कुमार और अदम गोंडवी के अतिरिक्त कुँअर बेचैन और रमेश रजक के नाम भी चर्चित रहे हैं।

जहाँ तक ग़ज़लों में हिंदी शब्दों का प्रयोग सफाई के साथ करने वालों में जहीर कुरेशी, अशोक 'अंजुम' और चन्द्रसेन 'विराट' को यश हासिल हुआ है। यहाँ मैं एक सत्य को रखना चाहती हूँ कि हिंदी गीतकारों की तुलना में मुस्लिम शाइर शायरी से पहले छंद (अरुज) का गहराई से अध्ययन करते हैं क्योंकि उर्दू ग़ज़ल में छंद की कठिनता गीत की तुलना में कहीं अधिक है। इसका मुख्य कारण यह है कि गीत के रचयिताओं का विश्वास 'इस्लाम' (काव्य की या लेख की त्रुटियों की शुद्धि) में नहीं है। शायद ये इसे अपने रचनाकार का अपमान समझते हैं। इसलिए ग़ज़ल को शुद्धता से कहने वाला हिंदी ग़ज़लकारों को उतनी स्वीकृति नहीं देता किंतु मैं पिछले कई वर्षो से वर्तमान पीढ़ी के जिन ग़ज़लकारों को पढ़ रही हूँ उनमें अशोक 'अंजुम', चन्द्रसेन 'विराट', जहीर कुरैशी, सुरेन्द्र चतुर्वेदी, सुश्री वर्षा सिंह, सूर्य भानु गुप्त, बालस्वरूप राही और डॉ. महेन्द्र अग्रवाल की ग़ज़ल की कहन छंद की दृष्टि से नितांत ही शुद्ध हैं। इनमें से अधिकांश ग़ज़ल संग्रह सुविज्ञ पाठकों द्वारा सराहे गए है, किंतु मुझे एक आश्चर्य मिश्रित दुख होता है कि ग़ज़ल की समीक्षा करते समय प्रायः अग्रज पीढ़ी के अथवा प्राचीन शाइरों की ग़ज़लों अथवा शे'र के उद्धरण दिए जाते हैं। केवल अधिकतम उद्धरण मेरे पढ़ने में स्वर्गीय दुष्यंत कुमार के आए हैं, यह शायद इसलिए कि उन्होंने ग़ज़ल का नया फॉर्म और नवाचार दिया। फिर उनके कथ्य को हम नई अभिव्यंजना के घर में प्रतिष्ठित करने का श्रेय दे सकते हैं।

अग्रज पीढी के उर्दू के शायर और समीक्षक स्वर्गीय अशीनल सियानी के संपादन में प्रकाशन विभाग, दिल्ली ने 'ग़ालिब : कवि और मानव' नाम से कृति का प्रकाशन किया था। उसमें यह स्वीकारा गया है कि उर्दू कविता में माशूका के बड़े विचित्र चित्र मिलते हैं। उर्दू के कवियों ने माशूका को एक बहुत ही विचित्र जीव बना दिया है। आमतौर पर उसका व्यक्तित्व उभरता नहीं। उसका चरित्र सामने नहीं आता और यदि कहीं नज़र भी आता है तो वैश्या के रूप में या सत्य स्वरूप ईश्वर का चित्र बनकर। इसी तारतम्य में मीर तकी मीर संवंधी एक कृति में मैंने पढ़ा कि 'ग़ज़ल' शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा से हुई। ग़ज़ल उर्दू या फारसी के उस पद्य विशेष को कहते हैं, जिसमें प्रायः प्रेम, शृंगार आदि का समावेश होता है। इतना ही नहीं इसमें आशिक-माशूक, साकी-शराब, मिलन-विरह आदि का भी उल्लेख किया जाता है।

यह भी एक प्रमाणिक सत्य है कि उर्दू ग़ज़लों में हिंदी और हिंदी गीतों में उर्दू के शब्दों का प्रयोग कहन को नई उठान देते हैं। इस तरह यह भाषायी दृष्टि से सांप्रदायिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सद्भाव का भी एक अच्छा उदाहरण है। डॉ. महेन्द्र अग्रवाल की अनेक ग़ज़लों में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं जैसे पृष्ठ 27 पर उनकी एक ग़ज़ल है। उसमें उर्दू की तुलना में हिंदी शब्दों का बाहुल्य है। वह कहते हैं–

पिघल गए अवसाद तुम्हें देखा मैंने
बहुत दिनों के बाद तुम्हें देखा मैंने
नज़र ज़हन व होंठ सभी में इक जैसा
शुरू हुआ उन्माद तुम्हें देखा मैंने

श्री महेन्द्र अग्रवाल की इस ग़ज़ल में प्रणय-भंगिमा नहीं है। हम अपने मित्र, समाज के किसी अन्य सदस्य या दुखों में काम आने वाले किसी मनुष्य के अदृश्य हो जाने के लम्बे समय बाद उसे देखें तो, यही भाव आलोड़ित होने लगता है। ग़ज़ल उर्दू की एक प्राणवान विधा है। उसमें तेजधार पैदा करना बहुत मुश्किल है, क्योंकि प्रेम प्रसूत ग़ज़लों ने इस विधा को इतना विनम्र बना दिया है कि किसी प्राचीन कवि की कोमलकांत पदावली, पढ़ी गई कविता स्मरण में आ जाती है। एक उर्दू शाइर ने कहा था कि 'शाइरी इल्म से नहीं आती।' डॉ. महेन्द्र अग्रवाल की ग़ज़लों का छंद-विधान अत्यंत ही सधा हुआ है औ यह किसी तृतीय व्यक्ति के बहाने यह ग़ज़ल कहते हैं। वह स्वयं नयख्वार नहीं हैं, फिर भी बड़ी सफाई से मयखाना शब्द को ग़ज़ल में उतार दिया है।

मेरा अपना था मिलने मेरे सिरहाने चला आया
अँधेरा घिर गया तो दर्द समझाने चला आया
मुझे सारे जहाँ में ढूँढती फिरती है शोहरत भी
मैं खुद को ढूँढने की जिद से मयखाने चला आया
पुराना यार नज़रों में लिए शर्मिंदगी-सा कुछ
सुलझता देखकर मुझको, फिर उलझाने चला आया
कई बरसों से, मैंने छोड दी थी शायरी, लेकिन
तुम आए सामने तो मैं भी दुहराने चला आया

'बादलों को छूना है, चाँदनी से मिलना है' डॉ. महेन्द्र अग्रवाल के इस नए ग़ज़ल संग्रह में सबकी ज़िंदगी से रू-ब-रू या साक्षात्कार करने का वैशिष्ट्य है। ग़ज़लकार कभी-कभी अपना स्वयं का मुआयना करने की धुन में इतना खो जाता है कि उन्हें खुद कुछ याद नहीं रहता। जैसे इस ग़ज़ल के दो-चार शे'र के बाद आखिरी शे'र–

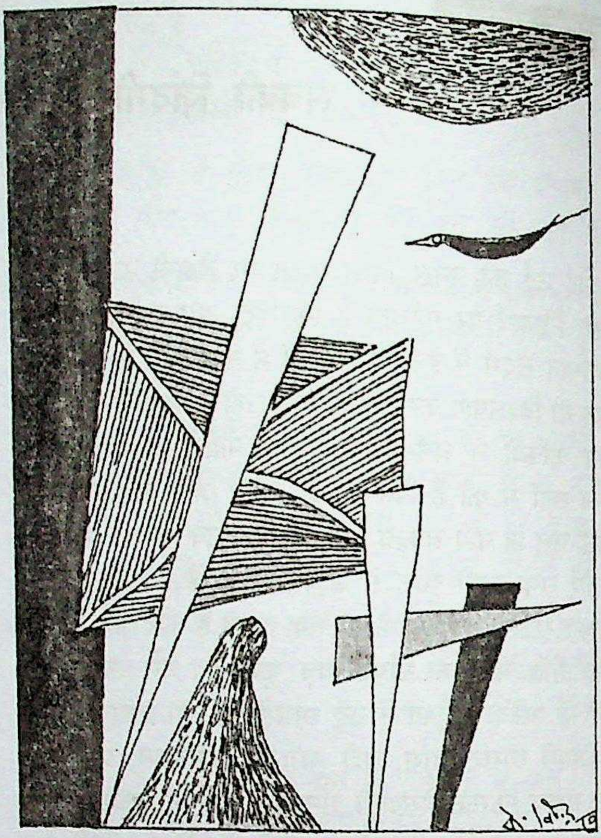

भूल जाता हूँ मैं खुद को भी नए जाम के बाद
याद आती ही नहीं खाई कसम शाम के बाद
बंद मुट्ठी थी, खुला हाथ, लकीरें केवल
अब कहाँ कोई खुशी यार तेरे नाम के बाद
बाद गालिब के ग़ज़ल कौन कहेगा अब भी
एक रुबाई भी कह पाए न खैयाम के बाद

ग़ज़ल उर्दू की एक ऐसी विधा है जिसको समीक्षक काफी मिले किंतु भाषा के स्तर पर वह आम पाठकों तक नहीं पहुँची। अगर समीक्षा की दृष्टि से ग़ज़ल के इतिहास का तर्जुमा (अनुवाद) होता तो वह हिंदी के अधिक नज़दीक आ सकती थी। वैसे कुछ श्रेष्ठ समीक्षक उर्दू को मिले हैं, यह परंपरा मिर्जा गालिब के समय से शुरू हुई। इस संदर्भ में मुझे उर्दू के एक समीक्षक का यह कथन स्मरण आता है। रशीद अहमद सिद्दकी ने गालिब संबंधी अपने एक लेख में कहा है–'मुझको यदि यह पूछा जाए कि हिंदुस्तान को मुगल साम्राज्य ने क्या दिया? तो मैं बिना झिझक के तीन नाम लूँगा उर्दू, गालिब और ताजमहल।' ये हिंदुस्तान की सांस्कृतिक उपज हैं और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिंदुस्तान के अतिरिक्त कहीं और नहीं पनप सकते थे। इन तीनों में हिंदुस्तान की रूपगत और अर्थगत विशिष्टताएँ झलकती हैं। *'बादलों को छूना है, चाँदनी से मिलना है'* इस संग्रह के ग़ज़लकार ने शाब्दिक दृष्टि से कोई दस्तकारी या चित्रकारी नहीं की अलबत्ता भाषा को इतना सहज और सरल रखा कि इनमें रागात्मकता का उद्‌गम सहज ही हो गया है। सरल शब्दों में कहन आम-आदमी के हृदय का स्पर्श बगैर किसी आहट के करती है। वह बोलचाल की भाषा को शाइरी को ऐसे हुनर की संज्ञा देते है जो सभी के दर्द को निखारता है। और जो वस्तु निखरेगा वह चमक देगी ही। वह किस तरह धरती और आकाश के माध्यम से प्राकृतिक तत्त्वों को नई उम्र देते हैं, ग़ज़ल के अंदाज में भी ये शे'र जैसे गीत के साँचे में ढ़ले हों–

चाँद से धरती पे आई इक परी-सी चाँदनी
छा गई आँखों में यूँ चंचल सखी-सी चाँदनी
होश में रहते कहाँ हैं, यार लहरों की तरह
गूँजती है रूह में जब, बाँसुरी-सी चाँदनी

अपने संपादन की तिमाही पत्रिका 'नई ग़ज़ल' में भी उनके संपादकीय कौशल के तेवर दिखाई देते हैं। अंतर केवल यही है कि इस कृति में उनकी साठ ग़ज़लें विभिन्न कहन के माध्यम से अपनी ही नहीं सबकी बात कहती हैं। जैसे इस ग़ज़ल का सत्य–

हथेली पे कई पर्वत थे मरते दम नहीं उभरे
तेरी आँखों में वो तहरीर वो मौसम नहीं उभरे
खिले हैं फूल से चेहरे मगर फिर भी शिकायत है
किसी रूखसार पे जुल्फों के पेचो-खम नहीं उभरे
समुंदर-सी तेरी आँखें बड़ा जोखिम लिया हमने
कई सदियाँ यहाँ गुजरीं, अभी तक हम नहीं उभरे
किसी के ज़ख्म गहरे हों, किसी का दर्द नामुमकिन
निशां चोटों के माथे पर, किसी से कम नहीं उभरे

मेरी दृष्टि से इस कृति को ग़ज़लों का खूबसूरत गुलदस्ता नहीं, अलबत्ता ज़िंदगी की सच्चाइयों का गहन वन-प्रान्तर कहना चाहिए जो मनुष्य को *'बादलों को छूने और चाँदनी से मिलने'* की ताकत देता है।

संपर्क : सह-संपादिका 'संकल्प रथ'
108-ए, प्रगति नगर, ऋषिपुरम फेज–एक, बरखेड़ा
भोपाल-462021 (म.प्र.)
मो. 09755195423/09424556846

समय प्रकाशन से प्रकाशित हास्य-व्यंग्य की पुस्तकें

हँस ले इंडिया / प्रेम किशोर 'पटाखा'	50/-	**गुदगुदाते चुटकुले** / राजेन्द्र पटोरिया / एच.एस. सिंह	50/-
हँसो और फँसो/ अजय चौहान, भावना चौहान	35/-	**हँसो और मर जाओ**/राजेन्द्र पटोरिया, एच.एस. सिंह	50/-
मजेदार चुटकुले / अजय चौहान, भावना चौहान	35/-	**रसीले चुटकुले** / राजेन्द्र पटोरिया, एच.एस. सिंह	50/-
बच्चों के चुटकुले / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**मस्त-मस्त चुटकुले** / राजेन्द्र पटोरिया	50/-
पति-पत्नी की नोंक - झोंक / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**चुटकुलों की बौछार** / राजेन्द्र पटोरिया	50/-
चुटकुला एक्सप्रेस / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**फिल्मी जोक्स** / राजेन्द्र पटोरिया	50/-
चटपटे चुटकुले / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**हँसी के फव्वारे** / राजेन्द्र पटोरिया, एच.एस. सिंह	50/-
प्रेमी-प्रेमिका के जोक्स / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**रंगीले चुटकुले** / राजेन्द्र पटोरिया, एच.एस. सिंह	50/-
चुटीले जोक्स / राजेन्द्र पटोरिया	50/-	**सुपर हिट्स जोक्स** / राजेन्द्र पटोरिया, एच.एस. सिंह	50/-

सम्पर्क–आई-1/16, शान्तिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-110002

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

वक़्त के मंज़र : विपन्नता का बीजगणितीय यथार्थ

❑ राधेलाल विजधावने

भूमंडलीकरण के इस दौर में, जहाँ शार्टकट संपन्नता का अतिवादी ख़ौफ़नाक चेहरा बार-बार आँखों के सामने भयावह चित्रों का डरावना मंज़र प्रस्तुत करता है वहीं जीवन की विपन्नता का बीजगणितीय यथार्थ मन के भीतर तकलीफ़देह संवेदनाओं का अंतर्पाठ बहुत तेजी से करता है, जिसकी तकलीफ़ तमाम विश्वमानव के अंतर्मन में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से होती ही रहती है, जिससे सामान्य सामाजिक जनजीवन अस्त-व्यस्त तो हो ही जाता है, उसके सृजनात्मक सरोकारों और संवेदनाओं का सामूहिक बलात्कार और आत्मसात् भी हो जाता है।

डॉ. ब्रह्मजीत गौतम के ग़ज़ल-संग्रह ***'वक़्त के मंज़र'*** की ग़ज़लें इसी तरह के बेहतरीन समय की खोज करती हैं, परंतु समसामयिक दुःखद एवं विचारपरक दुःखद यथार्थ के आत्मसंवेदन उसकी उत्कट जिज्ञासाओं को निलम्बित कर विपर्यण के रहस्य-रोमांच के अँधेरे घेरों में डाल देते हैं। इससे अत्यंत अर्थपूर्ण एवं सारगर्भित अंतरंग प्रकृति में विकृति आने से पूरी की पूरी सामाजिक-सांस्कृतिक परिणाम की अभिलाषाएँ अहं-केंद्रित होकर विचार और आस्था को विकलांग कर देती हैं। इसलिए बार-बार महसूसता है कि आज का आदमी समस्याओं के कटघरे में बंद है तथा अकेला और सिर्फ़ अकेला है, क्योंकि शोषण, अतिवाद, हत्या, वर्गभेद, गरीबी और भुखमरी के कथानक आज पूरे विश्वसमाज में छा गए हैं।

अनिश्चयात्मकता ही आज की परिस्थितियों का बयान करती है। इसलिए भूमण्डलीय बाज़ारवाद के संक्रमण में दुविधाभरी जटिल गति का बोध हर आदमी को होना स्वाभाविक है। इससिलए वह उजड़े चमन की तरह अपने जीवन के विनाश और उजाड़ का आन्तरिक अहसास करता है—

वक़्त के उजड़े चमन हैं हम
भग्न मन हैं रुग्ण तन हैं हम
क्या करें बातें बहारों की
डाल से उतरे सुमन हैं हम

'वक़्त के मंज़र' की ग़ज़लें ध्वनिविस्तारक-नकारात्मक व्याख्यात्मक होने का अहसास कराती हैं। इसलिए भी कि आज के आदमी की सामुदायिक अस्मिता नहीं रही। वर्तमान सत्ता और राजनीतिक समीकरणों ने सामाजिक-सांस्कृतिक समीकरण अस्त-व्यस्त कर दिए हैं। इसलिए आम आदमी के लिए लक्ष्य हासिल करना आसान नहीं। हर तरह की विसंगतियाँ इस कदर जीवन में आ गई हैं कि वह यह अहसास करने लगा कि सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य जीवित नहीं रहे—

फ़लक से ज़मीं पर उतर कर तो देखो
ज़रा अपनी दुनिया के मंज़र तो देखो
कहीं कोठियाँ हैं तनी आस्माँ तक
कहीं गिजबिजाते ये टप्पर तो देखो
कहीं क़त्ल-ख़ूँरेज़ी बम के धमाके
कहीं चाक सीनों पे ख़ंजर तो देखो
कहीं लुट रही अस्मते कमसिनों की
ये आँखों से बहते समुंदर तो देखो

'वक़्त के मंज़र' की ग़ज़लों में आंतरिक कसमसाहट के भाव-संवेदन का अहसास होता है। इनमें वैयक्तिक और राजनीतिक विरोधाभासी मिश्रण का समावेश है। संग्रह की ग़ज़लें सामाजिक पदक्रम और दमनकारी अर्थप्रणाली को चुनौती देती हैं और भाषा के नए पाठ में सववर्जन और विखंडन का सटीक उत्तर देती हुई आधुनिक जीवन के सौंदर्यशास्त्र का साथ देती हैं। इसलिए इन ग़ज़लों में आधुनिकता, सांस्कृतिक प्रत्यय के रूप में उपस्थित होती है—

कैसी ज़ोर-ज़बरदस्ती है
रोक सके किसकी हस्ती है
कोई भी महफ़ूज़ न दिखता
बटमारों की यह बस्ती है
चर्चा का फल निकले कैसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संसद में धींगामस्ती है
अग में जग में पग-पग देखो
महँगाई कितनी सस्ती है

'वक़्त के मंज़र' की ग़ज़लों का मिज़ाज मानवीयकरण की आमोदशा का है। इसलिए इनमें आंतरिक जीवन-मूल्यों के निर्वसन और गिरावट का उद्भास होता है। इनमें कामुकता का दर्प सजीव और सजावटी है–

कोठियों में ही बुला लेते हैं वे अपने शिकार
आज के सय्याद जंगल में स्वयं जाते नहीं

डॉ. ब्रह्मजीत गौतम का नज़रिया समय-सचेतक है। इसलिए इनकी ग़ज़लें समय की विकृतियों की ओर ध्यान केंद्रित करती हैं और ख़तरों के प्रति आगाह भी करती हैं। इनकी ग़ज़लों में वक़्त की जीजिविषा और तज्जन्य युयुत्सा के साथ सांस्कृतिक स्वतंत्रता के लिए लंबे संघर्ष की अपेक्षाएँ समाहित हैं। ये ग़ज़लें अपने वक़्त की दहशतों, डर और हादसों की जड़ों की पहचान करती हैं तथा इनसे मुक्ति का जवाब तलाशती हैं। इसलिए इनमें आधुनिकता के बीच का टकराव, अंधप्रतिक्रिया और विध्वंसवाद का ख़तरनाक इरादा समाहित है, जो आम आदमी में अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिरोधी क्षमता विकसित करता है–

न और कोई साथ हो मगर तेरा ख़ुदा तो है
मलाल किसलिए जिगर में तेरे हौसला तो है
न डाले हम पे मेहर की नज़र कोई तो ना सही
हमें हमेशा अपने बाज़ुओं का आसरा तो है

डॉ. गौतम की ग़ज़लों में जीवन का प्रवाह है। इनमें कोई प्रशस्तिगान नहीं है और न ही टांगअड़ाऊ और उबाऊ आमोदशा। बल्कि सामाजिक परिवर्तन को हाशिए पर रखने वाले शक्ति-सामर्थ्यो से निरंतर संघर्ष करते रहने की उत्प्रेरणा है, ताकि आदमी के मूल्य बचे रहें और उसका अस्तित्व सुरक्षित बना रहे।

संपर्क : ई.-8/73, भरत नगर (शाहपुरा), अरेरा कॉलोनी
भोपाल, (म.प्र.) 462039

पुस्तक : वक़्त के मंज़र (ग़ज़ल-संग्रह)
कवि : डॉ. ब्रह्मजीत गौतम
बी-85, मिनाल रेजीडेंसी, भोपाल (म.प्र.)
प्रकाशक: नमन प्रकाशन, नई दिल्ली
मूल्य : रु. 100.00

समय प्रकाशन से प्रकाशित एवं चर्चित पुस्तकें

स्वान्तः सुखाय / प्रभा मेहता 150/-
वाजीराव पेशवा (प्रथम) / विक्रम सिंह अजिल्द 70/- सजिल्द 150/-
बलिदानी वीर मदनलाल धींगरा / विक्रम सिंह 60/-
प्रवाह का कुछ जल / कविता शनवारे 150/-
महर्षि मेंहीं परमहंस, अमर संस्मरण : मेरे गुरुदेव के / -
डॉ. नागेश्वर चौधरी 'नागेश' 50/-
पत्रकारिता और स्तम्भ लेखन / चन्द्र भूषण 200/-
प्रवाह का कुछ जल / कविता शनवारे 150/-

समय प्रकाशन
आई–1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002
फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 011–23270889
ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

कैलाश झा 'किंकर' के ग़ज़ल संग्रह 'देखकर हैरान हैं सब' पर एक नज़र

❑ डॉ. शब्बीर हसन

'देखकर हैरान हैं सब' कैलाश झा 'किंकर' का दूसरा ग़ज़ल संग्रह है जो 2008 में प्रकाशित हुआ है। इस पर उनके परिचय से आभास होता है कि उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य की सेवा में अपना जीवन अर्पित कर रखा है। वे कवि हैं, लेखक हैं, संपादक हैं और साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यकर्ता हैं। इस प्रकार एक बहुआयामी व्यक्ति हैं और इस अँग्रेजी के फैलाव के युग में जनता की भाषा 'हिंदी' का अलख जगाए हैं।

इस ग़ज़ल संग्रह 'देखकर हैरान हैं सब' में कुल 93 ग़ज़लें हैं। इन ग़ज़लों को पढ़ते हुए हिंदी क्षेत्र की जनता का पूरा चित्र उभरकर सामने आ जाता है। हिंदी साहित्य में अभी विषय की प्रधानता का युग है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कवि और लेखक प्रस्तुति के महत्त्व से परिचित नहीं हैं। मैं स्वयं एक ऐसा पाठक हूँ जो ऐसे साहित्य को, जिसमें विषय का धुंधलापन हो, एक अंधेरी गली महसूस करता हूँ जहाँ न रोशनी होती है और न जीवन। कैलाश झा 'किंकर' की विशेषता है कि उनकी ग़ज़लों में विषयों की भरमार है। मैं यह भी अनुभव करता रहा हूँ कि हमारे जनपद का जो साहित्य है उसमें विषय काफी हैं और रचनाकारों ने बातें साफ-साफ कही हैं, महानगरों के रचनाकार बातें साफ ढंग से नहीं कह पाते हैं बल्कि फार्म की उलझनों में पाठकों को उलझा कर रखते हैं। ऐसा क्यों होता है? यह क्या षड्यंत्र है जनता के साथ?' क्या पाठकों को जन समस्याओं से दूर करने की साजिश तो नहीं है?

लेकिन कैलाश झा 'किंकर' ने बिना छल-कपट के बल्कि पूरी ईमानदारी के साथ अपनी ग़ज़लों में समाज के दुख-सुख का चित्रण किया है। जो सादगी उनके व्यक्तित्व में है, वही सादगी उनके विषयों की प्रस्तुति में है। उनकी रचनाओं में आम मेहनतकश सिर उठाए नज़र आते हैं। एक खास बात और है कि उन्होंने अपनी बातों को तोता, मैना, पिता की साईकिल आदि के सहारे नहीं कही है बल्कि साफ-साफ कही है। तमाम विषय मुझे ज़मीन से जुड़े मालूम होते हैं। इन ग़ज़लों के चंद अशआर मुलाहजा फरमाएँ—

मसला न कोई ऐसा जिसका न हल है मुमकिन
धरती किसान की है फसलें किसान लेंगे।

× × ×

जैसे लगता राजतंत्र हो
समांतों-सा बोल रहा है।

इन पंक्तियों को पढ़कर मुझे गाँव के किसान मजदूर याद आ जाते हैं जो दूसरों का दुख दूर करते हैं और सदैव स्वयं समस्याओं से जूझते रहते हैं। कवि ने इन बातों को बिलकुल कलात्मक अंदाज में कही है जबकि इन बातों को हम अपनी नव जवानी के जमाने में यूँ कहते थे—'जो जोतेगा वह काटेगा।'

मेरे इन विचारों को सुनकर लोग कहेंगे कि कवि ने केवल आर्थिक प्रश्नों को उभारा है। ऐसे लोगों के लिए आर्थिक प्रश्न पर लिखना एक असाहित्यिक कदम है। यह बात सही नहीं है। कैलाश झा 'किंकर' की शायरी का केनवास बहुत फैला हुआ है। उनके पास विभिन्न प्रकार के अनुभव हैं। इन अनुभवों पर उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति पढ़ने की वस्तु है। आज मौलवी और साधू किस प्रकार स्थापित बनकर लोगों को छल रहे हैं। यह बात किसी से अब छुपी नहीं रह गई है।

कवि इस परिस्थिति से ऊब कर कहता है—

संत-सा लग रहा है ऊपर से
पास अपने बिठा के लूटेगा

× × ×

देवता, रहबर फरिश्ता उसको
क्या-क्या समझा था कमीना निकला

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जनता के दुख अथाह हैं। कवि को एहसास है कि अब और ग़म मिले तो दरिया भर जाएगा। किसी का अपराधी होना अच्छी बात नहीं है परंतु उसके अपराधी बनने के सामाजिक कारण होते हैं। हम अपराधी से घृणा तो करते हैं परंतु उसके बनने के कारणों पर गौर नहीं करते। नारी की समस्या भी कवि को महत्त्वपूर्ण लगती है। रोज तरह-तरह के कानून बन रहे हैं। फिर भी पुरुष प्रधान समाज में नारी का शोषण समाप्त नहीं होता है। जिनके पास सत्ता है और जो अहले हुक्म हैं वे दुनिया के मालिक हैं। वही जुल्म और अन्याय के मालिक हैं। ये सारे विषय और अन्य बहुत से विषय भी कैलाश झा 'किंकर' की रचनाओं में मौजूद हैं। अब इन विषयों को कवि के शब्दों में सुनें—

ग़मों से चूर हैं अब और ज़ख्म देना मत
बहेगी आँख तो दरिया अथाह कर देगी।

× × ×

आदमी जब भी सताया जाएगा
एक अपराधी बढ़ाया जाएगा।

× × ×

इतने कानून बन गए लेकिन
पिस रही आज भी तो नारी है।

किंकर की रचनाएँ यथार्थवादी हैं। इनमें सामाजिक यथार्थ को बयान किया गया है। साहित्य समाज की समीक्षात्मक तस्वीर पेश करता है। किंकर की ग़ज़लों का स्वरूप क्रांतिकारी है। इनकी पंक्तियाँ मानव को साहस देती हैं। आंदोलन में संघर्षरत जनता को शक्ति देने वाली हैं। किंकर जैसे रचनाकारों से एक प्रश्न है कि साहित्यकार केवल तमाशागर हैं और दुनिया को तमाशा दिखाकर अपना कार्य समाप्त समझता है या दुनिया की समस्याओं से जूझता भी है? यह प्रश्न आज तमाम ऐसे रचनाकारों से पाठकगणं पूछ रहे हैं। मेरी ओर से भी यह प्रश्न विनम्रतापूर्वक 'देखकर हैरान हैं सब' के कवि से है।

अब कैलाश झा 'किंकर' की ग़ज़लों के फार्म के बारे में भी चंद बातें कहना चाहूँगा। इसलिए कि अच्छे फार्म के बिना अच्छे विचार भी बेकार हैं। फार्म और विषय-वस्तु से ही रचना का निर्माण होता है। यदि वस्तु देह है तो विषय आत्मा। दोनों का सुंदर होना आवश्यक है। इन पैमानों पर विचार करने के बाद किंकर की ग़ज़लों में छोटी बह्र वाली ग़ज़लें ज़्यादा सफल हैं। इनमें लयात्मकता है और विचारों की स्पष्टता भी है। ग़ज़लगोई में एक ऊँचाई प्राप्त करने के बाद किंकर को अगली ऊँचाई तय करने के लिए मेहनत की जरूरत है। पूर्णता वह लक्ष्य है जिसे प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयास किया जाता है। अतः धरती की संवेदनाओं से जुड़े इस कवि कैलाश झा किंकर से आशा की जाती है कि वे खूब से खूबतर की तलाश में सदैव अग्रसर रहेंगे। किंकर की छोटी बह्र वाली बहुत सारी अच्छी ग़ज़लों में एक प्यारी-सी ग़ज़ल के साथ अपनी बातें समाप्त करता हूँ—

आग दिल में जला कर रखें
तल्खियों को बचाकर रखें
गिड़गिड़ाने से क्या फायदा
अपने सिर को उठा कर रखें
जुस्तजू के लिए हर घड़ी
पाँव आगे बढ़ा कर रखें
हम गलत के नहीं पक्ष में
हर किसी को बता कर रखें
कब कहाँ किससे पाला पड़े
हौसला तो बना कर रखें

संपर्क : आर.डी. एण्ड डी.जे. कॉलेज,
मुंगेर (बिहार)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

'बदल गए दस्तूर' सामयिक सरोकारों का दस्तावेजी ग़ज़ल संग्रह

❑ डॉ. अनिल गहलौत

समर्पित साहित्य सेवी, सुकवि **मदन मोहन 'उपेन्द्र'** की पाँच काव्य कृतियों के बाद, उनका *'बदल गए दस्तूर'* प्रथम ग़ज़ल संग्रह है। कवि ने हिंदी ग़ज़ल को काव्य की केंद्रीय विधा बताते हुए, प्रस्तुत ग़ज़ल संग्रह की साठ ग़ज़लों को अपनी विगत तीन दशक की रचनाओं का चयन बताया है। संग्रह की अधिकांश ग़ज़लों के कथ्य से भी यह बात प्रमाणित हो जाती है कि कवि ने विगत दशकों में देश में तेजी से हुई सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक उथल-पुथल और नैतिक मूल्यों की गिरावट को अनुभव किया है एवं यह सब ग़ज़लों में अभिव्यक्त भी किया है।

युगीन विसंगतियों की पीड़ा कवि की लेखनी में जहाँ उतरी है, वहाँ पाठक को झकझोर देती है, *''अपनेपन की बात नहीं अब दिखती है/रिश्तों की औकात नहीं अब दिखती है''* (पृष्ठ 10)। हिंदी में ग़ज़ल की स्थिति तथा उसकी शक्ति को रूपायित करता यह शेर देखें–''राजमहलों से उतर आई ग़ज़ल'' (पृष्ठ 37)। कवि देश की वर्तमान क्षुद्र और स्वार्थांध राजनीति पर भी करारी चोट करता है–''आसनों पर वे हैं जिनकी कुर्सियाँ ईमान हैं'' (पृष्ठ 27)। तथा ''बौनी अगर सियासत हो तो फरियादी को क्या कहना है' (पृष्ठ 59)। स्वाधीनता के पचास वर्ष बाद भी आम आदमी की प्रवंचित स्थिति तथा पूंजीवादी व्यवस्था के हावी होने के प्रति कवि अपनी पीड़ा कलात्मक ढंग से यों व्यक्त करता है–''एक आजादी तिजोरी में रही/दूसरी को आप हम रौंद गए, (पृष्ठ 30)। विदेशी सांस्कृतिक प्रभाव की विषाक्तता तथा उसके दुष्परिणामों के प्रति कवि की संवेदनशीलता उसके शेरों में बड़ी मौलिकता के साथ उभरी है। जो उसके शेरों को कहने की दृष्टि से बेजोड़ प्रमाणित करती है–''उत्तर अधुनातन की धुन में डिस्को पर अलमस्त बिसराने वाले इस बस्ती के लोग'' (पृष्ठ 48)। तथा, पोर पोर पिनकुशन हुए/पीड़ा के आचमन हुए'' (पृष्ठ 52)।

अपने जनवादी स्वर में कवि ने आम आदमी के शोषण तथा उत्पीड़न को संवेदना के धरातल पर गहनता से उकेरा है, यथा : ''सिर ढका तो पाँव बाहर हो गया' (पृष्ठ 14)।'' ''हमको जो भूख चोर बना दे तो क्या बुरा'' (पृष्ठ 53) सशक्त एवं समर्थ लोगों के द्वारा गरीब और कमजोरों की आवाज दबाने की साजिश का सजीव चित्र देखें–

''चीख दबाने को बस्ती में शोर मचाते हो औरों को तकलीफें देकर जश्न मनाते हो'' (पृष्ठ 58)। ''साँप सूँघे हुए से भी लोग हैं'' (पृष्ठ 6)।

''रेत की दीवार से रिश्ते/वक्त की हालत से पिसते'' (पृष्ठ 58)। एवं ''पत्थरों पर कांच के पैंबंद'' जैसे पदबंध कवि की ग़ज़लों में उसके शेरों की कसावट तथा अभिव्यक्ति को अजस्र शक्तिमत्ता प्रदान करते हैं।

''औरों को जो घायल करते/वे दिल वाहन सम होते हैं'' (पृष्ठ 55)। तथा ''यह कागज की नाव ज़िंदगी इसमें तैर रही'' (पृष्ठ 35) जैसे शेरों में कवि का दार्शनिक पक्ष या सोच बड़ी सहजता से अभिव्यक्त हुआ है। अध्यात्म के शे'रों में कवि का निर्वेद, अभिव्यक्ति की सरलता और तरलता के साथ यों उभरता है–''एक दिन जाना सभी को झीनी चादर ओढ़कर'' (पृष्ठ 35)।

युग से आस और बदले हुए जीवन-मूल्यों की पीड़ा और निराशा की अभिव्यक्ति के साथ-साथ कवि ने अपनी ग़ज़लों में अपना प्रखर आशावादी स्वर भी बुलंद किया है और कहते हैं कि संकल्पशीलता तथा दृढ़इच्छाशक्ति से स्वप्न पूरे हो सकते हैं–

''टूटे सपने जुड़ भी सकते हैं/सपनों में भी जान जरूरी है'' (पृष्ठ 6)।

कथ्य की दृष्टि से अति संपन्न ग़ज़ल संग्रह 'बदल गए दस्तूर' कवि के समुन्नत भाव-पक्ष का द्योतक है, तथा उसके बहुआयामी सोच और सशक्त युगीन भावबोध का परिचायक है। इस संग्रह की ग़ज़लों में एक ओर जहाँ शे'रों की कहन भाषा की सरलता और तरलता विद्यमान है, वहीं दूसरी ओर शिल्प की दृष्टि से कुछ ग़ज़लों में कमियाँ भी हैं, जो ग़ज़ल को आहत करती हैं, किंतु ऐसी त्रुटियाँ विरल ही हैं। इस प्रकार वे ग़ज़ल के क्षेत्र में भी अच्छी पहचान बनाने में सक्षम हैं। पाठकों के लिए इस संग्रह की ग़ज़लें संग्रहणीय हैं।

संपर्क : रीडर एवं शोध निदेशक, हिंदी विभाग, के.आर. कॉलेज, मथुरा

कृति : बदल गए दस्तूर (ग़ज़लें), कवि : मदन मोहन उपेन्द्र, प्रकाशक : सम्यक संस्थान, मथुरा, मूल्य : पचास रु. मात्र

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

ग़ज़ल-संग्रहों की भीड़ से इतर ग़ज़ल-संग्रह 'ये आँसू'

❑ सतीश गुप्ता

'ये आँसू' ग़ज़लकार **हरीलाल 'मिलन'** द्वारा प्रणीत बहत्तर ग़ज़लों की दर्दभरी प्रस्तुति है। संग्रह की समस्त ग़ज़लें काल्पनिक संसार के परे एक ऐसे वेदना-विदग्ध स्थायी वियोग के यथार्थ पर कही गई हैं जिसे ग़ज़लकार स्वयं देखता एवं भोगता है। अनसोची-सोच पर वज्रपात, मौत के घेरे में छटपटाती जीवनसंगिनी, उसकी कराह, दर्द, रुदन, चीत्कार और निधन आदि असहनीय से असहनीय मर्मांतक दृश्यों को ग़ज़लकार अपनी अविरल अश्रुधारा के साथ समय-समय पर शे'रों में ढालता जाता है। सहिष्णुता के फूल बासी न हो जाएँ इसलिए थरथराती लेखनी से उन्हें ग़ज़लों की शक्ल में कागज पर उतारता भी आता है। वेदनाएँ ही संघनित होकर सार्थक संवेदनाओं का रूप लेती हैं; इसीलिए बहुधा लोग श्लोक की उत्पत्ति शोक़ से और ग़ज़ल की उत्पत्ति ग़ज़ाला से मानते है। वैसे भी दुःख, सुख से अधिक दीर्घजीवी होते हैं। अतः पाठकगण देर तक ग़ज़लकार की सोच के साथ अपनी सोच पर थमे रहते हैं। सुप्रसिद्ध साहित्यकार **चन्द्रसेन 'विराट'** ने लिखा है, ''...ये करुणा-विगलित हृदय से लिखी गई ग़ज़लें—आँसू से भरी हुई हैं। ऐसा लगता है अपने प्रिय पात्र को आप निहारते रहे हैं, अपलक और आँसुओं से उनकी दशा का चित्रण करते गए हैं। कौन सहृदय इन ग़ज़लों को पढ़कर भीग नहीं जाएगा?'' शीर्षस्थ कवि डॉ. गणेशदत्त सारस्वत के भी कथन को झुठलाया नहीं जा सकता, ''ग़ज़लें-कथ्य एवं शिल्प दोनों दृष्टियों से उल्लेखनीय हैं। काव्य की आर्द्रता और शिल्प की सहजता ने इस संग्रह को 'आँसू' का पर्याय बना दिया है। पीड़ा की सघन व्यंजना ने इन ग़ज़लों को अद्भुत मर्मस्पर्शिता प्रदान कर दी है जिससे सहृदय, समरस हुए बिना नहीं रहते।'' डॉ. महेन्द्र भटनागर, डॉ. कमल किशोर गोयनका एवं श्री एन.सी. कुट्टन पिल्ले प्रभृति मनीषियों ने भी इस संग्रह की ग़ज़लों की घनीभूत पीड़ा से सिक्त एवं अत्यंत मर्मस्पर्शी बताया है। शायर अंसार कंबरी ने तो सीधे कहा है कि इन ग़ज़लों को जो पढ़ेगा वो अवश्य रो देगा—

इनमें तो नज़र आएँगे हालात 'मिलन' के
'ये आँसू' नहीं हैं ये हैं जज़्बात 'मिलन' के
'ये आँसू' जो एहसास की आँखों से पढ़ेगा
उन सबको रुला देंगे खयालात 'मिलन' के

'मिलन' का यह ग़ज़ल संग्रह आज के ग़ज़ल संग्रहों की भीड़ से सर्वथा भिन्न है। इस संदर्भ में लब्ध प्रतिष्ठ गीतकार एवं लेखक डॉ. तारादत्त निर्विरोध का कथन अक्षरशः सत्य है, ''ये आँसू'' कृति में संग्रहीत ग़ज़लें हिंदी ग़ज़लें हैं, जिनमें भारतीय संस्कार बोलते-बतियाते हैं। आज के जो ग़ज़लकार हिंदी में ग़ज़लें लिख रहे हैं उनमें अधिकांश ऐसे हैं जो अपनी ग़ज़लों का संस्कार परिवर्तित नहीं कर पाए हैं। दुष्यंत कुमार भी इस वास्तविकता के अपवाद नहीं हैं। भारतीय संस्कार हिंदी ग़ज़लों की पहचान हैं और उनका 'मिलन जी' की ग़ज़लों में अभाव नहीं। ...'ये आँसू' की ग़ज़लें पढ़ते हुए लगता है, एक विगत है जो वर्तमान के साथ चल रहा है एक गहरे एहसास के साथ। सभी ग़ज़लों के रदीफ काफिए हिंदी के हैं, हिंदीनुमा, हिंदीमय। ये ग़ज़लें भारतीय संस्कारों में ढली होने के कारण ग़ज़लों की भीड़ से इतर हैं।'' 'निर्विरोध' जी का कथन इस ग़ज़ल से स्वयं सिद्ध है—

बुझा-बुझा-सा चाँद दिखाने आई है
ये 'करवा की रात' रुलाने आई है
देह नहीं है लेकिन उसकी रूह 'मिलन'
सौ जनमों का साथ निभाने आई है

पुस्तक की भूमिका के स्थान पर ग़ज़लकार ने जीवनसंगिनी के साथ बीते लम्हों की चर्चा की है जो एक लघु उपन्यास की भाँति ही आनंद देता है। जितना मजबूत ग़ज़ल-खंड है, उतना ही मजबूत गद्य-खंड भी है। ग़ज़लकार ने जीवनसंगिनी को आदर्श नारी के रूप में प्रतिष्ठित किया है जिनमें भारतीय संस्कार कूट-कूटकर भरे हैं। असहनीय दर्द, कठिनाइयों और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संघर्षों के बावजूद भी वह विचलित नहीं होती और कर्तव्य-निर्वहन में सीता और सावित्री सदृश ही समर्पित रहती हैं। जीवन की अंतिम साँसों में भी वे अपने संस्कार नहीं भूलतीं। उदाहरणार्थ–"**सिन्दूरदान मेरी ओर बढ़ाती हुई बोलीं, साहब! मेरी माँग भरिए।** मैं संकोच करने लगा क्योंकि कुछ पड़ोसी भी आ गए थे। मेरे बच्चे तो पहले से ही मौजूद थे। सबके सामने सिन्दूर भरने में मुझे शर्म लग रही थी। वे अपने पाँवों पर खड़ी थीं। सिंदूरदान अब भी मेरी ओर था। इस बार कुछ तेज स्वर में बोलीं, **साहब! मेरी माँग में सिंदूर भरिए। नहीं तो मैं नहीं चलूँगी।** मैं क्या करता? मैंने चुटकी से सिंदूर निकाला और उनकी माँग भर दिया।" कितने ही ऐसे दृश्य हैं जिन्हें पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, अधर थरथराने लगते हैं और आँखें भीग जाती हैं। एक प्रस्तुति और देखें, "पापा! इतने कमजोर दिल का नहीं होना चाहिए। वो देखिए मम्मी की उँगलियां चल रही हैं।" मैं क्या कहता? पत्थर हो गया था मैं। निष्क्रिय और किंकर्तव्यविमूढ़। बेटे को विश्वास ही नहीं हुआ कि माँ दुनिया में नहीं है। दरअसल, अपनी आखिरी पीड़ा में पत्नी ने वैन के शीशे पर अपनी हथेली रख दी होगी या भारी पीड़ा के कारण उसे पकड़ना चाह रही होंगी। जो भी हो। वही हथेली धीरे-धीरे शीशे से सरक रही थी। इस स्थिति में लग रहा था कि उनकी उँगलियाँ चल रही हैं और वे जीवित हैं।" इतने दुःखों के बावजूद भी ग़ज़लकार लोककल्याण की भावना को नहीं भूलता–

हज़ारों की आँखें हैं नम इस जहाँ में
मेरे ग़म से ज़्यादा हैं ग़म इस जहाँ में
मेरी साँस चलने दे औरों की खातिर
हैं बाकी हज़ारों करम इस जहाँ में

कुल मिलाकर **'ये आँसू'** की ग़ज़लें अपने लंबे-चौड़े संस्मरण के साथ अत्यंत सहज व सरल हैं। पीड़ा की गहराइयाँ और भावों की ऊँचाइयाँ पुस्तक को वैशिष्ट्य प्रदान कर रही हैं। अपने अनोखेपन के लिए 'ये आँसू' की ग़ज़लें निश्चय ही साहित्य जगत में ख्याति प्राप्त करेंगी।

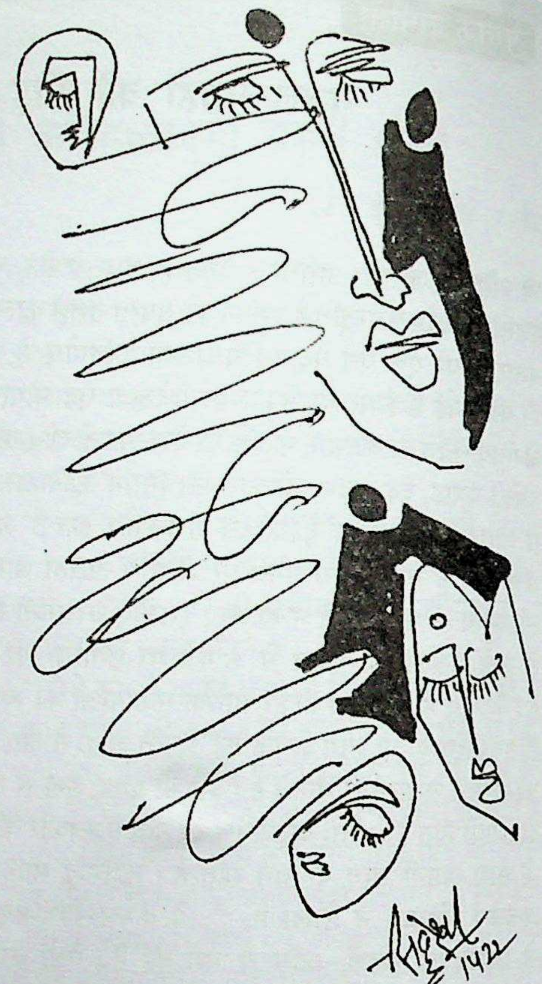

संपर्क : संपादक 'अनंतिम'
के-221, यशोदा नगर, कानपुर-208011 (उ.प्र.)

पुस्तक : 'ये आँसू'
ग़ज़लकार : हरीलाल 'मिलन'
प्रकाशक : संवेदना प्रकाशन, ट्रकगेट के सामने, कासिमपुर, अलीगढ़
संपर्क : 300 ए/2, हनुमंत नगर, नौबस्ता, कानपुर-21, मो. 9935299939
पृष्ठ : 128, मूल्य : 120/-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

कोई आवाज़ देता है

❑ डॉ. वरुण कुमार तिवारी

अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त ग़ज़लकार व गीतकार डॉ. कुँअर बेचैन के ग़ज़ल संग्रहों की संख्या एक दर्जन से भी अधिक है; यथा–'शामियाने काँच के' (1983), 'महावर इंतजारों का' (1983), 'रस्सियाँ पानी की' (1987), 'पत्थर की बाँसुरी' (1990), 'दीवारों पर दस्तक' (1991), 'नाव बनता हुआ कागज' (1992), 'आग पर कंदील' (1993), 'आँधियों में पेड़' (1997), 'आठ सुरों की बाँसुरी' इत्यादि।

डॉ. बेचैन बड़ी सादगी से अपने जीवन के खट्टे-मीठे-कड़ुवे अनुभवों को ग़ज़लों में सुनाते हैं। जीवन के अनेकानेक परिवर्तनों से गुजरते हुए वे जीवन के शाश्वत सत्य को नहीं भूलते। उन्होंने अपनी ग़ज़लों में जीवन के हर पक्ष को रेखांकित किया है। बड़ी सरलता से वे व्यक्ति, समाज और समय में हो रह परिवर्तनों को स्वर देते हैं। निरंतर अमानवीय होते जा रहे समय में आम आदमी की स्थिति क्या है; इस पर उन्होंने गहराई से विचार किया है। असामाजिकता, अमानवीयता, संवेदनशीलता और संस्कारहीनता आज की जीवनदृष्टि बन गई है। इन सबसे प्रतिसंवेदित होते हुए कवि की आत्मा तड़प उठती है और काव्य-रचना के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। आम आदमी के जीवन-संघर्षों को वे खुली आँखों से देखते हैं, इस त्रासदी को अपने भीतर की गहराई में महसूसते हैं और उन्हें अपने शे'रों में ढालते हैं।

डॉ. बेचैन 'प्रगतिशीलता की मानसिकता' को हिंदी ग़ज़ल की सबसे बड़ी विशेषता स्वीकार करते हैं; इसलिए उनकी ग़ज़लों में आम आदमी का दर्द और संघर्ष मार्मिकता से अभिव्यक्त हुआ है। उनके ग़ज़लों के वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हुए ओम प्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' ने लिखा है–"हिंदी ग़ज़ल को कुँअर बेचैन ने इतनी ऊँचाइयों तक पहुँचाया है कि उनकी ग़ज़लों के संबंध में बात किए बिना रहा नहीं जा रहा। उनकी ग़ज़लों की यह विशेषता है कि उनमें भारतीय संस्कारों, हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की मूल प्रवृत्तियों का निर्वाह करते हुए उर्दू ग़ज़ल के तग़ज्जुल, सलाहियत तथा शिल्प का पूरा ध्यान रखा गया है।" मधुर शास्त्री ने बेचैन की ग़ज़लों के छंद विधान, भाषा एवं प्रभावोत्पादकता पर टिप्पणी देते हुए कहा है–"डॉ. कुँअर बेचैन की ग़ज़लों में मुझे ग़ज़ल की सभी विशेषताएँ नज़र आती हैं यानी छंद विधान का ज्ञान, अलंकार निपुणता, अनूठापन और चुटीलापन, मौलिकता, रोचकता, चिंतात्मकता, शे'र के अनुकूल शब्दावली, सादगी और सरलता, भाषा अधिकार, थोड़े शब्दों में बड़ी बात, पारदर्शिता इत्यादि।" प्रख्यात गीतकार गोपालदास 'नीरज' ने लिखा है–"डॉ. कुँअर बेचैन जन-जन के कवि हैं। भाषा और विषयवस्तु के काण उनकी रचनाएँ लोकप्रिय होती रही हैं ...उनके गीतों और ग़ज़लों में आम आदमी की जुबान को अभिव्यक्ति मिली है।" बाल स्वरूप राही, उषा राजे सक्सेना, शिव ओम अम्बर, कमलेश भट्ट कमल आदि अनेक प्रसिद्ध काव्य-समीक्षकों ने भी उनकी ग़ज़लों की मौलिकता, गंभीरता, मार्मिकता, रोचकता एवं संवेदनशीलता तथा रागात्मक चेतना की सराहना की है।

'कोई आवाज़ देता है' डॉ. कुँअर बेचैन की नई ग़ज़लों का संग्रह है जो डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.) लि. नई दिल्ली से प्रकाशित होकर आया है। इसमे तिरानवे ग़ज़लें संग्रहीत हैं। पुस्तक के आवरण पर ग़ज़ल कहते हुए कवि का चित्ताकर्षक चित्र है। अंतिम आवरण पृष्ठ पर डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने लिखा है–"कोई आवाज़ देता है' की ग़ज़लों में विषय-वैविध्य के साथ-साथ ग़ज़ल संरचना के उन सभी मानकों का ध्यान रखा गया है, जो किसी भी ग़ज़लकार को बड़ा ग़ज़लकार बनाते हैं। प्रतीक, बिंब, भाषा, छंद, प्रवाह, कथन आदि सभी दृष्टियों से यह ग़ज़ल-संग्रह सबको अपना बना लेगा, ऐसा विश्वास है।" संग्रह की भूमिका में निश्तर ख़ानक़ाही लिखते हैं–"...विषय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरे लिए महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण उनका प्रस्तुतीकरण है। यदि कोई बड़े-से-बड़ा विषय भी साधारण ढंग से व्यक्त किया गया है तो उसकी कोई साहित्यिक हैसियत नहीं है। कुँअर बेचैन ने जिन विषयों को चुना है, उन्हें कलात्मक ढंग से व्यक्त किया है।'' प्रस्तुत संग्रह के बारे में कवि का स्वकथन है—''...भीतर से कोई आवाज़ आती रहती है। यह आवाज कभी हमारे भीतर और कभी हमसे बाहर रहकर हमें टेरती है। यह कोई कौन है? इसकी खोज ही विज्ञान है, इसकी खोज ही अध्यात्म है और इसकी खोज ही है 'कला'। कविता भी कला का अंग होने के कारण इसी 'कोई' को जानने का प्रयास है। मेरे इस ग़ज़ल-संग्रह की सभी ग़ज़लों में आने वाले सभी शब्द, सोच द्वारा की गई उस यात्रा के पदचिह्न हैं, जो इस 'कोई' की खोज में की गई है।''

'कोई आवाज देता है' ग़ज़ल-संग्रह में कई ऐसी ग़ज़लें हैं जो वर्तमान समय-समाज की क्रूर सच्चाइयों का बयान करती हैं—

लोग कर जाएँगे विश्वास में घातें, लिख लो
अपने दिल पे ये मेरी आज की बातें, लिख लो
आज तुम जिनपे यकीं करके यहाँ बैठे हो
आँधी आते ही उड़ेंगी ये कनातें, लिख लो

आज के मुँह फेरे और क्रूर समय में रेत होते रिश्ते एवं संवेदनहीनता से आहत कवि का दुःख इस तरह प्रकट हुआ है—

मैं अँगोछे-सा सभी के काम आया हूँ मगर
सब ने ही दुःख की अलगनी पर मुझे टाँगा बहुत

× × ×

रफ्तः रफ्तः जो हक़ीक़त थे, कहानी हो गए
खून से सींचे हुए रिश्ते भी पानी हो गए

× × ×

आँच खो बैठे हैं कुछ ऐसे हमारे रिश्ते
दिल पे जो बर्फ़ जमी है वो पिघलती नहीं

संवेदनहीनता के बीच संवेदना के सूखने की स्थिति को कवि ने सशक्त प्रतीकों द्वारा चित्रित किया है। 'नई तहजीब' के संबंध में कवि की टिप्पणी देखिए—

नई तहजीब क्या है हम बताएँ
अँधेरों पर है परदा रोशनी का

पाश्चात्य जीवन-शैली को अपनाने के कारण सामाजिक जीवन में व्याप्त आदर्शहीनता और मूल्यों के पतन से कवि बेचैन मर्माहत हैं। उनके शे'रों में बुढ़ापे का दर्द एवं वृद्धों के अलग-थलग पड़ जाने की पीड़ा का मार्मिक अंकन हुआ है—

बीबी बच्चों के लिए सारे इंतजाम हैं पर
लोग यह भूल गए घर में एक माँ भी है

× × ×

ये अलग बात न मानें उन्हें अब के बच्चे
पर बुजुर्गों की दुआओं में असर आज भी है

मुँह बुजुर्गों से न फेरो कि कोई भी तारीख
कुछ भी हो गुजरे जमाने को नहीं काटती है

गाँवों के क्रमिक पतन, किसानों की बदहाली एवं राजनीतिक छल-छंद से ग़ज़लकार गहरे रूप में आक्रांत हैं। संग्रह की कई ग़ज़लों में ग़ज़लकार की यह चिंता व्यंजित हुई है—

कुँअर अब इससे बड़ा झूठ और क्या होगा
पड़ा है गाँव में सूखा, खबर में पानी है

कवि की चिंता यह है कि फसल उगाने वाले हाथ फसल से वंचित क्यों हैं? किसान आत्महत्या क्यों कर रहे हैं? आर्थिक विसंगति और समाज में व्याप्त विद्रूपताओं पर कवि का मारक प्रहार देखिए—

हमारे गाँव के खलिहान हम से पूछते हैं यह
है इतना अन्न लेकिन हर तरफ यह भूखमरी ही क्यों

ग़ज़लकार का ग्राम्य मन गाँव के खेत-खलिहान, नदी-तालाब, पेड़-पौधे, गाँव के लोग, धूल-धूसरित बच्चे, सब पर मोहित है—

ये मेरा गाँव है जिसमें ये धूल-से बच्चे
लगा के देह पे चंदन-सी धूल, नाचते हैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज के इस संवेदनहीन समाज में चारों ओर भयावह वातावरण उपस्थित है। अमानवीयता और स्वार्थी प्रवृत्तियाँ चप्पे-चप्पे पर मौजूद हैं। ऐसे में इनसान को मंजिल मिले तो कैसे? बावजूद कवि का हौसला देखिए—

है हर कदम पे कोई न कोई कील इन दिनों
चलना है, फिर भी मुझको कई मील इन दिनों

दुर्द्धर्ष संघर्ष और संवेदनहीनता के दंश को झेलने वाले कुँअर बेचैन का अकुंठित मन प्रबल आशावाद से ओत-प्रोत है। मनुष्यता, सहृदयता, सदाशयता एवं प्रेम के आलोक से दीप्त उनका मन प्यार की नदी में स्नान करने के लिए लोगों को पुकारता है—

मुक्त करता है प्यार का बंधन
गूँज के ज्यों सितार का बंधन

× × ×

न खुशियाँ दी न ग़म बाँटा किसी का
तो क्या मतलब है ऐसी ज़िंदगी का

× × ×

दिल में गर प्यार है तो फिर समझो
सारे जग में है रास खुशबू का

× × ×

मुहब्बत लेके दिल में घर से निकलोगे तो समझोगे
मुहब्बत दिल में हो तो सारे मौसम साथ रहते हैं

जब किसी को सफलता मिलती है, तो लोग शाबाशी देते हैं, लेकिन यह नहीं देखते कि 'आग का दरिया तैर के जाना' कितना मुश्किल काम रहा होगा। ग़ज़लकार का संकेत इसी ओर है—

मेरी मंज़िल तो सबने देख ली पर यह नहीं देखा
जलन पाँवों के इन फूटे हुए छालों में कितनी है

दरअसल; ग़ज़ल की राह आसान नहीं है। भूख, प्यास, नींद की चिंता किए बगैर अनथके अनवरत चलते रहने की साधना है। उसके बाद ही ग़ज़लकार की मंजिल उनके पाँवों के छालों से लिपटकर रोती है और उनको दर्द की अनुगूँज सुनाई पड़ती है—

कितना कम सोया हूँ रातों में भी मैं जागा बहुत
ऐ ग़ज़ल, तेरे लिए तेरी तरफ भागा बहुत

तभी तो ग़ज़लकार बड़ी ईमानदारी से अपनी वास्तविकता का बयान कर देता है—

मेरी ग़ज़लें, मेरी ग़ज़लें नहीं, इतिहास हैं, जिनमें
मेरे दिल की हक़ीक़त का नया अनुवाद जारी है

निष्कर्ष यह कि 'कोई आवाज़ देता है' ग़ज़ल संग्रह डॉ. कुँअर बेचैन को विशिष्ट ग़ज़लकार के रूप में स्थापित करता है जिनमें एक ओर समय-समाज की विसंगतियों-विद्रूपताओं पर मारक प्रहार है तो दूसरी ओर प्रेम और सौंदर्य विषयक ग़ज़लें भी हैं। कई ग़ज़लों में राष्ट्र के प्रति अपनी जिम्मेदारी भी वे निभाते नज़र आते हैं। दरअसल, देश-विदेश के काव्य-मंचों के लोकप्रिय कवि डॉ. बेचैन की ग़ज़लों में उर्दू ग़ज़ल की तमाम बारीकियाँ उपस्थित हैं। इनमें भाषा और भाव दोनों स्तरों पर तग़ज़्ज़ुल दिखाई देता है। वे बड़ी खूबसूरती से आम जुबान में अपनी बातें कहते हैं जो सहज ही लोगों की जुबान और दिल में उतर जाती हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि आज के दुर्द्धर्ष समय में भी वे अपनी रागात्मक चेतना बचाए हुए हैं।

संपर्क : स्टेट बैंक कॉलोनी
वीरपुर-854340 (बिहार)

समीक्षित कृति : कोई आवाज़ देता है (ग़ज़ल संग्रह)
ग़ज़लकार : डॉ. कुँवर बेचैन
प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.,
नई दिल्ली-110020
मूल्य : 75/- रु., पृष्ठ : 144

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

जीवन प्रतिबद्धता से जुड़ी सार्थक ग़ज़लें

❑ डॉ. वरुण कुमार तिवारी

कहानी-कविता की तरह ग़ज़ल भी हिंदी साहित्य की एक प्रमुख विधा बन गई है। ग़ज़लों के संकलन भी खूब छप रहे हैं और पत्र-पत्रिकाएँ भी इन्हें प्रमुखता से छाप रही हैं। देवेन्द्र शर्मा **'इन्द्र'** शाइर की नज़र रखते हैं। उनके पास ग़ज़ल कहने का सलीका, शब्द-प्रयोग की विधि और भाव को संप्रेषित करने की क्षमता है। वे मीर, ज़ौक, सौदा, ग़ालिब, ज़फ़र, दाग़, मोमिन, इकबाल, हाली, चकबस्त, फ़िराक, जोश, फ़ैज, साहिर आदि महान शाइरों की ही तरह उर्दू और फारसी का अनुशासन रखते हैं। इनकी ग़ज़लों को बहुत सचेतन होकर पढ़ना पड़ता है। वैसे तो 'इन्द्र' जी सुप्रसिद्ध नवगीतकार एवं दोहाकार हैं। 'कुहरे की प्रत्यंचा', 'चुप्पियों की पैंजनी', 'पहनी हैं चूड़ियाँ नदी ने', 'अनंतिमा', 'गंधमादन के अहेरी', 'एक दीपक देहरी पर' आदि दर्जनाधिक्य उनके प्रकाशित नवगीत संग्रह हैं। उनके कई दोहा-संग्रह भी प्रकाशित हैं। उनके द्वारा संपादित सात खंडों में शृंखलाबद्ध दोहा-संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।

इनके अतिरिक्त इन्द्र जी के बीस हजार दोहे एवं आठ सौ ग़ज़लें अप्रकाशित हैं। वस्तुतः उनकी विपुल साहित्य राशि अभी तक अप्रकाशित हैं जो साठ पांडुलिपियों में सुरक्षित है।

उनका सद्यः प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह *'धुएँ के पुल'* अयन प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली से प्रकाशित होकर आया है। वे सीधे-सरल इन्सान हैं और उनकी ग़ज़लों में भी वही सादगी दिखाई देती है। प्रस्तुत संग्रह की भूमिका (तहरीक़) में बड़ी विनम्रता से वे अपनी बात कहते हैं—''अपने कथ्य, अपनी भाषिक और शैलीगत प्रयोगधर्मिता के कारण यदि कोई इन्हें 'ग़ज़ल' भी कहे तो मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी। मेरी अपनी नज़र में इस बात की कोई अहमियत नहीं है, इनके अभिव्यंजन के माध्यम को 'हिंदी' या 'हिंदवी' कहें या 'उर्दू' अथवा 'हिंदुस्तानी'।

मुमकिन है कि किन्ही ईश्वरी प्रसाद जी को इनमें उर्दू की महक आए तो कोई 'मज़हूर' साहब इन्हें हिन्दी-ग़ज़ल की संज्ञा देने पर मजबूर हो जाएँ। मैं इस संदर्भ में फ़क़त इतना ही कहना चाहता हूँ कि इन रचनाओं को इसी ज़बान, इसी शैली और इन्हीं बह्रों में कह पाना मौज़ूँ और मुनासिब था क्योंकि कोई भी रचनागत कथ्य अपनी प्रस्तुति और अभिव्यक्ति के लिए खुद-ब-खद भाषा-शैली और छंद विधान की अनायास तलाश कर लेता है।''

दरअसल; देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' न केवल अच्छे ग़ज़लकार हैं, बल्कि बहुत अच्छे ग़ज़ल के पारखी भी हैं। वे समाज की विसंगतियों, विद्रूपताओं से आहत भी होते हैं और अपने अंदर की संवेदना को बचाए रखने का प्रयास भी करते हैं—

आबले फूटते हैं पाँवों के,
दर्द होता है अब तनावों में।
ज़ख़्म कसदन ही दिल ने खाए हैं,
है यक़ी आपके मुदावों में।

उनकी ग़ज़लें गहरे भाव-बोध और जीवन से जुड़ी होती हैं। उनकी ग़ज़लों में विद्रूपता का अस्वीकार्य स्वर मुखर दिखाई देता है जिसे वे अपने विस्तृत तजुर्बे के आधार पर अभिव्यक्त करते हैं—

मैं चल पड़ा हूँ सफर पे मुझे न यूँ रोको,
गुजश्ता दौर के किस्से सुना न पाऊँगा।
शहर में रहके तमाम उम्र मैंने देख लिया,
अब एक दश्त में घर अपना मैं बसाऊँगा।

× × ×

भीड़ है, भीड़ में है तन्हाई,
शहर में हमने आके देख लिया।

शाइर को जो परिवेश मिला, उसमें वे 'अनफिट' होकर रह गए—

ज़ख़्म-ही-ज़ख़्म सरापा रहे रिसते दिल में,
मरहमे-चैनो-सुकूँ उनपे लगाया न गया।

तब ग़ज़लकार सवाल करते हैं—

क्या ये मुम्किन है कि ख़ामोशी के इस आलम में,
हम जो कहते वो तुम्हें बात ग़वारा हो जाए।

कबीर की तरह सफर में अकेले चलने वाला शाइर ने अनेक अनुभव, सत्यों को बड़ी पैनी धार के साथ व्यक्त किया है—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मत पूछ कि तय कैसे सफ़र हमने किया है,
ता-उम्र बयाबाँ में बसर हमने किया है।
दिन-रात पसीने की नदी हमने बहाई,
जलते हुए सहरा को बह्‌र हमने किया है,
पाँवों के तले उगने लगे धूप के शो'ले।
वीराने में साया-ए-शजर हमने किया है॥

समकालीन सामाजिक विसंगतियों को पैनेपन से उभरते हुए शाइर ने मूल्यगत संक्रमण को किस तरह व्यंजित किया है, देखिए–

हर सिम्त खुले चाकू हर सू हैं तने खंजर,
जाएँ तो किधर जाएँ पुरख़ौफ़ है ये मंजर।

× × ×

रहा अच्छे-बुरे में फ़र्क करना अब नहीं मुम्किन,
भलाई करने वालों का बुरा अंजाम होता है।

इन्द्र जी की ग़ज़लों में समय की आवाज साफ-साफ सुनाई देती है। सामाजिक-राजनीतिक एवं आर्थिक विषमताएँ, बढ़ती संवेदनहीनता, राजनीतिक छल-छंद, आम आदमी की बेचैनियाँ एवं अंतःसंघर्ष की अभिव्यक्ति स्पष्ट देखी जा सकती है–

जब से वो इस मुल्क की कुर्सी पे क़ाबिज हो गया,
रोशनी, पानी, हवा में सबको उलझाया गया।

× × ×

खुशियों का सिलसिला वो अपने साथ ले गए,
पैदा हमारे वास्ते रंजो-अलम किए।

× × ×

कुर्सी पे जो बैठा है वो आदिल-सा लगे है,
सच मानिए, वो शख़्स तो क़ातिल-सा लगे है।

आज के समय में ग़ज़ल ने न केवल अपनी भाषा और भावों को बदला है बल्कि अंदाजेबयाँ को भी बदल दिया है। शाइर बदलाव की चकाचौंध से रू-ब-रू होते हैं–

क्या ग़ज़ब खुरदुरे दौर में,
लोग चिकने घड़े हो गए।
जिनकी नज़रें थी सहमी हुईं,
उनके तेवर कड़े हो गये।

× × ×

हुआ गायब कहाँ अर्से से सूरज,
अँधेरा आस्माँ पर छा रहा है।

कल तक जो लोग व्यवस्था की बुराइयों की चर्चा करते अघाते नहीं थे, वे ही लोग जब व्यवस्था के अंग बन जाते हैं तो शाइर परेशान हो जाता है–

इंसाफ़परस्ती का लगाता है जो नारा,
वो शख़्स भी इस जुल्म में शामिल-सा लगे है।

चाहे समाज का बिखराव हो, इंसानियत के प्रति दुराव हो, चूल्हों का अलगाव हो, युवाओं का उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रति झुकाव हो या आम आदमी की मूलभूत सुविधाओं का अभाव हो; इन्द्र जी की ग़ज़लें हर जगह मुठभेड़ करती दिखाई देती हैं। शाइर इस टूटते-बिखरते समय में रेत हो रहे रिश्तों से दुःखी हैं। वे जुड़ने की बात करते हैं, रिश्तों को निभाने की बात करते हैं–

तुम्हें हम ढूँढ़ते हैं तुम कहाँ हो,
वहाँ से आ भी जाओ तुम जहाँ हो।

× × ×

दिल से हमको न निकालो यूँ ख़यालों की तरह,
याद हम आएँगे क़िस्सों में मिसालों की तरह।

संवादहीनता के इस मुँह फेरे समय में वे संवाद को कायम करने के लिए बेचैन दिखाई देते हैं–

आए हो तो कुछ बात करो, बैठो, हँसो भी,
जाते हुए हर बार रुलाया नहीं करते।

जिस चकाचौंध की तरफ आज का इनसान दौड़ रहा है, उससे उसे क्या हासिल हो रहा है; देखिए–

हर परिंदे ने बनाया अपना-अपना आशियाँ
एक ताइर आज भी उड़ता फ़लक पर बे-मकाँ

शाइर के पास गाँव की स्मृतियाँ हैं जिसे वह भूला नहीं पा रहा है और शहर की भागती हुई रंगीन दुनिया में अपने को समायोजित भी नहीं कर पा रहा है। इसे शाइर ने बड़ी खूबसूरती से बयान किया है–

घर छोड़के हम अपना, इस शहर में आए थे
शीशे की दूकानों में रिश्तों के मिले दफ्तर

× × ×

जिसे भी देखो वही फ़िक्रो-इज्तिराब में कैद
तमाम शह्‌र में कोई भी शादमाँ न मिला

× × ×

तुम्हारे शह्‌र में जितने खड़े हैं दैरो-हरम
सभी के सामने ये सर झुका के देख लिया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इसे तुम शहर यारों का बताते
यहाँ मैं दुश्मनों में आ घिरा हूँ

× × ×

मैं उलझ के झाड़ियों में, यहाँ ऐसा आ फँसा हूँ
मेरी रूह तो सलामत, मेरा जिस्म सब छिला है

शाइर उदात्त जीवन-मूल्यों के पक्षधर हैं। यह प्रवृति उनकी सभी ग़ज़लों में अभिव्यक्त होती दिखाई पड़ती हैं। अधिकांश शे'रो में उन्होंने विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से उदात्त जीवन मूल्यों को परिभाषित कर व्यक्ति को प्रत्येक स्थिति में आशान्वित रहने के लिए प्रेरित किया है। वस्तुतः काव्य की सार्थकता जीवन-प्रतिबद्धता से जुड़ी होती है। सच्चा साहित्य जीवन में आशा, जीवट और जिजीविषा का संचार करता है। 'इन्द्र' जी की ग़ज़लों में उक्त भावों को सार्थक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। माहौल में इतनी सारी विसंगतियों के बावजूद शाइर की जिजीविषा देखिए—

ज़िंदगी दर्द से कुछ और निखर उठती है,
आदमी दर्द से कुछ और सँवर जाता है।

× × ×

तूफ़ान के तिनके की तरह मैं न उड़ा हूँ,
पाई है बुलंदी मैंने सर अपना झुकाकर।

निश्चय ही, 'इन्द्र' की ग़ज़लों को पढ़कर ज़िंदगी की बारीकियों को समझा जा सकता है। वे अपनी आँखों से दुनिया को देखते हैं, फिर अपने तजुर्बे को ग़ज़ल की शक्ल देते हैं। एक-एक शे'र अपने शिल्प की मोहकता, विंब की प्रतीकात्मकता, भाव की बोधगम्यता और विचारों की विविधता समेटे हुए हैं। 'इन्द्र' जी भाषा और शिल्प में अत्याधुनिक होते हुए भी उर्दू की रवाइती शाइरी में अदब के पक्षधर हैं और समकालीन ग़ज़लकारों के कंधे पर जो उत्तरदायित्व है उसके प्रति पूरी ईमानदारी से खड़े नज़र आते हैं। मेरी दृष्टि में प्रत्येक ग़ज़ल-प्रेमी के लिए यह एक जरूरी पठनीय किताब है।

संपर्क : स्टेट बैंक कॉलोनी, वीरपुर-854340 (बिहार)

समीक्षित कृति : धुएँ के पुल (ग़ज़ल संग्रह), ग़ज़लकार : देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', प्रकाशक : अयन प्रकाशन, 1/20, महरौली, नई दिल्ली-30

आपको पुस्तकें चाहिए

तो हम आपके साथ हैं!

आपको यदि किसी भी विषय पर
किसी भी प्रकाशन की पुस्तकें चाहिये तो
हम आपके घर तक पहुँचाएंगे

हमें फोन करें, लिखें, ई-मेल करें या मिलें

समय प्रकाशन
आई-1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 23270889
ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in
www.samayprakashan.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

आज के दौर की दास्तान है–'घुटन'

❑ डॉ. राजकुमारी शर्मा 'राज'

आज के दौर को अगर घुटन का दौर कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। घुटन व्यक्ति के जीवन में ऐसे पाँव पसारे रहती है जैसे सहरा में कड़ी धूप अपना साम्राज्य स्थापित किए रहती है। राजनीतिक माहौल हो या सामाजिक परिवेश हर तरफ़ घुटन ही घुटन महसूस होती है। अदब के गहवारों से लेकर स्वास्थ्य केंद्रों तक घुटन का बढ़ता हुआ क़द एक तरफ सोचने को मजबूर करता है तो दूसरी तरफ अंधविश्वासों और कुरीतियों से बढ़ती हुई घुटन समाज का स्वरूप दिन-ब-दिन विकृत किए जा रही है, ऐसे में कवि या शाइर 'घुटन' को अपने संग्रह का उन्वान बना कर पेश करता है तो इसमें बुराई क्या है?

'घुटन' **आचार्य भगवत दुबे** के ताज़ातरीन ग़ज़ल-संग्रह का नाम है। बक़ौल दुबे जी के 'घुटन' की तमाम ग़ज़लें दो माह की कम अवधि में कही गई हैं। 'घुटन' से पहले भी आचार्य जी के तीन ग़ज़ल-संग्रह मंज़रें आम पर आकर **कामयाबी** की सनद हासिल कर चुके हैं। मैं इस कथन को **'घुटन'** की ग़ज़लें देखने और परखने के बाद पूर्णतया सही नहीं मानती हूँ। यह तो सत्य है कि ग़ज़ल की प्रतिष्ठा ऊर्द से ज़्यादा हिंदी-काव्य जगत में है और आए दिन ग़ज़ल-संग्रह प्रकाशित हो रहे हैं एवं उन पर मशहूर मारूफ़ शख़्सियतें अपनी राय का इज़हार भी कर रही हैं लेकिन कोई भी यह तकलीफ़ उठाने को तैयार नज़र नहीं आता है कि ग़ज़ल-संग्रह की ग़ज़लों में ख़ूबियों के साथ-साथ ख़ामियाँ भी बहुत होती हैं। यहीं वो प्रचलन है ज़ो कवि या शाइर को ग़लती दुहराने को प्रेरित करता रहता है। ग़ज़ल के अशआर अगर कसौटी पर खरे उतरते हैं तो उनकी प्रशंसा करना न्यायोचित कार्य है लेकिन कसौटी पर खरे न उतरने वाले शे'रों को रेखांकित न करना भी अपराध है। मैं इस अपराधबोध से अपने आप को दूर रखना चाहती हूँ। आचार्य दुबे जी की ग़ज़लों में ऐसे अशआर की तादाद भी काफ़ी है जिन्हें उर्दू ग़ज़ल की कसौटी पर कसने के बाद उन्हें सोने सा खरा प्रमाणित किया जा सकता है। ऐसे अशआर भी हैं जो वक़्त के माथे पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाएँगे। इस संग्रह में दुबे जी के तजुर्बातो-एहसासात शिद्दत के साथ नुमायां, अशआर की सूरत में हुए हैं मगर ग़ज़लों को **क़िरतास** पर उतारने के बाद नज़रे-सानी न करने की रिवायत से बग़ावत का असर भी साफ़ दिखाई पड़ता है।

'ग़ज़ल' एक सिन्फ़े-सुख़न है। ग़ज़ल के मतले से ही ग़ज़ल के बहरो-वज़न और ज़मीन यानी रदीफ़ व काफ़िए का ऐलान हो जाता है। इन चारों अनासिर के बाद ग़ज़ल में मफ़हूम और अंदाज़े-बयाँ की निशानदेही की जाती है। सामाजिक सरोकारों और वर्तमान परिस्थितियों को विषय बनाकर ग़ज़लें कहना कोई अनुचित कार्य नहीं है लेकिन शे'र में शे'रियत का होना निहायत ज़रूरी है। मैं उदाहरणार्थ दुबे जी के कुछ अशआर पेश करना चाहती हूँ जिनमें शे'रियत के साथ-साथ मफ़हूम और ज़बान दोनों की चाशनी अपनी सार्थकता सिद्ध करती हुई नज़र आती है–

ए.सी. में रहने वालों को।
कैसे हो अहसास तपन का॥

× × ×

मंच पर साहित्य अपमानित हुआ।
वाहवाही लूटकर 'जोकर' गया॥

× × ×

बढ़ती मँहगाई ने हमको अब इतना लाचार किया।
दीवाली की रातों में भी जल्दी दीप बुझाए हैं॥

× × ×

उसे तूफ़ान से लड़ने को मत भेजो।
हवा के एक झोंके से जो डर जाए॥

× × ×

अब सहायक भला कैसे भगवान हों।
जबकि भक्तों ने धर्माचरण खो दिया॥

× × ×

इस जहाँ में वो दौलत है किस काम की।
जो कि मुहताज के काम आए नहीं॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

× × ×

भंग हुए समझौते सुख से।
पर दुख से अनुबंध हुए हैं॥

× × ×

ढेर लगा परमाणु बमों का।
जीवन खोज रहे मंगल में॥

× × ×

हम सूखती नदियों का बदन देख रहे हैं।
फागुन में बहारों का रुदन देख रहे हैं॥

× × ×

क़ैद महलों में प्रगति के सब उजाले हो गए।
अपनी आज़ादी के सारे पृष्ठ काले हो गए॥

ऊँच-नीच, मूल्यों का पतन, महँगाई की भयावहता, यथार्थ का सामना, खोखले आदर्श, दिखावा, दरिद्रता का प्रकोप, बेकार का अहं, पर्यावरण और प्रकृति के साथ खिलवाड़, राजनीतिक प्रभाव के दुरुपयोग को अपने अशआर का केंद्र-बिंदु बनाकर दुबे जी ने जिस सिद्धहस्तता का प्रमाण प्रस्तुत किया है, वह सराहनीय है। हर शे'र में एक ऐसा प्रवाह नज़र आता है जो पाठकों और आलोचकों दोनों को समान रूप से प्रभावित करता है।

'जराइम बढ़ रहे इतने पुलिस की नाक में दम है' ख़बर को शे'र की पंक्ति बनाना कोई आसान काम नहीं है। यही वह फ़न है जो ग़ज़ल और ग़ज़लकार को स्थापित करता है।

"तुम्हारे झूठ कहने से किसी की जान बच जाए" तो इस से बढ़कर कोई और धर्म हो ही नहीं सकता है। मान्यताओं और परंपराओं को बल प्रदान करते रहना भी कवि या शाइर के लिए परम आवश्यक है।

नफ़रतों को उसने बौना कर दिया
प्रेम को ऊँचाइयाँ देकर गया

महापुरुषों के कार्यों और उनके व्यक्तित्व पर सटीक बैठता हुआ यह शे'र कितना प्रेरणादायी है, इसका बोध भी रोमांचित करता है।

यह दौर चल रहा है हैवानियत का लेकिन।
इन्सानियत का जज़्बा फिर भी बचा मिला है॥

हालाते-हाज़िरा की अक्कासी पहले मिसरे में और दूसरे मिसरे में ख़ुदा-ए-बरतर की मौजूदगी का अहसास और दोनों मिसरों से शेंरियत की बहती हुई नदी-इसमें कोई भी गोते लगाएगा तो उसका सरापा भींग-भींग जाएगा। कमाल इस बात का है कि बयानिया होते भी शे'र में इशारे अपने भरपूर अंदाज़ में हैं।

वक़्त को जब कुरेदा गया।
दफ़्न उसमें ज़माने मिले॥

इस शे'र का दायरा जितना विस्तृत है, इसका स्वरूप उतना ही मुख़्तसर है। कम-से-कम अल्फ़ाज में ज़्यादा-से-ज़्यादा बात का फैलाव अनुभव को प्रदर्शित करता है। कवि अपने निजी अनुभवों का प्रयोग जब सफलतम रूप में करता है तो इसी तरह के शे'र काग़ज़ पर अपना अस्तित्व मनवाते हैं।

छू न पाए शत्रु, जौहर रानियों ने यूँ किया।
जान दे दी, आबरू अपनी बचाने के लिए॥

ऐतिहासिक घटना को शे'र के साँचे में ढालकर अपनी पीढ़ी को त्याग और बलिदान का पाठ पढ़ाना अनिवार्य होने के साथ-साथ कवि-धर्म को पूर्णता प्रदान करता है। कवि की व्यापक नज़र अपने अहद और अपनी नस्ल का मार्गदर्शन करती है, भटकों को रास्ता दिखाती है और अपनी रौशनी से सामाजिक परिवेश को आलोकित करती है।

झोपड़ी-अट्टालिकाओं में बढ़ी हैं दूरियाँ।
आपसी सदभाव को ये खाइयाँ डसने लगीं॥

× × ×

कहता है बार-बार वो मुझको बुरा ज़रूर।
पर दूसरा कहे ये उसे नागवार है॥

× × ×

जहाँ जाता है भर देता है ख़ुश्बू।
वो अपनी साँस में केशर लिए है॥

× × ×

बातें तो तुम कबीर-सी करते रहे मगर।
पाखंड, छल-कपट से बग़ावत न हो सकी॥

× × ×

हार माना नहीं जो पतझर से।
वो ही लेकर बहार आया है॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं ऐसे अशआर और बहुत से तहरीर कर सकती हूँ कि जिनमें आचार्य दुबे जी की क़लम अपनी आबो-ताब के जल्वे बखेरते हुए नज़र आती है। फ़िक्र की आँच और अहसास की गर्मी से शे'र का मोमी पैकर तीर की तरह ज़हनों-दिल को निशाना बनाता है। शे'र पढ़ने या सुनने के बाद अगर 'आह' या 'वाह' न निकले तो शे'र की सफलता संदिग्ध होने में आशंका नहीं रहती है। आचार्य दुबे जी में ग़ज़ल की ज़ुल्फ़ों को सँवारने की कला का अभाव नहीं है लेकिन जल्दबाजी और लापरवाही ने उनकी ग़ज़लगोई के दामन को तार-तार कर दिया है। बह्र और वजन का निर्वाह न करना परिपक्व ग़ज़लकार के द्वारा किया गया ऐसा अपराध है जिसकी वह क्षमायाचना भी नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ—

नाव अंजान समुंदर में छोड़ दी हमने।
दूसरा और भी कोई तो किनारा होगा॥

× × ×

मैं शर्मसार करना उसे चाहता न था।
उत्तर हमारे पास भी माक़ूल रहे हैं॥

× × ×

कामयाबी का सूरज मिले न मिले।
हमने आशा के दीपक बुझाए नहीं॥

× × ×

सरासर झूठ बोलेगा गवाही देने आया है।
कि सच कहने की उसने कोर्ट में खायी क़सम है॥

इन अश्आर में बहरो-वज़न की कमी को रेखांकित किया गया है। इसके साथ-साथ मैं और हमारे प्रयोग भी अशुद्ध है।

छंद का ज्ञान हो शाइरी के लिए।
लिखना आसां नहीं हर किसी के लिए॥

संग्रह के पहले की मतले में जिस दावे को दर्शाया गया है उस पर अमल करने में आचार्य दुबे से जगह-जगह चूक हुई है। इस मतले में भी क़ाफ़िए का एक ऐब है जिसका नाम 'ईता' है और उसकी 'जली' शक्ल इसमें मौजूद है। उर्दू लफ़्जों का इस्तेमाल करना कोई बुरी बात नहीं है। उससे ग़ज़ल में निखार आता है मगर अरबी-फारसी के लफ्जों का स्वरूप बिगाड़ कर इस्तेमाल करना, वही हिंदी-करण का लोभ सामने आ जाता है। सुल्ह, सुब्ह, बेवज्ह इन लफ़्ज़ों को कलह, जिरह का क़ाफ़िया बनाना नाइंसाफी है। सोना/खिलौना, धोना और दिठौना ग़लत क़ाफ़िए हैं। भाई और भाई के साथ 'परछाईं' का क़ाफ़िया भी ग़लत है। निकलते और मलते के साथ मिलते और खुलते-क़ाफ़ियों का प्रयोग दुबे जी की असमर्थता का प्रतीक है।

दुबे जी 'आत्म-कथ्य' में स्वयं लिखते हैं, 'आज हिंदी में भी बड़ी सशक्त ग़ज़लें कही जा रही हैं' मगर बड़ी ग़ज़ल के लिए जिन ऐबों से बचना जरूरी है,दुबे जी उनसे या तो नज़रें चुराते हैं या उनसे अनभिज्ञ हैं। 'ग़ज़ल' को 'ग़ज़ल' बनाने के लिए ग़ज़ल के गुण-दोष से परिचित होना परम आवश्यक है और दुबे जी अपने अगले ग़ज़ल-संग्रह में मेरे इस मशवरे पर ज़रूर अमल पैरा होंगे। मैं तो यही दुआ करूँगी कि अच्छे अश्आर के भंडार से दुबे जी की क़लम अदब के दामन को भरता रहे और वे मक़बूलियत के शिखर पर चढ़ते रहें। उनकी काव्य-यात्रा में कोई विघ्न न आए। अपने दुआइया कत्ए से अपनी लेखनी को विराम देती हूँ—

बढ़ाते आप रहें वुसअते-अदब यूँ ही।
निखारते ही रहें फ़ितरते-अदब यूँ ही॥
दुआ-ए-'राज़' यही है कि ज़िंदगी भर आप।
क़लम से करते रहें ख़िदमते-अदब यूँ ही॥

संपर्क : C/D-30, पुराना कवि नगर
गाजियाबाद-201001
फोन-0120-2713239
मो. 09313185603

समीक्षित पुस्तक–घुटन (ग़ज़ल संग्रह)
शाइर–आचार्य भगवत दुबे
मूल्य : एक सौ पचास रुपये मात्र
प्रकाशक : कादम्बरी, जबलपुर (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक समीक्षा

समकालीन ग़ज़लकारों पर अहम किताब– 'समकालीन हिंदी ग़ज़ल परंपरा और विकास'

❑ अनंत विजय

ग़ज़ल और गीत हिंदी साहित्य की ऐसी विधा है जिसे अब तक उतनी प्रतिष्ठा हासिल नहीं हो पाई है जितना उसे मिलना चाहिए था। हिंदी में दुष्यंत कुमार ने ग़ज़ल को एक नई ऊँचाई दी, एक प्रतिष्ठा भी दिलाई। लेकिन ग़ज़ल को जानने वालों का कहना है कि हिंदी में यह विधा दुष्यंत के बाद ठहर गई है। अभी मुझे एक किताब मिली–*समकालीन हिंदी ग़ज़ल-परंपरा और विकास*–जिसके लेखक **अनिरुद्ध सिन्हा** हैं। इस किताब में लिखा है, "ग़ज़ल को हिंदी की अछूत विधा मानकर हिंदी से अलग करने का काफी प्रयास किया गया लेकिन पाठकीय स्वीकृति अपनी भावनात्मक छटपटाहट के साथ जुड़ी रही। ग़ज़ल और कविता के बीच जो विभाजन की रेखा खींची गई वह स्वतः ही ध्वस्त हो गई। इसके लिए साहित्य के भीतर ना तो कोई गुप्त आंदोलन चलाया गया और ना ही आलोचकीय चापलूसी का सहारा लिया गया।" ये चंद लाइनें बड़े सवाल खड़ा करती हैं। पहला बड़ा सवाल तो यह उठता है कि हिंदी में किसने ग़ज़ल को अछूत विधा मानकर उसे हिंदी से अलग करने की साजिश रची? जाहिर-सी बात है कि पूरी किताब को पढने के बाद जो तस्वीर उभरती है वो यह कि हिंदी के आलोचकों ने ग़ज़ल को यथोचित स्थान नहीं दिया। नतीजा यह हुआ कि ग़ज़ल अपनी भाषा से दूर होती चली गई। छंदोबद्ध कविता का वर्चस्व तोड़ने के लिए ग़ज़लें लिखी गई लेकिन हुआ यह कि कविता में छंद के पक्षधर लेखकों ने उसकी उपेक्षा शुरू कर दी। लेकिन लेखक के मुताबिक ग़ज़ल को पाठकों का प्यार मिलता रहा। दूसरा बड़ा सवाल जो इस किताब में उठाया गया है वो यह है कि ग़ज़ल ने आलोचकीय चापलूसी नहीं की। इस वाक्य का एक मतलब यह भी निकलता है कि बगैर आलोचकीय चापलूसी के कोई विधा साहित्य के केंद्र में नहीं आ सकती। मेरा मानना है कि अगर रचना और विधा में दम होगा तो उसे किसी भी तरह की चापलूसी की जरूरत नहीं है। लेकिन इसका यह मतलब कतई नहीं है कि ग़ज़ल में दम नहीं है। मैं पूरी विनम्रता से यह कहना चाहता हूँ कि क्यों दुष्यंत कुमार की बात होती है। क्यों हमेशा कहा जाता है कि दुष्यंत की ग़ज़ल के बाद चर्चा ही नहीं हुई? क्या दुष्यंत के खिलाफ कोई साजिश नहीं हुई। क्या दुष्यंत ने आलोचकीय चापलूसी की? खैर ये एक अवांतर प्रसंग है जिस पर कभी और बात होगी। फिलहाल बात अनिरुद्ध सिन्हा की किताब–*समकालीन हिंदी ग़ज़ल-परंपरा और विकास* की। अनिरुद्ध सिन्हा नब्बे के दशक के शुरुआत में अच्छी कहानियाँ लिखा करते थे जो उस वक्त पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर पाठकों के साथ-साथ आलोचकों का भी ध्यान खींचती थी। जहाँ तक मुझे याद पड़ता है कि नब्बे के दशक में ही मीनाक्षी प्रकाशन से अनिरुद्ध सिन्हा की कहानियों का संग्रह–*और वे चुप हो गए* प्रकाशित हुई थी। उसी दौरान अनिरुद्ध सिन्हा ने एक लघु पत्रिका *तर्जनी* निकाली थी। मुंगेर में रहते हुए कहानी लिखकर राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बना चुके अनिरुद्ध सिन्हा अचानक से कहानी से विमुख हो गए और ग़ज़ल लिखने लगे। फिर तो अनिरुद्ध सिन्हा ग़ज़ल में इतने रमे कि ग़ज़ल गायकी में भी शोहरत हासिल किया। ग़ज़ल में उस्ताद होने के बाद अब उन्होंने ग़ज़ल की आलोचना करते हुए किताब लिख डाली। पहले दो लेख सबसे पहले ग़ज़ल सृजन की उत्पत्ति है और हिंदी में ग़ज़ल के उदय की जानकारी देने वाला है। मेरे जैसा आदमी जिसकी ग़ज़ल के बारे में जानकारी कम है उसके लिए दोनों लेख उपयोगी हैं। इन दो लेखों के अलावा अनिरुद्ध सिन्हा ने दुष्यंत कुमार से लेकर आलोक श्रीवास्तव तक को कसौटी पर कसा है। ग़ज़लकारों के चयन में लेखक ने उदारता बरती है। इसमें कई अनाम किस्म के ग़ज़लगो भी हैं। लेकिन दुष्यंत के बाद अनिरुद्ध सिन्हा ने उद्भ्रांत को रखकर चौंका दिया। लेखक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ने लिखा है—उद्भ्रांत प्रगतिशील चेतना के ग़ज़लकार हैं। यह साहित्य के विपथन का समय है। जाहिर है इस समय साहित्य को विपथन से बचाने के लिए वैकल्पिक पथों के अन्वेषण का काम पूरी तरह सत्ता की राजनीति के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। इसी क्रम में लिखते हुए लेखक कहता है—'पुरानी कथा को आधुनिक संवेदना-जल से खंगालकर क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत करना उद्भ्रांत की ग़ज़लों की विशेषता है—''मैं कौन हूँ, मैं क्या हूँ, यही सोच रहा हूँ/तूफां हूँ कि दरिया हूँ यही सोच रहा हूँ/सहराओं में, नदियों से पहाड़ों से न जाने/किस राह से गुजरा हूँ, यही सोच रहा हूँ/इक लमहा हकीकत हूँ मैं एक लम्हा फसाना/सच्चा हूँ, कि झूठा हूँ यही सोच रहा हूँ।'' इसमें ग़ज़लगो क्या कहना चाहते हैं यह साफ नहीं है ना ही कोई ओर छोर है। स्व की तुलना में उद्भ्रांत दरिया से लेकर तूफान, पहाड़, हकीकत, फसाना सब हो गए हैं। अगर यही ग़ज़ल है तो फिर किसी पर आरोप लगाने की जरूरत ही नहीं है।

ध्रुव गुप्त पर लिखते हुए अनिरुद्ध सिन्हा ने उन्हें भी प्रगतिशील ग़ज़लगो करार दिया है। उनके बारे में में लिखते हैं—'हिंदी की प्रगतिशील यथार्थवादी काव्यधारा को आगे विकसित करने वाले ग़ज़लकारों में ध्रुव गुप्त अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग़ज़लकार हैं जिन्हें आधार मानकर ग़ज़ल का नया सौंदर्यशास्त्र बनाने में सबसे अधिक मदद मिल सकती है।' ध्रुव गुप्त भी एक अच्छे ग़ज़लकार हैं उससे अच्छे कवि हैं। इनकी कविता की कई किताबें राजकमल समूह से प्रकाशित हो चुकी हैं। दरअसल इस पूरी किताब में ही लेखक प्रगतिशीलता से ऑबसेस्ड नज़र आते हैं। तमाम खूबियों के बावजूद इस किताब में जो एक बात मुझे अखरी वो यह कि लेखक ने आलोचना की कसौटी पर तो साथी ग़ज़लकारों को कसा है लेकिन ये कसावट जरा प्यार भरी है। लेकिन जब आप आलोचना की कसौटी पर किसी को कसते हैं तो तटस्थता और पूर्वाग्रह उसकी पहली शर्त होती है। इस किताब को पढ़ते हुए मुझे कहीं कहीं यह महसूस हुआ कि लेखक दोनों शर्तों में छूट ले रहे हैं। अगर इसको थोड़ी देर के लिए छोड़ दें तो ये किताब इसीलिए अहम बन पड़ी है कि इसमें ग़ज़ल से दूर रहने वाले मेरे जैसे पाठकों को कई जानकारियाँ मिलती हैं और ग़ज़ल को समझने की एक दृष्टि भी।

संपर्क : 321-बी, शिप्रा सनसिटी
इंदिरापुरम, गाजियाबाद-2010, उत्तर प्रदेश, फोन-09871697248

समय प्रकाशन से प्रकाशित
वैचारिक साहित्य

राहुल सांकृत्यायन का सर्जनात्मक साहित्य / डॉ. गोकर्णनाथ शुक्ल	250/-
वृंदावनलाल वर्मा के उपन्यासों के ऐतिहासिक पात्र / डॉ. रघुनंदन राय 'अनुरागी'	595/-
विचारार्य / रघु ठाकुर	95/-
भक्तिकाल के प्रेमाख्यान / डॉ. सविता उपाध्याय	350/-
'अक्षयवट' का सामाजिक, धार्मिक-आर्थिक-वैज्ञानिक अध्ययन / डॉ. अर्चना मिश्रा	250/-
आधुनिक विज्ञान और अध्यात्मिकता / डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'	250/-
रेडियो, साहित्य और पत्रकारिता / डॉ. अकेला भाइ	295/-

समय प्रकाशन
आई-1/16, शांतिमोहन हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन : 23270889, 23272145 **टेलीफैक्स :** 011-23270889
ई-मेल : samayprakashan@yahoo.co.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समाचार

बिलास बिहारी को सम्मान

वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. विलास बिहारी को हिंदी साहित्य में उत्कृष्ट अवदान एवं उल्लेखनीय उपलब्धियों के लिए तथा उनकी सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'सुनो मनोरम' (आत्मकथात्मक उपन्यास) को ध्यान में रखते हुए उन्हें 'स्वर्ग विभा तारा सम्मान-2010' से विभूषित किया गया है।

मूर्धन्य साहित्यकारों की उपस्थिति में डॉ. विलास बिहारी को वाग्देवी के प्रतीक चिह्न, सम्मान पत्र, शाल, श्रीफल, पुष्पगुच्छ एवं सम्मान की राशि देकर सम्मानित किया गया।

डॉ. निरुपमा राय को 'पोस्ट डॉक्टरल फैलोशिप' मिली

कथाकार डॉ. निरुपमा राय को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 'पोस्ट डॉक्टरल फैलोशिप' के लिए चुना है। संपूर्ण भारत से संस्कृत विषय में जिन तीन महिलाओं का चयन किया गया है उनमें पटना विश्वविद्यालय (बिहार) से एकमात्र डॉ. निरुपमा राय का चयन हुआ है। संस्कृत से एम.ए. फिर 'नेट' करने के बाद इन्होंने—''विष्णु पुराण में भक्ति तत्व'' विषय पर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। देश की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में डॉ. राय की लगभग दो सौ कहानियाँ, सैकड़ों आलेख (वेद, पुराण, उपनिषदों से संबंधित) तथा कविताएँ प्रकाशित हैं। साथ ही तीन कहानी संग्रह, एक नारी विमर्श और एक शोध ग्रन्थ प्रकाशित हैं। इनकी इक्कीस कहानियाँ विभिन्न प्रतिष्ठित कथा/कहानी पुरस्कारों से सम्मानित हुई हैं। पोस्ट डॉक्टरल फैलोशिप के तहत इनके शोध का विषय है—

''संस्कृत साहित्य पर वैष्णव धर्म-दर्शन का प्रभाव''

पाँच वर्ष में पूरे किए जाने वाले इस शोध के लिए प्रतिमाह लगभग तीस हजार रुपए और पचास हजार रुपए वार्षिक Contingency के देय होंगे। साथ ही एच.आर.ए. एवं मेडिकल सुविधाएँ भी दी जाएँगी। तमाम साहित्यकारों एवं प्रबुद्ध जनों ने डॉ. निरुपमा राय को हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित की हैं।

बहुआयामी है डॉ. मानव का साहित्य : डॉ. मुक्ता मदान

हिसार (हरियाणा)। विशिष्ट एवं बहुआयामी है डॉ. रामनिवास 'मानव' का साहित्य। ये शब्द हैं हरियाणा साहित्य-अकादमी की निदेशक डॉ. मुक्ता मदान के, जो उन्होंने मानव भारती शिक्षा, समिति, हिसार तथा हरियाणा साहित्य-अकादमी, पंचकूला के संयुक्त तत्वाधान में, स्थानीय मॉडल टाउन स्थित गुरु नानक गर्ल्स सीनियर सेकेंडरी स्कूल के सभागार में 'डॉ. रामनिवास 'मानव' का हिंदी-साहित्य को योगदान' विषय पर आयोजित एक राष्ट्रीय साहित्य-समारोह में, मानव-परिवार की दो दर्जन पुस्तकों के विमोचन के उपरांत, मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. 'मानव' के साहित्य के संबंध में कहे। उन्होंने कहा कि डॉ. 'मानव' का विपुल साहित्य दूसरे साहित्यकारों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

समारोह के अध्यक्ष राज्यकवि उदयभानु 'हंस' ने कहा कि यह गर्व की बात है कि हमारे बीच एक ऐसा साहित्यकार है, जिसने देश और दुनिया में हिसार का नाम गौरवान्वित किया है। डॉ. मानव क़ी रचनाओं को 'युगबोध का दर्पण' बताते हुए उन्होंने डॉ. मानव की प्रयोगधर्मिता को भी रेखांकित किया। इस अवसर पर डॉ. मानव ने अपनी रचना-प्रक्रिया को स्पष्ट किया तथा युगीन यथार्थ और जीवन-संघर्ष को अपने सृजन की प्रेरणा बताया।

सत्यपाल शर्मा के कुशल संचालन में महेन्द्र जैन द्वारा प्रस्तुत सरस्वती-वंदना से प्रारंभ हुए इस समारोह में डॉ. रमेश सोबती (फगवाड़ा), डॉ. बाबूराम महला और हरिप्रकाश तिवारी (कुरुक्षेत्र), गोविन्द शर्मा (संगरिया), घमंडीलाल अग्रवाल (गुड़गांव), डॉ. विश्वबंधु शर्मा (रोहतक), डॉ. केवलकृष्ण पाठक (जींद), डॉ. रमाकांत शर्मा (भिवानी), रोहित यादव (मंडी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अटेली), डॉ. सत्यवीर 'मानव' (नारनौल), डॉ. विश्वनाथ राय, डॉ. पी.एस. मेहता और यशवंत सिंह बादल (हिसार) आदि ने भी डॉ. 'मानव' के व्यक्तित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला।

इस अवसर पर डॉ. मानव के समग्र साहित्य की प्रदर्शनी लगाई गई तथा लगभग सौ साहित्यकारों और सहभागियों को सम्मानित किया गया।

'अनुराग' साहित्यकार सम्मान

अनुराग सेवा संस्थान, लालसोट (राजस्थान) द्वारा संस्कृत महाविद्यालय, लालसोट में 27 मार्च को आयोजित 'अनुराग-2011' स्नेह मिलन एवं साहित्यकार सम्मान समारोह को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि राजस्थान व गुजरात उच्च न्यायलाय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश यादराम मीना ने कहा कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्यकार अपनी लेखनी के माध्यम से सत्य को उद्‌घाटित कर समाज में राष्ट्र व समाज के प्रति नवचेतना जागृत करता है। उन्होंने कहा कि व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कार्य करे उस क्षेत्र में उसे उत्कृष्टता प्राप्त करनी चाहिए तथा शिखर को छूना चाहिए।

समारोह के विशिष्ट अतिथि लालसोट के उप जिला कलेक्टर लोकेश कुमार सहल ने संबोधित करते हुए कहा कि सद्‌साहित्य के सृजन व अध्ययन से ही वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज में पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण बढ़ रही सामाजिक व सांस्कृतिक विकृतियों को रोका जा सकता है। नई पीढ़ी में चारित्रिक व नैतिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

आयोजन समिति के अध्यक्ष एवं वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. तारादत्त निर्विरोध ने साहित्यकारों का संक्षिप्त परिचय देते हुए कहा कि अनुराग सेवा संस्थान साहित्य के प्रति पूर्ण निष्ठा व सेवा भाव के साथ समर्पित है। साहित्यकारों को अपनी मानसिक विवेचनात्मक लेखनी का प्रयोग कर देश व समाज के लिए उत्कृष्ट साहित्य का सृजन करना चाहिए।

आयोजन समिति के संरक्षक राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी के पूर्व अध्यक्ष गोपाल प्रसाद मुद्‌गल ने कहा कि साहित्यकारों से हमें पुरातन आदर्शों को पढ़-समझ कर आत्मसात् करने की आवश्यकता है। साहित्य समाज व राष्ट्र-उत्थान की सीढ़ी है।

समारोह के अध्यक्ष सुशासन केंद्र, हरिश्चन्द्र माथुर लोक प्रशिक्षण संस्थान, जयपुर के सचिव वरिष्ठ साहित्यकार अरुण ओझा ने कहा कि समाज में साहित्य व साहित्यकार की महत्ता स्थापित कर साहित्य की सेवा की जा सकती है। हमें इसी तरह साहित्यकारों को सम्मानित कर साहित्य सृजन के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। साहित्यकार की लेखनी समाज की दशा व दिशा दोनों में बदलाव ला सकती है।

संस्थान द्वारा इस अवसर पर वर्ष 2010 के साहित्य सम्मान प्रदान किये गये जिसमें अनुराग साहित्य श्री सम्मान **प्रकाश परिमल,** जयपुर (राज.) को; स्व. चरत सिंह यादव स्मृति सम्मान-**मुकुट सक्सेना,** अलीगढ़ (उ.प्र.) को; स्व. भौंरी बाई मीना स्मृति सम्मान-**श्रीमती जया गोस्वामी,** जयपुर (राज.) को; आयुष स्मृति अनुराग बाल साहित्य सम्मान-**गोविन्द शर्मा,** संगरिया (राज.) को; स्व. मदन लाल आलाला स्मृति सम्मान-**रमाकान्त 'कान्त',** जयपुर (राज.) को प्रदान किया गया।

इसी तरह स्व. सुरेश चन्द्र शर्मा स्मृति सम्मान-**रत्न कुमार सांभरिया,** जयपुर (राज.) को, स्व. अशोक शर्मा स्मृति सम्मान-**डॉ. शरदनारायण खरे,** मंडला (म.प्र.) को, स्व. ओम प्रकाश बोहरा स्मृति सम्मान-**गोविन्द भारद्वाज,** गुड़गाँव (हरियाणा) को, स्व. रामप्रताप साहू स्मृति सम्मान **मुकेश गुप्त 'राज',** बाँदीकुई (राज.) को प्रदान किया गया। स्व. शिदनारायण रावत स्मृति सम्मान गुप्त 'राज', बाँदीकुई (राज.) को प्रदान किया गया। स्व. शिवनारायण रावत स्मृति सम्मान-**डॉ. मधुसूदन साहा,** राउरकेला (उड़ीसा) को, स्व. गीता देवी शर्मा स्मृति सम्मान-**श्रीमती संगीता माथुर,** कोटा (राज.) को देने की घोषणा की गई। संस्थान द्वारा सभी सम्मानित साहित्यकारों को 1100 रु. नकद, शाल, प्रशस्ति-पत्र, स्मृति चिह्न, श्रीफल आदि प्रदान किए गए। इस अवसर पर राजेन्द्र यादव 'आजाद' की लघु कथा संग्रह **'उम्र कैद'** का भी विमोचन किया गया।

इस अवसर पर संयोजक सियाराम शर्मा ने प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए भावी योजनाओं पर प्रकाश डाला। नगरपालिका लालसोट के चेयरमैन राम प्रसाद मिश्र ने आभार ज्ञापित किया। मंच संचालन विनित उपाध्याय ने किया।

इस अवसर पर संस्थान के सचिव श्याम सुन्दर शर्मा, संरक्षक कैलाश तिवाडी, ब्रजमोहन द्विवेदी, रमेश चन्द मिश्रा,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वैद्य ब्रजमोहन शर्मा, ओम चतुर्वेदी, रमेश शर्मा, दिनेश मिश्रा, कौशलेश शर्मा, सुनिल पंचोली, संजीब रावत, अवधेश जैमिनी, मुकेश निर्झरना, सरोज त्रिपाठी, अंजना त्यागी, पार्षद लता सोनी, राजेन्द्र डोब, वैद्य हनुमान, वेद प्रकाश शर्मा सहित कई गणमान्य नागरिक व साहित्यकार उपस्थित थे।

राकेश भ्रमर के उपन्यास एवं ग़ज़ल संग्रह का विमोचन

जबलपुर। जीवन और प्रकृति के मध्य सेतु का कार्य शब्द ही करते हैं, शब्द के जरिए ही कोई सृजनकार जीवन और जगत की स्थितियों को चित्रित कर सकता है। सृजनशिल्पी श्री राकेश भ्रमर ने अपने शब्दों के माध्यम से समाज को संदेश भी दिया है और चिंतन करने के लिए प्रेरित भी किया है।

तदाशय के उद्‌गार प्रज्ञा प्रकाशन, रायबरेली के तत्वाधान में सामुदायिक भवन, टी. एण्ड डी. सर्किल, जबलपुर में आयोजित समारोह में राकेश भ्रमर के उपन्यास 'डाल के पंक्षी' एवं ग़ज़ल संग्रह 'हवाओं के शहर में' का विमोचन करते हुए मुख्य अतिथि श्री के. एल. पाण्डेय, मुख्य परिचालन अधिकारी, पश्चिमी मध्य रेलवे ने व्यक्त किए।

समारोह के सभापति श्री प्रभात पाराशर, आई.ए.एस. एवं संभागीय आयुक्त, जबलपुर ने राकेश भ्रमर के लेखन को सामाजिक चेतना का सृजन बताया। विशिष्ठ अतिथि डॉ. राजकुमार 'सुमित्र' ने कहा कि राकेश भ्रमर ने उपन्यास एवं कविताओं के माध्यम से संकीर्णता और विषमताओं पर प्रहार किया है।

कार्यक्रम का संचालन करते हुए राजेश पाठक 'प्रवीण' ने उपन्यास एवं कविता की पृष्ठभूमि पर व्यापक प्रकाश डाला। प्रमुख वक्ता श्री अशोक जमनानी, उपन्यासकार (होशंगाबाद) ने राकेश भ्रमर के उपन्यास का बारीकी से विवेचन किया और उसके मूल तत्वों पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि राकेश भ्रमर ने पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक रीति-रिवाजों को अपने उपन्यास में बखूबी चित्रित किया है। दूसरे प्रमुख वक्ता श्री साज जबलपुरी ने राकेश भ्रमर के ग़ज़ल लेखन पर प्रकाश डाला और उन्हें दुष्यंत कुमार की परंपरा का कवि माना। इसी अवसर पर थाईलैण्ड से पधारे श्री अमरेन्द्र नारायण, प्रख्यात साहित्कार ने भी श्रोताओं को संबोधित किया।

समारोह का प्रारंभ सरस्वती पूजन से हुआ। अतिथियों का स्वागत सर्वश्री राकेश माहेश्वरी (नरसिंहपुर), जवाहरलाल चौरसिया 'तरुण', डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल', आचार्य भगवत दुबे, हरि भटनागर, कामता सागर आदि ने किया। 'पाथेय' संस्था की ओर से भ्रमर जी को उनकी सृजन-साधना के लिए अलंकृत किया गया।

'रोशनी का घट : अशोक अंजुम : व्यक्ति एवं अभिव्यक्ति' का पद्मभूषण नीरज द्वारा लोकार्पण

अलीगढ़। श्री अशोक अंजुम के व्यक्तित्व व कृतित्व पर आधारित तथा श्री जितेन्द्र जौहर द्वारा संपादित कृति 'रोशनी का घट' का लोकार्पण पद्मभूषण नीरज ने करते हुए अशोक 'अंजुम' को बहुआयामी रचनाकार बताया और उन्हें खूब सारी बधाइयाँ दीं। कार्यक्रम का शुभारंभ पद्मभूषण नीरज, फादर जॉर्ज पॉल, डॉ. आनंद सुमन सिंह और श्री अशोक अंजुम द्वारा दीप प्रज्जवलन से हुआ। तत्पश्चात् सन्तफिदेलिस सीनियर सेकेन्डरी स्कूल के विद्यार्थियों ने प्रार्थना नृत्य किया।

तत्पश्चात् सन्त फिदेलिस स्कूल के विद्वान प्राचार्य फादर जॉर्ज पाल ने अपने उद्‌बोधन में उपस्थित साहित्यकारों, अतिथियों का स्वागत किया।

डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ ने अपने वक्तव्य में कहा कि जिस प्रकार अशोक का वृक्ष किसी भी मौसम में पत्रविहीन नहीं होता, उसी प्रकार अशोक 'अंजुम' भी निरंतर अपनी रचनाधर्मिता से साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। सुप्रसिद्ध कहानीकार एवं साक्षात्कार के क्षेत्र में विशिष्ठ पहचान बनाने वाले डॉ. प्रेमकुमार ने भी अशोक 'अंजुम' के बढ़ते साहित्यिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कद की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा अशोक 'अंजुम' के अध्ययन काल से जुड़े अनेक संस्मरण सुनाए। सुप्रसिद्ध कथा लेखिका तथा 'वर्तमान साहित्य' की संपादक डॉ. नमिता सिंह ने यह बताया कि अशोक 'अंजुम' अपने निरंतर एवं उत्कृष्ट लेखन से छोटी-बड़ी प्रायः सभी पत्रिकाओं में छाये रहते हैं। इंडियन डाइकास्टिंग के श्री प्रमोद कुमार जी ने भी अपने वक्तव्य में श्री अंजुम की रचनाधर्मिता की प्रशंसा की तथा कहा कि समाज को बचाए रखने के लिए साहित्य, कला, संगीत, आदि की रक्षा अनिवार्य है। देहरादून से पधारे पुस्तक के प्रकाशक तथा चर्चित पत्रिका 'सरस्वती सुमन' के संपादक डॉ. आनंद सुमन सिंह ने पुस्तक के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि किस प्रकार इस पुस्तक के प्रकाशन की भूमिका तैयार हुई। इस अवसर पर उन्होंने स्व. सरस्वती जी को याद करते हुए उनकी स्मृति में की जा रहीं अनेक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के विषय में भी बताया।

श्री अशोक 'अंजुम' ने इस अवसर पर सभी का आभार व्यक्त करते हुए कुछ प्रसंग सुनाए। साथ ही, अपनी ग़ज़ल का मतला तथा शे'र पढ़ते हुए यह इच्छा प्रकट की–

ज़िंदगी का ज़िंदगी से वास्ता ज़िंदा रहे
हम जियें जब तक हमारा हौसला ज़िंदा रहे
मेरी कविता, मेरे दोहे, गीत मेरे और ग़ज़ल
मैं रहूँ या ना रहूँ मेरा कहा ज़िंदा रहे

अपनी अस्वस्थता के बावजूद श्रोताओं के बेहद आग्रह पर नीरज जी ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'अगर तीसरा युद्ध हुआ तो...' का धाराप्रवाह पाठ करते हुए उपस्थित जनसमूह को रोमांचित कर दिया।

कार्यक्रम का सरस संचालन डॉ. पूनम शर्मा ने किया तथा उपस्थित विद्वानों में कवि श्री सुरेश कुमार, फादर अरुन, श्री ज्ञानेन्द्र साज़, श्री यादराम शर्मा, श्री मयंक मांगलिक, सुश्री अंजना सेठ, श्रीमती प्रीति मांगलिक, सुश्री वंदना वशिष्ठ, श्रीमती भारती शर्मा, श्री अमन अंजुम, सुश्री देवांशी शर्मा, श्रीमती कृतिका शर्मा, श्री देशराज सिंह, श्रीमती शुभा अग्रवाल, श्री नरेशकुमार, श्री अजय चौहान, श्री मनीष वार्ष्णेय, श्री अजय प्रकाश शर्मा, डॉ. योगेन्द्र शर्मा आदि बहुत से लोग शामिल थे।

जानकी बल्लभ शास्त्री को श्रद्धांजलि

हिंदी भाषा साहित्य परिषद्, खगड़िया ने डॉ. रामपूजन सिंह, हिंदी विभागाध्यक्ष, कोशी कॉलेज की अध्यक्षता में 'आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री को समर्पित श्रद्धांजलि सभा का आयोजन क्रांतिभवन, कृष्णनगर में किया।

7 अप्रैल, 2011 को दिवंगत हुए आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री की तस्वीर पर पुष्पांजलि देकर क्रांतिभवन में उनकी आत्मा की शांति के लिए दो मिनट का मौन धारण किया गया एवं विभिन्न साहित्यकारों ने साहित्यंजलि दी। डॉ. रामपूजन सिंह ने कहा कि हिंदी के कालजयी महाकवि एवं साहित्य मनीषी आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री का निधन इसीलिए मर्मांतक है कि इसके साथ ही रचनाधर्मिता के एक विराट युग का समापन हो गया। युवा साहित्यकार शंकरानन्द ने कहा कि आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री, निराला, पंत, महादेवी की पीढ़ी के महत्त्वपूर्ण कवि थे। उनके लेखन का अधिकांश हिंदी और संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है। डॉ. सोहन कुमार सिन्हा ने कहा कि उत्तर छायावाद के प्रमुख महाकवि आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री के विराट जीवन की दो प्रेरणाएँ हैं: 1. पितृभक्ति और 2. आत्म सम्मान की रक्षा। नन्देश निर्मल ने कहा कि छायावाद के अंतिम स्तंभ आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री के निधन से साहित्य की अपूरणीय क्षति हुई है। बुराइयों पर प्रहार करके अच्छाइयों को स्थापित करने में वे सतत प्रयत्नशील रहे। चन्द्रकांत निर्मल, धुव कुमार सिंह 'पिंटू', रौशन कुमार राही, सुयोग्य श्रेष्ठ के बाद कैलाश झा 'किंकर' ने कहा कि 'ऊपर-ऊपर पी जाते हैं जो पीने वाले हैं, कहते ऐसे ही जीते हैं जो जीने वाले हैं' शास्त्री जी की पंक्ति को गुनगुनाते हुए व्यंग्य कविता की राह हमने पकड़ी थी। पहला कविता संग्रह 'संदेश' लेकर जब 31 अगस्त, 1992 को उनके दर्शनार्थ निराला निकेतन गया, उन्होंने मेरी डायरी पर लिखा था–"संदेश पढ़कर परम प्रसन्नता हुई। चढ़ती वय में इन्होंने कवित्व की एक ऊँचाई तय कर ली है। इसे देखकर विस्मय पूर्ण उल्लास हुआ। ऐसी ही निष्ठा बनी रही, लगन लगी रही तो वह एक दिन यशस्वी कवि के रूप में हमारे साहित्य जगत में समादृत कवि होंगे, इसमें संदेह नहीं।" लगभग बीस वर्ष पहले की उनकी यह टिप्पणी मेरे जीवन के पाथेय हैं। धन्यवाद ज्ञापन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant.

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करते हुए डॉ. रामदेव प्रसाद शर्मा ने व्यंग्य एवं कटाक्ष के पुरोधा आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री को हार्दिक श्रद्धांजलि दी।

प्रा. सोनवणे राजेंद्र 'अक्षत' को पी-एच.डी. पदवी प्राप्त

बीड़-रिसर्च लिंक सुवर्ण पदक और अखिल भारतीय मायाराम सूरजन ग्रामीण पत्रकारिता पुरस्कार प्राप्त राष्ट्रीय स्तरीय पत्रिका 'लोकयज्ञ' के संपादक प्रकाशक प्रा. सोनवणे राजेंद्र 'अक्षत' को हाल ही में डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद ने पीएच.डी. की पदवी प्रदान की है।

प्रा. सोनवणे ने डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाड़ा विश्वविद्यालय औरंगाबाद के हिंदी विभाग में कार्यरत प्राध्यापक डॉ. हणमंतराव पाटील के मार्गदर्शन में 'डॉ. शंकर शेष के नाटकों में संवेदना और रंगशिल्प' विषय पर अपना शोध कार्य पूर्ण किया जिस पर विश्वविद्यालय ने उन्हें पी-एच.डी. की पदवी प्रदान की है। अब तक प्रा. सोनवणे के कुल 60 से भी अधिक रिसर्च पेपर विभिन्न राष्ट्रीय राज्यस्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। दो वर्ष पूर्व उनका 'मीडिया और हिंदी' नामक पुस्तक भी प्रकाशित हुआ था। विगत दस वर्षों से वे निस्वार्थ भावना से बीड़ जैसे हिंदीतर छोटे से शहर से राष्ट्रीय स्तरीय त्रैमासिक लोकयज्ञ का प्रकाशन करते आ रहे हैं। अब तक उन्हें कई राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने 26 से भी अधिक पुरस्कार और सम्मानोपाधियाँ प्रदान की है। कई राष्ट्रीय संगोष्ठियों में उन्होंने विशेषज्ञ के रूप में मार्गदर्शन किया है।

प्रा. सोनवणे राजेंद्र 'अक्षत' जी को डॉ. बासाहेब आंबेडकर मराठवाड़ा विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच.डी. पदवी मिलने पर कई साहित्यिक मित्रों, संपादकों, प्रकाशकों और हिंदी सेवियों ने बधाई दी है।

राष्ट्रीय बाल साहित्य संगोष्ठी संपन्न

जोशीमठ (उत्तराखंड)। अल्मोडा से प्रकाशित बच्चों की पत्रिका 'बालप्रहरी' एवं जोशीमठ से प्रकाशित बालपत्रिका 'बालबिगुल' के संयुक्त तत्त्वाधान में स्थानीय शंकराचार्य माधवाश्रम में 21 से 23 जून 2011 तक आयोजित राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी में 'बालसाहित्य-यथार्थ एवं कल्पना', 'बालसाहित्य में लोकसाहित्य का अवदान', 'बाल कहानी विश्लेषण', 'बाल कविता विश्लेषण' आदि विषयों पर आयोजित सत्रों में बालसाहित्य के विभिन्न पक्षों पर व्यापक चर्चा हुई। संगोष्ठी में बालसाहित्य समीक्षा के संपादक गर्ग, बालप्रहरी (अल्मोड़ा) के संपादक उदय किरौला, बालबिगुल (जोशीमठ) के संपादक लक्ष्मणसिंह नेगी, शैल सूत्र के संपादक आनंदगोपालसिंह बिष्ट, उत्तराखंड भाषा संस्थान की निदेशक डॉ. सविता मोहन, प्रख्यात साहित्यकार एवं विधायक केदारसिंह फोनिया, डॉ. उज्ज्वला केलकर (महाराष्ट्र) प्रो. शिवदेव मन्हास (जम्मू) डॉ. हरेराम पाठक (असम) सीताराम चौहान (दिल्ली), डॉ. मधु भारतीय (गाजियाबाद), राकेश चक्रम (मुरादाबाद) अमरेन्द्र कुमार सिंह (पटना), डॉ. हरिश्चंद्र बोरकर (नागपुर), डॉ. भगवानसिंह 'भास्कर' (सिवान, बिहार) सहित उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, झारखंड, बिहार, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश के 110 साहित्यकारों ने भागीदारी की।

संगोष्ठी में देश भर से प्रकाशित लगभग 40 बाल पत्रिकाओं की प्रदर्शनी विशेष आकर्षण रही। उद्घाटन सत्र में बालसाहित्य की 12 पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। कार्यक्रम का शुभारंभ बच्चों की काव्य गोष्ठी से हुआ। उद्यापन समारोह में देश के विभिन्न राज्यों के 16 साहित्यकारों को बालसाहित्य की उत्कृष्ट सेवा के लिए प्रतीक चिह्न, प्रशस्ति पत्र एवं शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया गया। 'जनदेश' संस्था की ओर से अतिथि साहित्यकारों को प्रतीक चिह्न भेंट किया गया।

प्रस्तुति—नीरज पंत, अध्यक्ष,
भारत ज्ञान विज्ञान समिति, मो. खोल्टा, अल्मोड़ा।

राष्ट्र-किंकर ने आयोजित किया संस्कृति सम्मान समारोह, कवि सम्मेलन

नई दिल्ली। दिल्ली में पड़ रही जबरदस्त ठण्ड के बावजूद हमेशा की तरह इस बार भी पश्चिम दिल्ली की जनकपुरी के साहित्य कला परिषद सभागार में देश-विदेश से पधारे विद्वानों ने भारतीय संस्कृति को समृद्ध बनाने का संकल्प भी लिया। अवसर था साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'राष्ट्र-किंकर' द्वारा आयोजित संस्कृति सम्मान समारोह का। समारोह के मुख्य अतिथि गुजरात से पधारे स्वामी डॉ. गौरांगशरण देवाचार्य तथा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिल्ली के महापौर श्री पृथ्वीराज साहनी ने संस्कृति सम्मान प्रदान करते हुए भारतीय संस्कृति के विश्वव्यापी प्रभावों की चर्चा करते हुए उसे सर्वाधिक वैज्ञानिक बताया। उन्होंने युवाओं विशेष रूप से बढ़ते बच्चों पर विशेष ध्यान देने पर बल दिया। समारोह के अध्यक्ष अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के सिद्धहस्त शिल्पी श्री गिर्राजप्रसाद एवं विशिष्ट अतिथि दिल्ली सरकार की भोजपुरी अकादमी के माननीय सदस्य प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव व आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री ने अपने विशिष्ट अंदाज में स्वयं को तथाकथित मार्डन घोषित करने वालों तथा मीडिया के एक वर्ग द्वारा सांस्कृतिक प्रदूषण फैलाने की आलोचना करते हुए देश के बुद्धिजीवी वर्ग से सक्रिय भूमिका निभाने की अपील की। इससे पूर्व गायत्री परिवार की शाखा 'भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा' के प्रदेश संयोजक श्री खैराती लाल सचदेवा ने प्रतिकूल मौसम के बावजूद देश के कोने से कोने से पधारे सभी अतिथियों का स्वागत करते हुए संस्था के साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कार्यों की जानकारी दी।

राष्ट्र-किंकर की ओर से हर वर्ष मकर-संक्रांति के अवसर पर प्रदान किए जाने वाले संस्कृति सम्मान वैदिक विद्वान प्रो. डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया, सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. देवेन्द्र आर्य, डॉ. शरदनारायण खरे, गुजरात के महंत सुनीलदास, शिलांग के डॉ. अकेला भाई, भावना कला मंदिर के श्री प्राण शर्मा, छात्र शक्ति के श्री दिनेश शर्मा, सेवा भारती के श्री ओमप्रकाश मिश्र, साहिबगंज के श्री सत्येन्द्र पाण्डेय को प्रदान किया गया। दिल्ली में भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा में सर्वाधिक भागीदारी करने वाले तीन विद्यालयों मोहनगार्डन के कमल मॉडल स्कूल, हस्तसाल के राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय तथा नागलोई के डी. एमएम.सी.सै. स्कूल को यह सम्मान प्रदान किया गया। नोएडा के श्री ओ.पी. मुंझाल, झुंझुनू के फ़ख़रे आलम को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए साहित्य किंकर सम्मान तथा पत्रकार श्री ओमवीर सिंह को पंचवटी पत्रकारिता सम्मान से अलंकृत किया गया।

इस अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन में अपनी काव्य रचनाओं से समां बाँधने वालों में सर्वश्री महेन्द्रपाल काम्बोज, डॉ. शमीम देवबंदी, चाँद अन्सारी, सादिक देवबंदी (देवबंद), श्रीगोपाल नारसन (रूड़की), डॉ. सुरजीत सिंह जोबन, किशोर श्रीवास्तव, अशोक गुप्ता, श्रीमती सुषमा भंडारी, श्रीमती शोभा रस्तौगी एवं रशीद सैदपुरी, नंदलाल रसिक, लाल बिहारी [illegible] (दिल्ली) प्रमुख थे।

कार्यक्रम का शुभारंभ दीपयज्ञ के पश्चात रेड रोज पब्लिक स्कूल, रामापार्क के नन्हें-मुन्ने बच्चों द्वारा वंदेमातरम् से हुआ। कार्यक्रम का संचालन 'योगकिंकर' के संपादक दर्शनकुमार एवं 'यथासंभव' के मुनीष गोयल ने किया। धन्यवाद ज्ञापन करते हुए श्री अम्बरीश कुमार मकर संक्रांति के ऐतिहासिक-पौराणिक महत्त्व की जानकारी दी। उन्होंने भीष्म पितामह द्वारा उत्तरायण की प्रतीक्षा, स्वामी विवेकानंद के जन्म, मुक्तसर पंजाब के गुरु गोविंद सिंह से जुड़े प्रसंगों की चर्चा कर खचाखच भरे सभागार को रोमांचित कर दिया। सुप्रसिद्ध फोटोग्राफर श्याम प्रसाद ने पिछले वर्ष के समारोह का एक दुर्लभ चित्र कार्यक्रम संयोजक विनोद बब्बर को भेंट किया। समारोह पश्चात् उपस्थित संस्कृति प्रेमियों ने मिलकर खिचड़ी एवं अन्य परम्परागत व्यंजनों का आनन्द लिया।

हितेश कुमार शर्मा को मिला पं. बृज बहादुर पाण्डेय स्मृति सम्मान

बिजनौर (उ.प्र.) के सुप्रसिद्ध साहित्यकार हितेश कुमार शर्मा के नवीनतम काव्य संग्रह 'मैं जमीं पर हूँ' के लिए शिक्षा साहित्य कला विकास समिति, रत्लापुर बाजार श्रावस्ती (उ.प्र.) ने उन्हें 'पं. बृज बहादुर पाण्डेय स्मृति सम्मान' से सम्मानित कर उनका मान बढ़ाया है। श्री शर्मा की इस उपलब्धि पर उन्हें 'परती पलार' परिवार की हार्दिक बधाई।

❑

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघु पत्र-पत्रिकाएँ

हमारे साथ चल रहीं कुछ पठनीय पत्र-पत्रिकाएँ

1. **साहित्य अमृत** (मासिक)—सम्पादक-त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी, 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली 110002—एक सामान्य अंक का मूल्य : 20/ मात्र।
2. **सरस्वती सुमन** (त्रैमासिक)—प्रधान सम्पादक—डॉ. आनन्द सुमन सिंह 'सारस्वतम', 1-छिब्बर मार्ग, देहरादून—2480001 (उत्तराखण्ड), आजीवन सदस्यता—1500/
3. **समय सुरभि अनंत** (त्रैमासिक), सम्पादक-नरेन्द्र कुमार सिंह, शिवपुरी (जेल क्वार्टर से पश्चिम), पोस्ट-जिला—बेगूसराय—851101 (बिहार) मूल्य : 20/
4. **लोकगंगा** (मासिक), सम्पादक—योगेशचन्द्र बहुगुणा, स्ट्रीट-6, सी/1—शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून—248202 (उत्तराखण्ड), मूल्य : एक प्रति 12/
5. **सोच-विचार** (मासिक), सम्पादक—नरेन्द्र नाथ मिश्र, के 67/135 (ए), ईश्वरगंगी, वाराणसी—221001 (उत्तर प्रदेश) मूल्य : प्रति अंक 20/
6. **आरोह-अवरोह** (मासिक) सम्पादक—डॉ. शंकर प्रसाद, 306, महादेवी अपार्टमेंट, काशीनाथ लेन, पूर्वी लोहानीपुर, पटना—800003 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक 12/
7. **संस्कृति सम्वाद** (द्विमासिक), प्रधान सम्पादक—श्रीराम तिवारी, संयुक्त सचिव, मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद, बोर्ड ऑफिस परिसर, शिवाजी नगर, भोपाल—462011 (म.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 10/
8. **प्रज्ञा** (मासिक), सम्पादक द्वय—राकेश भ्रमर, साज जबलपुरी, 24, जगदीशपुरम, लखनऊ मार्ग, निकट त्रिपुला चौराहा, रायबरेली—229316 (उ.प्र.) मूल्य : 20/-
9. **कौशिकी** (त्रैमासिक), सम्पादक—कैलाश झा किंकर, क्रांति भवन, चित्रगुप्त नगर, खगड़िया—851204 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक 20/
10. **व्यंग्य-तरंग** (त्रैमासिक), सम्पादक—कृष्णकान्त एकलव्य, 209 प्रेम निकुंज, रूहट्टा, जौनपुर—02 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 15/
11. **कथन** (त्रैमासिक), सम्पादक—संज्ञा उपाध्याय, 107—साक्षरा अपार्टमेंन्ट्स ए. 3, पश्चिम बिहार, नई दिल्ली—110063, प्रति अंक मूल्य : 20/
12. **व्यंग्य यात्रा** (त्रैमासिक), सम्पादक-प्रेमजनमेजय, 73 साक्षर अपार्टमेंन्ट्स ए-3, नयी दिल्ली—110063, मूल्य : प्रति अंक 20/
13. **चिनाब**, सम्पादक—सिमर संदोष, 186/डब्ल्यू. बी. बाजार शेखां, जालन्धर—144001
14. **गंगनांचल** (त्रैमासिक) सम्पादक—अजय कुमार गुप्ता, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, आजाद भवन, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, नई दिल्ली-110002 वार्षिक 400/-
15. **संचेतना** (मासिक), सम्पादक—महीप सिंह, एच.-108, शिवाजी पार्क, पंजाबी बाग, नई दिल्ली-26, मूल्य : प्रति अंक 20/
16. **साहित्य प्रभा** (त्रैमासिक), प्रधान सम्पादक—डॉ. चन्द्रसिंह तोमर 'मयंक', आमवाला (अपर), पोस्ट—तपोवन (नालापानी), देहरादून—248008 (उत्तराखण्ड), मूल्य : प्रति अंक 15/
17. **मधुराक्षर** (त्रैमासिक), सम्पादक-बृजेन्द्र अग्निहोत्री, जिला कारागार के पीछे, मनोहर नगर, फतेहपुर—212601 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 10/

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

18. **साहित्य परिक्रमा** (त्रैमासिक), सम्पादक–मुरारी लाल गुप्त 'गीतेश', राष्ट्रोत्थान भवन, माधव महाविद्यालय के सामने, नई सड़क, ग्वालियर–440009, (म.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 15/
19. **पंजाबी संस्कृति** (त्रैमासिक), प्रधान सम्पादक–डॉ. राम आहूजा, एन.115, साउथ सिटी-1, गुड़गांव–122001 (हरियाणा) मूल्य : प्रति अंक 20/
20. **सम्मेलन पत्रिका** (शोध त्रैमासिक), सम्पादक-विभूति मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग, 12-सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद-3 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 60/
21. **युगतेवर** (त्रैमासिक), सम्पादक–कमलनयन पाण्डेय, 1587/1, उदय प्रताप कॉलोनी बड़ैयावीर, सिविल लाइन्स-2, सुल्तानपुर–228001 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 40/
22. **अक्षर शिल्पी** (त्रैमासिक), सम्पादक–डॉ. विजय शिरढोणकर, एल-18, थद्दाराम कॉम्प्लेक्स, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल–462011 (म.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 20/
23. **राष्ट्रभाषा** (मासिक), प्रधान सम्पादक–प्रा. अनन्त राम त्रिपाठी, वर्धा-442003 (महाराष्ट्र) मूल्य : प्रति अंक 10/
24. **अवाम** (त्रैमासिक), सम्पादक-विश्वनाथ, मां वैष्णो भवन, राजेन्द्र नगर, वार्ड संख्या-23, खगड़िया (बिहार), मूल्य : प्रति अंक 25/
25. **अहल्या** (मासिक), सम्पादक–श्रीमती आशादेवी सोमाणी, 14-1-498/ए, ज्ञान बाग रोड, प्रकाश रेड लाइन्स के सामने, पान मण्डी के पास, हैदराबाद 500012 (आ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 20/
26. **यू.एस.एम. पत्रिका** (मासिक), सम्पादक–उमाशंकर मिश्र, 695 न्यू कोर्ट गांव, जी.टी. रोड, गाजियाबाद (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 12/
27. **हिन्दी प्रचार वाणी** (मासिक), प्र. सम्पादिका–सुश्री बी.एस. शान्ताबाई, कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, 178 चौथा मेन रोड, चामराजपेट, बैंगलोर–560018 (कर्नाटक), मूल्य : प्रति अंक 5/
28. **हिन्दी ज्योति बिम्ब** (मासिक), सम्पादक–श्रीमती उषा शर्मा, हिन्दी प्रचार-प्रसार संस्थान, हिन्दी भावन, वरुण पथ, सेक्टर-4, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान), मूल्य : 5/
29. **साहित्यकार कल्याण परिषद** (मासिक), सम्पादक-रामचन्द्र शुक्ल, अवन्तिका, निकट हाथी पार्क, रायबरेली-229001, (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 10/
30. **क्षणदा** (त्रैमासिक), सम्पादक प्रमुख-सुबोध कुमार सुधाकर, प्रभा प्रकाशन, त्रिवेणीगंज, जिला-सुपौल (बिहार), मूल्य : प्रति अंक 15/
31. **नई सुबह** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. दशरथ प्रजापति, मधुकुंज, विवेकानन्द नगर, गणेश पेट्रोल पम्प के निकट, सीतामढ़ी-843302 (बिहार), मूल्य : 25/
32. **नई धारा** (द्विमासिक), सम्पादक-शिवनारायण, सूर्यपुरा हाउस, बोरिंग रोड पटना-800001 मूल्य : प्रति अंक 25/
33. **पिनाक** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. शत्रुघ्न प्रसाद, त्रिपाठी भवन, राजेन्द्र नगर, पथ सं. 13 ए., पटना-800016 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक 10/
34. **मरु गुलशन** (त्रैमासिक), सम्पादक-अनिल अनवर, सर्जानात्मक सन्तुष्टि संस्थान, 33-व्यास कॉलोनी, एयरफोर्स, जोधपुर-342011 (राजस्थान)
35. **नई ग़ज़ल** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. महेन्द्र अग्रवाल, रामेश्वरम, पो.बॉ. नं.-24 सदर बाजार, शिवपुरी–473551 (म. प्र.), आजीवन शुल्क 1100/-
36. **ईक्षा,** सम्पादक–डॉ. परसुराम सिंह, चौगाई भवन, तिलकनगर, कतिरा, आरा-802301 (बिहार) : सहयोग राशि 30/
37. **अलाव** (द्विमासिक), सम्पादक-रामकुमार कृषक, सी.-3/59, नागार्जुन नगर, सादतपुर विस्तार, दिल्ली-110094 मूल्य : प्रति अंक 30/

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

38. **होरी** (अनियतकालीन), सम्पादक-राजकुमार सचान 'होरी', 695 न्यूकोट गांव, जी.टी. रोड, गाजियाबाद (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 40/
39. **सम्यक** (अनियतकालीन), सम्पादक-मदन मोहन उपेन्द्र, ए.-10, शान्तिनगर, मथुरा-281001 (उ.प्र.) मूल्य : प्र.अं. 20/
40. **मकरंद** (त्रैमासिक), सम्पादक-राम सहाय वर्मा, बी-14 सेक्टर-15, नोएडा-201301 (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 15/
41. **पनघट** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. जवाहरलाल 'बेकस', रूपांकन, पो.बा. 203, पटना-800001 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक 15/
42. **उद्गार** (मासिक) सम्पादक-सुरेन्द्र दीप, अनुपमा अपार्टमेंन्टस, 89/293 बांगुड़ पार्क, रिसड़ा-712248 (प.बं.) मूल्य : प्रति अंक 10/
43. **भाषा भारती सम्वाद**-(त्रैमासिक), सम्पादक-नृपेन्द्र नाथ गुप्त, श्री उदित आयतन, ब्रह्म स्थान पथ, शेखपुरा, पटना-14 (बिहार) वार्षिक सहयोग राशि 100/
44. **नये पाठक** (त्रैमासिक), सम्पादक—डॉ. अजय पाठक, लेन-3, विनोवा नगर, बिलासपुर—495004 (छ.ग.), मूल्य : प्रति अंक 20/
45. **मंथन** (मासिक), सम्पादक—पंडित नरेश कुमार शर्मा, सी.-803 सेटेलाईट पार्क, गुफा मार्ग, जोगेश्वरी (पूर्व), मुंबई-400060
46. **मोमदीप** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'-1436 बी., सरस्वती कॉलोनी, चेरीताल वार्ड, जबलपुर-482002 (म.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 10/
47. **दिशा संवाद** (त्रैमासिक), सम्पादक-सुरेन्द्र वीनू सिन्हा, भारतीय पत्रकारिता संस्थान, 326, आर्य समाज स्ट्रीट, कहरवान, बरेली (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 25/
48. **मजमून** (मासिक), प्रधान सम्पादक-सबीना श्रीवास्तव, 107/297, प्रेमबिहार कॉलोनी, माधवपुरम्, दिल्ली रोड, मेरठ-250002, मूल्य : प्रति अंक 10/
49. **समकालीन अभिव्यक्ति** (त्रैमासिक), सम्पादक-उपेन्द्रकुमार मिश्र, फ्लैट नं-5, तृतीय तल, 984, वार्ड नं.7, महरौली, नई दिल्ली-110030 मूल्य : प्रति अंक 15/
50. **शब्द संसार**, संपादक—अजीत तिवारी, 73/210, शिप्रा पथ, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान), मूल्य : प्रति अंक 15/
51. **अनुकृति** (त्रैमासिक), सम्पादक-डॉ. जयश्री शर्मा, अनुकृति प्रकाशन, 9 बी. महावीर कॉलोनी-1, आदर्श विद्यापीठ, सीनियर सेकेंड्री स्कूल के पास करतारपुरा, जयपुर (राजस्थान), मूल्य : प्रति अंक 20/
52. **संकल्प रथ** (मासिक), सम्पादक—राम अधीर, 108/1 शिवाजी नगर, भोपाल-462016 (म.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 225/-
53. **अरावली उद्घोष** (मासिक), संस्थापक सम्पादक—बी.पी.वर्मा 'पथिक', 448 टीचर्स कॉलोनी, अम्बा माता स्कीम, उदयपुर-313001 (राज.) मू. 20/-
54. **सुरसरि** (त्रैमासिक), सम्पादक-अश्विनी कुमार आलोक, प्रोफेसर्स कॉलोनी, महनार (वैशाली)—844506 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक—/ 15/-
55. **चांस** (त्रैमासिक), सम्पादक—सुरेन्द्र कुमार सिंह, ग्राम+पो.-राजापुर जनपद, मऊ (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक—10/-
56. **कर्णामृत** (त्रैमासिक मैथिली)—सम्पादक, राजनन्दनलाल दास, आशीर्वाद अपार्टमेन्ट, 46 (8/2) निवेदिता सरणि, कोलकाता—700078 (प.बं.) मूल्य : प्रति अंक-रु 30/-
57. **नई गुदगुदी** (त्रैमासिक), सम्पादक—विश्वंभर मोदी, 'अनुकम्पा', शिवाजी नगर, 47 सिविल लाइन्स, जयपुर-302006 (राज.) मूल्य : प्र.अं. 8/-
58. **सम्वदिया** (त्रैमासिक) प्रधान सम्पादक—भोला पण्डित 'प्रणयी'—सम्वदिया प्रकाशन, जयप्रकाश नगर, वार्ड नं. 7 अररिया-854311 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक- 25/-
59. **अंतरंग संगिनी** (त्रैमासिक), प्रधान सम्पादक—दिव्या जैन, गोविन्द निवास, सरोजिनी रोड, विले पार्ले (प.), मुम्बई-56 (महा.), मूल्य : प्र. अंक 20/-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

60. **मेकलसुता** (त्रैमासिक), सम्पादक—कृष्ण स्वरूप शर्मा 'मैथिलेन्द्र' शिव-संकल्प साहित्य परिषद, शिवाजी नगर, उपनिवेशिका, नर्मदापुरम, 461001 होशंगावाद (म.प्र.) मूल्य : प्रति अंक 20/-
61. **दिवान मेरा** (द्विमासिक), सम्पादक—नरेन्द्र सिंह परिहार, सी-004, उत्कर्ष अनुराधा, सिविल लाईन, नागपुर-440001 (महा.) मूल्य : प्र. अं. 15/-
62. **आश्वस्त** (मासिक), सम्पादक—सुश्री डॉ. तारा परमार, 9-बी., इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010 (म.प्र.), मूल्य . प्रति अंक 15/-
63. **कर्मनिष्ठा** (मासिक), सम्पादक—डॉ. मोहन तिवारी 'आनन्द', म.प्र. तुलसी साहित्य अकादमी, सुन्दरम बंगला—50 महावली नगर, कोलार रोड, भोपाल 462042 (म.प्र.), मूल्य : प्र. अंक. 10/-
64. **सुमन सागर** (त्रैमासिक), सम्पादक—कमल रंजन हिमशैल, विनीता भवन, काजीचक, सवेरा सिनेमा चौक, बाढ़-803213 पटना, (बिहार) मू. प्र. अ. 6/-
65. **साँवली** (चातुर्मासिक), प्रधान सम्पादक—जवाहर किशोर प्रसाद, मुहल्ला-रामबाग (शिवनगर), मिल्लिया कनवेन्ट के पूरब, पूर्णिया-854301 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक 30/-
66. **साहित्य त्रिवेणी** (त्रैमासिक), सम्पादक—कुंवर वीरसिंह मार्तण्ड जी.-7, गवर्नमेन्ट क्वार्टर, द. 24-परगना, कोलकाता-700137 (प.बं.), मूल्य : प्रति अंक-15/-
67. **बाल प्रहरी** (त्रैमासिक), प्रधान सम्पादक—उदय किरौला, जाखन देवी, अल्मोड़ा-263601 (उ.खण्ड) मूल्य : प्रति अंक रु 15/-
68. **अपूर्वा** (मासिक), मुख्य सम्पादक—डॉ. यू. एस. आनन्द, तेली पाड़ा मार्ग, दुमका-814101 (झार.) मूल्य : प्र.अं. /5-
69. **समय संकेत** (अनियत.) सम्पादक—बिपिन बिहारी नन्दन, जगदम्बा प्रिंटिंग प्रेस, दरियापुर गोला, पटना-4 (बिहार) मूल्य : प्र.अं. 10/
70. **अभिनव बालमन** (त्रैमासिक), सम्पादक—निश्चल, 'शारदायतन', 17/238, जेड-13/59 पंचनगरी, सासनी गेट, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक 15/-
71. **आल राऊंड** (मासिक), मुख्य सम्पादक—अमित कुमार लाडी, आलराऊंड पब्लिकेशन, आल राऊंड भवन, बी-7/259, डोंडा स्ट्रीट फरीदकोट-151203 (पंजाब), मूल्य : प्रति अंक 30/-
72. **वाग्वन्दना** (त्रैमासिक), सम्पादक—सिद्धेश्वर प्रसाद, बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड, 414 एफ, गोविन्दायन, पूर्वी बोरिंग केनाल रोड, पटना-1 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक-रु 50/-
73. **हिन्दी प्रचारक पत्रिका** (मासिक), सम्पादक-विजय प्रकाश बेरी एव अनिल बेरी, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन्स प्रा.लि., सी.21/30 पिशाच मोचन, वाराणसी-221010, मूल्य : प्रति अंक—2.50/-
74. **सनातन भारत,** (मासिक), संस्थापक सम्पादक—शिवदत्त मिश्र, रेन्टल फ्लैट संख्या-344 कंकड़बाग कॉलोनी, पटना-20 (बिहार) मूल्य : प्र.अ. रु 10/-
75. **मंगल प्रभात** (मासिक), सम्पादक—डॉ. रमेश भारद्वाज, गांधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, राजबाट, नई दिल्ली-110002, मु.प्र.अ. 5/-
76. **सुलभ इण्डिया**—(मासिक), प्रधान सम्पादक—डॉ. विन्देश्वर पाठक, आर.जेड. 83 सुलभ भवन, महावीर इनक्लेभ, पालम—डाबड़ी मार्ग, नई दिल्ली-110445, मूल्य : प्रति अंक- 20/-
77. **अभिनव प्रत्यक्ष** (मासिक), प्रधान सम्पादक-डॉ. श्री रंजन सूरिदेव, 103/बी ब्लॉक, स्वरूप कॉम्प्लेक्स, न्यू बहादुर पुर, बाजार समिति मार्ग, पटना-16 (बिहार) मूल्य : प्रति अंक-6/-
78. **लोक-यज्ञ** (त्रैमासिक), सम्पादक—डॉ. सोनवणे राजेन्द्र 'अक्षत', लक्ष्मी निवास, व्यंकटेश पब्लिक स्कूल के पीछे, आदित्य नगरी, बीड़-431122 (महाराष्ट्र), मूल्य : प्रति अंक-25/-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

79. **कविताश्री** (अनियत), सम्पादक–नलिनीकान्त, अण्डाल-713321 (प.ब.), मूल्य : प्रति अंक-स्वैच्छिक
80. **संध प्रवाह**–(मासिक), सम्पादक–डॉ. शत्रुध्न प्रसाद, विजय निकेतन, 6/ई राजेन्द्र नगर, पटना-16 (बिहार)
81. **वाग्धारा**-मुख्य सम्पादक–राज केसरवानी, महासचिव, राष्ट्रीय हिन्दी सेवी महासंघ, श्यामा सदन, 1989, सेक्टर-डी, सुदामानगर, सुभाष उद्यान के पास, इन्दौर-452009 (म.प्र.), वार्षिक शुल्क 50/-
82. **दिव्यालोक** (अनियत), सम्पादक–जगदीश किंजल्क, साहित्य सदन, प्लाट न.-145 ए, सांईनाथ-सी, सेक्टर कोलार, भोपाल-462042 (म.प्र.)
83. **अंग माधुरी** (अंगिका मासिक), सम्पादक–डॉ. नरेश पाण्डेय 'चकोर', शेखर प्रकाशन, बोरिंग रोड (पश्चिम) 59, गांधीनगर, पटना-1, मूल्य : प्रति अंक 3/-
84. **हस्ताक्षरश्री** (त्रैमासिक), सम्पादक–पं. गिरिमोहन गुरु 'नगर श्री', श्री सेवाश्रम नर्मदा मंदिरम्, गृह निर्माण कॉलोनी, होशंगाबाद (म.प्र.)
85. **ग़ज़ल के बहाने** (मासिक), सम्पादक-डॉ. 'दरवेश' भारती, डी. 38 निहाल विहार, नांगलोई, नई दिल्ली-110041
86. **बयान**–(मासिक), सम्पादक–मोहनदास नैमिराश्य, बी.जी. 5ए/30बी, प. विहार, नई दिल्ली-110063, मूल्य : प्रति अंक 10/-
87. **वैचारिक उद्बोध** (त्रैमासिक), सम्पादक–रविकान्त खरे (बाबाजी), डी. एस-13 निराला नगर, लखनऊ-226020 (उ.प्र.) मूल्य : स्वैच्छिक दान
88. **क्रान्तिस्वर** (साप्ताहिक), सम्पादक–डॉ. तोता राम गुप्त 'विरही', मुराईन टोला, फतेहपुर-212601 (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक-1/-
89. **मुक्त कथन** (साप्ताहिक), सम्पादक–जनार्दन प्रसाद सिंह, रूप छाया आर्ट कैलेण्डर्स, टेढ़ीनाथ मन्दिर के समीप, बेगूसराय-851101 बिहार मूल्य : प्र.अ. 2/-
90. **समय वार्ता** (साप्ताहिक), सम्पादक–कल्पना भूषण, 1/16, शान्ति मोहन हाऊस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, मूल्य : प्र. अंक-2/-
92. **प्रेमवाणी,** (साप्ताहिक), मुख्य सम्पादक–सतीश कुमार आर्य, 110, फ्रैण्ड्स कॉलोनी, मल्हीपुर रोड, सहारनपुर (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक-1/-
93. **फतेहपुर दूत** (साप्ताहिक), सम्पादक–सोमेन्द्रवीर सिंह, इस्लाम गंज, फतेहपुर-212601. (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक-1/-
94. **आख़िर लिखना पड़ा** (साप्ताहिक), सम्पादक–बृजेन्द्र अग्निहोत्री, जिला कारागार के पीछे, मनोहर नगर, फतेहपुर-212601 (उ.प्र.), मूल्य : प्रति अंक-2/-
95. **अखण्डता संग्राम** (पाक्षिक), सम्पादक–सुरेन्द्र कुमार मोंगिया, एफ-50-ए, जीवन पार्क, उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059 मूल्य : प्रति अंक-3/-
96. **दिशा-कल्प** (पाक्षिक), प्रधान सम्पादक–डॉ. सिद्धराज, शीला सदन, पुरानी लेन, गंगा शहर, बीकानेर-334401, (राज.) मूल्य : प्रति अंक-5/-
97. **दिशेरा टाइम्स** (साप्ताहिक) प्रधान सम्पादक–डॉ. राजेश त्रिवेदी, ब्लॉक के पीछे, आदर्श नगर, लालगंज, रायबरेली (उ.प्र), मूल्य : प्रति अंक-1/-
98. **तुमूल तूफानी** (साप्ताहिक), संपादक–डॉ. तुमुल विजय, बड़ा बाजार, चन्दौसी-[illegible] 202412 (उ.प्र.) मूल्य : प्रति अंक-2/
99. **रविन्द्र ज्योति** (पाक्षिक), सम्पादक–केवल [illegible], 343/19, आनन्द निवास, गीता कॉलोनी, जींद-126102 (हरि.) मूल्य : प्रति [illegible] 2/-

□□

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

द्वितीय

रेणु महोत्सव अररिया

(4 से 9 मार्च, 2012)

यदि आप रेणु पर केंद्रित कार्यक्रमों में अपने आलेख, संस्मरण प्रस्तुत करना चाहते हों तो उसे तैयार कर हमें भेजें।

यदि आपके पास महान कथा शिल्पी रेणु के जीवन एवं लेखन से जुड़ी अप्रकाशित-प्रकाशित सामग्री, छायाचित्र, हस्तलिखित पांडुलिपि हो तो हमें लिखें, फोन या ई-मेल करें।

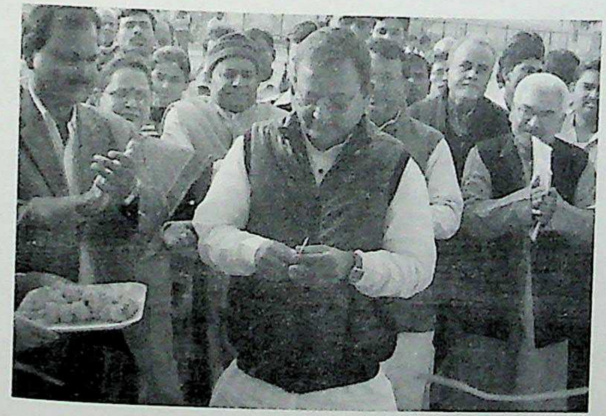

गांधी मैदान, पटना में आयोजित प्रथम रेणु महोत्सव सह राष्ट्रीय पुस्तक मेले (16 से 26 दिसंबर 2010) का फीता काटकर उद्घाटन करते फणीश्वरनाथ 'रेणु' के बड़े सुपुत्र विधायक पद्म पराग राय 'वेणु' और रेणु परिवार। साथ में हैं भारतीय क्षेत्रीय पत्रकार संघ के अध्यक्ष चंद्र भूषण।

संपर्क करें :

चन्द्र भूषण
अध्यक्ष
मो. 9811271465

मुख्य संयोजक
डॉ. एस.आर. झा

संयोजक द्वय
रजी अहमद 'तनहा'
राज राघव
मो. 9431653112

आयोजक

भारतीय क्षेत्रीय पत्रकार संघ (रजि.)
आई-1/16, शांतिमोहन हाऊस, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23272145
टेलीफैक्स : 011-23270889,
ई-मेल : cbyash@gmail.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पी.आर.नं. - पी.आर. 01/07 आर.एन.आई. - आवेदित

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इलेक्ट्रानिक सामग्रियों का एक विश्वसनीय प्रतिष्ठान

श्री विनायक सेल्स

हाई स्कूल कैम्पस, रूप नं.-10, सदर रोड, चाँदनी चौक, अररिया (बिहार)
मो. - 9334475265

अधिकृत विक्रेता

सोनी - एन.सी.डी., डी.वी.डी., हैण्डिकैम आदि।
सैमसंग - रेफ्रिजेटर, टी.वी., वाशिंग मशीन, एयर कंडीश्नर,
डी.वी.डी. वाशिंग मशीन आदि।
व्हर्लपुल-रेफ्रिजेटर, वाशिंग मशीन, एयर कंडिश्नर आदि।
सेनसुई - टी.वी. टाईटन एवं सोनाटा घड़ियां
टाटा स्काई, वीडियोकॉन एवं एयरटेल डिश टी.वी.,
ओकाया बैट्री, माइक्रोटेक इनवर्टर, कूलर, पंखे, वाटर फिल्टर,
स्टैबलाईजर, मिक्सर-ग्राईन्डर, टेलीफोन, आयरन एवं
अन्य होम एम्पलांयसेस भी उचित मूल्य पर उपलब्ध।

परीक्षा प्रार्थनीय

व्यवस्थापक

प्रकाशक, प्रबन्धक एवं सर्वाधिकार : सृजनात्मक, साहित्यिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक वाग्वैचित्र्य मंच, अररिया (बिहार)
मुद्रक : [illegible], अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant